विषय-सूची

नम्र निवेदन

[ले०—डा० बोसाराम रिटायर्ड स्टोरकीपर N W R आनरेरी सैक्रेटरी]

पजाव की राजधानी लाहौर मे रावी रोड़ पर केन्द्रिय अनाथालय है जिसका प्रबन्ध एक रजिस्टर्ड सभा के आधीन है, जिसके प्रधान श्री पूज्य स्वामी स्वतन्त्रानन्द जी महाराज उपप्रधान सार्वदेशिक आर्य्य प्रतिनिधि सभा देहली हैं। उपप्रधान श्री पण्डित विश्वम्भरनाथ जी भूतपूर्व गवर्नर गुरुकुल कागडी, श्री पण्डित ठाकुरदत्तजी वैद्यशास्त्री मुल्तानी, तथा डा० गणेशीलाल जी M B B S हैं। इस अनाथालय को खुले हुए बीस वर्ष के लगभग हो चुके हैं। इसकी सहायता करना केवल लाहौर निवासियों का ही कर्तव्य नही, प्रत्युत सब प्रान्तों मे रहने वाले हिन्दू आर्य्य भाईयों का भी कर्तव्य है। यही कारण है कि यह अनाथालय भारतवर्ष के दूसरे प्रान्तों में भी सर्व प्रिय हो रहा है और दिन प्रतिदिन उन्नतिके मार्गपर चल रहा है, यहातक कि अब सरकार भी, जो चोरी किये हुए लडके लडकिया उनको मिलते है, जब तक उनके वारिसों का पता नही मिलता, तब तक उनको यहा रखती है। इस तरह से अनाथालय मे बच्चों की संख्या बढ गई है। इस समय तक तो निवास स्थान पर्याप्त था परन्तु सख्या बढ जाने से स्थान काफी नहीं होता। इसलिए प्रबन्धक सभा ने निश्चय किया है, कि नवीन कमरे बनाए जायें, जिससे स्थान का कष्ट मिट जाय। इनके बनाने के लिए धन की अपील की जावे। इसलिए मै दानी सज्जनो की सेवा मे विनीत भाव से प्रार्थना करता हूँ कि वे इस शुभ कार्य में सभा की सहायता करें ताकि अनाथ और निस्सहाय बच्चो को प्रवेश करने मे बाधा न पड़े। यदि हम ऐसा न कर सके तो वे बालक जिनको हम स्थान न दे सकेंगे, अन्य मत वालो के जाल मे फँसकर हमेशा के लिए धर्म से पतित हो जायेंगे और उसका पाप आर्य जाति को लगेगा। जो महानुभाव एक सौ से अधिक रुपया देंगे उनके नाम के पत्थर उन कमरो की दीवारो पर लगवा दिये जायेंगे।

इस अनाथालय के आधीन म्यूनिसिपल कमेटी से मजूर एक मिडल स्कूल है जिसमे अनाथालय के तथा बाहर के लडके पढते हैं। एक दर्जी क्लास है जिसमे लडके और लड़कियों को सीने का कार्य सिखलाया जाता है तथा बाहर के लड़के इसमे काम सीख सकते है। आज कल बीस लडके सीख रहे हैं। बीस के लगभग लडके यहा से काम सीख कर अपना निर्वाह भली प्रकार कर रहे हैं। अनाथालय मे इस समय ६५ लडके और ७० लडकिया हैं जिनके निवास, भोजन, पढाई आदि का प्रबन्ध अनाथालय की तरफ से किया जाता है। इस काम के लिये भी सहायता का आवश्यकता है। दानी तथा परोपकारप्रिय महानुभावों से प्रार्थना है कि वे इस ओर भी ध्यान करें और जिस प्रकार की भी सहायता दे सकें देकर पुण्य के भागी बनें अर्थात् आटा, दाल, चावल, घी आदि खाद्य पदार्थ और पहनने के लिये वस्त्र देकर कृतार्थ करें। यह सस्था पूर्व भी आप जैसे दानियों के दान से चल रही है। अब भी आप से आशा की जाती है कि आप अवश्य सहायता देकर अनाथों का आशीर्वाद लेंगे और पुण्य के भागी बनेंगे।

* ओ३म् *

सार्वदेशिक

* सार्वदेशिक-आर्य-प्रतिनिधि सभा देहली का मासिक मुख पत्र *

वर्ष ११ | चैत्र १९९३ | अङ्क २

अप्रैल १९३७ ई०] [दयानन्दाब्द ११३

❀ वेद की शिक्षाएँ ❀

युञ्जते मन उत युञ्जते धियो विप्रा विप्रस्य बृहतो विपश्चितः ।
विहोत्रा दधे वयुना विदेक इन्मही देवस्य परिष्टुतिः ॥

—यजुर्वेद ।

भावार्थ—बुद्धिमान, महान ज्ञानी तथा योगी पुरुष उस अद्वितीय जगत्कर्ता ज्ञानी ईश्वर की ही श्रेष्ठ स्तुति मन और बुद्धि द्वारा अच्छे प्रकार किया करें ।

सम्पादकीय—

नवीन अधिकारी

पाठक अन्यत्र सार्वदेशिक सभा के वार्षिक अधिवेशन की कार्यवाही पढ़ेंगे और उसमें देखेंगे कि इस वर्ष सभा के प्रधान पद पर श्री घनश्यामसिंह जी गुप्त एम एल. ए आरूढ हुए हैं। साथ ही मन्त्री मण्डल में भी परिवर्तन हुआ है।

श्री नारायण स्वामी जी ने अपने कार्य काल के गत १४ वर्षों में इस सभा को जिस मान और प्रतिष्ठा के पद पर आरूढ कर दिया है वह स्वामीजी के ही योग्य था। आपने अनेक कार्य करके सभा को एक शिरोमणी सभा बना दिया है।

अब वर्त्तमान अधिकारियों पर न केवल उस मान प्रतिष्ठा को कायम रखने का भार है बल्कि अपने कठिन परिश्रम से सभा के कार्य को और भी आगे बढ़ाने का प्रयत्न करना है। बहुत से सार्वदेशिक काम ऐसे हैं जिन की तरफ़ सभा को विशेष ध्यान देना है। इस समय हम अधिक न लिखकर केवल एक ही निवेदन करना चाहते है कि आर्य जनता के सहयोग और सहानुभूति से ही यह संस्था काम कर सकती है। अधिकारियों को पूर्ण सहयोग मिलेगा तो वे निस्सन्देह अपना कर्त्तव्य पालन करेंगे। किसी भी संस्था का पत्र उसकी उन्नति का विशेष साधन है। "सार्वदेशिक" को अधिकाधिक उपयोगी बनाने का प्रयत्न किया जा रहा है और किया जावेगा पर इसका ग्राहक संख्या बढ़ाना पाठकों का काम है। हमारा नम्र निवेदन है कि पाठक इस वर्ष कम स कम २ – २ ग्राहक इस पत्र के जरूर बढ़ावें। प्रत्येक आर्यसमाज को इस पत्र को ज़रूर मंगाना चाहिये। आशा है प्रेमी पाठक इस ओर ध्यान देंगे।

गुरुकुल कांगड़ी का ३५वां वार्षिकोत्सव

मार्च के अन्तिम सप्ताह में गुरुकुल कांगड़ी का ३५ वां वार्षिकोत्सव सानन्द समाप्त हो गया।

इस वर्ष इस उत्सव में कई विशेषतायें थीं और यही इसकी आशातीत सफलता का कारण थीं। उपदेशकों और व्याख्याताओं का बड़ा सुन्दर चुनाव था—ख़ान अब्दुल गफ्फार खां, श्री सत्यमूर्ति, श्री गंगाप्रसाद जी चीफ़जज, श्री के एम सम्तानम, प० ठाकुरदत्त जी वैद्य, श्री प्रकाश जी एम एल. ए प० बुद्धदेवजी, कवि बच्चन जी, प० प्रियव्रत जी, हरदयालजी एम ए आदि महानुभावों के उत्सव में भाग लेने से उत्सव का कार्यक्रम अत्यन्त मनोरञ्जक हो गया था और उपस्थिति भी पिछले वर्षों से कहीं अधिक थी। एक विशेष बात यह थी कि इस वर्ष ६० नये विद्यार्थी प्रविष्ट हुए हैं और २० स्नातक बने हैं। इस साल लगभग ६० हज़ार रुपया गुरुकुल के लिये एकत्र हुआ है। यह सब बातें जहां गुरुकुल शिक्षा प्रणाली की लोकप्रियता को प्रगट करती हैं वहां गुरुकुल के वर्त्तमान अधिकारियों के सुप्रबन्ध-परिश्रम और उत्साह की भी द्योतक है। हम गुरुकुल के तमाम कार्यकर्त्ताओं विशेषतया आचार्य जी तथा मुख्याधिष्ठाता जी को हार्दिक बधाई देते हैं और आर्य जनता से उनको पूर्ण सहयोग देने की प्रार्थना करते हैं।

आर्य युनिवर्सिटी

' आर्य-समाज की जितनी शिक्षा संस्थायें हैं शायद और किसी भी समाज की इतनी न होंगी। विचार

उठता है कि "क्यो न एक आर्य युनिवर्सिटी हो जिसके आधीन ये सब सस्थाये हों। इस युनीवर्सिटी के अनेक विभाग हों और उन तमाम विभागो के अन्दर तमाम वर्त्तमान सस्थाये भी आ जावे।" ये विचार हैं जो श्री प्रधान सार्वदेशिक सभा ज ने अभ २ प्रगट किये हैं। प्रधान जी ने आर्यविवाह बिल पास कराकर आर्य जनता का जो उपकार किया है उसके लिये आर्य जगत् आपका चिर ऋणी रहेगा।

आर्य विश्वविद्यालय का विचार एक शुभ विचार है। इसकी विस्तृत आयोजना शीघ्र आर्य जगत के सम्मुख आवेगी। यदि हम सरकार से आर्य युनिवर्सिटी बिल पास करवाने मे समर्थ हुए तो एक बडा काम होगा। इस सम्बन्ध म विशेष अगले अक म लिखा जावेगा।

जगद्गुरु शंकराचार्य्य का व्याख्यान

१५ मार्च १९३० को जगद्गुरु श्री शकराचार्य्य जी (डाक्टर कुर्तकोटि) ने बम्बई आर्य्य समाज के ४२ वे वार्षिकोत्सव पर व्याख्यान दते हुए आर्य्य समाज के शिक्षा सम्बन्धी कार्यों का बडी प्रशसा की। आपने कहा कि लाहौर मे मैने आर्य्यसमाज का जैसा शिक्षा कार्य्य देखा वैसा देश मे अन्यत्र नही है। जगद्गुरु ने इस बात पर बडा बल दिया कि हिन्दू धर्म्म की भिन्न२ शाखाएँ मिलकर ठोस सगठन के रूप में परिणत हो जावे जिससे धर्म्मोन्नति विशेष उत्साह दृढ़ता और उन्नति के साथ की जा सके

आपने एक समय मे एक विवाह के सिद्धान्त का समर्थन करते हुए विशेष अवस्थाओं मे बहु विवाह की प्रथा प्रचलित करने का भी परामर्श दिया।

आर्य्य विवाह बिल पास

गत २० मार्च को लेजिस्लेटिव असेम्बली में आर्य्य विवाह बिल पास हो गया, यह समाचार देने मे समर्थ होने से हमे बडी प्रसन्नता है। आशा है कि यह बिल शीघ्र ही कानून बन जायगा। इससे जात पात तोडकर शादी करने वाले आर्य्य समाजियों के विवाह वैध समझे जावेंगे। श्री बा घनश्यामसिंह जी गुप्त तथा श्रीयुत डा खरे, वा मेम्बर तथा असेम्बली के अन्यान्य सरकारी और गेर सरकारी सदस्य जिनकी सहायता बिल को प्राप्त हुई तथा रही है, आर्य्य जगत के विशेष धन्यवाद के पात्र है।

असेम्बली मे स्वीकृत बिल की लिपि अन्यत्र दी जाती है —

टर्की में संस्कृत

प्रसन्नता की बात है कि अङ्गोरा (टर्की) यूनिवर्सिटी में सस्कृत के अध्ययन के लिए गद्दी स्थापित की गई है। आठ विद्यार्थी वहा सस्कृत का अध्ययन कर रहे हैं। एक मुस्लिम देश मे और एक मुस्लिम विश्वविद्यालय मे सस्कृत का सरक्षण सस्कृत की महत्ता को सूचित करता है। निश्चय ही सस्कृत प्रेमियों और आर्य सभ्यताभिमानियों को इस समाचार से प्रसन्नता होगी।

श्री स्वामी जी का पद परित्याग

श्री महात्मा नारायण स्वामी जी महाराज इस वर्ष सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा के प्रधान पद से मुक्त हुए है। उन्हो ने अपनी इच्छा से ही अपने निश्चयके अनुसार ऐसा किया यद्यपि आर्य्यजनता तथा सभा की इच्छा थी कि वे और कुछ काल पर्य्यन्त सभा

को बागडोर अपने हाथों में रखे। श्री स्वामी जी के पद परित्याग का अर्थ यह नहीं लिया जा सकता और न लिया जाना चाहिए कि सभा को उन के सहयोग और सहायता की आवश्यकता न थी और आगे न होगी, अवश्य ही समय२ पर आवश्यकता होगी और हमें विश्वास है कि वह सभा को प्राप्त होंगे आश्चर्य नहीं यदि उनका स्वास्थ्य और शारीरिक अवस्था उन्हें आज्ञा देगी उन्हें फिर सभा का सूत्र संचालन करता हुआ देखें। पद परित्यागके कारण श्री स्वामी जी के वैधानिक नेतृत्व से वंचित होनेके कारण हृदयके

भावोंको जो ठेस पहुँची है केवल एक भावसे हमें आंशिक सान्त्वना प्राप्त होती है और वह यह कि जो महानुभाव उनके उत्तराधिकारी निर्वाचित हुए हैं उनसे मुख्यतया आर्य विवाह बिल के पास कराने से समूचा आर्य जगत सुपरिचित है। सभा ने उन्हें सर्व सम्मति से प्रधान मनोनीत करके इस बात का परिचय दिया है कि उसकी पसन्द अच्छी रही है और उसने उनके परिश्रम कठिनाइयों इत्यादि का जो उन्हें इस बिल के सम्बन्ध में उठानी पड़ी हैं तथा बिलके पास कराने के द्वारा उन्होंने आर्यजगत की जो एक बड़ी सेवा की है समुचित आदर किया है।

(Arya Marriage) BILL

TO

Recognise and remove doubts as to the validity of inter marriages current among Arya Samajists

Where it is expedient to recognise and place beyond doubt the validity of inter-marriages of a class of Hindus known as Arya Samajists, It is hereby enacted as follows:-

Short Title and Extent

1 (1) This Act may be called the Arya Marriage Validation Act 163

(2) It extends to the whole of British India including British Baluchistan and the Sonthal Parganas, and applies also to all subjects of His Majesty within other parts of India, and to all Indian subjects of His Majesty without and beyond British India

Marriages between Arya Samajists not to be invalid

2 Notwithstanding any provision of Hindu law usage or custom to the contrary no marriage contracted whether before or after the commencement of this Act between two persons being at the time of the marriage Arya Samajists shall be invalid or shall be deemed ever to have been invalid by reason only of the fact that the parties at any time belonged to different castes or different sub-castes of Hindus or that either or both of the parties at any time before the marriage belonged to a religion other than Hinduism

वे महानुभाव श्री० बा० घनश्याम सिंह जी हैं। श्री स्वामी जी महाराज ने १४ वर्ष पर्यन्त जिस अध्यवसाय परिश्रम मनोयोग और लग्न से सभा का सूत्र सञ्चालन और उसका भाग्य निर्माण किया है तथा जो उसमें मर्य्यादाएं कायम रक्खी तथा कायम की है वे आर्य जगत पर विदित हैं। यदि यह कहा जाय कि स्वामी जी ने सभा रूपी पौधे को हरा भरा और पल्लवित किया है, इन १४ वर्षों के काल में ही नहीं वरन इससे कई वर्ष पूर्व से सभा के मन्त्री वा सदस्य के रूप में सभा के साथ ग्रथित रहते हुए तो हमारी सम्मति में अत्युक्ति न होगी। लोक प्रियता आर्थिक स्थिति प्रगति-विस्तार तथा आर्य जगत के सगठन में अपना स्थान प्राप्त करने इत्यादि की दृष्टि से सभा को जो सफलता मिली है उस सफलता के श्रेय पर सब से ज्यादा श्री स्वामी जी उचित रीति से अभिमान कर सकते हैं।

श्री स्वामी जी ने जैसा कि उनके अखबारों में प्रकाशित वक्तव्यसे स्पष्ट है जब प्रधान पद ग्रहण किया था। तब सभा शैशवावस्था में थी उस समय मद्रास प्रान्त में केवल एक प्रचारक था। उसके वेतन की कठिनाइयों के कारण सभा इस कार्य को बन्द करने वाली थी। आज जब वे सभा से मुक्त हुए हैं तब सभा के अधीन, प्रचारक मद्रास इत्यादि स्थानों पर प्रचार का कार्य करते हैं। सभा का कोष डेढ लाख से अधिक का है। विदेशों में प्रचार का कार्य हो रहा है। आर्यजगतका आवश्यक मार्ग प्रदर्शन, व्यवस्था और उनके अधिकारों की रक्षा हो रही है। सारांश में आर्य जगत उसकी ओर दिनों दिन आकर्षित होता जा रहा है। और वह दृढता और अपने उद्देश्य पूर्ति की ओर अग्रसर हो रही है। श्री स्वामी जी की उपर्युक्त सब सेवाओं को दृष्टि में रखते हुए सभा ने यह उचित ही निर्णय किया है कि इन सेवाओंके आदर रूप में श्री स्वामी जी को एक मान-पत्र अर्पण किया जाय।

आपत्तिजनक पाठ्य पुस्तकें

हमारे सामने आर्य सेवक दल बम्बई बाज़ार कराची के बम्बई विश्वविद्यालय की बी ए परीक्षा की कतिपय सिन्धी पाठ्य पुस्तकों से सम्बन्धित आवेदन पत्र की एक प्रति है। इसमें प्रगट किया गया है कि हिन्दू भावनाओं की दृष्टि से वे पुस्तके आपत्ति जनक हैं और हिन्दू विद्यार्थियों के लिए भी मुसलमान विद्यार्थियों के साथ २ इन पुस्तकोंका नियत किया जाना ठीक नहीं है। सिन्ध प्रान्त के हिन्दू विद्यार्थियों तथा मुख्य २ हिन्दुओं ने बम्बई विश्वविद्यालय का ध्यान इस बात की ओर कई बार खींचा है और प्रार्थना की है कि वह इन पुस्तकों के स्थान में उपयुक्त पुस्तके नियत करे परन्तु उनकी प्रार्थनाओं पर कोई ध्यान नहीं दिया गया है। आपत्ति जनक पुस्तकों की सूचि तथा उनके कतिपय अवतरण भी आवेदन पत्र में दिए गए हैं जिनसे उन पुस्तकों का आपत्ति जनक होना स्पष्ट होता है। पुस्तकों के नाम तथा अवतरण इस प्रकार है —

(१) कीमए सादत प्रथम भाग मिर्ज़ा कलीच बेग की फ़ारसी पुस्तक का सिंधी तर्जुमा।

(२) उरूसे करबला मुहम्मद सलीह मुहम्मद्इब्राहीम कृत।

(३) मिनहजुल आशक्रिन डा० यू० एम दाऊदकृत

(४) मुमहऽ अत्रोजहो मौलवी अल्ला बख्शकृत

पहली पुस्तक जैमा कि उसके टायटिल पृष्ठ पर छपा है मुसलमान भाइयों के लाभार्थ लिखी गई है। भूमिका में लिखा गया है कि पुस्तक का उद्देश्य इस्लाम के आधार भूत सिद्धान्त की व्याख्या करना है। कुरान और हदीसो के अरबी उद्धरणों से पुस्तक भरी हुई है। १२४ पृष्ठों मे ११० लाइनों में ये उद्धरण हैं। इस पुस्तक मे हिन्दुओं पर आक्रमण किए गए हैं तथा कुवाक्यों की वर्षा की गई है। इस पुस्तक के अनुसार हिन्दू लोग हृदय के साफ़ नहीं होते। खासकर (शरारत करने वाले जो दूसरों को ख़राब करते हैं) उनमें से कुछ ऐसे होते हैं जो ज़रा सी बात पर दूसरों का गला काटने को तय्यार हो जाते हैं। वे कसाई और दयाशून्य होते हैं और सुबह २ उनका देखना पाप है (६१,७०)

यदि ये अवतरण ठीक हैं तो हम कहेंगे कि आत्म मम्मान युक्त हिन्दुओं और हिन्दू विद्यार्थियों में असन्तोष का पैदा होना स्वाभाविक है और बम्बई यूनिवर्सिटी से इन पुस्तकों के स्थान में उपयुक्त पुस्तकों के नियत करने की उनकी मांग वाजिब है और बम्बई यूनिवर्सिटी का इन मांगों के प्रति कान बहरे करलेना अनुचित है। उसे इस मांग को पूरा करना चाहिए। इस मांग को पूरा न करना उसके गौरव के अनुरूप नहीं है।

पुस्तक के टायटिल पृष्ठ पर जब वह स्पष्टरूप से दिया हुआ है कि पुस्तक मुसल्मानों के लाभार्थ लिखी गई है तब भी वह हिन्दू विद्यार्थियों के लिए नियत की गई है। इस बात पर यूनिवर्सिटीको विशेष ध्यान देना चाहिए और इसकी योंही उपेक्षा नहीं करनी चाहिए।

——

वैदिक सूर्य विज्ञान

(लेखक—श्री प० प्रियरत्न जी आर्ष)

(गताङ्क से)

"इन्द्रस्यधेनवो वज्रं हिन्वति" (ऋ० १।८४।११। इन्द्र की धाराए वज्र को धकेलती है। इसीलिये सूर्य की गुहाओं में अर्थात् भीतरी भाग में 'इन्द्र' वज्र वस्तु है जो लोह आदि ठोस वस्तुओं का परिणाम है। विदित हो विद्युत् के वज्र मे स्फोटक (पोटास) भी है परन्तु सूर्य वाले इस वज्र मे पोटास नहीं है या इतना है जी नहीं के बराबर है वरन वह छिन्न भिन्न हो जाता। दूसरी वस्तु सूर्य मे है उसके बहिस्तल पर तीक्ष्ण वह्नियां, तीक्ष्ण ज्वाला लाटें, जो गन्धक आदि द्रवण शील पदार्थों का परिणाम है। ये ज्वाला लाटें सूर्य पिण्ड के चारो ओर वेग से बहती हुई दूर २ तक उठती हैं, हम देखते हैं कि यदि पत्थर के कोयलों का एक फुट ऊंचा ढेर कर जला दिया जाय तो ढेर से चार पांच इंच ऊंचे उसकी ज्वाला लाटें उठ जाती हैं भला जो सूर्य लगभग नौ लाख मील व्यास परिमाणका वज्रमय अग्निपिण्ड हो उसकी ज्वाला लाटें दो तीन लाख मील तक सूर्यके गोल में और उसके ऊपर भी उठती होंगी ऐसा सिद्ध होता है। तीसरी वस्तु है 'उस्रिया.' सूर्य की किरणें, जो सूर्य गोला तथा उन्नत ज्वाला-लाटों के बाहिरी आकाश मण्डल में निरन्तर स्फुरित तथा प्रसूत होती रहती हैं। * इनका दृश्य स्थूलरूप या किरणमण्डल सूर्य गोल से बीसों लाख मील दूर तक विद्यमान रहता है। पुनः क्रमशः अदृश्य बन वे सारे विश्व में फैल जाती हैं। ये महाक्षार (शोरा+स्फोर) जैसे वायव्य अर्थात् स्फुरित हो फैलने वाले पदार्थों का परिणाम है। ये किरणें सौर-परिवार के सारे वायु मण्डल मे पहुंचती रहती हैं। जैसे अग्नि चूर्ण (बारूद) का महाक्षार स्फोर (शोरा) अग्नि चूर्ण भरे अनार आदि गोले की अपेक्षा से बीसों तीसों गुना अधिक ऊपर स्फुरित होता है। तथा जिस प्रकार पत्थर के कोयले का एक फुट मात्र ऊंचा आदि परिमाण का जलता हुआ ढेर सैकड़ों फुट ऊंचे लम्बे चौड़े हाल के वायुमण्डल में गरमी और हलचल पैदा कर देता है एवं सूर्य पिण्ड का इन्द्र (वज्र) वह्नियां (ज्वाला लाटें) और उस्रियां (किरणें) भी सौर-परिवार के सारे वायुमण्डल में गरमी और हलचल पैदा कर देते हैं। कहा भी है:—

ता अस्य नमसा सहः सपर्यन्ति प्रचेतसः। (ऋ० १। ५०। १२)

सूर्य किरणें वज्र से प्रेरित हो अभिभावुक बल (Power) को ढकेलतीं हैं। या यों समझिये कि सूर्य के अन्दर का इन्द्र रूप बज्र ही बलवान तथा तीक्ष्ण वह्नियों-ज्वाला लाटों के द्वारा अर्थात् प्रथम बलवान् तीक्ष्ण वह्नियां-ज्वाला लाटें बन पुनः उस्रियाओं-किरणों को प्राप्त होता है किरणों के रूप में परिणत होता है। यह तात्पर्यार्थ प्रकृत "वीळुचिदारुजत्नुभिर्गुहाचिदिन्द्र वह्निभि.। अविन्द उस्रिया अनु" का है। अस्तु

*यह किरणमण्डल सर्व सूर्यग्रह में ही दिखलाई पड़ता है।

इस मन्त्र मे एक और विशेष बात बतलाई गई है वह यह कि सूर्य में जो काले धब्बे दिखलाई पड़ते हैं (मैं ने भी वे पांच सात धब्बे कश्मीर में कोरी आंखों से विशेष अभ्यास द्वारा कुछ वर्ष हुए प्रात॰ काल ८ बजे तक के समय में देखे थे) पाश्चात्य ज्योतिषियों का इस विषय मे मत भेद है कुछ कहते है कि ये काले धब्बे उभार हैं और कुछ कहते हैं कि कि ये कन्द्रायें हैं। अभी तक ठीक निर्णय पर नहीं पहुंच पाए, परन्तु "वीकु विदारुजत्रुभिगुंहा चिदिन्द्र वह्निभि" वेद मे पूर्व से ही निर्णय किया हुआ है कि वे गुहाएं अर्थात् कन्द्राएं हैं, इन्द्र रूप वज्र-मय पदार्थ इन्हीं गुहाओं-कन्द्राओं से अपने तत्त्वों को बाहर बिखेरताहै जिनसे ज्वालाएं और किरणें निरन्तर बनती रहती हैं। यहां एक प्रश्न का समाधान भी हम कर देना चाहते है वह यह कि सूर्य प्रचण्ड रूप से निरन्तर करोड़ों अरबों वर्षो से जल रहा है। इसका जलने वाला पदार्थ (mater) खतम हो जाना चाहिये। इस विषय में यह भी उत्तर हो सकता है कि जैसे पृथिवी के अन्दर से लगातार पत्थर का कोयला निकलता जा रहा है पर खतम होने मे नहीं आता एव सूर्य में जलने वाला पदार्थ इतना अधिक है कि वह खतम नहीं हो पाता। परन्तु यह उत्तर सन्तोषजनक तथा युक्तियुक्त नही। चाहे कारु का खजाना भी हो आखिर खर्च होते रहने से खतम हो जाना ही चाहिये, परन्तु सूर्य के इतिहास में यह बात घटित नहीं हुई इसलिये यह सिद्धान्त ठीक नहीं है। अन्य विद्वान् अभी निर्णय पर नहीं पहुँचे। यह अनुमान अवश्य करते है कि सूर्य में गरमी या तो पूर्णतया किसी अन्य रीति से आती है या कम से कम इसका कुछ अंश अवश्य किसी अन्य रीति से आता है। हम इस विषय को स्पष्ट समझ में आजाने के लिये इसी जैसा एक प्रश्न उठाते है वह यह कि प्रतिवर्ष आकाश से पृथिवी पर करोड़ों अरबों मन पानी गिरता चला आ रहा है पर कमी नहीं होती, वह आकाश में इतना पानी कहा से आता है। इसका उत्तर विद्वानों के प्रत्यक्ष है आकाश मे यद्यपि सूक्ष्म जल हर वक्त रहता भी है।

"अन्तरिक्षं वा अपां सधस्थम्" (शत॰ ६ । २ । ३ । ३६)

पर बरसने वाला जल जितना बरस जाता है पुन॰ उतना ही पृथिवी पर से पृथिवी के जलाशयों और समुद्र से ऊपर आकाश मे चढ जाता है। इस प्रकार जल के आने जाने से आकाश का जल खतम नही हो पाता। इसी प्रकार सूर्य मे स्वयं भी अग्नि पुञ्ज स्थित है तथापि सूर्य की उत्पत्ति के साथ ही उसमे दो शक्तिया हैं जो कि "मित्र" अर्थात् सम्प्रेरणशक्ति और 'वरुण' अर्थात् आकर्षण शक्ति, पीछे हम वेद मन्त्र द्वारा बतला चुके हैं, "मित्र" नाम की सम्प्रेरण शक्ति ऊष्मा (गरमी) को पृथिवी आदि पर प्रेरित करती रहती है एवं वरुण नाम की आकर्षण शक्ति गरमी का पुनः आकर्षण करती रहती है। इसलिये सूर्य मण्डल में जितनी गरमी निकलती है उतनी ही पुनः प्राप्त भी होती रहती है। अतः सूर्य के आकार या ताप में कमी नहीं हो सकती। यदि सूर्य में "मित्र" शक्ति सम्प्रेरणशक्ति

गरमी को धकेलने की शक्ति ही होती और वरुण शक्ति-आकर्षण शक्ति-गरमी को लौटाने की शक्ति न होती तो अब तक सूर्य से गरमी के आते रहने से पृथिवी के पदार्थ जल भुन जाते। दिन भर गरमी सख्त पड़ी, भूमि तप्त तवा बनी, रात मे ठण्डी होगई, आखिर वह गरमी भूमि से निकल कर आकाश मे ही तो उड़ी। या यो समझिये सूर्य की मित्र-शक्ति-सम्प्ररण शक्ति जितनी गरमी पृथिवी आदि पर फेंकती है, वरुण शक्ति आकर्षण शक्ति पृथिवी आदि से पार्थिव आदि तत्वो को ऊपर ले जा पुन उतनी ही गरमी पैदा करने का निमित्त बनती है। इसलिये सूर्य न खतम होने वाला अग्नि पुञ्ज है यही वेद मे कहा है।

"अर्कस्त्रिधातू रजसो विमानोऽजस्रो घर्मः"
(ऋ० ३।२६।७)

अर्थात् सूर्य तीन धातुओ वाला प्रत्येक गोल का थामने वाला न खतम होने वाला तप्त अग्निपुञ्ज है। अस्तु। इस प्रकरण के साथ सम्बन्ध रखने वाली एक और बात यह है कि—

"दिवो रुक्म उरुचक्षा उदेति दूरे अर्थस्तरणि भ्राजमानः (ऋ० ७।६३।४)

इस मन्त्र मे यह विचार दिया है कि यह जो सूर्य अनेको पृथिवी आदि गोलो का चमकाने वाला इतना तीक्ष्ण ताप देने वाला आकाश मे एक छोटा भूषण जैसा दिखलाई पड़ता है यह छोटा नही है किन्तु 'दूरे अर्थ.' 'दूरेऽर्थो मण्डल यस्य' इसका मण्डल, पृथिवी आदि गोलो से दूर है। यहा 'दूरेऽर्थ.' मे 'अर्थ' शब्द मण्डल के लिए है।

'अर्थ' शब्द का प्रयोग मण्डल के लिए निम्नमन्त्र मे भी देखिए—

यं सीम कृण्वन्तमसे विपृचे ध्रुवक्षेमा अनवस्यतो अर्थम्। तं सूर्यं हरितः सप्त यह्वी स्पर्शं विश्वस्य जगतो वहन्ति॥ (ऋ० ४।१३।३)

स्थिर सत्ता वाली सात रङ्ग की किरणे अन्धकार को हटाने के लिये 'अर्थम्' मण्डलको-प्रकाश मण्डल को अनवस्यन्त' न्यून या क्षीण न करती हुई जिसको अपना आधार बनाए हुए है उस सारे जगत के रूप देने वाले सूर्य को वहन करती है।

इस मन्त्र मे भी किरणोको 'अनवस्यतोऽर्थम्' पकाशमण्डल सूर्यमण्डल को खतम न करती हुई कहने से सूर्य मण्डल से अपनी उष्मा कभी कम नही होती यह ध्वनित होता है। अस्तु। यहा तक हुआ सर्य का स्वरूप। अब 'सूर्य का आधार' इसके सम्बन्ध मे कहते है।

सूर्य का आधार

बहिष्ठेभिर्विहरन्यासि तन्तुमव्ययन्नसितं देव वस्म। दविध्वतो रश्मयः सूर्यस्य चर्मे वावाधुस्तमोऽप्स्वन्तः॥ अनायतो अनिबद्धः कथायं न्यङ्ङुत्तानोऽवपद्यते न। कया याति स्वधया को ददर्श दिवः स्कम्भः समृतः पाति नाकम्॥ (ऋ० ४।१३।४)

(क्रमशः)

—

नवान्नेष्टि या होली

(ले०—श्री बृजमोहन झा)

होली का वैदिक रूप

होली का वैदिक नाम " नवसस्येष्टि" है। नवीन अन्न प्राप्त होने पर, आर्य पुरुष, उस अन्न को पहले परमात्मा के समर्पण किया करते थे। उन्होंने इस बात का नियम कर दिया था कि कोई मनुष्य बिना यज्ञ किये नये अन्न को न खाय। यथा —

नानिष्ट्वाग्रयणेन नवसस्यमश्नीयात् । नव सस्योत्पत्तौ नव सस्येष्ट्या यजेत् ।

मानव गृ० सूत्र ।

अर्थात् नया अन्न उत्पन्न होने पर नवसस्येष्टि नामक यज्ञ करे और जब तक कि अन्न अर्थात् पहले उत्पन्न हुए अन्नसे होम न करे, उसे न खाय। इसका निम्न लिखित विधान है —

पर्वण्याग्रयणं कुर्वीत । वसन्ते यवाना शरदि व्रीहीणाम् । अग्रपाकस्य पयसि स्थालीपाकं श्रपयित्वा । तस्य जुहोति ।

सजूरग्नीन्द्राभ्या स्वाहा ॥ १ ॥
सजूर्विश्वेभ्यो देवेभ्य स्वाहा ॥ २ ॥
सजूर्द्यावा पृथिवीभ्या स्वाहा ॥ ३ ॥
सजू सोमाय स्वाहा ॥ ४ ॥

अर्थात् पर्व में नवीन अन्न से होम करे। वसन्त ऋतु में यवों से और शरद ऋतु में चावलों से। नवीन अन्न को दूध में पका कर स्थाली पाक बनावे और उस पाक की ऊपर लिखे हुए चार मन्त्रों से चार आहुतिया दे। यह प्रधान होम है। स्वस्ति वाचन, शान्ति पाठ और नित्य हवन करने के पश्चात् अन्त मे यह आहुतिया देनी चाहियें। इसके पश्चात् नवीन अन्न का सेवन करें।

कैसा पवित्र भाव है ? शास्त्र मे लिखा है:—

यज्ञाद् भवति पर्जन्य पर्जन्यादन्न संभव ।

यज्ञ के द्वारा वृष्टि होती है और वृष्टि से अन्न पैदा होता है। पुन यज्ञ ही परमत्मा है। यथा —

यज्ञो वै विष्णु (शतपथ)

अत' आर्य पुरुष, पहले नवीन अन्न, उसके देवता 'यज्ञ' को समर्पण करते थे और तब स्वय उस का भोग करते थे।

वास्तवमें अन्न परमात्माकी कृपा ही से उत्पन्न होता है। यदि परमात्मा की कृपा न हो तो निस्सीम पुरुषार्थ करने पर भी अन्न उत्पन्न होना सभव नही है। बनी बनाई तैयार खड़ी हुई फसल, प्रकृति के जरा से आघात से बात की बात में चौपट हो जाती है। आर्य पुरुष अपनी इस असमर्थता को समझते थे, अत वे परमात्मा के प्रति अपनी कृतज्ञता प्रकट करते नहीं अघाते थे।

अब प्रश्न यह होता है कि इस वैदिक नव सस्येष्टि का नाम "होली" कैसे पड़ गया ? इसका उत्तर यह है कि उस अवसर पर अन्न अर्द्ध परिपक्व अवस्था में होता है और इसे जब भूनते हैं तो उसकी सज्ञा लोक में 'होला' होती है, जैसा कि शब्दकल्पद्रुम में लिखा है —

तृणाग्निभ्रष्टार्द्धपक्वशमी धान्य होलक । होला इति हिन्दी भाषा।

अर्थात् जो अध पक्का अन्न, फूँस की आग में भूना जाता है, उसे संस्कृत भाषा मे होलक और हिन्दी भाषा में होला कहते हैं। ऐसे अन्न के द्वारा जो यज्ञ किया जाता था उसे लोग होलक यज्ञ कहने लगे और यही बिगड़ कर होलिका और अन्त में होली हो गया।

वर्त्तमान होली के देखने से भी इस बात का निश्चय अवश्य हो जाता है कि यह यज्ञ ही का विकृत रूप है। अब भी लोग नये अन्न चना, जौ, गेहूँ आदि की बालें लेकर होली पर जाते हैं। वहा सब से पहले एक पुरोहित जिसे कि आज कल खेड़ापति कहते हैं, घी, शक्कर से होली का पूजन करता है और पुन. होली की प्रदक्षिणा कर के उसमे अभ्याधान करता है। इसके पश्चात् लोग नया अन्न होली में भूनते हैं। इसमें से कुछ तो प्रदक्षिणा करते हुए अग्नि को समर्पण कर देते हैं और शेष अपने घर ले जाते हैं। घरों पर भी एक छोटा सा हवन किया जाता है और उसमे स्त्री बच्चों सहित सब भाग लेते हैं। इससे यह स्पष्ट सिद्ध हो जता है कि होली एक सार्वजनिक बृहद् यज्ञ है।

विद्वानों को चाहिये कि वे इस के शुद्ध रूप का प्रचार करें। नगर के शिक्षित और शिष्ट लोगों को चाहिये कि फाल्गुन की पूर्णमासी के दिन प्रात काल के समय प्रत्येक मोहल्ले के सार्वजनिक स्थानों में एक बड़ा यज्ञ करने का आयोजन करें। इसके लिये प्रत्येक घर से चार चार आने पसे संग्रह किये जाय और विधि पूर्वक यज्ञ किया जाय. वेदों पर श्रद्धा रखने वाले प्रत्येक आर्य या सनातनधर्मी को इसमें भाग लेना चाहिये। हमारा विश्वास है कि यदि इस प्राचीन प्रथा का उद्धार हो जाय तो चैत मास में होने वाले शीतला आदि अनेक रोग कभी न हों और जनता का बड़ा कल्याण हो। इस यज्ञ के प्रताप से नवीन अन्न, पुष्ट तथा रोग रहित हो, और उसे सेवन करके हम लोग बलवान तथा वीर्यवान् हुआ करें। आप यह जान कर आश्चर्य न करें कि हमारे इस वैदिक यज्ञ की महत्ता का विदेशियो ने भी अनुभव किया था और उन्होंने अपने देशों में इसका प्रचार किया। टाड राजस्थान को देखनेसे पता लगता है कि अन्न तैयार होने पर रोम के लोग, Saturn अर्थात् कृषि के देवता की पूजा करते हैं, और इस अवसर पर वे आमोद प्रमोद भी मनाते हैं। राजपूताने की होली को देख कर, कर्नल टाड ने एक स्थान पर लिखा है —

But the most brilliant sight is the playing of the Holi on horseback on the terrace in front of the palace. Each chief who chooses to join has a plentiful supply of missiles enclosing crimson powder, called अबीर which with the most graceful and dextrous horsemanship they dart at each other, pursuing, caprioling and jesting.

This part of it much resembles the Saturnalia of Rome of this day, when

similar missiles are scattered at the carnivale

अर्थात् राजपूताने की होली का सर्वोत्तम दृश्य महल के सामने मैदान में घोड़े की पीठ पर, होली का खेलना है। प्रत्येक जागीरदार के पास, जोकि होली में भाग लेना चाहता है, पर्याप्त मात्रा मे कुमकुमे होते हैं, जिनमे गुलाल अबीर भरा होता है और वे लोग विनोद करते हुए,प्रशंसनीय तथा दक्षता पूर्ण अश्वारोहित्व के साथ एक दूसरे की ओर झपटते, दौड़ते एवं उछलते हैं।

यह भाग रोम नगर के आधुनिक सेटरलेनिया नामक पर्व से बहुत कुछ मिलता है जब कि इसी प्रकार के कुमकुमे, आमोद प्रमोद के अवसर पर फेंके जाते हैं। सैटर्न के विषय में इंग्रेजी-कोष का लेख है —

Saturn The ancient Roman God of agriculture और Saturnalia is the annual festival in honour of saturn, a time of unrestrained license and enjoyments

अर्थात् सैटर्न—रोमन, कृषि का प्राचीन देवता है। और सैटर-नेलिया एक पर्व है जो कि कृषि के देवता सैटर्न की स्मृति मे मनाया जाता है, जब कि लोगों को बिना किसी रोक टोक के आनन्द मनाने का अवसर मिलता है। कितने गौरव की बात है कि हमारे इस पर्व की श्रेष्ठता और पवित्रता से प्रभावित होकर विदेशियों ने हमारी नक़ल की, किन्तु दु:ख की बात है कि आज हमने उसका रूप इतना बिगाड़ दिया है कि आज लोग उसे देखकर हम से घृणा करने लगे और हमें असभ्य और जङ्गलीकी उपाधि देने लगे। यहा तक हमने होली के वैदिक रूप के सम्बन्ध मे निवेदन किया। अब इसके पौराणिक रूप के सम्बन्ध में भी थोड़ा सा कह देना अनुचित न होगा।

होली का पौराणिक रूप

होली के सम्बन्ध में, श्रीमद्भागवत मे एक आख्यायिका इस प्रकार आती है। हिरण्यकश्यपु प्रह्लाद का पिता है और एक बड़ा अन्यायी तथा ईश्वर की सत्ता को न मानने वाला राजा है। प्रह्लाद ईश्वर भक्त है और अन्याय को पसन्द नहीं करता। हिरण्यकश्यपु, अपने पुत्र प्रह्लाद की गति विधि पसन्द नहीं करता, प्राय वह उसे तरह तरह के त्रास देता है। प्रह्लाद इन त्रासों की चिन्ता न कर के परमात्मा की भक्ति में मग्न रहता है। अन्त में नृसिंह अवतार होता है और वह हिरण्यकश्यपु का सहार करता है। यह एक अलङ्कार पूर्ण अत्यन्त शिक्षा प्रद आख्यायिका है, जिसका अभिप्राय यह है —

माया में फँसे रहने वाले व्यक्ति का नाम हिरण्यकश्यपु है। अर्थात् जो सदैव हिरण्य धन और वैभव को देखे उसको हिरण्यकश्यपु कहते हैं। यथा —

कश्यप कस्मात्पश्यको भवतीति। निरुक्त। आद्यन्ताक्षरविपर्य्ययाद्धिंसे सिंह कृतेस्तर्कु रित्यादिवत्कश्यप इति।

आदि और अन्त के अक्षरोंका विपर्य्यय होकर पश्यक का कश्यप बन जाता है, जैसे हिंस शब्द से सिंह इत्यादि। इसलिये हिरण्यमेव पश्यतीति

हिरण्यकश्यप ॥ अर्थात् जो माया ही में रत रहे, परमात्मा की सत्ता को न माने उसका नाम है हिरण्यकश्यप। ऐसे मदान्ध लोग सदैव परमात्मा के भक्तों को त्रास देते हैं और उन्हें चैन से नही बैठने देते, किन्तु परमात्मा के भक्त उनकी सत्ता की परवाह नही करते। अन्त में जब उनका अत्याचार बहुत बढ़ जाता है तब कोई पुरुषसिंह उत्पन्न होकर इनका संहार कर देता है।

परमात्मा की भक्ति मे सदैव मग्न रहने के कारण ज व को आनन्द लाभ होता है। इसलिये उनका नाम प्रह्लाद है। प्रह्लाद, स्वयं सताया जाने पर भी सब की मंगल कामना करता है। वह कहता है —

दस्यचित्किमपि नो हरणीय
मर्मवाक्यमपि नोच्चरणीयम्।
आसुर कुलमनादरणीयं
चित्तमेतदमलीकरणीयम् ॥
देव धाम शरणी करणीय
लीलया भव जल तरणीयम् ॥

अर्थात् किसी का कुछ भी हरण नही करना चाहिये। यहा तक कि किसी को गाली भी नही देनी चाहिये। जो लोग माया ही मे रत रहते हैं और परमात्मा को नही मानते, उनका आदर नही करना चाहिये। अपने चित्त को निर्मल बना कर परमात्मा की शरण मे जाना चाहिये और इस प्रकार आचरण करते हुए, इस भवसागर को पार कर जाना चाहिये।

कैसा सुन्दर उपदेश है। यदि लोग इसके अनुसार आचरण करने लगें तो एक दिन मे होली का सुधार हो जाय। एक ओर प्रह्लाद किसी को गाली न देने के लिए कहते हैं और दूसरी ओर ब्राह्मण नाम को कलंकित करने वाले नर पिशाच माता तथा बहनों के सामने नगे नाचते हैं और उनको गालियां देते हैं। हे परमात्मन्! तुम इन बेसमझ और दया के पात्र नररूपधारी पशुओं को सद्बुद्धि प्रदान करो।

होली का समाजिक रूप

वैदिक तथा पौराणिक महत्व के अतिरिक्त होली के पर्व की एक सामाजिक विशेषता भी विचारणीय है। स्मृतियों में इस दिन चाण्डाल तक को स्पर्श करने का विधान पाया जाता है। यथा —

चैत्र मासि महाबाहो पुण्ये तु प्रतिपद्दिने।
यस्तत्र श्वपच पृष्ट्वा स्नान कुर्यान्नरोत्तम ॥
न तस्य दुरित किंचिन्नाधयो व्याधयो नृपेति।

चैत्र मास की प्रतिपदा को जो उत्तम पुरुष श्वपच को स्पर्श करके स्नान करता है उसको किसी प्रकार की आधि और व्याधि नहीं होती। विश्व-बन्धुत्व का कैसा अच्छा भाव है। इसीलिये होली के पश्चात् सब छोटे बड़े, बिना किसी भेद-भाव के आपस मे गले मिलते है। सब भेद भाव को मिटाकर आपस मे गले मिलने का भाव और किसी पर्व मे नही देखा जाता। अतः सामाजिक दृष्टि से भी यह एक महत्व पूर्ण पर्व है। अन्तिम निवेदन यह है कि आज कल के नाम से जो निन्दनीय बातें प्रचलित हो गई है, उन सब को हमे प्रयत्न करके बन्द कर देना चाहिये। लोगों पर कीचड़ फेंकना, उनके कपड़ो को रग डाल कर

आर्य-ध्वज

(ले० श्री शिवदयालु जी)

'आर्य्य ध्वज के रूप और उसके आरोहण की प्रामाणिक पद्धति इत्यादि के सम्बन्ध में आर्य जनता तथा आर्य समाजें प्राय अन्धकार में हैं उनके मार्गप्रदर्शन के लिए दयानन्द निर्वाणार्द्धशताब्दी द्वारा स्वीकृत रूप तथा पद्धति इत्यादि यहां विस्तार पूर्वक दी जाती है।

—सपादक

स्त्राव करना, शराब या भग पीना, गालिया बकना और माता तथा बहनों के प्रति अपशब्द कहना राक्षसी व्यवहार है। अत इन बातों को एकदम बन्द कर देना चाहिये।

प्रत्येक नगर और मोहल्ले मे सुधारक पुरुष और स्त्रियों का एक दल सगठित किया जाय जो कि होली को शुद्ध और पवित्र रूप में मनाने का प्रचार करे और होली के अवसर पर किसी प्रकार की असभ्यता न होने दे। कानपुर आदि नगरों में होली के बाद दस-दस पन्द्रह न्द्रह दिन के अड्डे मनाये जाते हैं। इन दिनों बाजार बन्द रहता है। और निकम्मे लोग भग तथा शराब पीकर एक दूसरे का सिर फोड़ते फिरते हैं। बाद मेंखूब मुकद्दमे बाजी होती है। होली परस्पर मेल कराने के लिये आती है, किन्तु मूर्ख लोग सर्वथा विपरीत आचरण करते है।

बुद्धिमान् पुरुषों का कर्त्तव्य ह कि वे इस प्रचलित भ्रष्टाचार को बन्द करके नवसस्येष्टि के शुद्ध और पवित्र वैदिक रूप का प्रचार करें जिससे कि भारत के माथे पर लगा हुआ यह असभ्यता का कलङ्क शीघ्र ही दूर हो।

ओ३म् उत्तिष्ठत संनह्यध्वमुदाराः केतुभिः सह।
सर्पा इतरजना रक्षांस्यमित्राननुधावत ॥

अथर्ववेद का० ११। अ० ५। सू० १०। म० १॥

विश्व की महती आर्य-सभ्यता के पावनस्रोत वेद का संसार के समस्त मनुष्यों को आदेश है कि अज्ञान और प्रमाद की अन्धेरी रात्रि से निकल कर, मिथ्याभिमान, घृणा और द्वेष की दु खजनक वृत्तियों को त्याग कर विश्व-बन्धुत्व और ममता की सुन्दर शृङ्खला मे आबद्ध हो जाओ, संकुचित साम्प्रदायिक भावनाओं का अन्त करो तथा प्राणिमात्र के कल्याण साधन की श्रेष्ठतम उदारभाव-तरङ्गों से आप्लावित होकर विश्वविजयिनी वैदिक-धर्मपताका को धारण करो और दुष्ट नृशस अन्यायी अत्याचारियों से प्राणिमात्र की रक्षा करने रूप पावन युद्धक्षेत्र में निर्भयतापूर्वक ईश-विश्वास के आधार पर अवतीर्ण हो।

आर्यसमाज, वेदों विश्वास रखने वालों की युग २ में ऋषि-मुनियों, साधु सतों द्वारा लिखे गये उपनिषदों, दर्शनादि सूत्रों में आस्था रखने वाले संसार के समस्त मनुष्यों की एक प्रमुख तथा मान्य सस्था है। आर्यसमाज का धर्म निश्चय और निर्विवाद रूपेण सार्वभौमिक (Universal) तथा सार्वकालिक (Eternal) है। सत्य की पू.१ (Truth Worship) विश्वभ्रातृत्व

(world brotherhood) तथा समता (Equality) उसका मानव-जाति के प्रति प्रमुख सन्देश है।

आर्यसमाज केवल भारत-देश में ही नहीं अपितु बाहर भी कितने ही देश विदेशों में संस्थापित है और उस शुभ घड़ी की उत्सुकतापूर्वक बाट जोह रहा है, जब कि संसार के कोने २ में भगवान् दयानन्द का यह पवित्र संघ सुसंगठित होगा।

आर्य-जाति अज्ञातकाल से नाना प्रकार के चिह्नों से चिह्नित ध्वजों को धारण करती आई है। इन सब ध्वजों में ओंकार का चिन्ह तो प्राय सर्वत्र ही पाया जाता है। आर्यजाति के ध्वजों की भित्तिका (Surface) तो लगभग सर्वदा ही लाल, केसरी, बसंती वा गेरुआ वर्ण की रही हैं। अभिप्राय यह है कि लालिमा से आर्य-ध्वज सदा चमकते रहे हैं। भले ही युग २ में ध्वज में कुछ कुछ परिवर्तन होता रहा हो किन्तु मौलिक परिवर्तन का कहीं पता नहीं। वर्तमान युग में भी आर्यसभ्यताभिमानियो को अपने एक सम्यक् निर्धारित ध्वज की कल्पना करने की आवश्यकता विशेष प्रकार से प्रतीत हो रही थी। और यह अनुभव किया जा रहा था कि आर्य-ध्वज के आरोपण, अवतरण आदि की पद्धति भी सुचारु रूप से निर्धारित हो जानी चाहिये। तथा ध्वज-गीत व जयघोष आदि का निर्णय भी किया जाना आवश्यक प्रतीत हो रहा था।

आर्य सभ्यता के महान् प्रचारक महर्षि दयानन्द की जन्मशताब्दी के शुभ अवसर पर शताब्दी-सभाने अपने विशेष प्रस्ताव द्वारा आर्य-ध्वज का निम्नलिखित स्वरूप निर्धारित किया.—

"आर्य-ध्वज का रंग लाल (गेरुवा) होना चाहिये और उस पर सूर्य के आकार के बीच में ओ३म् का "ॐ" यह चिह्न अङ्कित होना चाहिये।"

इस निश्चित प्रस्ताव के अनुसार मथुरा शताब्दी में समारोहपूर्वक आर्य-ध्वज का आरोहण किया गया। किन्तु आर्य-ध्वज के भाव तथा महत्व (Significance) आदि का स्पष्ट निदर्शन न होने तथा ध्वज के आरोहण, अवतरण आदि का प्रकार निश्चित न किये जाने के कारण ध्वज का कोई विशेष प्रचलन न हुआ। आर्यसमाजों तथा आर्य्य-संस्थाओं ने भी अपने २ विशेष पर्व व उत्सवादि पर इस ध्वज को उत्साह-पूर्वक फहराने की ओर कोई विशेष ध्यान न दिया।

अत महर्षि स्वामी दयानन्दजी महाराज की निर्वाण अर्द्ध शताब्दी के शुभ अवसर पर शताब्दी समिति की आज्ञा से आर्य-ध्वज समिति निम्न प्रकार से आर्य-ध्वज के स्वरूप की व्याख्या तथा उसके आरोहण व अवतरण तथा ध्वज-गीत व जयघोष आदि निश्चय कर प्रकाशित करती है। संसार के प्रत्येक आर्यसमाज, आर्य-संस्था समिति, तथा संघ को चाहिये कि वह ध्वज के उच्चतम सार्वभौमिक लक्ष्य को दृष्टि में रखते हुए विशेष हर्ष और उत्साह के साथ इसका आरोहण करे।

आर्य-ध्वज का स्वरूप तथा उसकी व्याख्या

ध्वज की कल्पना में साम्प्रदायिक भेदभावों को कोई स्थान नहीं प्रदान किया जा सकता। आर्य-ध्वज किसी देश-विशेष की सीमाओं से भी असीमित तथा विश्व-बन्धुत्व विरोधक वर्तमान

युग के राष्ट्रवाद (Nationalism) के बन्धन से भी मुक्त है। पूंजीवाद (Capitalism) तथा साम्राज्य-वाद (Imperialism) की अनर्थकारी संस्थाओं (Institutions) से भी आर्य-ध्वज का कोई सम्बन्ध न होगा।

आर्य-ध्वज की भित्तिका (Surface) लाल रंग की होगी। लाल रंग सदा से शक्ति तथा बलिदान का सूचक रहा है। संसार के अन्दर महान् से महान् सत्य भी बिना शक्ति और बलिदान के फैल नहीं सकता। अपनी सभ्यता तथा गौरव की रक्षा के लिये आर्य-जाति को शक्तिशालिनी बनाना होगा और निरन्तर तप, त्याग और बलिदान की सुन्दर यज्ञवेदी को सजाना होगा।

आर्य-ध्वज के मध्य में अंशुमाली सूर्य का आकार स्वर्ण (सुनहरी) वर्ण में चिह्नित होना चाहिये। सूर्य अन्धकार का नाशक तथा प्रकाश का प्रतिनिधि है। सूर्य का चिह्न संसार से अज्ञान, अन्धकार मिटाने तथा वैदिक ज्ञानप्रभा प्रकटाने की ओर संकेत करता है। सूर्य का स्वर्ण (सुनहरी) वर्ण मनुष्यों को श्रेष्ठतम कर्मों (Golden Deeds) के आचरण करने का सन्देश देता है।

सूर्य-मण्डल के अन्दर श्वेत वर्ण में ओंकार का "ॐ" यह चिह्न चिह्नित होना चाहिये। ओ३म यह परमात्मा का सर्व-श्रेष्ठ तथा निज नाम है। संसार के साहित्य में ओ३म् की महिमा का अनुपम और असीम बखान है। संसार का एक एक अणु मूक भाव से उस महा-प्रभु की महिमा का अहर्निश गान करता है। वसुधातल के सारे साधु, सन्त और साधक उस अद्वितीय उपास्यदेव की अलौकिक अनोखी झाकी के लिये विह्वल रहते हैं। उस सूक्ष्मातिसूक्ष्म और महान्से भी महान सच्चिदानन्द ब्रह्म को प्राप्त करना मानव-जीवन का चरम-लक्ष्य है। यह ही संसार के सारे श्रेष्ठ कर्मों का मर्म है। ओ३म् चिह्न का श्वेतवर्ण परमात्मदेव के निर्मल निर्विकार शुद्ध स्वरूप का सूचक है।

संक्षेप में आर्यध्वज का स्वरूप निम्न प्रकार है:—

आर्य्यध्वज का स्वरूप

(१) **भित्तिका**—लाल वर्ण की।

(२) **सूर्य्य-मण्डल**—मध्य में स्वर्ण (सुनहरी) वर्ण का।

(३) **ओंकार**—सूर्य्य मण्डल के मध्य मे श्वेत-वर्ण में चिह्नित ॐ यह चिह्न।

(४) **लम्बाई-चौड़ाई**—ध्वज की लम्बाई (धरती की समानान्तर बाजू) तथा चौडाई (ध्वज-स्तम्भ का समानान्तर बाजू) का अनुपात (निस्बत) ३ २ होगा अर्थात् यदि लम्बाई ६ फीट होगी तो चौडाई चार फीट होगी।

(५) **ध्वज-वस्त्र**—ध्वज का कपड़ा शुद्ध तथा स्वदेश निर्मित होना चाहिये।

आवश्यक नोट:—

ध्वज की भित्तिका का वर्ण सूर्य मण्डल तथा ओंकार के वर्ण, आकार, ध्वज में उनके विहित

स्थान, ध्वज की लम्बाई, चौडाई तथा वस्त्र उपरोक्त प्रकार के ही होने चाहियें। यदि असावधानता के कारण कोई त्रुटि रह गई तो वह ध्वज आर्यध्वज न माना जा सकेगा तथा आर्य-ध्वज के मान की अवहेलना करने वाला तक समझा जावेगा।

ध्वज आरोहण की तैयारी

जिस स्थान पर ध्वज खड़ा करना हो वह चौरस विस्तृत साफ तथा सुरक्षित होना चाहिये। झण्डे का स्तम्भ खूब मजबूत तथा सुन्दर होवे। सड़ा, फटाटूटा या बाका तिरछा बास वा बल्ली स्तम्भ के लिये सर्वथा अनुपयुक्त है। ध्वज स्तम्भ मे कभी भी लग्गी की तरह जोड़ नहीं होना चाहिये। स्तम्भ सफेद रँगा हुआ होना आवश्यक है।

स्तम्भ की लम्बाई के अनुरूप ही ध्वज की भी लम्बाई चौड़ाई होनी चाहिये। ध्वज की चर्क्री तथा डोरी भ, मजबूत होनी चाहिये। स्तम्भ खड़ा करने से पहले डोरी को चर्क्री पर चढ़ा दी जावे। डोरी सफेद सूत की होनी चाहिये, दूसरे किसी भी रंग की न हो।

स्तम्भ काफी गहरा गड्ढा खोद कर मजबूती के साथ गाड़ना चाहिये। यदि स्तम्भ अधिक ऊंचा हो तो उसे दो अलग जगहों से तीन-तीन रस्सियों से बांध कर तान देना चाहिये। स्तम्भ इतनी मजबूती से खड़ा किया जाय कि तेज से तेज हवा में भी वह झण्डे के झोकों को सह सके। स्तम्भ के चारों ओर आवश्यकता पड़ने पर पक्का चबूतरा भी बनाया जा सकता है और उसे गमलों से सजाया भी जा सकता है।

ध्वज-स्तम्भ-बिन्दु के पीछे ६ फीट के फ़ासले पर एक रेखा खीची जावे। बाद मे स्तम्भ-बिन्दु से रेखा को छेदने वाली लम्ब रेखा खीच कर उसके दो सम भाग किये जावें। जिस स्थान पर यह लम्ब रेखा बड़ी रेखा को काटेगी उस स्थान पर अध्यक्ष को खड़ा रहना होगा। स्तम्भ-बिन्दु को ध्वज-क्षेत्र का मध्य-बिन्दु मान कर पहले खींची हुई बड़ी रेखा को छेदने वाला एक वर्तुल (सरकिल) निकाला जावे। यह वर्तुल उस रेखा के नीचे नहीं आना चाहिये जिससे उसका आकार घोड़े की नाल के सदृश दिखाई दे। इस वर्तुल के समानान्तर चार-चार फ़ीट के फ़ासले से आवश्यकतानुसार वर्तुल निकाले जाय।

बड़ी रेखा के मध्य पर अर्थात् स्तम्भ-बिन्दु से ६ फ़ीट पीछे अध्यक्ष का स्थान होना चाहिये। इस स्थान के दो फीट पीछे बाई ओर शिविराधिपति तथा दाहिनी ओर सेनापति का स्थान होता है।

ध्वज-स्तम्भ की रेखा से बाई ओर शख व बिगुल बजाने वाले तथा दाहिनी ओर ध्वज-रक्षक महाशय खड़े होते हैं। स्तम्भ के सम्मुख स्तम्भ को मुखातिब होकर ध्वज-गीत के उद्‌गाता खड़े रहते हैं। अध्यक्ष के पीछे दोनों ओर दल के भिन्न भिन्न अधिकारी खड़े रहते हैं। उनके पीछे सन्यासी, वानप्रस्थी तथा निमंत्रित सज्जन अथवा आर्यसमाज, जिला उप-प्रतिनिधि सभा, प्रान्तीय प्रतिनिधि सभा, सार्वदेशिक सभा अथवा अन्य आर्य्यसभ्यताभिमानी सभा संस्थाओं के अधिकारी व अन्तरंग सदस्य यथास्थिति उपस्थित होते हैं।

ध्वज के सामने खींची हुई वर्तुल रेखाओं पर ध्वजवन्दन करने वाले आर्यवीर-दल आदि स्वयं-सेवक संस्थाओं के सैनिक खड़े रहते हैं। तदुपरात पहली क़तार में ब्रह्मचारी अथवा ब्रह्मचारिणी-मण्डल, बालक बालिका आदि उनके पीछे महिलाएं तथा उनके पीछे अन्य स्वयं-सेवकों की क़तारें खड़ी की जाती हैं।

उपर्युक्त वर्तुल रेखाएं निकालने के बाद उनके पीछे तीनों ओर १० फ़ीट फ़ासला छोड़ कर एक बड़ा आयात (Rectangle) निकालना चाहिये। इस आयात से बाहर दर्शकों का स्थान होता है। दर्शकों को इस आयात के भीतर आने नहीं देना चाहिये।

ध्वजारोपण करने के पहले उसकी तह निम्न-लिखित प्रकार से करके या बाध कर उसे ऊपर चढ़ा देना चाहिये। ध्वज के चारों कोने पहले खींच कर उसकी ३ वा ४ लम्बी तह की जावें तदुपरान्त इस लम्बी पट्टी को हवा में फ़हरने वाले सिरे से लेकर पगड़ी के सदृश मोड़ कर छोटी तह की जावे। रस्सी का जो सिरा चक्री के ऊपर से बाहरी बाजू में आता है उसे ऊपर के सिरे को लगाया हुआ बन्द बाध देना चाहिये तथा अन्दर से आए हुए नीचे के रस्सी के सिरे को ध्वज-वस्त्र के नीचे के सिरे का बन्द मज़बूत बाध देना चाहिये। इसी नीचे के सिरे से छोटी तह बनाए हुए ध्वज को बाद में इस प्रकार गाठ बाध कर उसकी गठड़ी बनाना चाहिये कि जो ज़ोर से खींचते ही खुल जावे तथा ध्वज हवा में फ़हरने लगे। इस गठड़ी को ध्वज वन्दन के पहले ऊपर चढ़ा रखना चाहिये तथा नीचे लटकने वाली रस्सी को स्तम्भ में विशेष दक्षता के साथ बांध देना चाहिये। इस प्रकार ध्वज फ़हराने की तय्यारी होती है।

ध्वजारोहण के अनुष्ठान के पूर्व आर्य्यवीर-दल आदि स्वयं सेवक संघों के अधिकारी अपने अपने दल तय्यार कर ध्वजवन्दन क्षेत्र की बाईं ओर से एक के पीछे एक सिलसिलेवार लेजावें तथा नियत स्थानों पर उन्हें खड़ा करें। ऐसा करते समय ब्रह्मचारी, ब्रह्मचारिणी, बालक बालिकाओं का स्थान ध्यान में रखते हुए उन्हें ही पहले भीतर लाया जावे। शंख व बिगुल बजाने वाले, उद्गाता तथा भिन्न २ अधिकारी अपने २ नियत स्थानों पर जाकर खड़े रहें तथा आर्यसमाज वा आर्य-जाति के प्रमुख नेता निमन्त्रित सज्जन आदि को भी आदरपूर्वक उनके लिये नियत किये हुए स्थान प्रदर्शित किये जावें जिससे वह भी सब अपने २ स्थानों पर स्थित हो जावें।

ध्वजारोहण-विधि

ध्वजारोहण के समय समस्त आर्यवीरों, स्वयं-सेवकों तथा दर्शकों को अपने २ स्थान पर 'होशियार' की हालत में खड़ा रहना चाहिये। प्रत्येक आर्य-सभ्यताभिमानी के लिये यह आवश्यक है कि वह आर्य-सभ्यता के चिह्न अपने आर्य-ध्वज के आरोहण के समय ध्वज को मान प्रदान करनेके भाव से बिल्कुल शात तथा गम्भीर-चित्त होकर खड़ा रहे। परस्पर वार्तालाप करना सर्वथा अनुचित है।

टेढ़ा, तिरछा, टागें पसार कर आलस्य-युक्त होकर खड़ा रहना, टहलने लगना या बीच में ही वहा से निकल जाना अनुचित है। अन्य व्यक्ति भी जो इस अवसर पर उपस्थित हों उन्हें भी सावधान होकर खड़ा रहना चाहिये।

सब से प्रथम उद्गाता लोग 'वेद-मन्त्रों' द्वारा ईश-प्रार्थना करेंगे तदुपरान्त ध्वजरक्षक अध्यक्ष महोदय से अभिवादन पूर्वक ध्वज फहराने की प्रार्थना करता है तथा ध्वज स्तम्भ के समीप जा कर बँधी हुई डोरी खोल देता है। रस्सी को खोलने के बाद उसका भीतरी भाग अध्यक्ष के बाए हाथ में अर्पण कर देता है तथा बाहरी हिस्सा जिससे ध्वज की गठरी बंधी हुई रहती है, दाहिने हाथ में अर्पित कर ध्वजरक्षक उसे खीचने की अध्यक्ष से प्रार्थना करता है। उसके खीचते ही गठरी की गाँठ खुल जाती है तथा ध्वज हवा में फहराने लगता है। स्वय सेवकों तथा समस्त उपस्थित सज्जनों को इस समय अत्यन्त शात तथा गम्भीर भाव से "होशियार" की हालत मे खड़ा रहना पड़ा है। ध्वज फहरते ही शख, बिगुल तथा बाजे बजने लगते हैं।

ध्वज फहरने लगने पर ध्वजरक्षक स्वय-सेवकों को "क़दम खोल" "आराम" यह आज्ञाए देकर ध्वज की रस्सी स्तम्भ को पहिले ही के समान दक्षता-पूर्वक बाध देता है, अध्यक्ष को अभिवादन कर फिर पीछे हटकर अपने स्थान पर जाकर खड़ा होता है। अध्यक्ष भी अपने स्थान पर जा खड़े होते हैं।

इसके बाद फिर से "होशियार" की आज्ञा दी जाती है। और फिर—

"जयति ओ३म् ध्वज व्योम बिहारी"

यह सुन्दर भावपूर्ण ध्वज गीत गाया जाता है। ध्वज-गीत को गायकगण स्वर के साथ गान करें। गान समाप्त होने पर अध्यक्ष का भाषण होता है तथा आवश्यक कार्य क्रम आदि भी विशेष दशा में घोषित किया जा सकता है। अन्त में तीन बार, अनुशासन पूर्वक 'वैदिक धर्म की जय' इन जय-कारों के साथ ध्वजारोहण विधि समाप्त होती है। वर्तुल (सरकिल) के बाहर जाते समय भी आर्यवीरों को अनुशासन का पूरा २ ध्यान रखना चाहिये। उन्हें चाहिये कि वह सब से प्रथम पहली क़तार, उसके बाद दूसरी, इसी प्रकार एक के पीछे एक सिलसिलेवार अपनी दाहिनी ओर से बाहर निकल जावें। तथा बिना किसी भी प्रकार की अशान्ति के अपने २ दल के अधिनायकों की आज्ञा के अनुसार कार्य करने में प्रवृत्त हों।

ध्वजावतरण विधि

इस विधि के करते समय भी सब आर्य वीरादि ध्वजा-रोहण विधि के समान ही ध्वज के सामने वर्तुलाकार अनुशासन-पूर्वक खड़े होकर ध्वजरक्षक के आदेशानुसार पूर्ववत्—

"जयति ओ३म् ध्वज व्योम बिहारी"

इस ध्वजगीत का गान करें। तदुपरान्त स्तम्भ से रस्सी खोलकर ध्वज को उतारना आरम्भ किया जाता और उसी उतारते क्षण शख, बिगुल तथा बाजे बजाये जाते हैं। ध्वज को उतार लेने के उपरान्त पूर्ववत् उसकी तह कर उपस्थित उच्चा-

धिकारी को सुरक्षित रखने के लिये अर्पण कर देना चाहिये। ध्वज-रक्षक के कथन तथा अनुशासन के अनुसार अन्त मे तीन बार विधि-पूर्वक 'वैदिक धर्म की जय' का घोष करना चाहिये। और पूर्व कथित विधि से समस्त आर्य-वीरादि सिलसिलेवार ध्वजक्षेत्र से बाहर निकल आवें।

ध्वजारोहण विधि प्रात काल यज्ञ की समाप्ति पर अथवा उससे पूर्व की जानी चाहिये। तथा ध्वजावतरण की विधि साधारणतया सूर्यास्त से पूर्व की जानी चाहिये। ध्वज की रक्षा का उचित प्रबन्ध न होने की दशा मे एक घण्टा पर्यन्त ध्वज-क्षेत्र मे ध्वज फहराने के उपरान्त उपर्युक्त विधि से उतार लिया जाना चाहिये।

आर्य जाति के जय-घोष की पद्धति भी कोई अनोखी वा अर्वाचीन नही है। अज्ञातकाल से इसका प्रचार है। आर्यसभ्यता के महान् प्रचारक ब्रह्मा, व्यास, वशिष्ठ, बुद्ध, शंकर, दयानन्द आदि की जय-घोष करना, आर्य जाति के महान् नेता राम, कृष्ण, शिवाजी, प्रताप, गुरुगोविन्द, तिलक तथा गाधी आदि की जय के नारे लगाना कोई अनुचित नही अपितु समय २ पर इसकी आवश्यकता तथा विशेष प्रयोजन भी होता है। इन महापुरुषों की जयन्तिया तथा इनसे सम्बन्धित उत्सव व पर्वों पर इसके जयकारे लगाना सर्वथा युक्ति-युक्त तथा आवश्यक है। किन्तु चाहे जिस अवसर पर चाहे जिसका जयकारा लगाते लगना यह कोई नियम वा अनुशासन की बात नहीं है।

यह भली भाति ध्यान मे रखना चाहिये कि जब २ आर्य-ध्वज के आरोहण तथा अवतरण का प्रसग हो तब किसी व्यक्ति का, चाहे वह कितना भी महान् तथा वन्दनीय क्यो न हो, जयकारा नहीं लगाना चाहिये।

इस अवसर पर तो 'वैदिक धर्म की जय' केवल यह ही घोष करना उचित ठहराया गया है। वैदिक-धर्म की जय मे संसार के सभी ऋषि, मुनि, साधु-सन्त, महात्मा तथा महापुरुषों की जय सम्मिलित है, क्योंकि इनका जीवनोद्देश्य जगति-तल पर विशुद्ध आर्य्य वैदिक-संस्कृति का प्रचार करना तथा आर्य्य-आदर्श और गौरव की रक्षा करना ही रहा है। व्यक्तियों से आर्य्य-धर्म कहीं अधिक महान्, पूज्य तथा आदरणीय है। अत एक बार नही, तीन वार "वैदिक-धर्म की जय" का सुहावना घोष किया जाना चाहिये।

"वैदिक-धर्म की जय" केवल यह ही एक पुनीत जय-घोष संसार के समस्त आर्य्य-सभ्यता-भिमानी देशों तथा जातियो मे गूंजना चाहिये। ससार के समस्त आर्य, हिंदू बौद्धादि बन्धुओं को तथा आर्य्य-सभ्यता से प्रेम रखने वाले अन्य ईसाई, मुसलमान, यहूदी आदि सज्जनों को वैदिक धर्म की उदार पताका के नीचे विश्व-बन्धुत्व के नाते श्रद्धा और प्रेम के साथ एकत्रित होकर वैदिक-धर्म का जय-घोष करना चाहिये।

नोट—दयानन्द निर्वाण अर्द्ध-शताब्दी समिति महर्षि दयानन्द जी महाराज की स्मृति मे मनाये जाने वाले इस निर्वाण-अर्द्ध शताब्दी के अवसर पर आर्य ध्वजारोहण के समय तीन वार

विधि-पूर्वक 'वैदिक-धर्म की जय' का घोष करने के उपरान्त एक बार 'महर्षि दयानन्द की जय' का घोष करना भी निश्चय करती है। यह विकल्प केवल शताब्दी के अवसर के लिये ही है।

जय घोष सिखाने की पद्धति

"वैदिक-धर्म की जय" इस जय-घोष मे से ध्वजरक्षक ज्यों ही ऊंचे स्वर में "वैदिक-धर्म की" इन शब्दों का उच्चारण करे त्यों ही समस्त आर्य वीरों, सेवकों व उपस्थित जनता द्वारा "जय" की गगन भेदी ध्वनि की जानी चाहिये। जय-घोष के समय आवाज गूंजती हुई हो इसका पूरा २ ध्यान रखना चाहिये। रोते हुए स्वर मे जयघोष कदापि नही करना चाहिये। जयघोष का अर्थ है वैदिक-धर्म के प्रति अपने हृदय के प्रेम तथा हर्ष को प्रकट करना। अतएव जयघोष की ध्वनि उच्च तथा पराक्रमयुक्त गूंजती हुई गगनभेदी स्वर में होनी अत्यावश्यक है।

आवश्यक निवेदन

१—ध्वजारोहण की विधि का अनुष्ठान किसी भी आर्य-सभ्यताभिमानी समाज, सभा, संघ, समिति, संस्था व सेवक-दल आदि द्वारा निश्चित दिवस पर किया जा सकता है। विशेष २ पर्व तथा त्यौहारों पर उत्सव, सम्मेलन तथा मेलों के अवसर पर निश्चित स्थान तथा समय पर ध्वजारोहण करने की प्रथा का प्रचार करना उचित तथा उपादेय है।

२—ध्वज के आरोहण तथा अवतरण की दोनों विधियां बहुत गौरव समन्वित हैं अतएव इनका अनुष्ठान विशेष अनुशासन के साथ शान्तिपूर्वक किया जाना चाहिये। आर्य्य मन्दिरों तथा संस्था-भवनों पर आर्य ध्वज का निरन्तर फहरना अत्यन्त आवश्यक है। वर्ष के अन्दर (पुराना हो जाने पर) २ वा ३ वार निश्चित पर्वों पर इन ध्वजों को बदल भी देना चाहिये।

३—व्यक्तियों को भी अपने २ भवन पर ध्वजारोहण करने का अधिकार है। इसके लिए दिन, समयादि यथा विधि आदि का कोई बन्धन नही है। ध्वज के प्रति उचित मात्रा में मान-प्रदर्शन किया जाना ही पर्याप्त है।

४—ध्वज-वस्त्र पर बेल बूटे निकालना, गोट लगाना आदि सब वर्जित है। ध्वज को माला आदि चढाना सर्वथा अनुचित तथा अनार्य कर्म है किसी भी आर्य को भूल कर भी ऐसा अनार्य जुष्ट कर्म करने मे प्रवृत्त नहीं होना चाहिये। अपने क्रियात्मक जीवन से आर्य-धर्म का पालन करना, आर्य-सभ्यता का प्रचार करना तथा आर्य-गौरव की रक्षा मे अपना सर्वस्व समर्पण करने तक के लिये उद्यत रहना ही आर्य ध्वज का सर्व-श्रेष्ठ सम्मान माना गया है।

५—ध्वज को इधर उधर नही पडा रहने देना चाहिये उसको सुरक्षित स्थान पर रखना आवश्यक है। उसको पैर तले रूंदना, उससे झाड़न का काम लेना उसकी एक प्रकार से अवहेलना करना है। अतएव जब ध्वज चढ़ा हुआ न हो तो उसको तह करके सुरक्षित रख ना चाहिये।

६—फटा पुराना या जिसका रंग उड़ गया हो, ऐसा ध्वज स्तम्भ पर कभी न चढाया जावे। पुराने यज्ञोपवीत के सम न उसका भी विसर्जन कर देना चाहिये।

आर्य्य समाज और उसका संगठन

श्री महात्मा नारायण स्वामीजी महाराज का आर्य्य-समाज के संगठन में परिवर्तन विषय का एक लेख अभी हाल में आर्य्य समाचार पत्रों में प्रकाशित हुआ है। 'सार्वदेशिक' में गतांक मे वह लेख छप चुका है। श्री स्वामी जी ने चुनाव सम्बन्धी कुछ परिवर्तन प्रस्तुत किए हैं और उन परिवर्तनों की युक्तियुक्तता स्पष्ट की है। साथ ही आर्य्य जनता को विचार का निमन्त्रण दिया है इस समय तक इस सम्बन्ध में जो विचार प्रकाश मे आए हैं उन्हें हम यहां देते हैं।

१८ फरवरी के आर्य मित्र में 'आर्यसमाज और उसका संगठन' शीर्षक लेख में सार्वदेशिक सभा के प्रधान श्री नारायणस्वामी जी ने आर्यसमाजों की वर्तमान निर्वाचन प्रथा को आर्यसमाज के संगठन के लिये अहितकर बताया है। मुझे इन विचारों से बहुत सन्तोष है। मैं इधर कई वर्षों से अपने सामाजिक लेखों में कहता आया हूँ कि आर्यसमाज के विधान में आमूलचूल परिवर्तन की आवश्यकता है। हमें अपनी कमजोरी को प्रगट करने में कोई लज्जा न होनी चाहिये आर्यसमाज तो धार्मिक संस्था है—और धर्म का आधार है सत्य। यह एक ठोस सत्य है कि आर्यसमाजकी प्रगति रुक रही है, इसकी उपेक्षा करना आत्मघात है। अपनी कमजोरी को महसूस (अनुभव) करना जीवन का लक्षण है, आर्यसमाज में जब तक यह प्रवृत्ति रहेगी तब तक उसे कोई मिटा नहीं सकता। तब आर्यसमाज को मिट जाने में कोई देरी न लगेगी जब आर्य अपनी कमजोरियों की उपेक्षा करेंगे और आत्म निरीक्षण की आवश्यकता न समझेंगे।

ससार के इतिहास में आर्यसमाज ही ऐसा धर्म है जो आज ससार को अपने निर्बाध उत्थान और अनायास पतन से चकित कर रहा है। आर्यसमाज को उत्पन्न हुए अभी एक भी शताब्दी नहीं हुई और आज उसके सम्बन्ध में मरने की सम्भावना की जारही है। सम्भव है इसमे अत्युक्ति हो परन्तु आर्यसमाज के नेता ऋषि दयानन्द ने जिन उद्देश्यों के लिये इसकी स्थापना की थी वे महान थे। उनके अनुरूप तो कुछ भी कार्य नहीं हुआ। इसलिये ही ऐसा समझा जाने लगा है। एक और भी बात है—अन्य धर्मों के प्रवर्त्तकों के बाद उनके शिष्य समय समय गुरु की अपेक्षा भी महान उत्पन्न होते रहे हैं, जिस से उस धर्म का प्रवाह निरन्तर बहता रहा है। महात्मा रामकृष्ण के स्वामी विवेकानन्द आदि महान् पुरुषों के प्रभाव से ही राम कृष्ण मिशन आज तक अक्षुण्ण चला आता है। परन्तु ऋषि दयानन्द के बाद उनके समान वेदों का विद्वान ब्रह्मचारी आर्यसमाजने एक भी पैदा नहीं किया। आर्यसमाजके नेता या कार्यकर्ता अन्य कार्यों से फ़ुर्सत पाकर ही प्राय आर्यसमाज की सेवा करते और इसी को अपने कर्तव्य की पूर्ति समझते हैं। ऐसे व्यक्ति जिन्हों ने आर्यसमाज के अतिरिक्त और किसी भी क्षेत्र में काम

न किया हो कम हुए अथवा हैं। मुझे कहने दिया जाय तो कहूँगा कि ऐसे व्यक्तियों में भी नेतृत्व की योग्यता वाले व्यक्ति कम हैं। यदि केवल आर्य-समाज के ही लक्ष्य को लेकर इसी कार्य के लिये आत्मसमर्पण करने वाले कुछ भी व्यक्ति आर्य-समाज में होते तो आज आर्य समाज का वर्तमान विधान कब का बदल गया होता, और उसके परिवर्तन के साथ आर्यसमाज की गति में भी महान् अन्तर दीखता। मै कभी सोचता हूं तो सर नीचा हो जाता है कि मेरे आचार्य दयानन्द के अनुरूप शिष्य नहीं मिले। यदि हमने कुछ भी शिष्यानुरूप कार्य किया होता तो दयानन्द का सन्देश धावा पृथिवी के अन्तरात्मा में गूंज जाता

आर्य समाज के विधान में परिवर्तन की क्यों आवश्यकता है? ऐसा यदि पूछा जावे तो हम कहेंगे कि वर्तमान विधान के अनुसार आर्यसमाज का स्वरूप निश्चित नहीं किया जासकता। इस समय आर्यसमाज को धार्मिक सस्था कहा भी जा सकता है परन्तु पूरे प्रकार से नहीं भी। राज-नैतिक सस्था है भी और नहीं भी, सामाजिक सस्था है भी और नहीं भी। आर्यसमाजके प्लेट-फार्म से सभी प्रकार की सम्भव-असम्भव बातें की जाती रही हैं और की जाती हैं। परन्तु बीसियों वर्षों के बाद भी आर्यसमाज के व्याख्यानों में जीवनप्रद अन्तर नहीं आया पुरानी बातों को पीसते २ बोलने और सुनने वाले ऊब गये। व्यवहार की ओर कोई भी ध्यान नहीं दिया जाता। मै यह स्वीकार करता हूं कि आर्यसमाज धार्मिक सस्था ही है परन्तु आर्यसमाज का धर्म देश काल के विरुद्ध नहीं। धर्मका प्राण है सेवा परन्तु आजतक आर्य-समाज के कर्णधारों ने सेवा के महत्त्व को नहीं समझा। मध्यम श्रेणी के कुछ लोग ही आर्यसमाज की रीढ़ का हड्डी हैं। भला ससार में कोई भी आन्दोलन ऐसे डावाडोल लोगों के आधार पर भी चला है? आज तक जब कभी भी यह कहा जाता रहा है कि आर्यसमाज धार्मिक संस्था है उसका अर्थ केवल यही रहा है कि वह राष्ट्रीयता का साथ न दे। यदि आर्यसमाज अपने सामाजिक पुरोगम पर दृढ़ता से आरूढ़ रहे तो वह ही इतना है कि कई शताब्दियों में पूरा होगा। परन्तु इसके लिये तो आर्यसमाज को शक्ति को ग्रामों में केन्द्रित करना होगा, और यह तब तक न हो सकेग जब तक ज़िला सभाओं को प्रोत्साहन न दिया जायगा। तब प्रान्तीय सभाओं में प्रतिनिधि ज़िला सभाओं द्वारा ही जाय गे।

एक और भी बात है, ससार में आज तक कोई भी धर्म रजिस्टरों पर नही चला आज भी गाव में जो लाखों करोड़ों सनातनधर्मी धार्मिक विश्वासों के अनुसार काम करते हैं, पूजा करते हैं, और बिना नोटिस सुदूर मेलों मे भी सम्मि-लित होते हैं, वे कौन से रजिस्टर में दर्ज हैं। रजिस्टर आदि तो राजनैतिक सस्थाओं के ही लिये चाहिये, परन्तु आर्यसमाज कही जाती है धार्मिक सस्था। इसी लिये तो मै कहता हूं कि वर्तमान विधान में आर्य-समाज धार्मिक सस्था है भी और नहीं भी। भारतवर्ष ग्रामों का बना हुआ है ग्रामों में तो आर्यसमाज तभी जीवित रह सकता है, जब ग्रामों के कुछ परिवारों को

आर्यसमाजी बनाया जाय। उनके बच्चों के सभी संस्कार वैदिक रीति से हों आर्यसमाज नाम की एक संस्था भी रहे। परन्तु यह आवश्यक नहीं कि उसके सदस्य भी सभी हों। ऐसी संस्था के सदस्य तो आठ या दस से ज्यादा न होंगे। वैसे भी तो प्रत्येक समाज में काम करने वाले थोड़े ही व्यक्ति होते हैं। ऐसे लोगों की एक पचायत सी ही आर्यसमाज होगी। शहरों मे भी हमें यह मोह छोड़ना पड़ेगा कि हमारी सभा के अधिक से अधिक सदस्य हों। जब तक यह मोह न छूटेगा तब तक आर्यसाज का त्राण न होगा।

थोड़ा चुनाव के सम्बन्ध में भी सुनिये, आज जितने भी आर्यसमाजों में झगड़े हैं सब चुनाव के कारण हैं। आर्यसमाज के वर्तमान विधान मे श्री नारायण स्वामी जी का भी एक वोट है और किसी भी समाज का सदस्य, साधारण अनपढ़ व्यक्ति भी एक ही वोट दे सकता है। दोनों के वोट में कोई अन्तर नहीं। जहा हमारे शास्त्र कहते हैं कि 'एकोऽपि वेद विद् धर्मं य व्यवस्येद् द्विजोत्तम, मनु

एक वेदविद् विद्वान् जिस बात को कहे उसकी बात को हजारों भी मूर्खों की अपेक्षा मान्य समझना चाहिये। वहा वर्तमान विधान में इसका कोई अन्तर नहीं रहता।

वर्तमान सगठन में विद्वान ब्राह्मण का कोई स्थान नहीं। अत हम वर्तमान सगठन के सम्बन्ध में अब्रह्मण्यम् (ब्राह्मणों के न रहने योग्य) उद्घोषित कर रहे हैं। सयुक्त प्रान्त की अर्धशताब्दी के सयोजकों का कर्तव्य है कि वर्तमान सगठन के परिवर्तन के सम्बन्ध मे विशेष विचार करवावें।

श्री स्वामी जी ने इस बात को स्वीकार किया है कि वर्तमान विधान के अनुसार प्रधान भी उसी प्रकार निर्वाचित होता, जिस प्रकार साधारण अन्तरग का सदस्य तथा अन्य अधिकारी, परन्तु समाज के उपनियम प्रधान ही को किसी काम के बनने या बिगड़ने का उत्तरदाता ठहराते हैं। परन्तु मैं समझता हू कि स्थानीय आर्य-समाजों के प्रधान जिस प्रकार निर्वाचित होते हैं यदि इसी प्रकार प्रान्तीय सभा के प्रधान का भी निर्वाचन हो तो वर्त्तमान संगठन की बहुत कुछ कमी दूर की जा सकती है। मेरा यह अभिप्राय नहीं कि अब प्रान्तीय सभा के प्रधान को निर्वाचित न करके नामज़द किया जाता है, परन्तु मेरा इतना ही कथन है कि इस समय प्रान्तीय प्रधान का निर्वाचन साक्षात सब आर्यों द्वारा न होकर परम्परा से परोक्ष सम्बन्ध से होता है। वर्त्तमान संगठन में प्रधान का निर्वाचन आर्य जनता से सीधा सम्बन्ध स्थापित नहीं कर सकता। मेरा विचार है कि यदि आर्य समाज के सगठन को शुद्ध और ग्राह्य बनाना है तो उसे जनता के अधिक से अधिक सम्पर्क में लाना चाहिये। इसका उपाय यह है कि जिस प्रकार किसी स्थानीय आर्य समाज के प्रधान का निर्वाचन सभी आर्य-समाजके सदस्य करते हैं; इसी प्रकार प्रान्तीय सभा के प्रधान का निर्वाचन भी प्रत्येक आर्यसमाज के सभासद् ही करें। ऐसा करने से सब से बड़ा लाभ तो यह होगा कि

पार्टी बाजी का वर्त्तमान दौर दौरा बहुत दूर हो जायगा, क्योंकि कोई भी व्यक्ति सारे प्रान्त में अपनी पार्टी नहीं बना सकता। एक और भी लाभ होगा—कुछ प्रतिनिधियों पर वर्त्तमान सगठन में कुछ प्रभाव-भी तथा स कोचात्मक भावना भी हो सकती है। और होती भी है, परन्तु जब प्रान्त के प्रत्येक आर्य को प्रधान का सीधा निर्वाचन करने का अधिकार होगा तब तो इस बात की आशा ही नहीं की जा सकती।

वर्त्तमान स'गठन में कभी कभी निर्वाचन के अवसर पर जन्म की जात पात का भो दौर दौरा देखने में आता है, इसी प्रकार से निर्वाचन करने पर प्रधान पद के लिये तो वह प्रयोग में न आएगा और फिर मेरा विचार है इस प्रकार करने से आर्यों की भावना में एक क्रान्तिकारी परिवर्तन होगा, उनको दृष्टि केन्द्र से हट कर स्थानिक हो जाएगी।

इस प्रकार जिस प्रधान को सब आर्यसमाजी चुनेंगे वह प्रान्त का प्रतिष्ठित-श्रेष्ठ-आर्य व्यक्ति होगा। समय पड़ने पर उसकी आज्ञा भी वे मानेंगे ऐसा व्यक्ति इस बात को अनुभव करेगा कि मुझे सब ने प्रधान बनाया है अत वह अपने चरित्र-बल और उपदेश आदि के द्वारा आर्यसमाजों के झगड़ों को दूर करने का सच्चा अधिकारी हो जाएगा। वह ऐसा करना अपना कर्त्तव्य समझेगा।

एक और भी बात है, मेरा विश्वास है कि किसी स'स्था का सञ्चालन वही व्यक्ति कर सकता है जो अपनी सारी शक्ति उसी कार्य में ही लगा दे, आज कल यह बात नहीं, मेरे प्रस्तावित विधान में उसी व्यक्ति को प्रान्त-भर के सभी आर्य चुनेंगे जो अपनी सारी शक्ति आर्य समाज के स गठन को ही अर्पित कर देगा।

आर्य-समाज जनताकी वस्तु है सदा आर्य-जनता के साथ उसका सीधा सम्बन्ध स्थापित करने से जनता अपने ऊपर इसके स चालन का भार समझेगी। कुछ थोड़े से व्यक्तियों में दोष भी सम्भव है, वे एक दूसरे का कुछ लिहाज भी कर सकते हैं, परन्तु सारे आर्यों के सम्बन्ध में ऐसा कम सम्भव है। प्रधान ही सच्चे अर्थों में सगठन का उत्तरदाता है, उसके ऊपर यह उत्तरदायित्व सभी के द्वारा पड़ना चाहिये, उसे सबके प्रति अपने को उत्तर-दायी मानना चाहिये। यद्यपि इतने परिवर्तन से ही सारा स'गठन अच्छा न होगा। परन्तु मेरा विचार है कि ऐसा करने से हम स गठन को कुछ शुद्ध बना सकेंगे। ऐसा प्रधान ही आर्यसमाज के स गठन का सच्चा पुरोहित होगा। पुरोहित शब्द का अर्थ है। 'पुर एव दधिति। जिसको सब जनता धर्म के निर्माण आदि कार्यों में आगे करती है।

इस प्रकार के प्रधान का निर्वाचन इस प्रकार से किया जाना चाहिये। निश्चित तिथि तक कार्या-लय में जिन व्यक्तियों का प्रधान पद के लिये नाम पहुँच जावे-उन सब नामों की सूची पत्रों में प्रकाशित करदें, साथ ही प्रत्येक आर्य समाज के पास भी उसकी और सूची भेज दी जावे। निश्चित तिथि तक समस्त आर्य समाज अपना साधारण अधिवेशन करके अपने समाजके अधिकारियों का भी चुनाव करें। कार्यालय में जिस व्यक्ति के

नाम पर अधिक आर्य समाजों के मत प्राप्त हुए हों वह अगले वर्ष का प्रधान समझा जावे, ऐसा करने से प्रत्येक आर्य सम.ज में एक सगठनात्मक जीवन आ जावेगा। प्रधान पद के लिये प्रस्तावित व्यक्तियो के पक्ष विपक्ष मे विद्वानों और आर्यों के मत भी प्रकाशित करने चाहिये।

एक और भी बात होनी चाहिये। प्रधान पद की सूची में उन्हीं व्यक्तियों का नाम आना चाहिये जो निश्चित आर्यत्व की कुछ विशेषताओं को धारण करते हों। उनकी सूची भी आर्य-समाज के विद्वान् व्यक्तियों द्वारा बनाई जा सकती है। तात्पर्य इतना है कि प्रान्तीय सभा के प्रधान का निर्वाचन सब समाजों के सब सदस्यों द्वारा होना चाहिये। प्रान्तीय सभा के अन्य अधिकारियों का चुनाव प्रधान की सम्मति पर यथा सम्भव करना चाहिये।

ऐसा करने में सम्भवत. कठिनता बताई जायगी। परन्तु थोड़े सोचने से प्रतीत होगा कि इसमे किसी विशेष कष्ट और असुविधा की सम्भावना नहीं। प्रत्येक आर्य समाज में निर्वाचन तो होते ही हैं, आज वे निश्चित समय पर ही होंगे उसी अवसर पर ही प्रान्तीय सभा के प्रधान का भी वे नाम प्रस्तुत कर देंगे। यह निर्वाचन कोई विशेष व्यय साध्य भी नहीं।

हा, इस प्रकार के निर्वाचन मे एक बात यह अवश्य होनी चाहिये कि जो आर्य समाज के विद्वान् प्रधान के निर्वाचन में भाग लेना चाहें परन्तु वे किसी समाज के सभासद् न हों वे भी उक्त अवसर पर स्थानीय आर्य समाज के अधिवेशन में प्रधान पद के लिये प्रस्तुत व्यक्ति के प्रस्ताव पर नोट दे सकें। विद्वानों की एक सूची प्रतिनिधि सभा द्वारा प्रकाशित होनी चाहिये। ऐसा करने में कुछ नूतनता के कारण कष्ट और असुविधा हो तब भी हित की दृष्टि से उसकी अपेक्षा न करनी चाहिए मेरी इच्छा है कि आर्य प्रतिनिधि सभा युक्त प्रान्त को इस सम्बन्ध में अन्य प्रान्तों को मार्ग दिखाना चाहिये।

—धर्म्मदेव शास्त्री (देहरादून)

परिवर्तन नहीं चाहिए

'आर्यसमाज और उसका सगठन' शीर्षक श्री० पूज्य महात्मा नारायण स्वामी जी का लेख पढ़ा। सचमुच,इस समय प्रचलित सगठन Democracy या प्रजातन्त्रीय विधान है और अन्तरङ्ग सदस्या को हम Ministers without Portfolio कह भी सकते हैं। परन्तु स्वामी जी महाराज, एक धार्मिक सस्था और राष्ट्रीय धारा-सभा Legislatures मे तो अन्तर अवश्य ही रहेगा। Legislatures मे सभा का नियमित काल से होना आवश्यक है, परन्तु आर्यसमाज के सगठन के अन्दर साधारण सभा का होना वर्ष में केवल एक बार आवश्यक है। अत हमको धार्मिक सभा और उक्त राष्ट्रीय सभा मे अवश्य अन्तर करना होगा।

आगे चल कर श्री पूज्य स्वामी जी महाराज बताते हैं कि निर्वाचन प्रथा बन्द कर देनी चाहिए और इसके स्थानपर तीन व्यक्तियों द्वारा निर्वाचन हुआ करे। मैं प्रचलित निर्वाचन प्रथा के संशोधन के पक्ष में अवश्य हूँ, परन्तु इस भांति नहीं जैसा

कि श्री० पूज्य स्वामी जी बताते हैं। मुझे स्वामीजी क्षमा करेंगे यदि मैं स्वामी जी के उक्त संशोधन का Dictatorship का रूपान्तर दूं। ये दो तीन व्यक्ति एक आर्यसमाज के वर्ष-भर के लिए भाग्य विधाता होंगे। इसको 'डिक्टेटरशिप' न कहेंगे तो क्या कहा जायगा। श्री स्वामी जी इस संशोधन को कार्यरूप मे परिणत करने के लिए बताते हैं कि प्रधान ही मन्त्री चुन लिया करें। मैं पुन श्री० स्वामीजी से क्षमा चाहूँगा कि इससे खुल्लम खुल्ला दलबन्दी' की प्रथा बढ़ जायगी। मेरी सम्मति में यह दल-बन्दी Party System धार्मिक संस्थाओं में न घुसनी चाहिए, राष्ट्रीय सभाओं के लिए आवश्यक हैं। परन्तु आर्यसमाज का नियन्त्रण प्रेम, श्रद्धा, भक्ति व लगन से है और राष्ट्रीय सभाका निमन्त्रण धाराओं से है, जिनके भग होने से शरीरिक आर्थिक दण्ड मिल सकता है।

मेरी सम्मति में प्रचलित संगठन में संशोधन यही किया जाय कि जो नियम इस समय हैं उन्हीं को अक्षरश वर्तना चाहिए। उदाहरण रूप से आर्य-समाज के नियम- उपनियम' मे उपनियम सं० ३६ को ही लीजिए वह निम्न प्रकार है—

३६—सब आर्य और आर्यसभाओं को संस्कृत अथवा आर्य भाषा आवश्यक माननी चाहिए मैं यह चाहूँगा कि जब तक एक सज्जन आर्य भाषा तथा संस्कृत न सीख लेवें वे आर्य-सभासद नहीं हो सकते। उपनियम ४-क जो सदाचार सम्बन्धी है, उसको पूर्णतया लागू किया जा सकता है। मेरी तुच्छ धारणा में इस समय के नियम उपनियमों में केवल उनको पूर्णतया लागू ही करना आवश्यक है, न कि उनको इस प्रकार बनाना कि किसी व्यक्ति के हाथ में ही 'शक्ति' आ जाए और वह समय पड़ने पर उसका दुरुपयोग कर सके।

आशा है श्री० पूज्य स्वामी जी मुझे क्षमा करेंगे

रामकृष्ण निगम

एम० ए०, एल० एल० बी

इस संगठन सुधार से काम नहीं चलेगा ?

आर्यसमाज की वर्त्तमान व्यवस्था सुधार की तान संगठन की वर्त्तमान प्रणाली पर टूटती है इससे बहुतों को इन्कार नहीं हो सकता। इस कारण श्री महात्मा नारायणस्वामीजी का 'आर्य-समाज और उसका सगठन' वाला लेख एकदम देशकालानुसार है अतएव गम्भीर विचार करने के योग्य है। यह आर्य-समाज के लिये शुभ चिह्न है कि वर्षों से विचार-कोटि की खटाई मे पड़ी हुई व्यवस्था सुधार की बात आर्यसमाज के प्रमुख नेता द्वारा आर्यसमाज के सामने व्यावहारिक रूप देने के लिये उपस्थित की जा रही है। आशा है कि पर्याप्त विचार विनिमय के बाद उचित सुधार का तराशा तोला हुआ रूप जनता के सन्मुख आवेगा और फिर उसको सारी आर्यसमाजों से मनवाने की कोशिश की जावेगी।

हम चाहते हैं प्रान्त के विचारशील, समाज

के हितैषी आर्य-सज्जन इस पहलू पर अपने २ विचार आर्यमार्तण्ड में प्रकाशित करने के लिये भेजें। आर्यमार्तण्डके कालम इसके लिये विशेषतया खुले मिलेंगे।

श्री पूज्य स्वामीजी महाराज ने जो कुछ विचार सुधार के लिये उपस्थित किये हैं वह वर्त्तमान मे प्रचलित आर्यसमाज की प्रजातन्त्र व्यवस्था के एक पहलू को ही दृष्टि मे रख कर किय हैं, ऐसा प्रतीत होता है।

हमारा ऐसा विचार है कि आर्यसमाज की वर्त्तमान कुव्यवस्था का कारण आर्यसमाज की जनसाधारण समाज नहीं है, इस अव्यवस्थित व्यवस्था की जिम्मेवारी उन लोगों पर है जो छोटी से छोटी आर्यसमाज से लेकर बड़ी से बड़ी आर्यसमाजों, सभाओं, सस्थाओं के धर्मधुरीण बने हुये हैं। यहा हम साफ कर देना चाहते हैं कि यह हम आम लागू बात कहते हैं जिसके अपवाद-स्वरूप कई व्यक्ति समाज मे मौजूद हैं, परन्तु ऐसे व्यक्तियों की तादाद आर्यसमाज मे नगण्य के बराबर है अतएव प्रजातन्त्रव्यवस्था से निकल कर कोतवालतन्त्र-व्यवस्था में जाना एक तरह से खाई मे से निकल कर कूप मे जाने के समान है। यदि आर्यसमाज की जन साधारण समाज स्वामीजी के कथनानुसार इस विषय मे निर्बल पाई गई है कि "वह अपनी सम्मति का मूल्य समझे और अच्छी तरह से जाने कि सम्मति स्थिर करने में किसी प्रकार का राजीनामा नहीं हुआ करता, किसी मनुष्य की सम्मति वही हुआ करती है जो उसके अन्तरात्मा से निकले" तो धृष्टता क्षमा हो, आर्यसमाज के ऊचे तबके के महान् पुरुष कहा तक इस कसौटी पर ठीक उतरेंगे यह विषय चिन्तनीय है।

पूज्य नारायणस्वामीजी महाराज जिन लोगों के भरोसे आर्यसमाज की नैया को छोड़ना चाहते हैं वे कहा तक राय कायम करने के अधिकारी हो सकते हैं, यह बात विचारणीय है।

सच बात तो यह है कि यदि जनसाधारण अज्ञान विवश होकर अपनी सम्मतिया दे बैठते हैं तो हमारी समाज के धर्मधुरीण अधिकाश मे अपनी अन्तरात्मा की आवाज को गुंजाते हुए भी अगुश्तनुमा होने का साहस नही कर सकते हैं और इस तरह उनकी सम्मति एक कजूस की सम्पत्ति है जो दिखाने के काम की तो होती है, परन्तु समय पर काम कुछ नही देती।

हमारा कहना यही है कि आर्यसमाज के अधिकतर महान्पुरुषों की भी सम्मति आर्यसमाज की व्यावहारिक व्यवस्था सुधार के सम्बन्ध में ऐसी ही पोची है जैसी कि अबोध जनता की। हमारे महान् पुरुष धर्म को छुरे की धार समझते हुये भी व्यावहारिक सम्मति बनाते वक्त हिंडोले मे बैठे रहना पसन्द करते हैं।

अभी हाल की ही बात है। एक हमारे मित्र कुछ विशेष संस्थाओ और व्यक्तियों पर टीका टिप्पणी करते हुये एक उच्च महानुभाव से पूछने लगे "कहिये! आप सदाचार से गिर हुये पुरुष को संस्था के साथ लगा देख सकते हैं अथवा संस्था की सम्भवतया हानि बर्दाश्त करने के लिये तैयार हैं।" सुनकर श्रीमान्जी असमजस में पड़

गये। आर्य्य अन्तरात्मा की पुकार थी कि नहीं देख सकते, संस्था और व्यक्ति का मोह तकाजा करता था कि 'मारो गोली' ऐसी बातों को—संस्था ही से इस जहान में सदा आन तान है। संस्था न हो तो समाज टूटी कमान है ॥ अस्तु श्रीमान रायके हिन्डोले में बैठ कर भोंके खाते रहे

वास्तव में आर्य समाज का जन साधारण जिस निर्बलता के कारण समाज का सुधार नहीं कर सकता वह निर्बलता आर्य समाज के महान् पुरुषों में भी है। अस्तु, पूज्य स्वामी जी की स्कीम व्यवस्था सुधार में तब ही कार-आमद हो सकती है जब कि वह अधिकतर महान् पुरुष जनता के सामने बतलावें कि वे सत्य मार्ग को, धर्म के रास्ते को छुरे की धार समझ कर भी वे चलने के लिये तैयार हैं। वे अपने व्यवहार से जतलावे कि वे हिंडोलाराय नहीं, स्थिरराय प्रिय हैं और वे उसको कार्य रूप में लाने के लिये यदि किसी का ख्याल कर सकते हैं तो अन्तरात्मा का, वस्तुत सत्य और धर्म का। आवश्यकता है कि जन साधारण को छोड़ कर महान पुरुषों को इस रूख की ओर लाया जावे तब कहीं पूज्य स्वामीजी की स्कीम सफल हो सकती है।

(आर्य्य-मार्त्तण्ड)

आर्यसमाज की फ़र्वरी मार्च की प्रगति

संयुक्त प्रान्त

श्रीमान् सम्पादक जी, नमस्ते

जैसा कि मैंने अपने पूर्व्व पत्र मे लिखा था, इन दिनों सभा का स्वर्ण जयन्ती महोत्सव प्रान्त के आर्य्य भाइयों के विशेष आकर्षण तथा प्रान्तिक सभा की विशेष प्रगतियों का केन्द्र बना हुआ है। महोत्सव को सफल बनाने विषयक योजनाओं और प्रस्तावों की आम चर्चा पढ़ी और सुनी जाती है। उनमें से कुछ प्रस्तावों इत्यादि का मैंने पूर्व पत्र में जिक्र किया था। इस मास अन्य कई प्रस्ताव प्रकाश में आए हैं—एक प्रस्ताव यह है कि महोत्सव से १५ दिन पूर्व्व एक विद्वत् सम्मेलन किया जाय। ऋषि के मन्तव्यों वेद भाष्य और अन्य ग्रन्थों पर जो अन्य मतावलम्बियों की ओर से समय २ पर आक्षेप होते रहते हैं उनका जो उत्तर आर्य्य विद्वानों की ओर से दिया जाता है उन सब पर विचार किया जाय और उन्हें ग्रन्थ के रूप मे प्रकाशित करा दिया जाय।

एक प्रस्ताव श्रोत विधिसे यज्ञका अनुष्ठान है। श्रौत विधि के अनुसार शताब्दी से कुछ दिन पूर्व्व याज्ञिकों द्वारा वैध यज्ञ का अनुष्ठान किया जाय। एक दूसरी योजना सभा के कार्य्यालय के स्थिर करने के सम्बन्ध में प्रकाश में आई है। मालूम हुआ है कि सभा ने १—२ वर्ष हुए लखनऊ में अपना हैडक्वार्टर्स नियत करने का फ़ैसला किया था। यह योजना इसी सम्बन्ध में है इस योजना के अनुसार प्रान्त का प्रत्येक आर्य्य अपनी १ मास या १ पक्ष की आय सभा की आर्थिक अवस्था को ठीक करने के लिए जिसमे कार्य्यालय का केन्द्रीकरण भी शामिल है प्रान्तिक सभा के निर्णय पर रक्खे। इस योजना में प्रान्तिक सभा को कतिपय उपायों का निर्देश भी किया गया है जिनके क्रियान्वित होनेसे कार्य्यालय आसानीसे और शीघ्रतासे स्थिर होसकता है। एक दूसरा प्रस्ताव प्रान्त के आर्य्यों मे व्याप्त वैमनस्य को दूरकर ने में इस महोत्सव का पूरा २ उपयोग करना है। वैमनस्य के दूर होने के निम्न उपाय इस प्रस्ताव में प्रकट किए गए हैं —

१ पुरानी सब बातों को सर्वथा भुला दिया जाय।

२ नई सृष्टि शुरू की जाय।

३ पुरानी बातों के लिए कोई किसी प्रकार की शिकायत, ताना तथा साकेतिक उपहास भी न करे।

(४) यदि कोई एक दो व्यक्ति ऐसे हों जो किसी प्रकार भी मिलना पसन्द न करें तो उन्हें आर्यसमाज के विशाल हितकी दृष्टि से उभय पक्ष से पृथक हो जाना चाहिए। प्रस्तावक महोदय की सम्मति है कि यह कार्य किसी निर्णायक समिति इत्यादि के वश का नहीं है। एक प्रस्ताव है सामाजिक सेवाओं के लिये प्रान्त में आर्यवीरों

का संगठन होना चाहिए। इस सगठन में वही आर्य्य नवयुवक शामिल होने चाहिएं जो समाज सेवा के अतिरिक्त सामाजिक क्रान्ति के कार्य्य में क्रियात्मक रूप से अग्रसर हों। सम्पादकजी! हमें सबसे ज्यादा 'वैमनस्य निवारण' सम्बन्धी प्रस्ताव अपील करता है। हमारा बहुत सी उत्तम योजनाओं और प्रस्तावों की सफलता समाज की शान्ति और साधारण रूप मे उसके गति करते रहने पर एक बड़ी हद तक आश्रित है। पैक्टों, एग्रीमैण्टों, और माहिदों इत्यादि से वास्तविक शान्ति स्थापित होती है, यह बहुत कम देखने में आता है। हम प्रस्तावक के इस विचार से पूर्णतया सहमत हैं कि वैमनस्य के दूर करने के लिए निर्णायक समिति इत्यादि की योजनाओं इत्यादि की जरूरत नहीं है। जरूरत है हृदय परिवर्तन की। परमात्मा करे कि प्रान्त के उन आर्य्यों का हृदय परिवर्तन हो जिनमें वैमनस्य है वा जो वैमनस्य का कारण जान में वा अनजान मे बन रहे हैं। वैमनस्य निवारण की समस्या का हमारे कार्यक्रम का एक अङ्ग बनना वा बने रहना हमारे लिये शोभाजनक नहीं है। जीवित और प्रगतिशील सोसायटियों में यह बात हमें उपहासास्पद बनाने वाली ।

कदाचित् आगरा आर्यसमाज के अभियोग का छोटी अदालत का फैसला आपने समाचार पत्रों में पढ़ा होगा। सुनते हैं उस फैसले के अनुसार समाज की सम्पत्ति ऊँची अदालत के निर्णय तक सरकार के कब्जे में रहेगी। इस फैसले से प्रान्त के आर्य जगत् में दुख और बेचैनी की लहर दौड़ गई है। हृदय के वेग को बरबस रोक कर हम यह समाचार लिखने लगे हैं। आर्यसमाज से हित रखने वाला ऐसा कौन सा आर्य होगा जिसका मस्तक शर्म से झुक न जाए और जिनका हृदय क्षोभ से विचलित न हो जाय। आप्त नेताओं को तत्काल मैदान में आकर गृहकलह की ज्वाला को शान्त करना और समाज की सम्पत्ति, उसके गौरव और संगठन की रक्षा करनी चाहिए। देखें आर्य नेता क्या कदम उठाते हैं ?

इस मास प्रान्तिक सभा द्वारा निर्धारित कार्य क्रम के अनुसार ऋषिबोधोत्सव के उपलक्ष में वेद प्रचार सप्ताह तथा लेखराम वीरतृतीया समारोह पूर्वक मनाए गये।

२० फरवरी को विधवा विवाह सहायक सभा के उद्योग से श्रीमती सरयूदेवी का पुनर्विवाह मोती कटरा निवासी महाशय धनीराम के साथ हुआ। १० मार्च को एक अमेरिकन सज्जन गुरुकुल वृन्दावन में पधारे, गुरुकुल में अमेरिका, ट्रीनीटाड आदि द्वीपों के रहने वालों के रहन सहन बोल चाल तथा वेषभूषा तथा आर्यसमाज के कार्य के सम्बन्ध मे उनका व्याख्यान हुआ, उन्होंने उपर्युक्त स्थानों में आर्य समाज के सुव्यवस्थित प्रचार की आवश्यकता पर बल दिया। क्या ही अच्छा हो कि उत्तम कोटि के १-२ नहीं वरन् अनेक प्रचारक प्रचार मिशन पर विदेशों की यात्रा करें। हम जानते हैं कि शब्द के ठीक २ अर्थ में इस प्रकार के प्रचारकों का हमारे यहा अभाव सा ही है। इसके लिए आर्यों को चुपचाप अपने को तैयार करना चाहिए, उनके पवित्र कार्य में अपेक्षित सहायता उन्हें अनायास मिल

जायगी, हमारा तो अपना ऐसा ही अनुभव है। विदेश के नवयुवक और नवयुवतियों को स्वय योग्य प्रचारक बनना चाहिए और आर्य-समाज को भी इस बात पर विशेष ध्यान देना चाहिए।

गत २६ फ़रवरी को अब्दुल्लापुर (सहारनपुर) निवासी प रामजीदास की विधवा पुत्री का विवाह प आत्माराम के साथ वैदिक रीति से हुआ।

आर्य उपप्रतिनिधि सभा बिजनौर गढ़वाल में प्रचार का कार्य करती रहती है। समाचार है कि उसने अब वहा प्रचार की विशेष योजना की है और दो टोलिया १२ अप्रैल को वहा जाने वाली हैं। हम इस मिशन की प्रचार रिपोर्ट की उत्सुकतापूर्वक प्रतीक्षा करेंगे।

दयानन्द मैडिकल मिशन मन्सूरी की सूचना है कि उसने आगामी १५ अप्रैल १९३७ से एक योग्य सर्जन तथा एक सुयोग्य वैद्य की सेवा प्राप्त की है। डाक्टर महोदय ने लखनऊ मैडिकल कालेज से एम बी बी.एस. पास करने के बाद वियना के जगत् प्रसिद्ध मेडिकल कालिज में शिक्षा प्राप्त की है, और जो नाक, कान और गले के रोगों के विशेषज्ञ हैं, अब तक मिशन में आखों तथा सामान्य शल्य क्रिया का प्रबन्ध तो था, परन्तु अब से उपरोक्त अङ्गों की बीमारियों का इलाज भी होगा। इसके अतिरिक्त एक लेडी डाक्टर की भी सेवायें प्राप्त की हैं, और स्त्रियों के रोगों के इलाज की भी उत्तम व्यवस्था हो गई है।

लखीमपुर विष्णु निवासी महाशय चोखेलाल जी की आर्यसमाज रौरा कला (धमोरा स्टेट रामपुर) में मेला रठौड़ा में ता ११-३-३७ की शुद्धि की और उनको उनकी पहली बिरादरी में मिला दिया वे कुछ समय पूर्व मुसल्मान हो गय थे। इस सस्कार का ग्राम के सनातन धर्मी भाइयों ने भी समर्थन किया। मुसल्मानी स्टेट में इस प्रकार की प्रगतिया एक खास महत्व रखती हैं इसलिये इसका यहा उल्लेख कर रहा हूँ।

पंजाब

श्रीमान् सम्पादक जी,

नमस्ते!

इस मास भी उपदेशक विद्यालय की घटना की विषैली वायु से प्रान्त का वातावरण आच्छादित रहा है और प्रान्त के वास्तविक कार्य का दिग्दर्शन प्राय कठिन हो गया है, यों तो उत्सव संस्कार इत्यादि साधारण गति से यथानियम होते रहे हैं। इसलिए हम विशेष समाचार भेजने में असमर्थ है। आवश्यकता है वातावरण के शुद्ध करने की जिससे कार्य की ठीक २ प्रगति का दिग्दर्शन हो तथा कराया जा सके।

गत मास हमने पं० गोपाल मिश्र की गन्दी पुस्तक के विरुद्ध कार्यवाहि के सम्बन्ध में प्रकट किया था कि प्रान्तिक सभा ने इस सम्बन्ध में उचित कार्यवाहि करने के लिए एक उपसमिति नियत की है। और यह भी कि इस सम्बन्ध में प्रतिनिधि सभा की कार्यवाहि की उत्सुकता पूर्वक प्रतीक्षा है। पता नहीं प्रतिनिधि सभा ने इस सम्बन्ध में क्या कार्यवाहि की है। जनता इसके सम्बन्ध में प्रकाश के लिए उत्सुक है। प्रतिनिधि

सभा को अविलम्ब कार्य्यवाहि के सम्बन्ध में प्रकाश डालना चाहिए।

प्रसन्नता की बात है कि मैडिकल स्कूल लुध्याना को आर्य-समाज लुध्याना ने अपने अधीन लेना स्वीकार करके उसके प्रबन्ध के लिये एक कमेटी नियुक्त कर दी है। पञ्जाब में सरकारी स्कूल के अतिरिक्त यह एक ही मैडिकल स्कूल है जिसमें लड़के पढ़ सकते हैं। लड़कियों के लिए ईसाइयों का पूर्व से एक स्कूल है।

इसके प्रधान और सदस्य इस प्रकार हैं —

प्रधान—श्री रंगीलाल जी रिटायर्ड जज श्री मास्टर रामलाल जी बी० ए० मन्त्री

सदस्य

१ श्री डा० बख्तावरसिंह

२. श्री माधोराम

३ श्री महाशय वृन्दावन

४. श्री महाशय गुज्जरमल

५. श्री डा० खुशीराम

६. श्री रायसाहब शिवप्रसाद जी

७ श्री लाला श्रीकृष्ण जी

८ श्री महाशय कृष्ण जी

६ श्री दीवान बद्रीदास जी

१०. श्री महाशय कर्मचन्द थापर

सरकार ने आर्य-प्रतिनिधि सभा पञ्जाब के साप्ताहिक मुखपत्र आर्य-मुसाफिर का शहीद अंक जो १५ मार्चको प लेखरामजी की बलिदान जयन्ती की उपलक्ष में छपा था, एक आपत्ति-जनक लेख के आधार पर जब्त कर लिया है और साथ ही मुद्रक, प्रकाशक और जिस प्रेस में वह छपता है उस प्रेस से एक हजार रुपये की भी जमानत मागी है।

—राजस्थान प्रान्त—

श्री सम्पादक जी नमस्ते।

इस समय तक सभा के सहयोग में कार्य्य करने वाले आनरेरी उपदेशकों की सख्या १८ तक पहुँच गई है, और प्राय सभी कार्य्य कर्त्ताओं ने उत्साह प्रकट किया है। अभी आर्य्यसमाज हिन्डौन (जयपुर) के वार्षिकोत्सव पर सभा की ओर से उपदेशक व भजनोपदेशकों के अतिरिक्त श्री स्वा नारायणानन्द जी, श्री. स्वा नृसिंहदेव जी सरस्वती, श्री देशभक्त कुँवर चाद करण जी शारदा व सभा के उपमत्री श्री. पं भगवानस्वरूप जी न्याय भूषण सम्मिलत हुए थे।

श्रीमान् देशभक्त कुँवर-चादकरण जी शारदा का जोरदार स्वागत हुआ, और उन की अध्यक्षता में जयपुर राज्य आर्य्य सम्मेलन हुआ जिस में कई उपयोगी प्रस्तावों के अतिरिक्त जयपुर राज्य की उपप्रतिनिधि सभा, इस सभा के आधीन बनाने का प्रस्ताव सर्व सम्मति से स्वीकृत हुआ।

गुरुकुल चित्तौड़ गढ़का उत्सव बड़े समारोहपूर्वक हुआ जिसमें सभा की ओर से एक दजन व्यक्ति सम्मिलित हुए और उदयपुर के भी सज्जन पर्याप्त सख्या में सम्मिलित हुए थे। श्री स्वा व्रतानन्द जी महाराज की तपस्या व लगन ने गुरुकुल को एक अच्छा सुन्दर और उपयोगी सस्था का रूप दे दिया है।

रामगढ़ (जयपुर) शेखावाटी प्रान्त का एक केन्द्र है। वहा उत्सव प्रतिवर्ष मार्च मास में हुआ करता है। और आस पास के हजारों व्यक्ति वहा आया करते हैं। वहा के उत्सव ने एक अच्छे

मेला का रूप धारण कर रक्खा है। सभा की ओर से श्री स्वा. नृसिंहदेव जी सरस्वती तथा पं० गोकुलदत्त जी व गणेशीलाल जी वहा पहुँचे, खूब प्रचार हुआ और एक सम्मेलन भी बड़े समारोह के साथ हुआ।

मुगावली, श्रीगगानगर, हिन्डौन, रामगढ़, उज्जैन, गुना, ग्वालियर, बीकानेर, जोधपुर, सुजानगढ़, आदि स्थानों मे समाजों के वार्षिकोत्सव और ऋषि बोधोत्सव मनाए गए, और सभा की ओर से सभी स्थानों पर उपदेशक व भजनीक पहुँचे।

मध्य-प्रदेश

श्रीमान्

सम्पादक जी

नमस्ते

इस मासकी विशेष प्रगति आर्य प्रतिनिधि सभा का साधारण अधिवेशन है जो २८–२९–३० मार्च को रायपुरमें श्री० बाबू घनश्यामसिह जी गुप्त एम, एल, ए, के सभापतित्व में हुआ। आगामी वर्ष के लिये निम्नपदाधिकारी चुने गये।

प्रधान—श्रीमान् बाबू घनश्याम सिंह जी गुप्त द्रुग

उपप्रधान—१ श्रीमान सी, डी, गुप्ता वकील रायपुर

२ बा० शिवदत्त ज्ञानी एम ए.

३ बा० पन्नालाल व्यास खामगाव

४ श्री आर, सी मसानी नागपुर

मन्त्री—श्री एस, के गुप्त नागपुर

सहायक मन्त्री—१ मि० डी, पी रामेश्वर नागपुर

२ श्री आर, एन थक्कर जबलपुर

इस अधिवेशन में कई महत्व पूर्ण प्रस्ताव पास हुए, एक प्रस्ताव के द्वारा श्री प० जगदीशचन्द्र बघेल से स्वर्गीय दानवीर तुलारामजी की जायदाद के प्रबन्ध में श्री बाबू घनश्याम सिह गुप्त को सहायता देने की प्रार्थना की गई, इसी सिलसिले में एक उप समिति विचार और रिपोर्ट के लिए नियत की गई कि दानवीर की वसीयत के अनुसार कन्या महाविद्यालय जालन्धर जैसा प्रस्तावित आर्य कन्या महाविद्यालय रायपुर या दुर्ग में कहा खुलना चाहिये। एक प्रस्ताव के द्वारा आर्य प्रतिनिधि सभा के मुख्य पत्र आर्य सेवक के स्टैंडर्ड और प्रचार को उन्नत करने का फैसला किया गया है।

इसी अवसर पर प्रो० शिवदत्त जी ज्ञानी ने अप्रल के मध्य में लगभग १ मास पर्यन्त प्रान्त में आर्य समाज के प्रचार और आर्य संस्थाओं को पुन सगठन करने का वचन दिया और श्री जयकृष्ण जी ने घोषणा की कि आर्य सेवक का इस वर्ष का जो घाटा सभा को हुआ है वह आर्य समाज अमरावती पूरा कर देगा। इसके अतिरिक्त प्रान्त में प्रचार की प्रगति का विवरण इस प्रकार है।

प्रान्त में प्रचार कार्य

ता०, १५-२-३७ से २६-२-३७ तक आर्य समाज उमर खेड़ के योग्य कार्यकर्ताओं के प्रबन्ध से उमरखेड़ मे प्रचार हुआ।

ता० २१ को म० सदाराम जी के सुपुत्र ओ३म प्रकाश का मुण्डन सस्कार बड़े समारोह पूर्वक वैदिक रीति से हुआ जिसका प्रभाव उपस्थित जनता पर अच्छा पड़ा।

ता २५ को नूरवी मुस्लिम स्त्री आयु लगभग ३५ वर्ष की शुद्धि लग भग ५० मनुष्यों तथा देवियों की उपस्थिति में की गई। नूरवी का शुद्ध नाम रगूबाई रखा। शुद्धि के पश्चात उपस्थित जनता ने प्रसन्नता पूर्वक इसके हाथ से मिठाई तथा जल ग्रहण किया और नूरवी की शुद्धि मे श्रीमती डाक्टरानी साहिबा तथा नारायणी देवी व म० मागीलाल जी की धर्मपत्नी ने बहुत सहयोग दिया इस शुद्धि में लगभग ४) के व्यय हुए जो समाज ने दिये।

ता, १ मार्च से ४ तक शिवाल पीपरी में सेठ रतनलाल जी के प्रबन्ध से लगभग ५०० मनुष्यों की उपस्थिति में समारोह पूर्वक प्रचार हुआ मार्ग व्ययके अतिरिक्त १८) सभा को प्राप्त हुए।

ता, ५ से ८ तक मनेंठा (मुगलाई) मे शिव प्रसादी लाल मालगुजार की पुत्री के विवाह के समय पर लगभग १००० मनुष्यों की उपस्थिति में समारोह पूर्वक प्रचार हुआ और मार्ग व्यय के के अतिरिक्त १०) दान सभा को प्राप्त हुए।

ता० १० से १२ तक पुन उमरखेड़ में प्रचार हुआ। ता० ११ शिवरात्री को स्थानीय समाज का उत्सव मनाया गया। आर्य समाज में ८ बजे से १० तक भजन-हवन उपदेश, ३ बजे दोपहर से ५ तक शका समाधान, ६ बजे शाम से नगर कीर्तन लगभग १००० मनुष्यों की उपस्थिति में समारोह पूर्वक निकाला गया जिसमें बोर्डिंग के विद्यार्थियों द्वारा बहुत सहायता मिली। रात्रि को ६ बजे से १२ तक स्वामी अनन्तानन्दजी के भजन व उपदेश हुए।

[नोट] ता० १५-२-३७ से १२-३-३७ त समाज उमरखेड़ द्वारा प्रचार कार्य हुआ, समाज शुभचिंतक, परिश्रमी कार्यकर्ता म० हजारीम जी मन्त्री व म० मागीलाल जी उपमन्त्र म० सद रामजी आर्य व म० भागीरथजी हैं। इनका कार प्रशमनीय है। उपरोक्त सज्जन समाज सम्बन्ध कार्य प्रसन्नता तथा प्रेमपूर्वक करते है। म० मा लाल जी की आर्थिक स्थिति भले प्रकार अच्छ नहीं परन्तु समाज के कार्य में हर समय जु रहते हैं और उन्नति सोचते रहते है। म० सदा राम जी तथा म० मागीलालजी ने स्वय खेड़ों बड़े परिश्रम से पहुँचकर प्रचार कार्य में बहुत सह यता हमे दी जिसके लिये जितना धन्यवाद दि जावे थोड़ा है। मन्त्री हजारीमल जी तथा उ रोक्त सज्जनों की सहायता से यहा स्त्री समाज भ खुल गया है।

"चांदूर रेल्वे समाचार"

वार्षिक-महोत्सव

आर्य समाज चांदूर रेल्वे का २५ वा वार्षि महोत्सव शिवरात्रि पर (ता० ११-३-३७ को श्री० पण्डित शिवदत्त जी ज्ञानी एम ए. प्रोफेस वासुदेव आर्ट्स कालेज वर्धा के सभापतित्व समारोह पूर्वक मनाया गया।

शुद्धिकरण

ता० १३-३ ३७ को रात्रि ८ बजे आर्य समा मन्दिर में बडनेरा में छ मास पूर्व इस्लाम ध

परिवर्तित मराठा जातिके रामराव नारायणराव सले की शुद्धि की गई—

प्रचार

ता० १६ और १७ मार्च ३७ को रात्रि मे ८ न स्थानीय धर्मशाला मे स्वामी अनन्तानन्द जी 'ईश्वर की व्यापकता' और 'वैदिक धर्म की ठता' विषयो पर व्याख्यान हुआ—

निवेदन

आर्य समाज के विषय मे लोकमत सचलित के पुस्तक-रूप मे जनता के सामने लाने की इच्छा है। किसी भी मजहब या सम्प्रदाय विद्वान् जन तथा सम्पादक लोग आर्य माज के सबन्ध के अपने २ विचार मेरे पास जने की कृपा करें। इन सज्जनो के सहयोग से इच्छित कार्य पूरा हो सकेगा।

मै कुछ विद्वानो के विचार सग्रह करपाया हूँ। न सज्जनों के पास ऐसे विचार सकलित हो वे इ मेरे पास भेजें तो बड़ी कृपा होगी।

मारुती रामजी कढू—

सा० स धारण सभा

तिथि— २२—३—१६३७

समय— दिन के १ बजे से

स्थान—बलिदान भवन देहली

उपस्थिति

)	श्री० महात्मा नारायण स्वामी	जी
)	,, स्वा० स्वतन्त्रानन्द	,,
)	,, ,, ब्रह्मानन्द	,,
)	,, बा० ज्योति स्वरूप	,,
	,, सेठ मदन मोहन	,,
(६)	,, प्रो० सुधाकर	,,
(७)	,, बा० घनश्याम सिंह	,,
(८)	,, प० गगा प्रसाद उपाध्याय	,,
(६)	,, ,, गगा प्रसाद जी चीफजज	,,
(१०)	,, प्रो० महेन्द्र प्रताप	,,
(११)	,, लक्ष्मैया नरसैया	,,
(१)	,, प० भगवानस्वरूप	,,
(१३)	,, डा० श्याम स्वरूप	,,
(१४)	,, बा० गजाधर प्रसाद	,,
(१५)	,, ,, श्रीराम	,,
(१६)	,, प० मूलचन्द्र	,,
(१७)	,, ,, चमूपति	,,
(१८)	,, ला० नारायणदत्त	,,
(१६)	,, म० कृष्ण	,,
(२०)	,, प० विश्वम्भरनाथ	,,
(२१)	,, ,, इन्द्र	,,
(२२)	भीमसेन	,,
(२३)	,, ,, ज्ञानचन्द	,,
(२४)	श्री बा० पूर्ण चन्द्र	,,
(२५)	,, दीवान तुलजाराम	,,
(२६)	,, ला० देशबन्धु	,,
(२७)	,, स्वा० सर्वदानन्द	,,
(२८)	,, कुँवर चान्द करण	,,
(२)	,, डा० युद्धवीरसिंह	,,
(३०)	,, बा० पीतमलाल	,,
(३१)	,, ला० रलाराम	,,
(३२)	,, ,, ज्ञानचंद	,,

शोक प्रस्ताव

यह सभा श्री० स्वामी ओंकार सच्चिदानन्द जी के निधन पर दुःख प्रगट करती है और उनके निधन को आर्य समाज की एक बड़ी क्षति समझती है।

(१) ३१-३-३६ के अधिवेशन की कार्यवाहि पढ़ी गई और सर्व्व सम्मति से सम्पुष्ट हुई।

(२) नोटिस का विषय स० २—वार्षिक रिपोर्ट आय व्यय के लेखे के साथ पेश हुई। श्री० बा० ज्योतिस्वरूप जी के प्रस्ताव तथा बा० गजाधर प्रसाद जी के अनुमोदन पर सर्व्व सम्मति से स्वीकृत हुई।

(३) आगामि वर्ष के लिए पदाधिकारियों और अन्तरग सदस्यो के निर्वाचन तथा आडीटर की नियुक्ति का विषय पेश हुआ। वर्तमान प्रधान (श्री नारायणस्वामीजी) ने प्रकट किया कि उन्होने निश्चय कर लिया है कि वे इस वर्ष प्रधान पद ग्रहण न करेंगे इस लिये दूसरा प्रधान तथा अन्य अधिकारी निर्वाचित किये जावें। विचारके बाद निम्न निर्वाचन स्वीकृत हुआ—

अधिकारी

(१) प्रधान— श्री० बा० घनश्याम सिंह जी
(२) उपप्रधान—श्री० प० गंगा प्रसाद चीफजज ,,
(३) ,, ,, ,, स्वा० स्वतन्त्रानन्द
(४) मन्त्री ,, प्र० सुधाकर ,,
(५) उप ,, ,, डा० युद्धवीर सिंह ,,
(६) कोषाध्यक्ष—डा० नारायणदत्त जी
(७) पुस्तकाध्यक्ष— ,, ज्ञानचन्द ,

आडीटर

श्री० बा० जगदीश प्रसाद जी (देहली गवर्नमेण्ट आडीटर सर्व्व सम्मति से आडीट नियत हुए।

अन्तरङ्ग सदस्य

(१)	श्री० प० वेदव्रत	जी	(बिहार)
(२)	,, म० नगीनदास	,,	(बम्बई)
(३)	,, बा० पूर्णचन्द्र	,,	(प्रवासियों के प्रतिनिधि)
(४)	,, ला० देशबन्धु	,,	(समाजो के)
(५)	,, नारायण स्वामी	,,	(जनरल
(६)	,, म० कृष्ण	,,	,,
(७)	,, कुंवरचान्द करण	,,	,,
(८)	,, बा० ज्योति स्वरूप	,,	,,
(९)	,, श्रीराम	,,	युक्त प्रान्त
(१०)	,, पं० धुरेन्द्र	,,	,,
(११)	,, बा० मदनमोहन सेठ	,,	,,
(१२)	,, प० ज्ञानचन्द		(पंजाब)
(१३)	,, ,, इन्द्र	,,	,,
(१४)	,, आचार्य रामदेव	,,	,

(४) (१) श्री महात्मा नारायण स्वामीजी मह राज ने १४ वर्ष पर्यन्त इस सभा को सुसगठि करने, उसके द्वारा देश-देशान्तर मे वेद-प्रच कराने और आर्य्य समाजो को शक्ति शाल बनाने मे जो परिश्रम योग्यता तथा तत्परता कार्य्य किया है उस के लिए यह सभा अपन हार्दिक कृतज्ञता प्रकट करती है और आश

ती है कि वे इस सभा को अपने दीर्घ अनु-
व और योग्यता से सदा लाभ पहुंचाते रहेंगे।
भी निश्चय हुआ कि इस सभा की ओर से
स्वामीजी की सेवा मे मान पत्र अर्पण किया
य तथा अन्तरंग सभा को प्रेरणा की जाय कि
शीघ्र से शीघ्र मान-पत्र अर्पण कर देवे।

(ख) निश्चय हुआ कि श्री० ला० देशबन्धु को उन की सेवाओं के लिए धन्यवाद दिया य।

(५) आर्य्य मैरेज बिल के पास होने से भा सूचित हुई। सर्व्व म्मति से निश्चय आ कि श्री० बा० घनश्याम सिंह जी श्रीयुत ० खरे, श्री० डा० देशमुख तथा श्री० डा० गवानदास जी ने आर्य्य विवाह बिल को जेस्लेटिव असेम्बली में पेश और समर्थन के जिस योग्यता से उसके पास कराने में लता प्राप्त की है उसके लिए सभा उनके प्रति ज्ञता प्रकट करती है तथा लेजिस्लेटिव सेम्बली के सरकारी तथा गैर सरकारी सदस्यों । अन्य सज्जनों को जिन्होंने उक्त बिल के पास ने में सहयोग दिया है हर्दिक धन्यवाद ो है।—

(६) नोटिस का विषय स०-४-आगामि वर्ष १४१६०) का बजट पेश हो कर पढ़ा गया और र्व सम्मति से स्वीकृत हुआ —

(७) नोटिस का विषय स० ६- आर्य्य समाज उपनियमों की धारा स० (४) (क) में वा तथा एक शब्दों के बीच २५०) वार्षिक बाकी स्था रखे जानेका विषय ३१-१-३७की अवरङ्गके नि० सं० ६ के साथ पेश हुआ। विचार के बाद बहु सम्मति से २५०) रखा जाना स्वीकृत हुआ।

(८) नोटिस का विषय स० ५—सभा क नियमावली की धारा स० ३ के (ख) में सशोधन का विषय अपेक्षित कौरम न होने की वजह से पेश न हो सका।

सभा पति जी को धन्य वाद के प्रस्ताव के साथ सभा विसर्जित हुई।

आवश्यक सूचना

७ मार्च १९३७ को, जो विज्ञप्ति श्री हीरालाल जी गाधी के सम्बन्ध में मेरी ओर से प्रकाशित हुई थी उस का अभिप्राय केवल इतना था कि उन्हें न आर्यसमाज का उपदेशक समझा जावे और न उनके लिये कोई प्रदर्शन Demonstration किया जावे परन्तु इसका अभिप्राय कदापि यह नही था कि उन्हें हम अपने भ्रातृ प्रेम से वंचित करें। यदि श्री हीरालाल जी गाधी किसी समाज मे अपनी ओर से वा बुलाने पर जावें तो उनके साथ ऐसा ही प्रेम पूर्वक व्यवहार किया जावे जैसा एक भाई दूसरे भाई के साथ करता है, जिससे उनमें उत्साह की वृद्धि हो और वे अपने को आर्यसमाज के लिये, अधिक से अधिक उपयोगी सिद्ध करें।

नारायण स्वामी

बलिदानभवन
१८-३-३७

लेख-सूची

नम्र निवेदन

[ले०—डा० तोलाराम रिटायर्ड स्टोरकीपर N W R आनरेरी सैक्रेटरी]

पंजाब की राजधानी लाहौर मे रावी रोड़ पर केन्द्रिय अनाथालय है जिसका प्रबन्ध एक रजिस्टर्ड सभा के आधीन है, जिसके प्रधान श्री पूज्य स्वामी स्वतन्त्रानन्द जी महाराज उपप्रधान सार्वदेशिक आर्य्य प्रतिनिधि सभा देहली हैं। उपप्रधान श्री पण्डित विश्वम्भरनाथ जी भूतपूर्व गवर्नर गुरुकुल कांगड़ी, श्री पण्डित ठाकुरदत्तजी वैद्यशास्त्री मुल्तानी, तथा डा० गणेशीलाल जी M B B. S हैं। इस अनाथालय को खुले हुए बीस वर्ष के लगभग हो चुके हैं। इसकी सहायता केवल लाहौर निवासी ही नहीं करते हैं, प्रत्युत सब प्रान्तों में रहने वाले हिन्दू आर्य्य भाई भी करते हैं। यही कारण है कि यह अनाथालय भारतवर्ष के दूसरे प्रान्तों में भी सर्व प्रिय हो रहा है और दिन प्रतिदिन उन्नति कर रहा है, यहा तक कि अब सरकार भी जो चोरी किये हुए लड़के लड़किया उनको मिलते हैं, जब तक उनके वारिसों का पता नहीं मिलता, तब तक उनको इस अनाथालय में रखती है। इस तरह से अनाथालय मे बच्चों की संख्या बढ़ गई है। इस समय तक तो निवास स्थान पर्याप्त था परन्तु संख्या बढ़ जाने से कन्याओं के लिये स्थान काफी नहीं है। इसलिए प्रबन्धक सभा ने निश्चय किया है, कि नवीन कमरे बनाए जायें, जिससे कन्याओं के स्थान का कष्ट मिट जाय। इनके बनाने के लिए धन की अपील की जावे। इसलिए मै दानी सज्जनों की सेवा मे विनीत भाव से प्रार्थना करता हूँ कि वे इस शुभ कार्य में सभा की सहायता करें ताकि अनाथ और निस्सहाय बच्चों को प्रवेश करने में बाधा न पड़े। यदि हम ऐसा न कर सके तो वे बालक जिनको हम स्थान न दे सकेंगे, अन्य मत वालों के जाल में फँसकर हमेशा के लिए धर्म से पतित हो जायेंगे और उसका पाप आर्य जाति को लगेगा। जो महानुभाव एक सौ से अधिक रुपया देंगे उनके नाम के पत्थर उन कमरों की दीवारों पर लगवा दिये जायेंगे। इस समय इस कार्य के लिये पाच सहस्र धन की शीघ्र आवश्यकता है जो दानी सज्जनों को पूरी करनी चाहिए।

इस अनाथालय के आधीन म्यूनिसिपल कमेटी से मंजूर एक मिडल स्कूल है जिसमें अनाथालय के तथा बाहर के लड़के पढ़ते हैं। एक दर्जी क्लास है जिसमे लड़के और लड़कियों को सीने का कार्य सिखलाया जाता है तथा बाहर के लड़के इसमे काम सीख सकते है। आज कल बीस लड़के सीख रहे हैं। बीस के लगभग लड़के यहा से काम सीख कर अपना निर्वाह भली प्रकार कर रहे हैं। अनाथालय मे इस समय ११२ लड़के और ७० लड़किया है जिनके निवास, भोजन, पढ़ाई आदि का प्रबन्ध अनाथालय की तरफ से किया जाता है। इस काम के लिये भी सहायता की आवश्यकता है। दानी तथा परोपकारप्रिय महानुभावों से प्रार्थना है कि वे इस ओर भी ध्यान करें जिस प्रकार की भी सहायता दे सकें देकर पुण्य के भागी बनें अर्थात् आटा, दाल, चावल, घी आदि खाद्य पदार्थ और पहनने के लिये वस्त्र देकर कृतार्थ करें। यह संस्था पूर्व भी आप जैसे दानियों के दान से चल रही है। अब भी आप से आशा की जाती है कि आप अवश्य सहायता देकर अनाथों का आशीर्वाद लेंगे और पुण्य के भागी बनेंगे।

ओ३म्

सार्वदेशिक

सार्वदेशिक-आर्य-प्रतिनिधि सभा देहली का मासिक मुख पत्र

वर्ष ११ | वैशाख १६६४ | मई १६३७ ई० | दयानन्दाब्द ११३ | अङ्क ३

वेद की शिक्षाएँ

युञ्जते मन उत युञ्जते धियो विद्रा विप्रस्य बृहतो विपश्चितः।

विहोत्रा दधे वयुना विदेक इन्मही देवस्य परिष्टुतिः॥

—यजुर्वेद।

भावार्थ—बुद्धिमान, महान ज्ञानी तथा योगी पुरुष उस अद्वितीय जगत्कर्ता ज्ञानी ईश्वर की श्रेष्ठ परता स्तुति मन और बुद्धि द्वारा अच्छे प्रकार किया करें।

सम्पादकीय—

एक कामना

आर्यों की अपनी एक विशेष सभ्यता है जो सृष्टि के आदि से लेकर अबतक स्थिर है। आर्यों ने इस सभ्यता को वेदों के आधार पर विकसित किया था और यही वजह इस सभ्यताकी स्थिरता की है। ससारके तत्वज्ञान का वास्तविक ज्ञान और संसार के वास्तविक उपयोगकी विधियों का ठीक २ पता लगाना मनुष्य की बुद्धि से परे की बात है। इनका सच्चा ज्ञाता परमेश्वर है। परमेश्वर सृष्टि की आदि मे ये भेद और विधियां मनुष्य को बतलाता है। इन रहस्यों और विधियों का संग्रह ही वेद है। मनुष्य की अल्पज्ञता ही है जिसने आर्यों को अपनी सभ्यता वेदों के आधार पर विकसित करने के लिए प्रेरित किया था।

इस सभ्यता के अतिरिक्त अनेक सभ्यताएँ प्रादुर्भूत हुईं और देखते ही देखते विस्मृति की गोद में विलीन हो गईं। उनके विनाश का कारण यह था कि मनुष्यों ने उन्हें सृष्टि की वास्तविक रचना और उसके उचित उपयोग की उपेक्षापूर्वक इच्छित किया और आवश्यकता वश अपने स्वार्थों की पूर्ति के लिये विकसित किया था। अस्थिरता के लक्षण पश्चिमी सभ्यतामे भी आज देख पड़रहे है। कभी वह हमारे सामने भौतिक वाद के आवरण मे आती है, कभी साम्यवाद के, कभी नेचरवाद के और न जाने और क्या २ रूप लेकर आए। यह भी सृष्टि की वास्तविक रचना और उसके उचित उपयोग की भयंकर अवहेलना करती देख पड़ रही है। यदि यह भी स्थिर न रहे और अपनी वास्तविक अवस्था जंगलीवाद (असभ्यवाद) में समा जाय जिसके लक्षण नग्नवाद और नेचरवाद मे देख पड़ रहे हैं तो कोई आश्चर्य की बात न होगी।

आर्यों ने अपनी सभ्यता की इमारत मोक्ष प्राप्ति की सुदृढ़ नींव पर स्थित की है। चूंकि मोक्ष भी इसी दुनिया के द्वारा ही प्राप्त हो सकती है इस लिए उन्होंने संसार का तत्वज्ञान का प्राप्त करना और ससार का उचित उपयोग करना मुमुक्षु के लिए जरूरी ठहराया है। या यों कहिए उन्होने अपनी सभ्यता उपर्युक्त दोनों बातों को ध्यान मे रखकर विकसित की है। संसार के तत्वज्ञान की प्राप्ति, ससार के उचित उपयोग तथा मोक्ष की सिद्धि के लिए उन्होंने एक अनुपम विधि स्थिर की है। वह विधि धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष४ भागों मे विभाजित है।

इस विधि के स्पष्टीकरण के लिए हम किंचित् विस्तार में जाते हैं।

शरीर का अर्थ से, मन का काम से, मोक्ष का आत्मा से और धर्म का बुद्धि से सम्बन्ध है।

शरीर और अर्थ मन और काम आत्मा और मोक्ष इन तीनों का पारस्परिक सम्बन्ध तो प्रत्यक्ष है ही। परन्तु बुद्धि और धर्म के सम्बन्ध की बात को सुनकर शायद पाठक चौंकेंगे, क्योंकि संसारके धर्मों को बुद्धिका साथ देते हुए नहीं देखा गया है, परन्तु हम जिस वैदिक धर्म का जिक्र कर रहे हैं वह वेद पर आश्रित है, और वेद बुद्धिपूर्वक

है इसलिये वैदिक धर्म बुद्धिपूर्वक है। ज्ञान में जितना ही अधिक धर्मांश होगा और धर्म मे जितना ही अधिक ज्ञानाश होगा उतनी ही बुद्धि से स्थिरता होगी। इसी बात को योरुप के प्रसिद्ध विद्वान हकरले ने निम्न शब्दों मे रक्खा है—

'सच्चा ज्ञान और सच्चा धर्म दोनो सगे २ भाई है। इनमे से यदि एकको दूसरे से पृथक करदिया जाय तो दोनों की मृत्यु हो जायगी इत्यादि।" इसलिये धर्म का ज्ञान के साथ और ज्ञान का बुद्धि के साथ और धर्म का बुद्धि के साथ घनिष्ठ सम्बन्ध है, इस मे सन्देह नहीं।

धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष मे मनुष्य की सब इच्छाओं का समावेश हो जाता है, अर्थात् जीवन की अभिलाषा अर्थ मे, स्त्री पुत्रादि की काम मे, मान, ज्ञान और न्याय की धर्म मे परलोक की कामना मोक्ष मे समा जाती है।

इन चारों मे आपस मे भी घनिष्ठ सम्बन्ध है,यह स्पष्ट करने के लिये हम किंचित् विस्तार मे आते है। बिना काम के शरीर का उत्पत्ति नहीं हो सकती, बिना अर्थ के शरीर का निर्वाह नहीं हो सकता, और बिना शरर और शरीर के निर्वाह के मोक्ष की सिद्धि नहीं सकती, इस मोक्ष की सिद्धि के लिये अर्थ और काम अनिवार्य हैं अर्थात् इन तीनों का आपस मे अनिवार्य सम्बन्ध है, इसी प्रकार मोक्ष का मार्ग निश्चित किये बगैर अर्थ और काम को भी सहायता नहीं मिल सकती। मोक्षकी सच्ची कामनाके बिना अर्थी स्वार्थी हो जाते हैं, और कामना वाले विषयी हो जाते हैं। और ये दोनों मिलकर समाज को नष्ट कर देते हैं या समाज की स्वाभाविक स्थिति कायम नहीं रहती। इस लिये मोक्ष से अर्थ और काम को सहायता मिलती है। तीनों मे सामजस्य उत्पन्न कराने वाला धर्म है। केवल धर्मपूर्वक मोक्षसिद्धि से अर्थ और काम की उचित व्यवस्था हो जाती है और धर्म पूर्वक अर्थ और काम को ग्रहण करने से मोक्ष सुलभ हो जाता है और इस प्रकार ये चारों एक दूसरे के सहायक हो जाते हैं।

दुखों से, बुरे कर्मों से तथा जन्म मरणादि के दुखों से छूटना और सुख मे रहना मनुष्य की सर्वोपरि इच्छा है। इस इच्छा का परिचय मनुष्य को मृत्यु के समय ही मिलता है। इस इच्छा की पूर्ति वा मृत्यु के भय को दूर करने का साधन मोक्ष सिद्धि ही है। इसी लिए आर्य्यों ने अपनी सभ्यता की इमारत मोक्ष प्राप्ति के उच्च आदर्श पर कायम की है और केवल धर्म पूर्वक अर्थ काम को उसका सहायक माना है—इसके लिए लोगों को अपना जीवन धार्मिक बनाने की शिक्षा दी गई है।

क्या ही अच्छा हो आज ससार के मनुष्य सभ्यता के वैदिक आदर्श को समझे, उसे अपनाएँ औरउसतक पहुँचनेकी कोशिश करें"। स्वय अपने आयु भोगोको भोगते और मोक्ष सिद्धि करते हुए दूसरोंको भी अपनी २ आयु भोग भोगने दे और उन के लिए मोक्षसुलभ करे और समाज और ससार मे सुख और शान्ति का प्रसार करे वा उसके प्रसार का कारण बने।

यदि मुख्यतया पश्चिम के भौतिक वादी लोग इस सुनहरी शिक्षा पर चले तो युद्धों की चर्चा बन्द हो जाय, निर्बलों और निर्धनों का रक्त शोषण बन्द हो जाय, दमन लूट खसोट रक्त पात, अनाचार और अत्याचार बन्द हो जाये और संसार सुखधाम बन जाय।

आर्य्य-मैरेज एक्ट और इंडियन सोशल रिफार्मर

सहयोगी 'इंडियन' सोशियल रिफ़ार्मर' ने २४ अप्रैल १९३७ के अङ्क में 'आर्य्य-मैरेज़ ऐक्ट' के शीर्षक में इन स्तम्भों में अन्यत्र दिए हुए श्री० प्रो० सुधाकर जी म० सार्व० सभा के प्रेस के वक्तव्य पर आलोचना की है। उसने इस बातका खडन किया है कि इस कानून के बन जानेसे अन्तर्जातीय विवाहोंकी कानूनी दिक्कतें दूर हो गई हैं और इन दिक्कतों की वजह से जात पात के निवारण में विलम्ब हुआ है और प्रगट किया है कि आर्य्य-मैरेज ऐक्ट के अनुसार विवाहों का उत्तराधिकार इण्डियन सकसेशन ऐक्ट के द्वारा शासित होगा ठीक उसी तरह जिस तरह गौड़ ऐक्ट में होता है। यह भी कि पिछले चौदह वर्षों से गौड़ ऐक्ट विद्यमान है और हिन्दुओं को जात पांत तोड़कर शादी करनेकी कानूनी सहूलियतें प्राप्त हैं। इस प्रकार और उस ने यह सिद्ध करनेकी चेष्टा की है कि गौड़ ऐक्ट के होते हुए इस ऐक्ट की ज़रूरत न थी। अन्त में ऐक्ट में 'एक पत्नीवाद' के सिद्धान्त की त्रुटि पर प्रकाश डालता हुआ 'आर्य्य-मैरेज बिल' किस रूप में प्राप्त हुआ है इस सम्बन्ध में अपनी अनभिज्ञता ज़ाहिर करता है।

आर्य्य-मैरेज ऐक्ट में सक्सेशन सम्बन्धी कोई धारा नहीं है सहयोगी का यह लिखना कि आर्य्य-मैरेज ऐक्ट में उत्तराधिकार की व्यवस्था गौड़ ऐक्ट जैसी ही है ठीक नहीं है। प्रतीत होता है उसने स्मृति के आधार पर ही ऐसा लिखा है। लिखने से पूर्व वह ऐक्ट को देख लेता तो उससे ग़लत बयानी की इस प्रकार की भूल न होती। आशा करनी चाहिए वह इसका परिमार्जन कर देगा।

हम जानते हैं कि पिछले १४ वर्षों से गौड़ ऐक्ट मौजूद है और वह हिन्दुओं को जात-पांत तोड़कर शादी करने की कानूनी छुट्टी देता है। आर्य्य-मैरेज बिल बनाने वाले इस बात से अनभिज्ञ थे—बात यह न थी। वे इससे अभिज्ञ थे। फिर भी उन्हें इस बिल के बनाने और उसे कानून बनवाने की ज़रूरत क्यों पड़ी? श्री० स्व० पटेल बाद को श्री० डा० भगवान्दास जी को हिन्दू अन्तर्जातीय विवाह बिलों को पेश करने की ज़रूरत क्यों हुई? गौड़ ऐक्ट १८७२ के सिविल मैरेज ऐक्ट का कुछ संशोधन मात्र है। गौड़ ऐक्ट के अनुसार विवाह का रजिस्ट्रेशन अनिवार्य है। बनने वाले पति-पत्नी को विवाह संस्कार तथा उससे सम्बन्धित धार्मिक अनुष्ठानों के करने की ज़रूरत नहीं है। उस एक्ट में तलाक का भी विधान है। सम्मिलित परिवार प्रथा का अन्त भी उसका एक उद्देश्य है। इस प्रकार वैवाहिक सम्बन्ध को ढील देने, विवाह-संस्कार को भूतकाल की वस्तु बनाने का कारण बनने और इन पर आश्रित हानियों का समाज को शिकार बनाने की मौलिक त्रुटि है जिसकी वजह इस ऐक्ट का पश्चिमी लाइनों पर बनाया जाना है जो भारतीय आत्मा के एक दम प्रतिकूल है। विपरीत इसके

आर्य्य समाज विवाह को अटूट धार्मिक पवित्र सम्बन्ध मानता है। विवाह संस्कार को आवश्यक संस्कार समझता है। आर्य्य समाज को ऐसे उपाय की ज़रूरत थी जो अन्तर्जातीय विवाहों को न केवल कानूनी दिक्कतों को दूर करने वाला हो वरन् वह विवाह की स्थिरता, पवित्रता और संस्कारों का रक्षक करने वाला भी हो। गौड़ एक्ट की उपर्युक्त त्रुटि की वजह से आर्य्य समाज जो प्राचीन आर्य्य संस्कृति को पुनर्जीवित करने और जीवित रखने के लिए स्थित है उससे लाभ उठाने में असमर्थ था इसी लिए आर्य्य मैरेज बिल को पास कराने की ज़रूरत हुई।

———

आर्य्य मैरेज ऐक्ट और हमारा कर्त्तव्य

सार्वदेशिक सभाके मन्त्री जी ने आर्य मैरेज बिल को क्रियान्वित किए जाने के सम्बन्ध मे प्रेस को एक वक्तव्य दिया है। उस वक्तव्यका सार इस प्रकार है —

"आर्य मैरेज एक्टको वायसरायकी "स्वीकृति प्राप्त हो चुकी और समस्त आर्य जगत् इस सफलता पर प्रसन्न है। परन्तु मैं यह कहूंगा कि हमारे श्रेष्ठ प्रधान श्री बा घनश्याम सिंह जी के वर्षों के परिश्रम को जो उन्होंने इस बिल के पास कराने में किया है फलीभूत करने और अपने को जगानेके लिये समाजियों के लिये यह ऐक्ट आवाहन है। इस वर्ष सैकड़ों अन्तर्जातीय विवाह करा के वे इस का उत्तर दे सकते हैं। चूंकि अब इस प्रकार के विवाहों की वैधता कानूनन स्वीकार करली गई है इस लिए प्रजापर इस कानून का महत्त्व और इसकी उपयोगिता दर्शाने तथा उससे लाभ उठाने की प्रेरणा करने का यत्न होना चाहिए।

आर्य समाज सदैव जन्म पर स्थित वर्ण व्यवस्था को मिटाने में संलग्न रहा है परन्तु कानूनी दिक्कतों की वजह से इस कार्य्य में विलम्ब हुआ है। अब इस कानून से वे दिक्कत दूर हो गई हैं। वर्तमान जात पात से समाज को जो धार्मिक, सामाजिक और राजनैतिक हानि हुई है इस से जो कोई भी परिचित है उसके लिए चुप चाप बैठने और कानून को मुर्दा बनाने का अब कोई बहाना नहीं रह गया है। प्रत्येक आर्य्य समाज को अपने २ यहां आन्दोलन करके अधिक से अधिक संख्या में जात पात तोड़कर विवाह करने चाहिए और इससम्बन्ध मे अपने काम की रिपोर्ट सार्वदेशिक सभा को भेजते रहना चाहिए जिससे 'सार्वदेशिक पत्र'में वे प्रकाशित की जाती रहें और इस प्रकार इस उत्तम कार्य्य को प्रोत्साहन मिलता रहे। मुझे आशा है कि आर्य समाजी इस ओर विशेष ध्यान देंगे।"

आर्यसमाज स्थापना दिवस

गत दो वर्ष से सार्वदेशिक सभा ने तमाम समाजों को चैत शु० ५ पचमीको आर्यसमाज स्थापना दिवस मनाने का आदेश दिया है। बहुत सी समाज इस पर्व को उत्साह पूर्वक मनाने लगी हैं और इस वर्ष गत वर्ष से अधिक समाजों ने यह पर्व मनाया है। समाजों की इस ओर बढ़ती हुई दिलचस्पी इस से प्रगट होती है कि सभा के कार्यालय में इस सम्बन्ध में अनेक पत्र आते रहते हैं।

ऐसा ही एक पत्र आ० स० अम्बाला छावनी के मन्त्री जी ने भेजा है जिसमें उन्होंने प्रस्ताव किया है कि सरकारी छुट्टी कराने का यत्न किया जाय जिससे कि इस पर्व का महत्व तथा गौरव बढ़े। प्रशंसित मन्त्री ने जो प्रस्ताव किया है अति उत्तम है। सभा के अधिकारियों ने इस विचार को बहुत पसन्द किया है। इस ओर प्रयत्न किया जायगा।

परन्तु इस सम्बन्ध में हम आर्य जनता का ध्यान इस ओर खींचना चाहते हैं कि अभी शायद हमने इस पर्व को उस जोश के साथ मनाना शुरू नहीं किया, जितना चाहिये। सरकार से छुट्टी मनवाने लिये यह ज़रूरी है कि सरकार को और सब को यह मालूम हो कि हम इस पर्व का मनाना ज़रूरी समझते हैं। पहले सरकारी छुट्टी हो और तब पर्व मनाया जाएगा, यदि यह धारणा रही तो शायद हम दोनों ही कामों में सफल न होंगे। हम पर्व मनावें और खूब धूम धाम से मनावें, जितने सरकारी नौकर आर्य समाजी हैं वे उस रोज छुट्टी ले कर मनावें। तब हो हम सरकार को भी किसी बात के लिये बाधित कर सकेंगे। सरकार बाधित हो सकती है यह कुछ नहीं करती।

वहाँ

प्रभात फिल्म कम्पनी का सबसे ताज़ा चित्र 'वहाँ' (Beyond the Horizon) है। उसका कथानक आर्य समाजियों और आर्य्य संस्कृति के प्रेमियों और प्रशंसकों के लिए आपत्तिजनक है इसलिए कि वह पुराने आर्य्यों और दस्युओं की संघर्ष सम्बन्धी ग़लत, और काल्पनिक बातों के हवाले से आर्यों के प्रति घृणा उत्पन्न करने वाला है। इसके विरोध में, ध्यान खींचे जाने पर, श्री महात्मा नारायण स्वामी जी ने एक वक्तव्य निकाल कर संचालकों को प्रेरणा की थी कि वे उसका इस प्रकार संशोधन कर देवें जिससे वह आपत्तिजनक न रहे। इस फ़िल्म के सम्बन्ध में कानपुर 'प्रताप' में 'सिनेमा जगत' के कालम में विचार किया गया है—वह भी इस फ़िल्म का निम्न शब्दों में विरोध करता है —

'प्रभात' का सब से नवीन चित्र 'वहाँ' है। इसमे आर्यो और अनार्यों के पुरातन संघर्ष का चित्रण किया गया है। इसमे दिखाया गया है कि लोहयुग के प्रारम्भ मे आर्य्य अनार्यों पर अतिशय अत्याचार किया करते थे। इस के कथानक की ऐतिहासिक सत्यता मे सन्देह की काफ़ी गुंजाइश है। अनार्यों पर आर्यों की विजय सांस्कृतिक थी अथवा शारीरिक इस विषय मे इतिहासवेत्ताओं की एक सम्मति नहीं है। इन्हीं बातों को लेकर आर्य्यसमाज के प्रसिद्ध नेता श्री नारायणस्वामी जी ने विरोध किया था। हम फिर उनके निर्देशक से आशा करते हैं कि वे भविष्य मे इतिहास का भली भांति अध्ययन करके ही फ़िल्मों का निर्माण करेंगे—

हमें आशा है कि संचालकों ने आवश्यक संशोधन करके उसे आपत्तिरहित कर दिया होगा। यदि न किया होगा तो शीघ्र से शीघ्र कर देंगे या फ़िल्म का दिखाया जाना यदि अभी कहीं दिखाया जा रहा होगा, बन्द कर देंगे और उस समय तक बन्द रक्खेंगे जब तक वह आपत्ति रहित न कर दिया जाय।

वैदिक सूर्य विज्ञान

(ले०—श्री प्रियरत्न जी आर्य)

गताङ्क से आगे

अर्थ—(देव) ओ विश्व के द्योतमान झाड़फानूस रूप सूर्य ! तू (वहिष्ठेभिर्विहरन्) अत्यन्त वहन शील किरणों द्वारा चमचमाता हुआ (असित वस्म) विना बन्धे हुए अस्माने-आकाश रूप शामयान में (तन्तुमत्ययन्) डोरी को न स्वीकार करता हुआ-विना डोरी के लटका हुआ। (यासि) घूमता फिरता है। (सूर्यस्य दविध्वतो रश्मय) तुझ सूर्य की दीप्ति से फरकती हुई किरणें (ऋधग्-तस्तम) अन्तरिक्ष में से अन्धकार को (चर्म वावाधु) जैसे शरीर में से चमड़ी क हटा देने से अन्दर की हृदय, फुफ्फुस आदि यन्त्रा कला दीखने लगतीं हैं एव अन्तरिक्ष में से अन्धकार को विश्व की यन्त्र कला दिखलाने के लिये हटा देती हैं। यह झाडफानूस रूप सूर्य न केवल डोरी के विना ही अपितु (अनिबद्ध) [illegible]-अर्थात जड़ा हुआ चिपका हुआ भी नहीं जैसे एञ्जिन में या विमान में जडा हुआ-चिपका हुआ लेम्प चलता है। तथा (अनायत) आयत खिंचा हुआ किसी दूसरे से आकर्षित किया हुआ भी नहीं है। अहो, आश्चर्य !(अय-उत्तान) यह ऊपर टंगा हुआ (कथा न) क्यों नहीं (न्यङ्ङवपद्यते) नीचे गिर पड़ता। (कया स्वधया याति) किसी साधारण शक्ति से विचरता है, इस बात को (को वेद) प्रजापति जानता है यह बात मानव मस्तिष्क से परे है "प्रजापतिः वैः कः" (ऐ० २।३८)

अथवा (कया स्वधया याति) किस स्वधारण शक्ति से विचरता है। इस बात को (को ददर्श) कौन जानता है अर्थात कोई नहीं। यह बात मानव मस्तिष्क से परे की है। दोनों अर्थों में 'स्वधया' सूर्य स्वधारण शक्ति से विचरता है यह अर्थ तो अप्रतिहत है, स्थिर है। चाहे इस स्वधारण शक्ति को अपनी आकर्षण शक्ति नाम दे दिया जावे बात एक ही है वेदने उसको स्वधा-स्वधारण शक्ति महत्वपूर्ण नाम दिया है। (दिव.) यह सूर्य द्युमण्डल-प्रकाशमण्डल सारे प्रकाशमान गोल समूह का (समृत स्कम्भ) दृढ़ स्तम्भा है इसी से यह सारे गोले बन्धे हुए हैं (नाकं याति) यही इस सारे द्युमण्डल की रक्षा करता है।

इन मन्त्रों में बड़ी आश्चर्यता से वर्णन करते हुए सूर्य को 'अनायत' किसी दूसरे से आकर्षित न हुआ हुआ कहा है। इस प्रकार अर्थापत्ति से सूर्य अपने ही आधार से आकाश में ठहरा हुआ है यह सिद्ध होते हुए भी अन्तिम मन्त्र के उत्तरार्द्ध में "कया याति स्वधया" से सूर्य स्वधारण शक्ति से ही आकाश में रहता है यह स्पष्ट कह दिया। तथा दूसरे स्थल पर भी वेद में सूर्य अपने आधार से ठहरा हुआ है। कहा है, मन्त्र निम्न है—

अयं स्तुतो राजा वन्दि वेधा अपश्च विप्रस्तरति स्वसेतुः।

स कक्षीवन्तं रेजयत्सो अग्निं नेमिं न चक्रमर्वतो रघुद्रु ॥ (ऋ० १० । ६१ । १६)

खगोल में वर्त्तमान गोलों रूप प्रजाओं का स्वामी सूर्य 'स्वसेतु अपने से ही बन्धा हुआ- किसी दूसरे से नहीं अर्थात् अपने आधार पर ठहरा हुआ।

"स्वसेतुः यस्य स्वभूता रश्मयो जगद्बन्धकाः सन्ति" (सायणः)

'अपस्तरति' अन्तरिक्ष अर्थात् आकाश में विचरता है।

"आपो अन्तरिक्ष नाम" (नि० १।३)

तथा चात्र सायण

"अपश्चान्तरिक्षं तरति लंघयति।"

वह सूर्य 'कक्षीवन्तम्' कक्षा वृत्त में घूमने वाले पृथिवी आदि प्रत्येक गोले *को तथा 'अग्निम्' अपने ज्वालासमूह को नेमि और चक्र की तरह कपाता अर्थात्-घुमाता है। इससे यह भी एक बात सिद्ध होती है कि सूर्य का ज्वाला समूह सूर्य पिण्ड के चारों ओर समुद्र जल के समान चक्र खाता रहता है। अस्तु अब सूर्य के घूमने पर विचार करते हैं—

सूर्य का घूमनाः—

उद्वेति प्रसवीता जनानां महान् केतुरर्णवः सूर्यस्य। समानं चक्रं पर्याविवृत्सन् यदेतशो वहति धूर्षु युक्तः ॥(ऋ० ७६३।२)

(सूर्यस्य) सूर्य का (अर्णवः) समुद्र तुल्य वेगवान् (महान्केतु) स्फुरण शील ज्वाला समूह *(जनाना प्रसवीता) जायमान पदार्थों का प्रेरक (उदेति) सूर्य से उद्भव होता है—सूर्य के अन्दर से बाहरस्फुरित होता है। जो (समान चक्र) सभी पृथिवी आदि के एक मानकारी—थामने वाले चक्ररूप गोलाकार मध्यस्थ सूर्य को (पर्याविवृत्सन्) पर्यावर्त्तयितुमिच्छन्–पर्यावर्त्तयन्निव–परिभ्रामयन्निव स्वस्मिन् स्थाने भ्रामयन्नित्यर्थः— घुमाना चाहता हुआ–घुमाता हुआ जैसा अर्थात् दूसरे गोल के चारों ओर नहीं किन्तु स्वकेन्द्र पर ही घुमाता हुआ धूर्षु युक्त एतश) धुरा मे जुड़े घोड़े की तरह (वहति) गतियुक्त करता है।

इस मन्त्र मे 'पर्याविवृत्सन्' शब्द से सूर्य का अपने केन्द्र पर घूमने का वर्णन है साथ मे उसके घूमने का कारण भी सूर्य का अपना "अर्णवो - महान् केतुः" समुद्रतुल्य चक्रवेगवान् महान् स्फुरणशील ज्वालासमूह बतलाया है। जैसे

---

*'कक्षीवान्' के सम्बन्ध में देखो 'आर्यमित्र' के अध्यङ्क में 'कक्षीवान् का इतिहास' या 'वेद में इतिहास नहीं' मेरी लिखी इस पुस्तक में।

*उदुत्यं जातवेदसं देवं वहन्ति केतवः। दृशे विश्वाय सूर्यम्" ॥ (ऋ० १।५०।१)

"उद्वहन्ति तं जातवेदसं रश्मयः केतवः" (नि० १२।१५)

बहुवचन 'केतव.' सूर्य किरणोंको कहा है एव एक वचन 'केतु.' का अर्थ सूर्य का किरणसमूह या ज्वालासमूह है।

अग्निचूर्ण वाले चक्र (बारूद के चरखे) से वेग से निकलती हुई स्फुरणशील ज्वालाए उसको घुमा देती हैं एवं सूर्य की उक्त वेगवाली स्फुरणशील ज्वालाएं सूय को घुमा देती हैं। सूर्य का ज्वाला समूह स्फुरित होता है, यह बात भी वेद में कही है:—

"यः सप्तरश्मि वृषभस्तु विष्मानवा सृजत् सर्त्तवे सप्त सिन्धून्। यो रौहिण-मस्फुरत्॥ (ऋ० २।१२।१२)

सूर्य का अन्य गोलों के साथ सम्बन्ध

केतुं कृण्वन्नकेनवे पेशो मर्या अपेशसे। समुषद्भिरजायथाः॥ (ऋ० १ ६।३)

ऐ मनुष्यो! यह सूय अपनी उष्ण किरणों से प्रकाश रहित को प्रकाश तथा अरूप रूप को देने के लिये प्रकट होता है।

इस मन्त्र से यह आया कि जितने भी आकाश में पृथिवी आदि गोले प्रकाशमान हैं वे सब सूर्य से प्रकाशित होते हैं।

"सवितुर्देवस्योपस्थे विश्वा भुवनानि तस्थुः" (ऋ० १।३५।५)

द्योतमान किरणों वाले प्रेरक सूर्य के आश्रय पर सारे पृथिवी आदि लोक आश्रित् हैं अर्थात उस के आकर्षण से ठहरे हुए हैं।

"एता उ त्या उषसः केतुमक्रत पूर्वेऽर्धेर-जसो भानुमञ्जते"। (ऋ १।९२।१)

ये सूर्य की उष्ण किरणें किसी भी लोक अर्थात् पृथिवी आदि गोल के 'पूर्वे अर्द्धे' सामने वाले आधे भाग को प्रकाश से युक्त करती हैं पुन दिन को बनाती है।*

आयातु मित्र ऋतुभिः कल्पमानः संवे-शयन् पृथिवीमुस्रियाभिः। (ऋ० ३।८।१)

सूर्य ऋतुओं के साथ युक्त हो अपनी 'उस्रियाभि' किरणों से पृथिवी को नियत कक्षा मे र विष्ट करता हुआ आता है। "उस्रियाभि गोभि किरणैरित्यर्थ" (सायण)

सूर्य की किरणें:—

"इन्द्रो मायाभिः पुरुरूप ईयते युक्ता ह्यस्य हरयः शतादश। (ऋ० ६।४७।१८)

(क्रमशः)

---

*ऐतरेय ब्राह्मण में यही सिद्धान्त प्रतिपादित है।

स वा एष कदाचनास्तमेति नोदेति। तं यदस्त-मेतीति मन्यन्ते। अह्न एव तदन्तमित्वाथात्मानं विपर्यस्यते रात्रमेवावस्तात् कुरुतेऽह परस्तात्। अथ यदेनं प्रातरुदेतीति मन्यन्ते रात्रिमेव तदन्त-मित्वाऽथात्मानं विपर्यस्यते, अहरेवावस्तात् कुरुते रात्रिं परस्तात (ऐ० ब्रा० ३।४।६)

यह सूर्य कभी न अस्त होता है और न कभी उदय होता है। इसे अस्त हुआ जो माना जाता है वह दिन का अन्त कर पृथिवी के दूसरी ओर हो जाता है रात इधर कर देता है दिन परली ओर में। और जो इस को प्रातः काल उदय हुआ माना जाता है वह रात्रि का अन्त कर पृथिवी के इस ओर होजाता है दिन इधर कर देता है और रात उधर कर देता है।

आत्म निरीक्षण

(ले० श्री० ला० श्यामराम जी एम० ए०)

कहावत है कि एक व्यक्ति कुछ समय के लिए कुछ आदमियों को धोखा दे सकता है। कुछ समय के लिए सब आदमियो को धोखा दे सकता है। सब वक्त के लिए भी कुछ आदमियों को धोखा दे सकता है परन्तु सब समय के लिए सब आदमियों को धोखा नही दे सकता है। क्योंकि किसी समय कोई न कोई अवश्य उसके छल-प्रपंच को जान जाता है। यह ठीक है परन्तु यदि यह मान लिया जाय कि एक अत्यन्त चतुर व्यक्ति सारी उम्र अपने सम्पर्क में आने वाले सब आदमियों को धोखा दे सकता है तो भी कोई हैरानी की बात न होगी क्योंकि धोखे बाज आदमी, यदि दूसरे इसकी धोखे बाजी को भी जान लें तो भी अपनी हरकत से बाज नहीं आया करता। धोखेबाजी से हटाने वाली एक ही चीज है और वह है 'आत्म-निरीक्षण'। जब मनुष्य के भीतर आत्म-निरीक्षण का गुण आ जाया करता है; जब उसका अन्तरात्मा जाग पड़ता है जब वह अपनी परीक्षा शुरू कर देता है तो वह एक क्षण के लिए भी किसी को धोखा नहीं दे सकता। केवल यही नहीं वरन् जब अपनी आत्मा जाग उठती है जब आत्म-निरीक्षण शुरू हो जाता है तो धीरे २ सब बुराइयाँ दूर हो जाती हैं। आत्म-निरीक्षण ऐसा कड़ा चौकीदार है कि उसके मुक़ाबले मे बड़े से बड़ा बाहरी दबाव कुछ नही कर सकता। जिस व्यक्ति मे अपने आप को देखने की आदत नहीं पड़ी व की दुनियादार कब तक और कहाँ तक और उसकी किस २ बुराई को देखेंगे। बुराई का सम्बन्ध मन से है और एक मनुष्य के मन की हरकत को दुनियाँ की सारी एजेन्सियां मिलकर भी नहीं जान सकतीं। यदि महात्मा गांधी के भीतर आत्म निरीक्षण की आदत न होती तो न वे अपनी आत्मकथा लिखते और न ही अपनी सब बुराइयों को ऐसे नंगे रूप में पेश करते। और यदि कोई और श्रद्धालु भक्त महात्मा जी का जीवन चरित्र लिखता तो वह उन्हें शुद्ध साबित करके अवतार ही बना देता। आत्म-निरीक्षण के बिना व्यावहारिक और धार्मिक उन्नति असंभव है। आत्म निरीक्षण मनुष्य को पग पग पर खबरदार करता है और छोटी से छोटी बात में उसे सचेत करता है। जिस समाज के नेता आत्म-निरीक्षण के अभ्यासी होते हैं वह समाज फलता फूलता है।

अध्यात्म–धारा

(आर्य जीवन की सार्थकता)

(ले॰ श्री॰ स्वामी केवलानन्द जी सरस्वती)

पवित्रवन्तः परिवाचमासते पितैषाँ प्रत्नो अभिरक्षति व्रतम् ।

मह॰ समुद्र वरुणस्तिरो दधे धीरा इच्छेकुर्धरु-णेष्वारभम् ॥ ऋग्वेद म॰ ९ सू॰ ७३ ॥

प्रिय पाठक वृन्द ! भुवन-भावन् भगवान की भव्यभाव भरी इस वेदवाणीका तात्पर्य यह है कि यदि हमें मानवीय जीवन के चरम लक्ष्य तक पहुचनेकी प्रबल इच्छा है तो अपने अन्त.करणको निखिल पवित्रता का केन्द्र बनाकर, भक्त वत्सल भूमा की सत्य प्रिय और हितकारिणी तथा दुरित निवारिणी वेद-वाणी को अन्दर के कानों से सुनें। इस परीक्षा मे उत्तीर्ण होने वाले आर्य सज्जनो के परोपकारक व्रत की अनाद्यनन्त परिभू परमात्मा भली प्रकार रक्षा करते हैं। इतना ही नहीं, किन्तु इन अनन्य भक्तो के लिये वरुण भगवान् महत्ता के महा मोद-महोदधि को धारण कर रहे है। परन्तु याद रखिये, इस महत्ता के महासागर मे तैरना हर एक का काम नहीं है। हाँ, जो धीर वीर बन के शारीरिक, मानसिक, और आत्मिक शुद्धि-सम्पन्न होते हैं, वे ही इस आत्म-प्रसाद को प्राप्त होकर मोद-मुदित हो जाते हैं। ठीक भी तो है—

जिन खोजा तिन पाइयाँ गहरे पानी पैठ।
बोरी बन खोजन गयी, रही किनारे बैठ ॥

सकल पदारथ हैं जग माहीं ।
कर्म-हीन कछु पावत नाहीं ॥

अजी ! यहाँ की तो लीला ही निराली है। कोई कवि कहता है—

अन बूड़े बूड़े, तरे, जे बूड़े सब अङ्ग ॥

सौ बातोकी बात यह है कि यह गुरुतर कार्य्य बिना सत्य और साहस की सम्पन्नता के हो नहीं सकता। अतएव सत्पथ के पथिक को चाहिये कि आत्म-विश्वास का पाथेय साथ लेकर, अदम्य उत्साह से अभ्यास और वैराग्य के पुनीत गीत-गाता हुआ तथा शीत, उष्ण, राग, द्वेष आदि द्वन्द-दल को पद दलित करता हुआ गम्य स्थान को प्राप्त करले। अथवा यों कहो कि, आत्म श्रेया-र्थी, यदि चाहे तो अपने मन तथा इन्द्रिय समूह को वश मे करके, ईश्वरीय विश्वास की दृढ़ नींव पर उच्चतम आर्य-आदर्श की विशाल भित्ति तैयार करता हुआ अपने जीवन को उन्नति के उत्तुंग शिखर पर विराजमान कर सकता है, यही आर्य जीवन की सार्थकता है। ऐसा करने से इष्ट की हानि तथा अनिष्ट की प्राप्ति कभी नही होसकती। यहां पहुंचने पर ईर्ष्या और द्वेष की भभकती हुई प्रचण्ड ज्वाला, प्रेम के अथाह पारावार में स्वतः शान्त हो जाती है। फिर स्वार्थ और परार्थ में भेद-भाव की गंध नहीं रहती। अर्थात् व्यक्ति,

सत्यार्थप्रकाश लेख माला

शिखा

लेखक—श्री स्वामी स्वतन्त्रानन्द जी महाराज

इस समय आर्य जाति का शिखा चिन्ह माना जाता है। ब्राह्मण से शूद्र पर्यन्त इसे प्राय सब रखते हैं और यह चिन्ह भारतवर्ष मे प्रत्येक प्रात मे कुछ अपवाद सहित मिलता है। तीन आश्रम (ब्रह्मचारी, गृहस्थ, वानप्रस्थ) और चारों वर्ण शिखाधारी हैं। सन्यासाश्रम मे प्रवेश के समय इसका त्याग माना गया है इनमे भी जो वैष्णव हैं वे साधु कहलाते हैं यदि उनको वानप्रस्थात गंत मानें तो तीन आश्रमों मे होने से शिखाधारी ही हैं यदि उनको भी सन्यासाश्रम मे गिन लें तो इस आश्रम का वह भाग शिखी होगा। अब यह देखना है कि इस विषय मे लोकमत और स्मातमत क्या है। आज कल कुछ ऐसे व्यक्ति हैं जो शिख रखना आवश्यक नही समझते है उनमें कुछ सख्या तो शिक्षितों की है जिसे पश्चिमी सभ्यता का प्रभाव समझा जाता है। पुस्तको मे शिखा विशिखा दोनों मिलते हैं। विशिखा स सन्यासी नही सन्याश्रमी भी विशिखा मिलते हैं जैसा कि मै आगे लिखूंगा। प्रथम शिखा क विधान मे लिखा जाता है। यथा गोभिलीयगृह्य सूत्र १.१.२ की टीका मे निम्न पाठ है —

सदोपवीतिना भाव्यं सदा बद्धशिखेन तु।
विशिखो व्युपवीतश्च यत्करोति न तत्कृतम ॥

अर्थ—सदा उपवीत युक्त और बद्ध शिखा कर्म करे। जो शिखा और उपवीत रहित कर्म करता है वह निष्फल होता है। इसमें शिखा का बाधना लिखा है जो शिखा होने पर ही हो सकता है। यही पाठ निर्णयसिंधु के तीसरे परिच्छेद मे भी आया है।

अकृतपादशौचन्तु तिष्ठ मुक्त शिखोऽपि वा।
विना यज्ञोपवीतेन आचान्तोऽप्यशुचि भवेत् ॥

गो. ६१.२ की टीका

समष्टि में पूर्णतया लीन हो जाता है। ऐसी अवस्था में आत्म हित और विश्व हित मे कोई अन्तर विशेष नहीं रहता। इसी अवस्था का नाम उत्तम गति है और यही सच्चे सुख की पराकाष्ठा है। यहां पहुचने पर फिर किसी को किसी से भय नहीं होता- (द्वितीया द्वै भय भवति) भय तो दूसरे से ही होता है। जबकि जगत् के प्रत्येक प्राणि हृदय से अपनी हृत्तन्त्री का तार मिला कर प्रेमका पुनीत आलाप आलापने लगे तो फिर भय शोक और मोह का क्या काम ?

(तत्र को मोह. क. शोक एकत्वमनु पश्यत) यही आर्य जीवन का सर्वश्रेष्ठ आदर्श है। इसी को अपना सहचर बनाकर हमें संसार यात्रा मे अग्रसर होना चाहिये और इस आर्य जीवन को स्वभाव सिद्ध बनाने के लिये सतत प्रयत्न शील बनना चाहिये। शमित्योम् ॥

पाद प्रक्षालन न करके, खड़ा होकर, मुक्त शिखा, उपवीत रहित आचमन करने पर भी अशुचि ही होता है।

"और जो विद्या का चिन्ह यज्ञोपवीत और शिखा को छोड़ मुसलमान ईसाइयों के सदृश बन बैठना व्यर्थ है। जब पतलून आदि वस्त्र पहनते हो और "तमगों" की इच्छा करते हो तो क्या यज्ञोपवीतादि का कुछ बड़ा भार हो गया था" सत्यार्थ प्रकाश समुल्लास ११ ब्रह्म और प्रार्थना समा । प्रकरण में। इसमें शिखा रखने का आदेश है। परन्तु दशम समुल्लास में एक और पाठ है जिसमे शिखा को कामचार माना है उसी पर सनातनधर्मी आक्षेप करते हैं और उसी के आधार पर आर्य-समाजियों को विधर्मी होने की व्यवस्था दिया करते हैं वह पाठ इस प्रकार है।

"जो अति उष्ण देश हो तो सब छेदन करा देना चाहिये। क्योंकि शिर के बाल रहने से उष्णता अधिक होती है। (सत्यार्थप्रकाश)

परन्तु अब देखना यह है धर्म पुस्तकों में इस विषय में क्या लिखा है। जिसे सनातनधर्मी धर्म पुस्तक मानते हैं यदि वह भी ऐसा ही वा इससे भी कुछ आगे जाते हों तो सनातनधर्मियों का आक्षेप उचित प्रतीत नहीं होता। हां, यदि वह उनके पोषक हों तो आक्षेप ठीक ही है इसलिये मैं इस लेख में केवल थोड़े से पाठ लिखना पर्याप्त समझता हूँ जिससे उनके मत का पता लग जाय। यदि कोई विशेष जानना चाहें तो अन्य पुस्तकों में देखने का कष्ट करें।

(१) यथा गोत्र कुल कल्पम् गोभिलीय गृह्य सूत्र २८, २५। जैसे गोत्र कुल में रिवाज है वैसे ही शिखा रखे। इसकी टीका मे इस विषय पर अन्य पाठ लिखकर दिखाया गया है कि किस प्रकार भिन्न२ गोत्र, कुलों में भेद है।

वसिष्ठा पचचूडा स्युस्त्रिचूडा कुण्डपायिन ।

अर्थ—वसिष्ठ गोत्र वाले पाच और कुण्ड पापि तीन शिखा रखते हैं।

दक्षिणा कपर्दा शिष्ठस्य आत्रेयास्त्रिकपर्दिन ।
अगिरस पच चूडा मुण्डा भृगो शिखिनोऽन्ये।

अर्थ —वसिष्ठ सिर के दक्षिण के भाग में शिखा रखते हैं। अत्रि वंशी तीन शिखा रखते है। अगिरा वशी पाच रखते हैं। भार्गव मुण्डा देते हैं शेष एक शिखा रखते हैं।

सशिख वपनं कार्यमास्नानाद्ब्रह्मचारिणाम्।
आशरीर विमोक्षाय ब्रह्मचर्यं न चेद् भवेत्॥

अर्थ —समावर्तन से पूर्व ब्रह्मचारी शिखा न रखे यदि ब्रह्मचर्य व्रत न किया हो तो आजीवन ही शिखा न रक्खे।

कौथुम राणायनीयादिना प्राक् समावर्तनात् सशिखमेव वपनम्।

अर्थ —कौथुम राणायनीयादि समावर्तन से पूर्व शिखा मुडाते रहते हैं। स्मरण रहे कौथुम सामवेदी हैं इस प्रकार बगाली प्राय शिखा मुडा देते हैं क्या यही लेख उस मुंडाने का निमित्त तो नहीं है।

(२)यथा मङ्गल केश शेष करणम्। पारस्कर२-१-२१

भावार्थ —शिखा (केश शेष) कुल के अनुसार रक्खे। इसकी टीका में कर्क लिखते हैं —

यथाशास्त्र यद्यस्य गोत्रे उचितम्। केचित्

त्रिशिखाः केचित् पञ्चशिखा यथा यस्य प्रसिद्धि ॥

अर्थः—जिस गोत्र में जैसा उचित है कोई तीन कोई पाच रखते हैं हरिहर लिखते हैं—

दक्षिणत कम्बुजाना वसिष्ठानामुभयतोऽत्रि कश्यपाना मुंडा भृगव पंच चूडा आंगिरस वाजसनेयीनामेका शिखा मंगलार्थं शिखिनोऽन्य इति।

अर्थ.—कम्बुज, वसिष्ठ दक्षिण भाग मे शिखा रखते हैं। अत्रि, कश्यप दोनो ओर रखते हैं। भ.गव मुंडा देते हैं। आगिरस पांच शिखा रखते हैं, वाजसनेयी एक ओर अन्य भी एक रखते हैं।

कम्बुजाना वसिष्ठाना दक्षिणे कारयेच्छिखाम्।
द्विभागेऽत्रिकश्यपाना मुण्डाश्च भृगवो मता ॥
पञ्च चूडा अंगिरस एका वाजसनेयीनाम्।
मंगलार्थं शिखिनोऽन्य एकचूडाविधिक्रमादिति॥

इसके अर्थ पूर्ववत् ही हैं अत पाठक उसे ही देख लें और समझलें। गदाधर लिखते हैं —

केशशेषं तत कुर्यात्रस्मिन् गोत्रे यथोचितम्।
वसिष्ठा दक्षिणे भागे उभयत्रापि कश्यपा ॥
शिखा कुर्वन्त्य गिरस शिखाभि पञ्चभियुक्त।
परित केशपंक्त्या वा मुंडाश्च भृगवो मता ॥
कुर्वन्त्यन्ये शिखामत्र मंगलार्थमिह कचित्।

अर्थ—जिस गोत्र में जो विधि है उसी के अनुसार शिखा रक्खे। वसिष्ठ दक्षिण भाग में, कश्यप दोनों ओर, आंगिरस पाच, अथवा सर्व ओर केश पंक्ति और अन्य एक शिखा रखते हैं, भार्गव मुंडा देते हैं।

यह गोभिल तथा पारस्कर सूत्र और उनके टीकाकारों ने लिखा है—जिसमें भार्गव शिखा न रखते थे यह सब मानते हैं और कौथुम राणायनीय ब्रह्मचारी अवस्था में शिखा रहित होते थे। समावर्तन के पश्चात् शिखाधारी बनते थे। यदि नियम से ब्रह्मचर्य व्रत का पालन न करें तो आजीवन शिखा रहित ही रहते थे। कम्बोज और वसिष्ठ दक्षिण भाग में शिखा बनाते थे अत्रि, कश्यप गोत्र वाले दोनों ओर रखते थे आज कल पिशावर जिले मे दोनों ओर कनपटी के पास रखते हैं क्या यह वह चिह्न है या कुछ और है यह भी चिंतनीय है। आंगरिस पचशिखायुक्त थे वाजसनेयी एक शिखावाले थे अन्य भी एक शिखा रखते थे यह संक्षेप से ऊपरिलिखित पाठ का भाव है। निर्णयसिन्धु मे भी इसी भाव का पाठ मिलता है यथा—

(३) प्रयोगरत्न के आधार पर—

मध्ये शिरसी चूडा स्याद्वासिष्ठाना तु दक्षिणे।
उभयो पार्श्वयोरत्रिकश्यपाना शिखा मता ॥प० ३

मदनरत्न, लोगाक्षि के आधार पर—

दक्षिणत कमुजा वसिष्ठानामुभयतोऽत्रिकश्यपानामुण्डाभृगव । पञ्चचूडा अंगिरसो वाजिमेके मगलार्थं शिखिनोऽन्ये यथा कुल धर्म वा इति ॥

स्मृतिदर्पण के आधार पर—

एका शिखा दक्षिणतो वसिष्ठ गोत्रस्य पञ्चांगिरसो भृगोऽस्तु। नैका शिखा कश्यपगोत्रजानां शिखोभयत्रापि यथा कल च ॥

अर्थ —शिरके मध्यमें शिखा होती है वशिष्ठ दक्षिण में, अत्रि, कश्यप दोनों ओर शिखा रखते हैं।

वसिष्ठ दक्षिण भाग शिर में शिखा रखते हैं।

आगिरस पाच रखते हैं। भार्गव मुंडा डालते हैं। अन्य कुल धर्मानुसार एक शिखा रखते हैं। निर्णय सिन्धु के संग्रहीता ने कमुंजा के अर्थ शिखा और वाजि के अर्थ केशपंक्ति किया है। यह पाठ उसने लोगाक्षि से लिया है। परन्तु पारस्कर के टीकाकार इसी कमुंजा और वाजि को कम्बुज और वाजसनेयी लिखते हैं। प्रतीत होता है निर्णयसिंधु का संग्रहकर्त्ता भ्रम में है। ठीक पाठ कमुंजा नहीं कम्बुजानाम् है और वाजि के स्थान पर वाजसनेयीनाम् ही है। वसिष्ठ गोत्री दक्षिण मे एक शिखा, आगिरस पांच शिखा, कश्यप गोत्रवाले उभय ओर शिखा रखते हैं भार्गव शिखा मुंडा देते हैं इसका भाव भी वही है जो पूर्व लिख दिया गया है। धर्मसिंधु में कुछ और भी लिखा है अत. उसे लिखकर लेख समाप्त किया जाता है।

मध्ये मुख्यैका शिखा अन्याश्च पार्श्वादि भागेष्विति यथा कुलाचारं प्रवर संख्यया शिखा चूडा समये कार्या॥ उपनयन काले मध्यशिखेतर-शिखाना वपनं कृत्वा मध्यभाग एवोपनयनोत्तरं शिखाधार्या। धर्मसिंधु परिच्छेद ३।

अर्थ –शिखाशिर के मध्यमे ही होती है। शिर के अन्य भागोमें कुलाचार से चूडाकरण समय मे रखते हैं। उपनयन के समय में वह सब मुंडा कर शिर के मध्य भाग में ही एक शिखा रखनी चाहिये।

सनातनधर्मी जो ऋषि के उष्ण देश में शिखा न रखने से ईसाई मत बताते हैं वे इन लेखों को देखें। इनमें जो न रखने का वर्णन है क्या यह भी ईसाई हैं? आशा है वे इनको ईसाई न कहेंगे। इसलिये सत्यार्थप्रकाश का लेख भी वैदिक ही है। यदि इस समय देखा जाय, बगाली शिखा नहीं रखते हैं गुजरात में पटेल जो उपनयन नहीं लेते हैं उनमें से कई नहीं रखते हैं। यह सब रिवाज इन सूत्र ग्रन्थों के आधार पर ही हैं यदि कोई अन्य भी न रक्खे तो उसे भी इसी में सम्मिलित करना अच्छा है न कि किसी अन्य का नाम देना। महर्षि जी ने जो कामचार लिखा है वह ठीक है और शिखा को कामचार ही मानना चाहिये। मैं स्वयं रखने का पक्षपाती हूँ परन्तु न रखने वाले दण्डनीय नहीं हैं यह भी मैं मानता हूँ।

—

मांसाहार

(प्रो० रघुनाथप्रसाद पाठक)

दुर्भाग्यसे मांस संसारके बहुसंख्यक मनुष्योंका खाद्य पदार्थ बना हुआ है और कहीं २ प्रधान खाद्य पदार्थ बना हुआ है । इससे ज्यादा दुर्भाग्य की बात यह है कि बहुत से प्रसिद्ध शाकाहारी देशों में इन दिनो माँस भक्षण को प्रवृत्ति वेग के साथ बढ़ रही है । भारतवर्ष इस बात का अपवाद नहीं है। यहाँ भी विशुद्ध शाकाहारी वर्गों में मुख्यतया अंग्रेजी शिक्षा प्राप्त प्रजा में मांस-भक्षण का प्रचार दिनों दिन बढ़ रहा है। देखना है कि मनुष्य की स्वाभाविक प्रवृत्ति मांसाहार की ओर है या नहीं और मांस-भक्षण का चिकित्सा विज्ञान, धर्म्म और नीति इत्यादि का कोई युक्ति-युक्त आधार है या नहीं ?

स्वभाव से मनुष्य मांसाहारी नहीं है

स्वभाव से मनुष्य मांसाहारी नहीं है। यदि होता तो मांसाहारी जीवों में और उसमे समता होती परन्तु मांसाहारी जीवों मे और उसमे बिल्कुल पूर्व्व और पश्चिम की विभिन्नता है, ठीक वैसी ही जैसी अन्य शाकाहारी और मांस-भक्षी जीवों में पाई जाती है। मोटे तौर पर मांसाहारी जीवों मे जो लक्षण पाए जाते है उनमें से एक भी मनुष्य या शाकाहारी जीव में नहीं पाया जाता। मांसहारी जीवों के लक्षण इस प्रकार हैं:—

(१) जितने प्राणी मांसाहारी हैं वे सब जीभ से पानी पीते हैं।

(२) जितने प्राणी मांसाहारी हैं सब अंधेरे मे देखते है।

(३) जितने प्राणी मांसाहारी हैं सबके शरीर में पसीना नही आता।

(४) जितने प्राणी मांसाहारी है सब मैथुन के समय जुड़ जाते है।

(५) जितने प्राणी मांसाहारी हैं सबके बच्चो की आँखें पैदा होने के समय बन्द रहती हैं।

(६) जितने प्राणी मांसाहारी होते हैं सबके दांत नुकीले और चुभने वाले होते हैं।

(७) जितने प्राणी मांसाहारी हैं सबकी आँतें शरीर के परिमाण से बड़ी होती हैं। सबका मेदा बड़ा होता है और मब डरते हैं।

(८) जितने प्राणी मांसाहारी होते है सब भयानक बनावट के होते है।

अत. स्पष्ट है कि मनुष्य का स्वभाव और उसका शारीरिक गठन मांसभक्षण के बिल्कुल प्रतिकूल है ।

वास्तविक धर्म्म मांसाहार का विरोधी है

वेद मनुष्य समाज का आदिकालीन ज्ञान पुस्तक है ऐसी हमारी ही नहीं वरन् संसार के श्रेष्ठ दिमागों की स्थापना है। वेद में मांसाहार का बहुत प्रबल विरोध पाया जाता है। उदाहरण के लिए हम अनेकों मंत्रों मे से अथर्ववेद के निम्न मन्त्र को प्रस्तुत करते हैं:—

"यथा मांसं यथा सुरा यथाक्षा परिदेवने।
यथा पुंसो वृषरायते स्त्रियं निहन्यते मनः॥"

इस मन्त्र में शराब, व्यभिचार और मांसाहार इन तीनों की घोर निंदा की गई है।

वेदों में पशुबलि के आधार पर वेदों से मांसाहार सिद्ध करने की चेष्टा की जाती है। परन्तु वेदों में पशुबलि का विधान है, यह स्थापना गलत है और वेदों के भ्रमात्मक भाष्य पर अवलम्बित है। इन भाष्यों के भ्रम जाल मे फंसकर वेदों को मांसाहार का प्रतिपादक समझने की भूल नहीं करनी चाहिए।

चिकित्साशास्त्र मांसाहार का विरोधी है

मांस भक्षण के विरोध में हमारे सामने चिकित्सकों की जो चिकित्सा शास्त्र के मर्मज्ञ है और जो इस विषय पर अधिकार पूर्वक बोल सकते हैं बहुत सी सम्मतियां हैं। उनमें से हम पश्चिम के चिकित्सकों की २-४ सम्मतियां पेश करते हैं।

" Flesh is an unnatural food, and, therefore, tends to create functional disturbance, modern civilisation is affected with such terrible diseases (Readily Communicable to man) as cancer consumption, Fever, intestinal worms etc to an enormous extent There is little need for wonder that flesh eating is one of the most serious causes of the disease that carry of ninety nine out of every hundred people that are born."

(Josiah old field, D C L. M A M R. C S L R. C A Senior physician Lady Margaret Hospital Bombay Herald of the Golden Age "I bid P 6 11-1-37)

अर्थात् मांस अस्वाभाविक भोजन है। इससे नासूर, तपेदिक, बुखार, अंतड़ियों की खराबी इत्यादि संक्रामक रोग होजाते हैं। जिस रोग से १०० के पीछे ९९ व्यक्ति मरजाते हैं मांसभक्षण उस का एक मुख्य कारण है।

"We can affirm almost with certainty that a vegetarian never contracts this malady The cause of appendicitis is, therefore, flesh-eating (Dr Victor Panchet, La Reforme All men taire, I Bid P 14, 15,"

हम निश्चय पूर्वक कह सकते हैं कि निरामिष भोजी को प्रायः पेट के फोड़े की बीमारी नहीं होती। इस बीमारी का कारण मांसाहार है।

विज्ञान मांस भक्षण के विरोध में है।

मांस भक्षण के विरोध में विज्ञान की बहुत सी स्थापनाओं में से हम कतिपय स्थापनाओं को देते हैं।

Comparative Anatomy teaches us that man resembles the frugivorous animal in every thing, the Carnivorous in nothing (I bid P 4. 11-1-18.

शरीर शास्त्र के तुलनात्मक अध्ययन से विदित होता है कि मनुष्य प्रत्येक बात में शाकाहारी

जीवों से मिलता जुलता है, माँसाहारी जीवों से किसी बात में नहीं।

(प्रो० गैरन)

"To-day there is the scientific fact assured that man belongs not to the flesh-eaters, but to the fruit-eaters To-day there is the chemical fact in the hands of all which none can gain say that the products of the vegetable kingdom contain all that is necessary for the fullest sustenance of human life.

(Josiah old Field)

अर्थात् विज्ञान ने यह सिद्ध कर दिया है कि मनुष्य मांस भक्षियों में से नहीं वरन फलाहारियों में से है। वनस्पति जगतमें वह सब मौजूद है जो मानव जीवन के पूर्णनिर्वाह के लिये जरूरी है।

हीरल्ड आव दि गोल्डन एज

I bid P 6

11-1-17

"It is a vulgar error to regard meat in any form as necessary to life.

'Sir Henry Thompson M D.F R.C S Diet in relation to age, and activity'

मांस को किसी रूप मे जीवन के लिये जरूरी समझना बड़ी भद्दी भूल है।

उपर्युक्त स्थापनाओं से स्पष्ट है कि मांस मनुष्य का स्वाभाविक भोजन नहीं है वरन् इस का सेवन धार्मिक, चिकित्सा तथा वैज्ञानिक इत्यादि दृष्टियों से वर्जित तथा हानिकारक है। इन सब बातों के होते हुए भी मनुष्य क्यों मांस खाता है, यह प्रश्न है जो स्वभावतः उठता है। अधिक विस्तार में न जाकर इसका उत्तर यही हो सकता है कि मनुष्य ने अभ्यास के द्वारा अपनी इन्द्रियो की स्वाभाविकता को अस्वाभाविकता मे परिवर्तित कर दिया है और मांस से जहां उसे स्वाभाविक घृणा होनी चाहिए थी और उसकी ओर उसे देखना भी नहीं चाहिए था वहां वह उसे खाने ही लग गया है।

घास तथा तृण खाने वाले पशु मांस की ओर देखते भी नहीं और इसी प्रकार मांसाहारी पशु घास की ओर दृष्टि नहीं उठाते हैं। परन्तु मनुष्य विचित्र पशु है वह भक्ष्याभक्ष्य सबको उदरस्थ कर जाता है। इस सम्बन्ध मे उसे पशुओं से विशेष शिक्षा ग्रहण करनी चाहिए और अपनी स्वाभाविक प्रवृत्ति की स्वाभाविकता की रक्षा करनी चाहिए।

अब प्रश्न यह रह जाता है कि मनुष्य का स्वाभाविक भोजन क्या है?

मनुष्य का स्वाभाविक भोजन फल है। यह उसके दांतो की बनावट से स्पष्ट है—उसके दांत मांसाहारी और वनस्पतिभक्षी दोनों प्रकार के जीवो से भिन्न हैं और फलाहारी जीवों से मिलते हैं।

आगे के लेख में हम मांसाहारियों की दलीलों पर विचार करेंगे।

सिंहाली नव-वर्ष

(एक प्रत्यक्षदर्शी द्वारा)

(अंग्रेजी से अनूदित)

सीलोन (लंका) मे अप्रैल का १३वा दिन एक महत्त्व पूर्ण दिन होता है क्योकि उस दिन सिंहालियो का नव वर्ष होता है। पुर्तगाल वालो के कब्जे मे आने और ईसाइयत का सूत्रपात होनेसे पूर्व और उस समय जब प्रत्येक सिंहाली बौद्ध धर्मावलम्बी था 'नववर्ष' एक राष्ट्रीय त्योहार था। परन्तु कालान्तर मे ईसाइयत के प्रचार के कारण इस प्राचीन त्यौहार का मनाया जाना केवल बौद्धो तक सीमित हो गया। सिंहाली नव-वर्ष सदैव एक सामाजिक घटना है जो सीलोन के मनोरम द्वीप की बौद्ध जाति के अन्तरतम जीवन मे प्रविष्ट हुई हुई है। फर्वरी के मध्यसे होनए वर्ष का आगमन अनुभव होने लगता है। कस्बो मे, गावो मे और द्वीप के विभिन्न भागो मे 'रवाना (ढोल) की आवाज सुनाई देती है जिसके चारो तरफ बैठी हुई देवियां उसे बजाती रहती हैं। 'रवाना' नव वर्ष की खास चीज होती है और प्रत्येक बौद्ध जमींदार 'रवाना' रखने मे गर्व अनुभव करता है। 'रवाना' का साइज और प्रकार मालिक के धन और प्रभाव के अनुपात से छोटा बड़ा होता है।

शिक्षित और सभ्य देवियो को छोड़ कर "रवाना" सीलोन की आम स्त्रियो के मनोरंजन का एक मात्र साधन है और वह भी सालमे एक बार। इस लिये इस अवसर का अच्छे से अच्छा उपयोग करनेका उनका अधिकार है, भलेही दूसरों को इससे तकलीफ और दिक्कत ही क्यों न होतीहो। ज्यो ज्यो दिन नजदीक आते जाते हैं त्यो त्यो "रवाना" का बजना बढता जाता है, यहा तक कि दसवी अप्रैल से तेरहवी अप्रैल तक दिन रात सिवाय उसकी आवाज के और कुछ सुनाई नही पड़ता, भले ही लोगो को "रवाना" का बजाया जाना भद्दा ही क्यो न देख पड़े परन्तु स्त्रियां जो उसे बजाती हैं उसमे से खास राग निकलता हुआ अनुभव करती हैं और अपने अभिनय की श्रेष्ठता मे निमग्न हुई देख पड़ती हैं।

नव वर्ष! प्रत्यक चीज नई होनी चाहिये। तमाम घर यहां तककि रसोईके बर्तनभी नया रूप लेते हैं। मार्च के अन्त तक मकानो की मरम्मत और सफेदी इत्यादि हो जाती है। नये पर्दे लगादिए जाते हैं। नये बर्तन खरीदे जाते हैं और फरनीचर Furniture इत्यादि साफ किया जाता है। किन्ही २ पुराने विचार के घरो मे घर के मुखिया यहां तक करते है कि तमाम मौजूदा फरनीचर (Furniture) को निकालकर उसकी जगह नया खरीदते हैं, यत्न यह होता है कि जिस तरह भी हो नया वर्ष आराम और खुशी के वातावरण में शुरू होना चाहिये।

त्यौहार वाले दिन से लगभग एक सप्ताह पहिले से स्त्रियां काम मे जुट जाती हैं। पोस्ट-आफिस सेविंग बैंको से पैसा निकाल लिया जाता

है और साल भर की जमा की पाई पाई बाहर निकाल ली जाती है। कुली लोग खाने पीने की चीजों से लदे घरमे आते जाते हैं और घर की मालकिन सामान को बीनती है और अपने अधीनस्थ घर के लोगो को हर एक को काम बांट देती है और खाने पीने इत्यादि का तमाम प्रोग्राम निश्चित कर देती है। उस हफ्ते मे और उससे आगे घर की मालकिन वस्तुतः बड़ी शान की व्यक्ति होती है और उसकी बुद्धि की परीक्षा मिठाइयो की तैयारी मे ही होती है, क्योंकि वह घर, घर नहीं कहलाता है जो नव वर्ष के लिये बहुत सी और तरह २ की मिठाइयां तैयार न कर सकता हो। इन मिठाइयो का बनाया जाना नव वर्ष की शाम तक जारी रहता है जबकि खाने के पुराने बर्तन हमेशा के लिये फेंक दिये जाते हैं और समाप्त होने वाले साल की रसोई की आग हमेशा के लिये बुझा दी जाती है।

महान दिन का उदय होते ही घरों मे ताले लगा कर लोग सबसे नजदीक के चश्मे या नदी पर चले जाते हैं और परम्परागत तेल से स्नान करने लगते हैं अर्थात् सिर से लेकर पैरो तक (गिंगली) का तेल लगाते हैं और अच्छी तरह स्नान करके उस तेल को धोते हैं या यों कहिये कि पिछले साल की गंदगी को वहीं छोड़ आते हैं।

नये साल के स्नान के बाद सिर पर तौलिया रखे हुये और हाथ में छोटा सा बर्तन लिये हुए सड़को और कूचों में स्त्रियो की कतार का देखना बड़ा सुहावना देख पड़ता है। वे अपने घर लौट आये हैं परन्तु अभी तक घर में नही घुसे हैं, जब तक शुभ मुहूर्त का निश्चय नही कर लिया जायगा तब तक न ताला खोलेंगे और न घर मे घुसेंगे। पुरुषो की अपेक्षा स्त्रियां इस सम्बन्ध मे ज्यादा सावधान रहती हैं, क्योकि यह उनका दृढ़ *विश्वास है कि आने वाले साल का तमाम सुख* और खुशी, शुभ मुहूर्त मे घर मे घुसने और रसोई की आग जलाने पर निर्भर करती है। घर मे घुसने पर सबसे पहला काम जो वह करती हैं वह नये खरीदे हुये बर्तन मे कुछ दूध का गरम करना है।

इसके बाद जो कुछ होता है उसके वर्णन करने की जरूरत नही। तमाम नगर मे आमोद प्रमोद और खुशी मनाई जाती है। भिन्न भिन्न प्रकार के नृत्य और संगीत से वातावरण गूंज उठता है। प्रत्येक व्यक्ति एक प्रकार के अलौकिक आनन्द मे मग्न हो जाता है। उस समय प्रत्येक व्यक्ति अपनी खुशी के आदर्श की भावना के अनुसार खुशी मनाने मे अपने को बिलकुल स्वतन्त्र समझता है।

लगातार तीन दिन तक यह खुशी जारी रहती है। उसके बाद 'भेटों' का आदान प्रदान शुरू होताहै भीड़ से अटे हुए रास्तों मे लड़कियां घर की बनी मिठाइयो की टोकरी जिनमे कढ़ियां भी रक्खी रहती हैं ले जाती हुई देख पड़ती हैं। वे मित्र रिश्तेदार या अन्य किसी शुभचिंतकके घर नववर्ष का उपहार ले जाती हैं। वे लड़कियां खाली हाथों या उनकी टोकरियां खाली शायद ही लौटती हैं। इस प्रकार आने वाले तमाम वर्ष के लिये शुभ

शिक्षा-समस्या

(ले०—रामशरणदास अनूपशहर यू० पी०)

(१)

शिक्षा का अर्थ विकाश है अर्थात् अन्धेरे से प्रकाश मे लाना। इससे मानसिक, आत्मिक और शारीरिक शक्तियो का विकाश होता है। एक जर्मन विद्वान् का कहना है कि शिक्षा का उद्देश्य बुद्धि से नियन्त्रित स्वतन्त्रता प्राप्त करना और हृदय मे आस्तिकता के भाव भरना है।

मनुष्य मनन और सगति द्वारा बनता है चाहे वह सगति जीवित पुरुषो के साथ हो या उनके पश्चात् उनकी रचनाओ से हो। जैसी भी सगत होगी उसी प्रकार के उसके विचार होगे। यथार्थ के न समझने के कारण भी विचारों मे भेद हो सकता है। यही कारण है कि भिन्न २ विचार वालो के अनेक समुदाय और सम्प्रदाय बन गये जिन से परस्पर मे वैमनस्य की बहुत सी खाइया बन गई, शान्ति नाशक युद्ध हुए और हो रहे हैं जिसकी साक्षी मे इतिहास बने हुए हैं। यदि रामायण और महाभारत के समय पर विचार करते है तो कही आकाश पाताल के सदृश अन्तर दिखलाई पडने लगता है कहा तो एक ओर त्याग बढ़ा हुआ है और कहा दूसरी ओर इतना अधिक लोभ है कि सूई के अग्र भाग समान भी पृथ्वी देने के लिये इन्कार है और भारत के भाग्य को उलटने वाला युद्ध आरम्भ हो जाता है। आज भी किसी किसी मजहब में इतनी असहिष्णुता है कि वे अपनी वास्तविक बुराइयां और दूसरे मजहबों की भलाइया सुनने में अपना इतना अपमान समझते है कि प्राणों के ऊपर भी आ बनती है। जब हम सब परमात्मा के मानने वाले हैं और मनुष्य से लेकर सब जातिया समान रूप मे होने के कारण एक ही कर्ता सिद्ध होता है तब समझ में नहीं आता कि एक का परमात्मा तो आरती से प्रसन्न हो और उसी से दूसरों को अप्रसन्नता हो। हमे तो यह कुशिक्षा का ही फल प्रतीत होता है। समय समय पर समय और स्थान के विचार से कानून के रूप में शास्त्र बने हैं उनको

कामनाओ, मित्रता और सामाजिक भ्रातृभाव के अन्तिम आदान-प्रदान के साथ यह महान वार्षिक त्योहार समाप्त होता है।

इस सम्बन्ध मे यह बात विशेष उल्लेखनीय है कि अप्रैल का तेहरवां दिन हिन्दुओ का भी नव वर्ष का दिन है। तीन दिन बाद अर्थात् सोलहवी अप्रैल को बर्मा वालो का नव वर्ष होता है। यह सब पास २ के लोग जो रहन-सहन, रीति-रिवाजो और धर्म मे एक दूसरे से इतने भिन्न हैं भारतवर्ष की प्राचीन सभ्यता के एक ही सूत्र मे बधे हुए है इसमे सन्देह नही हो सकता है।

ही सदैव और हर स्थान के लिये मानना एक बड़ी भारी गलती है। जिस मनुष्य की उत्तम शिक्षा होगी वह सब में समानता के भाव रखता हुआ और कर्मों के अनुसार मनुष्य को भोक्ता मानता हुआ जीवन व्यतीत करेगा। वह जानता है कि धर्म में कभी परिवर्तन नहीं होता है वह तो सब के लिये सामान्य रूप में है। इसलिये विचारवान् पुरुषों ने कहा है कि विद्या ही मुक्ति दाता है।

विद्या ददाति विनय, विनयाद्याति पात्रताम्।
पात्रत्वाद् धनमाप्नोति, धनाद् धर्म्मं तत सुखम्॥'

Good Education builds a nation while bad Education destroys a nation, अर्थात् उत्तम शिक्षा राष्ट्र की निर्माता है और बुरी शिक्षा राष्ट्र को नष्टकरने वाली है।

प्राचीन काल—पहले शिक्षा के वास्तविक अर्थ की पूर्ति पर माता, पिता, और आचार्य तीनों का ध्यान रहता था। माता-पिता अपने बच्चों को गुरू के यहा पर भेजने के पहिले ही बहुत कुछ पढ़ा दिया करते थे। गुरु-शिष्य भाव ही उस समय को सतयुग बनाये हुए था। चरित्र निर्माण, सादगी, कर्तव्यपरायणता आदि की नींव पर शिक्षा रूपी विशाल भवन निर्माण किया जाता था। पाठ्य विषयों की प्रधानता थी। उनके द्वारा ही भाषा का ज्ञान कराया जाता था चाहे औद्योगिक विषय का ही विद्यार्थी क्यों न हो उसे भी आध्यात्मिक विषय सरल रूप में रखना ही होता था। मानवधर्म अथवा सामान्यधर्म-"धृति क्षमा दमोऽस्तेयं शौचमिन्द्रिय निग्रह। धीर्विद्या सत्यमक्रोधो दशक धर्मलक्षणम्" का पाठ प्रत्येक को क्रिया रूप में करना पड़ता था। यह कारण था कि आर्य्य-जाति उन्नति के शिखर पर थी और संसार भर के विद्यार्थी यहा विद्या प्राप्त करने आते थे। अभी १३०० वर्ष ही हुए हैं कि यहा पर नालन्दा विश्व-विद्यालय था जिसमें १०००० दस हजार विद्यार्थी नि शुल्क शिक्षा प्राप्त करते थे और १५०० विद्वान् अध्यापक थे। सस्कृत राज भाषा थी। इससे और भी प्राचीन समय में और भी उत्तम शिक्षा होना चाहिये। मैगस्थनीज अपने समय मे लिखता है कि यहा ताले नहीं थे न्यायालयों में कोई विरला ही जाता था, चोरी नहीं होती थी, सत्य का प्रचार था, आदि।

सस्कृत भाषा में आध्यात्मिक सदाचार, वैद्यक इत्यादि सम्बन्धी पुस्तकों का भंडार है। वाचस्पति मिश्र एक उच्च कोटिके दार्शनिक पण्डित थे। सरस्वती पुत्र थे। लक्ष्मी ने षतावद्धेश इनको यहा तक कष्ट दिया कि इनको इमली के पत्तों पर उदर पूर्ति करनी पड़ी पर वह अपने पथ से विचलित नहीं हुए। त्याग ही प्रिय था। न तो धन में लोभ था और न स्त्री और पृथ्वी में ही मोह था। सीता, सावित्री, गार्गी आदि सी साध्वी माताय थीं। अभिमन्यु को चक्र सम्बन्धी शिक्षा गर्भ में ही मिली थी। यहा पर सस्कृत की उत्तम शिक्षा होने से अनेक प्रसिद्ध योगी होगये जिनकी समता कहीं पर भी नहीं है। ससार विजेता एलेग्जण्डर ने इस देश पर लड़ाई की पर वह भी महात्माओं के दर्शन करने में अपने को कृतार्थ समझ कर लौट गया। बीते समय में भी भक्तों

की विचित्र कथायें हैं यह सब कुछ जादू उत्तम शिक्षा में ही है।

माता-पिता से शिक्षा प्राप्त बच्चों को गुरुकुलों में भेजदिया जाता था। वे ब्रह्मचर्यावस्था तक वहीं रहते थे। आचार्य वानप्रस्थी होते थे। शिक्षा नि शुल्क थी। प्रकृतिकी गोदमें हरे २ वृक्षों के नीचे अति उत्तम समीर में ग्राम से दूर विद्यालय होते थे। विद्यार्थी अपने को पुष्ट और सुडौल बनाने के लिये प्राकृतिक व्यायाम किया करते थे। लड़के और लड़कियों के लिये शिक्षालय अलग अलग कुछ दूरी पर होते थे। लड़कों को पाठशालाओं मे पुरुष और लडकियों की पाठशालाओं मे स्त्रियें पढ़ाया करती थी। यही कारण है कि बच्चे इतने बलवान् और सुन्दर होते थे और भरत समान शेर के बच्चो के साथ खेला करते थे। १०० वर्ष की आयु होती थो। आज भी मनुष्य पृथ्वीराज के उस कवच को जिसे वह युद्ध मे पहन कर विजय प्राप्त करता था उसे देख कर अचम्भित होते है। पहिले सर्दी और गर्मी की कठोरता को सहन करने की शक्ति थी। विद्यार्थियों के प्रेम मे उनके माता-पिता की धनाढ्यता और निर्धनता कोई भेद उत्पन्न नहीं करती थी। कहा योगिराज श्री कृष्ण भगवान् और कहा निर्धन ब्राह्मण सुदामा जिनकी मित्रता अभीतक प्रसिद्ध है। यह उत्तम शिक्षा ही है कि राजा भी विद्यार्थियों का सम्मान करता था।

मध्यकाल—प्राचीन शिक्षा में शनै शनैः अधोगति की ओर परिवर्तन होने लगा। वेदों के नाम पर पशुवलि होने लगी। होते होते यवन राज्य स्थापित हुआ। उस समय हमारी शिक्षा का पूर्ण ह्रास हो चुका था। हमारा शिक्षण फारसी द्वारा होने लगा। इसने हमे हमारे धर्म- कर्म काड, वर्ण और आश्रमों की शिक्षा से अनभिज्ञ रक्खा। हमारी शिक्षा न होने के कारण सगठन-शक्ति क्षीण हो गई, स्वार्थ बढ़ गया और हम इतने निस्तेज हुए कि हमे अपनी भलाई का भी विचार न होता था। ऐसे अन्धकार के समय मे स्वामी दयानन्द सरस्वती जी का प्रादुर्भाव हुआ उन्होंने खोई हुई प्राचीन सस्कृति प्राप्त करने और सब को पुन सच्चे सीधे वैदिक मार्ग पर लाने के हेतु प्राचीन शिक्षा का पुनरुद्धार किया। एक उत्तम पाठ-विधि जनता के सम्मुख रक्खी जिस के अनुसार गुरुकुल खोले गये। संस्कृत की पाठशालएँ स्थापित की गई इसके पश्चात आर्य-समाज ने अपने प्रवर्तक के सिद्धान्त के प्रतिकूल अनेक अगरेजी भाषा की बड़ी २ सस्थाएँ अपने कार्य की उन्नति करने के विचार से खोलीं और अब आधुनिक भाषा के कारण विचारों मे परिवर्तन होने से या उसी में रहने के कारण और भी सस्थाएँ खोलते जा रहे हैं। इसलिये हम कह सकते हैं कि आर्य समाज को इस कार्य में पूर्ण असफलता प्राप्त हुई है। राजा राममोहनराय एक बड़े सुधारक और एक सम्प्रदाय के जन्मदाता थे। वे उस समय की शिक्षा प्रणाली से असन्तुष्ट थे यदि वे चाहते तो उसी में राजनैतिक वैज्ञानिक आदि व्यावहारिक विषयों का समावेश करके उसे सर्वांग पूर्ण कर सकते थे, पर दुर्भाग्यवश नवीन स्फूर्ति उत्पन्न करने के हेतु अगरेजी भाषा की सस्थाओं के खोलने में प्रबल पक्ष लिया जिसका परिणाम आज देखने में आरहा हैं। (क्रमशः)

विविध पत्र-पत्रिकाएँ

आर्य्य

श्री कुंवर चान्दकरण जी शारदा 'आर्य्य समाज का महत्व' शीर्षक में 'आर्य्य' शब्द का महत्व दिखलाते हुए लिखते हैं —

'आर्य्य' शब्द का यौगिक अर्थ ज्ञान गमन प्राप्ति है। अतः प्रगति शील और ज्ञ नवान् होकर अपने उद्देश्य को सिद्ध करना प्रत्येक आर्य्य का कर्त्तव्य है। आर्य्य विद्वानों ने ही आर्य्य शब्द का यह उत्तम अर्थ करके बतलाया कि आर्य्य के लिए (Knowledge is power) अर्थात् ज्ञान ही शक्ति है। अतः आर्य्य पुरुषों के लिये गायत्री जप और 'धियो यो नः प्रचोदयात्' परमात्मन् आप हमारी बुद्धियों को प्रकाशित कीजिए, ऐसी प्रार्थना करना नित्य प्रति की संध्या हवन मे एक विशेष अंग हो गया। इतने पर ही आर्य्य पुरुष सन्तुष्ट न रहे बल्कि प्राप्ति अर्थ की सिद्धि के लिए कर्म वीर होकर Power for acquisition अर्थात् वस्तु प्राप्तिके लिए कोरी बातें न बनाकर बल सचय करने का मार्ग भी हमें बताया। इसी वास्ते श्रीघनश्याम सिंह जी गुप्त के एसेम्बली में पास हुए आर्य्य विवाह बिल में आर्य्य की कोई खास व्याख्या न हो सकी।

इसके आगे शारदाजी इस व्यापक धारणाका खंडन करते हुए कि आर्य समाज के पास अब कोई प्रोग्राम नहीं, आत्मिक उन्नति के प्रोग्राम की ओर संकेत करते हुए आर्य नर नारियों को इसे अपनाने पर बल देते हैं। वे लिखते हैं —

"आर्य समाज के सामने सब से अधिक महत्वपूर्ण प्रोग्राम आत्मिक उन्नति का है। इस प्रोग्राम से योरुप और एशिया दोनों सुख और शान्ति प्राप्त कर सकते हैं। प्रिय आर्य पुरुषो आप के परम पवित्र वैदिक धर्म को सारे ससार के दूसरे धर्म अपना आदि स्रोत मान रहे हैं। योरुप के बड़े तत्ववेत्ता स्वीकार कर रहे हैं कि हमारा सारा दर्शन शास्त्र Aristotle और Plato के सिद्धान्तो पर स्थित है और Aristotle और Plato का ज्ञान भारतीय दर्शन शास्त्रों के आधार पर है। अत आर्य संस्कृति को सब ने संसार की सारी संस्कृतियों से श्रेष्ठ माना है। हाल मे ही डाक्टर G A Godan surgeon General of the Victorian institute London" Indian mirror नामक समाचार पत्र मे लिखते हैं—Greek Roman's learnt from India of Vedic age अर्थात् ग्रीक, रोमन लोगों ने जिन से कि योरुप वालों ने सभ्यता सीखी, उन्होंने खुद भारत से ज्ञान प्राप्त किया। अतः आर्य पुरुषों और देवियों को, ससार के सामने अपना आदर्श सदाचारी जीवन व्यतीत करके दिखाना चाहिये। आर्यों को अभिमान करना चाहिये कि उनको विरासत मे वैदिक सभ्यता जैसी सर्व श्रेष्ठ सभ्यता प्राप्त हुई है। क्या आर्य

पुरुष इस ओर ध्यान देंगे और पारस्परिक कलह, ईर्षा, द्वेष त्याग कर यह समझेंगे कि यह शरीर तो नाशवान् है। आत्मा शरीर से भिन्न है। इस आत्मा की उन्नति के लिए शरीर को स्वच्छ रखते हुए, सत्य-अहिंसा, अस्तेय, ब्रह्मचर्य, और अपरिग्रह का आचरण आवश्यक है। आर्यसमाज के सभासदों को छोटे छोटे कामों से ही इस उन्नति के मार्ग पर चलना चाहिये। यदि आर्य पुरुष साप्ताहिक, अधिवेशनो मे प्रति रविवार को सपरिवार आना प्रारम्भ करदें, और सप्ताह मे २ घन्टे भी साप्ताहिक सत्सगके लिये निकालदें तो श्री स्वामी सर्वदानन्द जी महाराज के शब्दो मे आर्य समाज की काया पलट सकती है और संसार के सामने हम आत्मिक उन्नति का शारीरिक और सामाजिक उन्नति के साथ साथ उत्तम आदर्श उपस्थित कर सकते है।

एक और एक ग्यारह

संगठन की रक्षा और दृढ़ता के लिये उसके सदस्यों में तीन गुणों का अर्थात् नियंत्रण, आत्म-त्याग और आत्मपरिचय का होना अनिवार्य होता है। श्री बा पूर्णचन्द्र जी आर्य्यमित्र मे 'एक और एक ग्यारह' के शीर्षक मे इन तीनों गुणों पर आर्य्य समाज के हवाले से प्रकाश डालते हुए लिखते हैं:—

(१) नियन्त्रण—यह स्वतन्त्रता का युग है। इस लिये स्वतन्त्रता को पसन्द करने वाले व्यक्ति अपना व अपने समाज का सङ्गठन तो चाहते हैं, परन्तु नियन्त्रण नही चाहते। यह बहुत बड़ी भूल है। चाहे कितनी ही बड़ी संस्थाएं क्यो न हों, परन्तु जब तक उनका कोई नेता न होगा, सफलता प्राप्त नही हो सकती। बड़े से बड़े प्रजातन्त्र मे सभापति अथवा राष्ट्रपति की आवश्यकता होती है। क्रियात्मक सफलता के लिये तो यहां तक आवश्यक है कि छोटी से छोटी संस्था की कार्य-कारिणी हो बल्कि ज्यादा अच्छा तो यह समझा जाता है कि किसी को डिक्टेटर नियत कर दिया जावे। ऋषि दयानन्द ने आर्य समाज के संघटन मे स्वतन्त्रता और नियन्त्रण का बड़ा सुन्दर समावेश किया है। दसवां नियम इसका द्योतक है। यह बड़े दुःख की बात है कि आर्य-समाज के पवित्र संघटन मे भी कही-कही उच्छृङ्खलता दृष्टिगोचर होने लगी है। परन्तु यह एक सामयिक घटना है। जो सूर्य के मुख को अधिक देर तक नही छिपा सकती। हमारा अनुभव है कि नियंत्रण का विरोध निर्बलता करती है। किसी ने कहा है कि—"Obedience is the first school to Command" अर्थात् यदि किसी को हाकिम बनना है तो सबसे प्रथम उसे आज्ञापालन सीखना चाहिये। सेना का सबसे बड़ा सेनापति साधारण सैनिक से बनता है। किसी नियन्त्रण में रहना सबसे सच्ची और बड़ी स्वतन्त्रता है। यह प्रसिद्ध कहावत है कि बेसिरी फौज मारी-मारी फिरती है।

२—नियंत्रण के साथी संघटन का दूसरा सफल

उपाय आत्म त्याग है। नेता और प्रजा दोनों के लिये आत्म त्याग आवश्यक है। नेता बनने के लिये हमे अपनी व्यक्तिगत इच्छाओ की पूर्ति का विचार न कर प्रजा के हित साधन का ध्यान रखना होगा और प्रजा को अपना स्वार्थ छोड़ कर नेता की आज्ञा माननी होगी। स्वेच्छाचारिता सांघातिक नीति है इस इच्छा से काम करने वालो के सघटन का नाम ही गुट्ट और दलबन्दी है। यह दलबन्दी चाहे धार्मिक जगत् मे हो चाहे राजनैतिक क्षेत्र मे, दु:खदायिनी ही होती है। दलपति होने या दल बनाने के लिये विशेष प्रकार के उच्च आदर्शों की आवश्यकता है, और उनकी पूर्ति के लिये ही सघठन होना चाहिये। ऋषि दयानन्द ने उपर्युक्त १० वें नियम मे ही सर्व हितकारी कामो के सम्बन्ध मे आत्मत्याग की शिक्षा दी है। आत्म त्याग की कमी ने आर्यसमाज सम्बन्धी पवित्र कार्यों को बहुत दूषित बना दिया है। गुट्टबन्दी निर्वाचन के शुद्ध स्वरूप को कलंकित कर देती रही है। ऋषि दयानन्द स्वतन्त्र निर्वाचन के समर्थक और अनधिकार चेष्टा व पक्षपात के घोर विरोधी थे। उनका आत्म त्याग यहां तक प्रसिद्ध है कि इन्होने अन्तरङ्ग सभा का सदस्य न होते हुए सभासदो के अत्यधिक आग्रह करने पर भी समाज के कार्यों मे अपने वोट का उपयोग नहीं किया। इसी लिये आर्य जगत् मे उनको गौरव प्राप्त है।

३-आत्म-परिचय—नियंत्रण व आत्म-त्याग से भी अधिक आवश्यक आत्म-परिचय है। प्रत्येक को अपनी योग्यता का पता होता है और यदि न हो तो हो सकता है। किसी भ्रम मे पड़ अपने को अधिक योग्य समझें तो यह सम्भव है परन्तु हमें अपनी योग्यता का पता न हो—यह एक भयानक भ्रम है। प्रबन्ध की दृष्टि से सबको समान अधिकार है, परन्तु अधिकारके साथ कर्तव्य पालन का भी विचार लगा हुआ है और कर्त्तव्य पालन योग्यता पर अवलम्बित है। सबको प्रधान बनने का अधिकार है परन्तु जिसको प्रधान बनाया जाय उसको भी तो यह सोच लेना चाहिये कि मुझ मे इस पद की योग्यता है भी या नही। अयोग्यो के लिये केवल प्रसिद्ध होने या अपनी स्वार्थ-सिद्धि के लिये किसी ऐसे कार्य के करने का भार अपने ऊपर लेना जिसके वह योग्य न हो, भयकर पाप है। अयोग्य और अनधिकारियो के हाथो मे अधिकार पहुंच जाने से बड़ी बड़ी हानि होती है। इस त्रुटि का केवल यही उपाय है कि प्रत्येक व्यक्ति अपनी अपना शक्तियो को ठीक-ठीक समझ कर काम करे। इसके लिये न कोई नियम हो सकते है और न कोई विधान बन सकता है। इसकी पूर्ति तो क्रियात्मक और धार्मिक जीवन पर निर्भर है। आज केवल उक्त त्रुटि के कारण भयकर परिणाम निकल रहा है। उपर्युक्त तीनो उपाय सघटन के आवश्यक अङ्ग और एक और एक ग्यारह की कुञ्जी है।

शकर और मूलशंकर

प जमुनादास जी वकील स्यालकोट 'शंकर और मूल शंकर' शीर्षक में दोनों का विभिन्नता दिखलाते हुए 'आर्यगज़ट' म लिखते हैं —

शकर को केवल अपने देशवासी वाममार्गियों

या वैदिकधर्मियो से ही मुकाबला करना था परन्तु मूलशंकर को अपने देशवासी और विदेशी मतो से लड़ना पड़ा। इसलिए दोनों की नीति और विचार भूमि मे भेद हुआ। शंकराचार्य को उस समय के वाममार्गियो, भोगवादियो को सही मार्ग पर लाने के लिए आत्म वाद पर जोर देना पड़ा। मगर मूलशंकर (दयानन्द) को जहा देशी और विदेशी भोगवादी मतो क मुकाबिले मे आत्म-त्याग पर जोर देना पडा वहीं खोखले वादके विरुद्ध भी आवाज उठानी पडी। इस लिए स्वामी दयानन्द ने समष्टिवाद का प्रचार किया अर्थात् भक्ति, व्यक्ति और शक्ति का मिलाप करने से भोगवाद और त्याग वाद के बीच के मार्ग पर चलनेका उपदेश किया। शंकरने इसके विपरीत मायावाद का आश्रय लेकर त्याग पर जोर देते हुए भोगवाद का हर प्रकार से खंडन किया। शरीर से घृणा करना सिखाया। शरीर के सम्बन्धो मे और इस प्रकार दुनिया के धन्धो से दूर भाग जाने का उपदेश किया। परिणाम यह हुआ कि शंकर के प्रचार से हिन्दुओ मे व्यक्तिगत जीवन और आत्म प्रेम इतना बढ़ गया कि प्रत्येक अपनी शक्ति के लिये यत्न करता हुआ दूसरो की तरफ से बिलकुल लापरवाह हो गया। स्वार्थ जोर पकड़ता गया और सामाजिक जीवन का नाश हो गया।

ज्यों २ शंकर का नवीन वेदान्त जोर पकड़ता गया हिन्दु खुदगर्ज बनता गया और सामाजिक जीवन तंग होता गया। आजकल हिन्दुओ के भीतर जो व्यक्तिगत या स्वार्थी जीवन पाया जाता है (और जो हिन्दुओ के छिन्न भिन्न और असंगठित होनेका एक प्रधान कारण है।—संपादक सार्वदेशिक) इसके लिये शकर का नवीन वेदान्त बहुत हद तक जिम्मेवार है। ऋषि दयानद ने गृहस्थ जीवन की महिमा का गान करके भोग वाद को उचित स्थान देते हुए सन्यास आश्रम की उपेक्षा नही की और अपने अमल से त्याग की महिमा दर्शाई है। जितना जोर श्री स्वामी शकराचार्य जी ने शरीर से घृणा और ससार से विमुख होने पर दिया है उतना जोर दयानन्द ने शरीर का उन्नति और सामाजिक सेवा पर दिया है। मूलशंकर सामाजिक जीवन को कोरे व्यक्तिगत जीवन पर तरजीह देता है। दोनो के खयालात मे बहुत भेद है। शकर दुनिया को माया कह कर उसे असलीयत नही समझना। बल्कि उसे धोखा मानता है। वह आत्माको ही मुख्य तत्त्व समझता है। मूलशकर दुनियाको मिथ्या माननेके बजाय उसे एक वैसी ही असलियत समझता है जसी आत्मा को। शंकर इस सारे ब्रह्मांड और प्रत्येक शरीर और प्रत्येक वस्तु म एक ही आत्मा मानता है। वह परमात्मा और जवात्मा में कोई भेद नहीं मानता। उसके खयाल में जीवात्मा से भिन्न कोई विश्व व्यापी आत्मा नही है। अन्तः करण रूपी उपाधि दूर हो जाने पर मनुष्य का आत्मा परमात्मा है। मूलशकर जीवात्मा को परमात्मा से तीनो 'कालो' में पृथक् मानता है। अन्त. करण रूपी उपाधि मूलशंकर के खयाल मे कभी नष्ट नही होती। इसलिये जीवात्मा कभी परमात्मा नही बन सकता।

शङ्कर ने शरीर, स्थूल, सूक्ष्म हर दो को नाश करके अपने आत्मा मे लीन होकर मुक्ति पाने पर ज़ोर दिया उसके ख्याल मे अपने आत्मा में लीन हो जाना ही मुक्ति है। मूलशङ्कर के ख्याल मे अपने अन्तःकरण को शुद्ध करके उसमे ईश्वरीय गुणों का सचार करके अपने आत्मा को परमात्मा के गुण कर्म और स्वभाव के अनुकूल बनाना मुक्ति है। आत्मिक आदर्शों के भेद के कारण स्वभावत दोनों के दैनिक जीवन के प्रोग्राम मे भेद हुआ। शङ्कर ने जहाँ केवल तर्क वितर्क से काम लिया वहां मूलशङ्कर ने तर्क वितर्क के साथ साथ समाज के आगे विद्या प्रचार, शुद्धि, अनाथ—रक्षण इत्यादि का अमली प्रोग्राम रक्खा। आत्मिक आदर्श के भेद के कारण दोनों की प्रचार शैलीमें भेद हुआ। शङ्कर ने मठ System जारी किया। अपने चेलों को खास २ स्थानों पर नियत करके उनके सुपुर्द प्रचार का काम सुपुर्द किया। वे नि त समय पर चढ़ावे चढ़ाने और पूजा करने लग पड़े। व्यक्ति पूजा शुरू हुई। मूलशङ्कर ने मठधारी नीति को हानिकारक समझा और प्रजातन्त्र प्रणाली को प्रचारक के लिये पसन्द किया और अपने प्रतिनिधि आर्य्य समाज के सुपुर्द काम किया। आर्य्य समाज के प्रबन्ध में बहुमत से प्रबन्ध करने का असूल कायम किया।

हिन्दी चरित्र शुद्धि

महात्मा गांधी 'हरिजन' में उपर्युक्त शीर्षक में लिखते हैं -

मद्रास मे दक्षिणभारत-हिन्दी प्रचार-सभा की अंतिम परीक्षा में उत्तीर्ण युवक युवतियों को प्रमाण-पत्र देने के लिए पदवीदान—समारंभ रक्खा गया था। उन्हें तेहरी प्रतिज्ञा लेनी थी—हिन्दी-हिन्दुस्तानी का प्रचार, स्वदेश की सेवा और हिन्दी-प्रचार-सभा की प्रतिष्ठा की रक्षा के लिए चारित्र्य-शुद्धि, ये तीन व्रत उन्हें लेने थे। सेवा और चारित्र्य-शुद्धि सम्बन्धी व्रत लेने मे प्रतिज्ञाकारों की खास मंशा थी। उनका ऐसा अभिप्राय होना चाहिये कि सभा द्वारा पदवी पाने वाले युवक और युवतियां यदि सेवा-भाव से हिन्दी का प्रचार करें और उनका चरित्र परम शुद्ध हो, तो ये दो चीजें इन पदवीधारियों की प्रतिष्ठा को बढ़ायेगी और वे खुद ही हिन्दी-हिन्दुस्तानी को लोकप्रिय करने के लिये विज्ञापन का सबसे सुन्दर साधन बन जायगी। इसलिये मैंने उन्हे पदवी लेते समय प्रतिज्ञा का स्मरण कराया। अपने कथन का समर्थन करने के लिये मैने एक हिन्दी शिक्षक के पतन की खबर, जो मेरे पास आई थी, उन्हे सुनाई और कहा कि इस पतन ने हिन्दी प्रचार के काम को कितनी हानि पहुँचाई है। यह बात कहते समय मुझको जरा भी कल्पना न थी कि मुझे अभी क्या २ सुनाना बदा है।

दूसरे दिन सवेरे कोई मेरे हाथ में एक ऐसा पत्र रख गया, जिसमें पं० हरिहर शर्मा के चरित्र के पतन के बारे मे ब्यौरेवार बातें लिखी हुई थीं। पंडित हरिहर शर्मा उपर्युक्त प्रतिज्ञा के मूल निर्माता और हिन्दी प्रचार सभा के मन्त्री हैं, और सत्याग्रहाश्रम के आरम्भ-काल से ही वे उसके सदस्य है। उन्होंने तथा उनकी पत्नी ने हिन्दी-प्रचारकार्य के लिए पर्याप्त योग्यता प्राप्त की है। बरसों से दक्षिण भारत में हिन्दी प्रचार-आन्दोलन के वे प्राण हैं। आश्रम में उनके प्रति सभी को भारी आदर था। जिनके बारे में कभी

शंका ही नहीं उठ सकती, जिनके विरुद्ध कोई उंगली नहीं उठा सकता, ऐसे आश्रमवासियों में उनकी गिनती होती थी। अतः मैं विश्वास नहीं कर सका कि मुझे जो पत्र मिला वह कहां तक सत्य था। दूसरे दिन सवेरे मैंने उनसे बात की। कुछ समय तो उन्होंने अपने ऊपर लगाये दोषारोप का विरोध किया, पर पीछे उसे छिपाना उन्हें असह्य हो गया और उन्होंने सारी बातें क़बूल करलीं। आश्रम के आचार धर्म के अनुसार उन्होंने मुझे अपने पाप-कृत्य को प्रगट करने की इजाजत देदी। मैंने तुरन्त ही सभा की कार्यकारिणी समिति को यह खबर सुनादी। कार्यकारिणी तो यह सुनकर स्तब्ध हो गई, वह ऐसी खबर सुनने के लिए तयार न थी। पंडित शर्मा ने अपने पतन की वजह से त्यागपत्र भी दे दिया। कार्यकारिणी को उनका त्यागपत्र मंजूर करना ही होगा पर मेरे लिए इस विषय का अन्त यहीं नहीं हो जाता। कोई ऐसा मान सकता है कि ऐसी २ घटनाओं को प्रकाश में लाने की जरूरत नहीं। जो ऐसा मानते हो उन्हें पूरी पूरी बातों का पता नहीं। जिन सस्थाओं के साथ मेरा निकट का सम्बन्ध रहता है, उन्हें जनसमुदाय—पुरषों तथा स्त्रियों—के साथ काम लेना पड़ा है। ये संस्थाएं सैकड़ों स्वयंसेवकों के द्वारा काम चलाती हैं। उनके पास सिवा एक नैतिक बल के दूसरी किसी भी प्रकार की सत्ता नहीं होती। स्वयंसेवकों पर जनता विश्वास रखती है। क्योंकि वह यह मान लेती है कि उनका चारिव्य तो शुद्ध ही होगा। जिस क्षण वह अपने चारिव्य-शुद्धि की साख खो देंगे उसी क्षण उनका प्रभाव कम हो जायगा। पाप पङ्क में फंसी हुई सस्था या व्यक्तियों की पाप के प्रकटीकरण से कभी हानि नहीं हुई।

पंडित शर्मा के पतन से सारे भारतवर्ष के लोक-सेवकों को यह सबक लेना चाहिए कि वे निरंतर अपनी चौकसी करते रहे और जब शत्रु आक्रमण करे तब ऊंघते हुए या गाफिल न पड़े रहे। हमारे लिए घबरा जाने या हताश हो जाने का कोई कारण नहीं। जहाँ तक मैं जानता हूँ, हिन्दी शिक्षकों ने साधारणतया चरित्र-शुद्धि के सम्बन्ध में निष्कलंक रहकर अपना कार्य सम्पन्न किया है। पतन सिद्ध हो जाने पर एक भी उदाहरण मैंने जनता में छिपा कर नहीं रक्खा। हम प्रलोभन को आमन्त्रण दें इसी तरह प्रलोभन से बिलकुल ही बचने के लिए लोहे के पीजरे में बंद हो कर न बैठ जायें। प्रलोभन जब बिना बुलाये हमारे सामने आ जाय तब उसका सामना करने के लिए हमें तैयार रहना चाहिये। शर्मा ने प्रलोभन को निमन्त्रण दिया इसी से उसका पतन हुआ। उन्होंने अपनी शक्ति के ऊपर हद से ज्यादा भरोसा रक्खा। शर्मा जब तक आत्मशुद्ध नहीं कर लेते तब तक वे मेरे ही साथ रहेंगे। संस्था से उनके अदृश्य हो जाने का अर्थ यह नहीं कि उनकी सेवा के कार्यकाल का अंत आ गया है। इस पतन ने यदि उन्हें उनके जीवन में शिक्षा लेने लायक पाठ सिखा दिया होगा तो न तो वे खुद गवायेंगे और न हिन्दी-प्रचार का कार्य ही उनके जैसा प्रौढ़ सेवक हाथ से जाने देगा। भूल करना मनुष्य का स्वभाव है की हुई भूल को मान लेना और इस तरह आचरण रखना कि जिस से वह भूल फिर न होने पाये यह मर्दानगी है। इस कार्य के लिए आवश्यक पुरुषार्थ का गुण शर्मा में आवे ऐसी हम आशा रक्खें, और यह प्रार्थना करें कि इस पतन से वे अधिक अच्छे सेवक बनें। कौन नहीं जानता कि संसार के कुछ साधु-संत 'प्रसिद्ध पातकी' थे।

जगज्जननी का ध्यान

(ले०—श्रीमती विद्यावती देवी जी धर्मपत्नी स्वा० धर्मदेव जी विद्यावाचस्पति, बंगलौर)

(१)

तू धन्य मेरी माता, दिन रात तुमको ध्याऊँ ।
तेरी ही धुन की धूनी, दिल मे सदा धुखाऊँ ॥

(२)

तेरी उपासना का, बन जाय मन यह मन्दिर ।
मै बैठ उसके अन्दर, अँधियार सब मिटाऊँ ॥

(३)

तेरी ही ज्योति से माँ, जग जगमगा रहा है ।
मैं भी उसी से अपने, दिल का दिया जलाऊँ ॥

(४)

तेरी ही दिव्यता का, दर्शन करूँ मैं निशिदिन ।
तुमको ही अपने दिल मे, केवल मैं देख पाऊँ ॥

(५)

मम रोम रोम में तू, रम जा ऐ रम्य माता ।
तव प्रेम रस से अपनी, नस नस को मैं न्हिलाऊँ ॥

(६)

ऐसी कृपा करो मैं, भूलूँ तुझे कभी ना ।
पल भर भी तेरा पल्ला, मै छोड़ने न पाऊँ ॥

(७)

जननी तो मेरी ऐसी, जन मे हो जान जैसी ।
मैं जान अपनी को अब, अन्दर ही जान जाऊँ ॥

मिरज़ापुर—वनचारी सेवा मण्डल
रिपोर्ट
दिसम्बर सन् १९३६

—❀—

यह पहला आयोजन है कि मिर्ज़ापुर ज़िले के जंगली लोग आर्य्य धर्म्म का सन्देश सुन रहे हैं। यह आयोजन श्री सेठ जुगल किशोर जी बिड़ला की कृपा से शुरू हुआ है—सम्पादक।

साधारण विचार

मिरजापुर की जगली हरिजन जातियों में प्रचार करने का मौका बनारस अछूतोद्धार कमेटी को प्राय मिलता रहता है। जंगलियों के रहन सहन, उनके धार्मिक सामाजिक व्यवहार इधर के हिन्दुओं से भिन्न भिन्न तरीके के है। उनके पुराने इतिहास और प्रचलित ग्रामीण किस्से कहानियों को सुनकर यह ज्ञात होता है कि पहले वे उसी भूमि मे सैनिक के रूपमे रहे होंगे। उनके विशाल शरीर, लम्बी लम्बी भुजा को देख कर यह ज्ञात होता है कि कभी किसी समय में उनका राज्य उन जगलों में अवश्य रहा है। स्थान स्थान पर टूटे फूटे कोट अभी तक पाये जाते हैं। स्थानीय वर्तमान छोटे छोटे स्टेटों के बड़े बूढ़ों से ज्ञात होता है कि ये लोग कई बहुत बड़े बड़े लड़ाइयों में हराए गए हैं और पद दलित किये गये हैं।

तीर कमान का चलाना अभी तक ये लोग खूब जानते हैं किसी बात पर वह धार्मिक हो या सामाजिक धर्म पत्री के नाम पर बहुत जल्द एकत्र हो जाते हैं। संगठन का भाव इनमें कूट २ कर भरा हुआ है। इन हरिजनों में गरीबी अधिक है, पैसे पैसे को मुहताज हैं, बड़ी मुश्किल से इन लोगों का पेट चलता है, मकान फूस और झोपड़ियों के पाये जाते हैं, इनके शरीर पर वस्त्र तो नाम मात्र का रहता है औसत आमदनी इन लोगो की प्रत्येक घर की केवल -)॥ पैसा प्रति दिन की है। इतना होने पर भी कहीं कहीं इन जंगलियों मे से बड़े २ जमीदार तक पाये जाते हैं। इन जमीदारों का बड़ा जबरदस्त प्रभाव उन हरिजनों के ऊपर है। जमीदार लोग यह चाहते हैं भी कि हमारी जाति के लोग अति शीघ्र सुधर जायें।

जंगलों में हरिजन कई प्रकार के हैं—

१ कोल २ मुसहर ३ चर्मकार ४ वियार ५ चेरो ६ पनका ७ खरवार ८ मामी ९ भुईंहार

इन जातियों में खरवार को छोड़ प्रायः सभी जातियों में प्रचार किया गया है। उपरोक्त जातियों में भुईंहारों की जाति बड़ी खतरनाक होती है वे धनुषबाण अच्छी तरह से चलाना जानते हैं।

शिक्षा का अभाव

जंगलों में शिक्षा की बहुत बड़ी कमी है। डिस्ट्रिक्टबोर्ड मिरजापुर ने बहुत थोड़े स्कूल कायम किए हैं, उन स्कूलों में भी गरीबी के कारण इनके

बालक नहीं पढ़ सकते हैं। दर्जा चार पास पांच विद्यार्थी पाये गये और एक बालक मिडिल में शिक्षा पा रहा है।

सामाजिक जीवन

प्राय शरीर से नगे रहना, केवल काम चलाऊ वस्त्र पहनना, फूस की झोपड़ियों में निवास, जिन हरिजनों के वर्ग में ब्राह्मण विवाह कराने नहीं जाते वे लोग धनुषबाण द्वारा विवाह अपने से करा लेते हैं। भूत प्रेतों का अधिक विश्वास, स्त्री पुरुषों मे स्वतन्त्रता करना एक प्रकारका धार्मिक विश्वास, करमा स्त्री पुरुष दोनों के सम्मिलित गान को कहते हैं। जगलियों के नाच भी होते हैं, उस नाच में स्त्री पुरुष दोनोंको सम्मलित होना पड़ता है। नाच में किसी प्रकार की अश्लीलता नहीं होती। सदाचार इनमें बहुतायत से पाया जाता है। ताड़ी और गाजा ये अधिक पीते हैं।

पेशा

खेती करना, मजदूरी करना, हल चलाना, डलिया सूप बनाना शहद और लाख निकालना और लकड़ी काट कर बेचना आदि।

आर्थिक संकट

ये लोग काश्तकारों के पास मजदूरी करने जाते हैं, दो पैसा मजदूरी पाते हैं, पैसे के बदले इनको कोई न कोई अन्न मिल जाता है। कर्ज से लदे हैं, अक्सर ईसाई लोग क़र्ज पर रुपया उधार देते हैं, चुकता न करने पर इनको ईसाई मजबूर होकर होना पड़ता है।

बेगार प्रथा

जगलों मे जमीदारों द्वारा बेगार अधिक ली जाती है, आखों देखी घटना है कि हरिजनों से दिन भर बेगार लिया गया, शाम को उन्हे एक पैसा भी नहीं दिया गया। रात्रि को आकर उनका सारा परिवार भूखा सो रहा। बेगारी प्रथा से वे लोग बहुत तङ्ग और दुखी है।

ईसाइयों का बृहत् प्रचार:—

उन जगलों मे ईसाई अपना प्रचार बहुत कर रहे हैं, हजारों की संख्या मे उनको ईसाई बना चुके हैं। ईसाई उनको ईसाई बनाने में बड़े छल और कपट के साथ कार्य लेते है। हरिजनों के बच्चों को नये नये वस्त्र देकर लारियों में बैठा कर न मालूम वे कहा ले जाते हैं पता लगाने पर यह ज्ञात हुआ है कि चुनार और मिरजापुर के गिरजे में उन्हे दाखिल किया जाता है, जिस समय जगलियों से उनके बच्चों को अलग किया जाता है, उस समय बड़ी ही दयनीय दशा उपस्थित हो जाती है। रावट्स गंज मे एक गिरजा बहुत पहले से बना हुआ है किन्तु अब दूसरा दश सहस्र का गिरजा तैयार हो रहा है। ईसाइयों को कामयाबी काफी हो रही है।

शुद्धि का प्रचार

जंगलियो से ईसाई हुये अपने बिछुड़े बन्धुओं के शुद्धि के सम्बन्ध में बात हुई। उन लोगों ने कहा कि हम ईसाई हुये भाइयों को पंचगव्य द्वारा अवश्य मिला लेगे बशर्ते ग्राम के ब्राह्मण लोग इस विधान को कराने के वास्ते तैयार हों। ईसाई बने

आर्य समाज की मार्च—अप्रैल ३७ की प्रगति

सयुंक्त प्रान्त

श्रीमान् सम्पादक जी नमस्ते !

स्वर्ण जयन्ती महोत्सव प्रबन्धादि का कार्य शुरू हो गया है। प्रान्तिक सभा ने धन संग्रह का कार्य क्रम बना दिया है। प्रान्त में भ्रमण के लिए डेपुटेशनो की आयोजना कर दी गई है। इस अवसर पर कम से कम १ लाख रुपया संग्रह करने का सभा का विचार प्रकाश में आया है। सभा की अपील है कि आर्य जनता को यह राशि पूरी कर देनी चाहिये। हम चाहते हैं कि प्रान्त के आर्य नर नारियों की ओर से बिना किसी प्रेरणा के तथा बिना डेपुटेशन की प्रतीक्षा वा प्रेरणा के सभा की मांग से अधिक कई गुना धन सभा के कोष में पहुँच जाय। और आर्य जनता जयन्ती महोत्सव के प्रति अपने अपने प्रेम का एक प्रकार से सुन्दर परिचय देवे तथा महोत्सव के प्रबंधकों तथा सभा के अधिकारियो इत्यादि की जो शक्ति इत्यादि इस काममें लगती उनकी वह अन्य उपयोगी कामो में लगाने का अवसर दे देवे। इतना होते हुए भी डेपुटेशनो का प्रान्त में भ्रमण करना हम जरूरी समझते हैं। डेपुटेशनों को प्रान्त में भ्रमण करके आर्य समाज की वास्तविक परिस्थिति का परिचय प्राप्त करना चाहिये। जहां जीवन न हो वहां जीवन लाना वा उसके लिये यत्न करना चाहिये जहां जीवन हो वहां उसमें वृद्धि का कारण बनना चाहिये। इस प्रकार के डेपुटेशनों में सुपरीक्षित व्यक्ति होने चाहियें—ऐसे जो लोगों के दिमागों की अपेक्षा दिलो पर ज्यादा प्रभाव डालने वाले हों।

मेरठ में महोत्सव की स्वागत कारिणी सभा का संघटन हो गया है। मेरठ के आर्य लोगों में उत्सव को प्रबन्ध की दृष्टि से कामयाब बनाने का बड़ा उत्साह है। परमात्मा करे यह उत्साह बना रहे और जयन्तीके उत्सव पर बाहर के आगन्तुकों को इसका साक्षात् दिग्दर्शन हो।

पिछली २४ मार्च को मेरठ नगर में स्वर्ण-जयन्ती समिति की बैठक हुई थी—

हुये हरिजन भाइयों से भी बात चीत हुई वे भी पुन. हिन्दू होने के वास्ते तैयार हैं।

ग्राम में प्रचार

१—महूपुर मडल के ३ ग्राम, २—राबर्टस-गज के मंडल मे ५ ग्राम, ३—सलखन मडल के १२ ग्राम, ४—सेमरी मंडल के २ ग्रामों मे प्रचार किया गया।

भ्रमण

जगलों में कुल १५० मील का भ्रमण किया गया।

भानुचरण आर्षेय
उपमन्त्री
अछूतोद्धार कमेटी, नीची बाग बनारस

उसमे हमे प्रसन्नता है कि समिति की दृष्टि मारी ताजा सब्जबाग दिखाने वाले कार्यक्रम की रूप रेखा पर नही वरन रचनात्मक तथा हल्की रूप-रेखा पर गई है। समिति का ध्यान प्रान्त मे आर्य समाज की बिखरी हुई शक्ति को केन्द्रित करने, पारस्परिक कलह और वैमनस्य को दूर करने, आर्य समाजके अधिकारो की रक्षा तथा अन्यान्य लोक सेवाके लिये आर्य वीरो और वीराङ्गनाओ के सुदृढ़ दल बनाने, प्रान्तिक सभा को प्रान्त मे एक शक्ति बना देने तथा वेद प्रचार का स्थायी प्रबन्ध करने पर गया है। कार्यक्रम निश्चित करने के लिये एक उपसमिति भी जिम्मेवार व्यक्तियो की बना दी गई है। साथही एक उपसमिति वैमनस्य निवारणार्थ बना दी गई है जिसमे हर्ष है प्रान्त के पुराने, अनुभवी, प्रभावशाली और ऐसे सज्जन है जो जनता मे स्थान रखते हैं और जो लोगो के हृदय को अपील करने की योग्यता और क्षमता रखते हैं।

जयन्ती के लिये समाचार पत्रो मे एक से एक बढ़िया और नूतन प्रस्तावो की मानो बाढ सी आ गई है। यह सब स्वागत योग्य हैं। ज्यादा स्वागत योग्य यह होगा कि प्रस्तावो के बजाय जयन्ती के रचनात्मक कार्यक्रम को पूरा करने और समाज सेवा के लिए, प्रस्तावो की संख्या मे न सही उसके आंशिक भाग मे ही आर्यसमाज के गौरव और *उसके वास्तविक उद्देश्य वेदप्रचार इत्यादि पर दृष्टि* रखने वाले ऊंचे करैक्टर के व्यक्तियो के आफर समाचार पत्रो मे आये। आज आर्य समाज मे इतनी इसकी जरूरत नहीं है कि क्या किया जाय जितनी इस बात की है कि किए जाने वाले कार्य को करे कौन ?

आगरा आर्य समाज के झगडे के निपटारे के लिये सुना गया है उपसमिति ने कार्य शुरु कर दिया है। दोनो पक्षो ने लिख कर दे दिया है कि उन्हे निर्णायक समिति का फैसला अन्तिम रूप से माननीय होगा। दोनो पक्षो का यह आत्म—समर्पण श्लाघनीय है। हम उत्सुकता से इस झगड़े के सदैव के लिए शमन की प्रतीक्षा कर रहे हैं। वर्तमान हवा मे इस प्रकार के लेख बद्ध आश्वासन का लिया वा दिया जाना ठीक है शोभा जनक नही—शोभा जनक तबही होता जब हमारे जुबानी आश्वासन पत्थर की लकीर होते और इस प्रकार की तहरीरो को हेय साबित कर देते।

हमने अपने किसी पहले पत्र में जिक्र किया था कि गुरुकुल वृन्दावन के सम्बन्ध मे जाच इत्यादि के लिए पतिनिधि सभा ने एक कमीशन बिठलाया है और यह भी कि कमीशन की जाच का मुख्य विषय होगा कि गुरुकुल सरकारा परीक्षाओ को अपनाए या नहीं'। कमीशन की रिपोर्ट पकाश में आ गई है। जाच का बडा भाग गुरुकुल के पूबन्ध से सम्बन्धित है। उसमे हमारी खास दिलचस्पी नही है। दिलचस्पी पाठ-विधि इत्यादि पर है। कमीशन ने सिफारिश की *है कि आठवी कक्षा पास करने के बाद यदि* कोई ब्रह्मचारी काशी आदि की परीक्षाओ आदि मे शामिल होना चाहे तो उस मे बाधा न डाली जाय। महाविद्यालय मे जो ब्रह्मचारी वेद विषय

लें उन्हे फ्री शिक्षा दी जाय। गुरुकुल को आर्य्य-समाज के लिए उच्च कोटिके बहुसख्या मे उपदेशक देने पर विशेष ध्यान देना चाहिए या यों कहिए साधारण शिक्षा पर जो अन्यत्र भी होती वा हो सकती है वास्तविक शिक्षा की बलि न दी जाय। देखना है प्रतिनिधि सभा से ये सिफारिशे क्या रूप लेकर जनता के सामने आती है।

——

—कस्बा जहांगीराबाद जिला बुलन्दशहर मे सवर्ण हिन्दू तथा अन्य व्यक्तियों की ओर स दुर्व्यवहार के कारण वहां की अछूत जनता (चमार व भगी) मे बडी अशान्ति फैली हुई थी। अब हालमे तो उन लोगो मे धर्म परित्याग की लहर अधिक वेग से चल रही थी। ३ भगी इसलाम ग्रहण कर चुके थे तथा करीब ३० चमार मुसलमान बनने के लिये और तैयार हो रहे थे। इस वर्ष होली का त्यौहार उन लोगो ने बहुत कम मनाया था। बुलन्दशहर आर्यसमाजमे यह सूचना प्राप्त होने पर समाजके मन्त्री बलभद्रसिंहजी तथा ला०प्रहलादस्वरूप एडवोकेट व मा० शिवलाल तथा सेठ कैलाशनारायण जी ता० ४ अप्रैल मे जहांगीराबाद पहुचे। कस्बे के प्रतिष्ठित व्यक्तियो को एकत्रित करके परिस्थिति पर गम्भीरता पूर्वक विचार किया गया। शाम को सवर्ण हिन्दुओं को साथ ले जाकर हरिजन बस्तियो म मीटिंगें की गईं। फलस्वरूप हरिजन भाइयो ने हिन्दूधर्म पर श्रद्धा प्रगट करते हुये आपत्तियां आने पर भी उस पर कायम रहने का मत प्रगट किया। तथा सवर्ण हिन्दुओं ने उनकी शिकायतें दूर करने का केवल वचन ही नही दिया किन्तु सनातनी भाइयो ने अपने मन्दिर तथा कूए हरिजनो के लिए खोल दिये तथा उनको साथ २ ले जाकर देव दर्शन कराए तथा कूओ से पानी खिचवाया। इस कार्य मे स्थानीय सज्जनो में प० विश्वम्भरनाथ जी पाठक तथा ला० मक्खनलाल जी ने विशेषरूप से सहयोग दिया। यह सब काय हो जाने पर भी अभी वहा प्रचार की आवश्यकता है। जल्दी ही वहा एक बडा जलसा करने के लिए स्थानीय आर्यसमाज के कार्यकर्त्ताओ न वचन दे दिया है।

जिला बुलन्दशहर मे कई स्थानो से हरिजनो के धर्म परित्याग तथा उनपर ज्यादती के समाचार आ रहे है। प्रतिनिधि सभा को इस ओर विशेष ध्यान देना चाहिये।

—ज्वालापुरमे आर्य वानप्रस्थियों तथा सन्यासियो के लिए एक आश्रम खुला हुआ है। इसके जन्मदाता श्री पूज्य नारायण स्वामी जी हैं, इसमे इस समय काफी सख्या मे वानप्रस्थ आर्य नरनारी सन्यासी महानुभाव रहते और आत्मिकोन्नतिमे रत रहते हैं। अच्छा हो कि प्रति मास या दूसरे तीसरे महीने इसके समाचार जनता को मिलते रहें। इसका प्रबन्ध एक समिति के द्वारा होता है। पिछली २९ मार्च को इसका वार्षिक चुनाव हुआ था। जो इस प्रकार है—(१) पूज्य महात्मानारायण स्वामी जी प्रधान (२) भक्त सुन्दरदास जी उपप्रधान। (३) श्री डा० लालचद जी उपप्रधान (४) स्वामी श्रद्धानन्द जी मन्त्री (५) प० प्रेमानंद जी उपमंत्री (६) म० मुकुन्दलाल जी कोषाध्यक्ष (७)

स्वामी सदानन्द जी आश्रम प्रबन्धक (८) बाबू गौरीशंकर जी आडीटर (९) स्वा० शुक्लानन्द जी वैदिक आश्रम ऋषिकेश के प्रबन्धकर्त्ता— तथा १२ अन्तरंग सभासद्।

पंजाब

श्री० सम्पादक जी, नमस्ते!

आर्य्य समाज बारह मूगा ने अपने क्षेत्र म हरिजनों के लिए कुऐं बनवाने का कार्य्य शुरू कर रखा है—लगभग १ दर्जन कुऐं विविध स्थानों मे बन गए हैं।

पंजाब के महाशय भाइयो की शुद्धि की सिल्वरजुबिली का उत्सव २६ मार्च से १० अप्रैल तक बड़ी सफलता और समारोह के साथ दीना नगर मे मनाया गया। इस अवसर पर यह निश्चित हुआ है कि शुद्धि के सेनापति श्री चौ० रामभजदत्त जी के जन्मदिन पर जो १६ फाल्गुन को आता हैं दीना नगर मे शुद्धि के तमाम शहीदो की याद में एक आर्य्य मेला लगाया जाया करे और एक रामभजदत्त निर्धन अनाथ आश्रम भी खोला जाय। जिसमें दलित जातियों के निर्धन बच्चों की हर प्रकार से सहायता की जाय।

सी० पी०

श्रीमान् सम्पादक जी, नमस्ते,

रायपुर आर्य्य सामज का वार्षिकोत्सव २८, २९, ३० को मनाया गया। श्री० प० गंगा प्रसाद जी उपाध्याय, पं० शिवदत्त ज्ञानी इत्यादि आर्य्य विद्वानो ने उत्सवमे भाग लिया और अपने धर्म्मोपदेशों से जनता को लाभ पहुँचाया। इस उत्सव का सब से ज्यादा सफल अंग नगर कीर्तन रहा। शहर तथा बाहर के बहुसंख्यक आर्य्य नर नारियो के अलावा आर्य अनाथालय हिन्दू सेवा संघ, सरस्वती कन्या पाठशाला और विधवा आश्रम इत्यादि के बालक-बालिकाओं और देवियों ने सोत्साह भाग लिया। नगर मे कई स्थानो पर प्रेमी सज्जनो द्वारा नगर कीर्तन का दूध इत्यादि से सत्कार हुआ। इस उत्सव का अच्छा प्रभाव रहा।

सी० पी० के स्व० दानवीर तुलाराम जी ने आर्य्य प्रतिनिधि सभा को अपनी ३-४ लाख रुपए की भूसम्पत्ति गुरुकुल कांगड़ी वा कन्या महाविद्यालय जलन्धर की लाइनो पर प्रान्त मे एक कन्या गुरुकुल चलाने के लिए दान की थी। दानी की इच्छा छत्तीसगढ के किसी केन्द्र स्थान पर गुरुकुल खोले जाने की थी। गुरुकुल कहां खोला जाय इस सम्बन्ध मे विचार चल रहा है अभी अन्तिम निर्णय नहीं हुआ है। बहु सम्मति, दुर्ग और रायपुर के पक्ष मे है'—

कुछ लोगो की सम्मति है कि गुरुकुलों के आदर्श की रक्षा की दृष्टि से यह गुरुकुल शहरों से दूर शुद्ध सात्विक वातावरण युक्त ग्राम मे खोला जाय। गुरुकुल शहर मे खोला जाय, या ग्राम मे हमें सम्पादक जी, यह बात उतनी अपील नहीं करती है जितनी यह कि कन्या गुरुकुल जैसी नाजुक संस्था की रक्षा और देख रेख भले प्रकार हो सकती हो, स्थान स्वास्थ्य प्रद हो और हर प्रकार

के दूषित वातावरण से मुक्त हो।

कारंजा (अकोला) समाज का एक दुःख जनक समाचार भेजता हू । कारंजा समाज श्री० डा० सूर्य्य नारायण शर्म्मा की मृत्यु मे अपने एक प्रसिद्ध कार्य्य कर्ता से वंचित हो गया है। स्व० डा०साहब सेवाका अच्छा रिकार्ड पीछे छोड़ गए हैं। बरार मे कई आर्य्य समाजें अनाथाल-यो और विधवा भवन इत्यादि सस्थाओ की स्व० डा० साहब ने स्थापना और संचालन किया था ।

प्रान्त की मास की अन्य प्रगतियां इस प्रकार हैं।

—मलकापुर में ता० ९-३-३७ को श्री स्वा केवलानदजी और श्री पं. रामचन्द्र जी विशारत्न ने तीन दिन तक प्रचार किया। ऋषि बोधोत्सव भी मनाया गया । गुरुकुल को ५।, दान में मिले।

—कारंजा आ. स का वार्षिकोत्सव १-३-३७ को मनाया गया। श्री स्वा शंकरगिरि की उप-स्थिति में हवन हुआ। श्री स्वा. अनंतानंद जी के वैदिक सिद्धान्तो पर व्याख्यान हुए।

—चान्दूर रेल्वे आ स का वार्षिकोत्सव शिवरात्रि को श्री. प० शिवदत्तजी ज्ञानी एम ए. की अध्यक्षता मे समारोह पूर्वक मनाया गया।

—चान्दूर रेल्वे आ. स. ने ता. १३-३-३७ को एक रामराव नारायणराव मराठे को जो कई मास पूर्व मुसलमान हो गया था शुद्ध किया। श्री स्वामी अनंतानन्दजी का व्याख्यान 'ईश्वर की व्यापकता और वैदिक धर्म की श्रेष्ठता' पर हुआ।

—हीवरखेडा मे आर्वी आ० स० के प्रधान श्री चन्द्रपालसिंह जी ने अद्भुत चमत्कारिक खेल चार दिन तक बताये। एक खेल आपने हीवर खेड आ० स० में दिखलाया। २०) रु० की प्राप्ति हुई। २॥ आर्वी आ० स. को भेजे गये।-ता० १३ मार्च को गांधी चौक मे श्री० पं० रामचन्द्र जी का 'आहार निद्रा' पर व्याख्यान हुआ। उपस्थिति पांच सौ के लग भग थी।

—उमरखेड़ आर्य समाज का शिवरात्रि पर वार्षिक उत्सव श्री० स्वा० अनन्तानद जी की अध्यक्षता मे समारोह पूर्वक मनाया गया। ता० १४ मार्च को श्री० कुंवरपालसिंह और श्री देवकीनंदनजी द्वारा प्रचार हुआ। वेद प्रचार मे ३६) प्राप्त हुआ। देहातो मे एक सप्ताह प्रचार कराया गया। वहांसे वेद प्रचारमे ४०) प्राप्त हुए। ता० २१ को श्री सदारामजी के पुत्र का चूडाकर्म संस्कार हुआ। ता० २५ को एक मुसलिम महिला की शुद्धि की गई।

—खण्डवा आर्य समाज का निर्वाचन होलिकोत्सव के उपरान्त हुआ। निम्न सज्जन पदाधिकारी निर्वाचित किये गये। श्री डा० रघुनाथ वर्मा प्रधान रणजीतप्रसाद जी उपप्रधान श्री सत्यदेवजी स्नातक

राजस्थान

श्री सम्पादक जी, नमस्ते

हमने पिछले किसी मास की प्रगति के विव-

रण मे यह जिक्र किया था कि आर्य्य समाज अजमेर और आर्य्य प्र० सभा मे अखबारी नोक झोक शुरू होगई है और भय प्रगट किया था कि उन दोनो का पुनर्मिलन बाह्य मेल साबित न हो साथ ही आर्य्य प्रतिनिधि सभा के गत वृहद् दधिवेशन के अवसर पर समाज के सदस्यो की इस घोषणा से कि वे १ वर्ष तक सभा मे कोई आफिस स्वीकार नही करेंगे उस भय का पुष्ट होना प्रगट किया गया था। आर्य्य समाज कैसरगंज ने इस प्रगटीकरण का प्रतिवाद हमारे पास भेजा है। वह लिखता है कि उसके प्रतिनिधि सदस्यों का १ साल तक आफिस स्वीकार न करने की घोषणा का अभिप्राय यह स्पष्ट करदेना था कि वे सभाके साथ सहयोग चाहते हैं और किसी को उनके इस सहयोग पर सन्देह न हो, और चुनाव मे कटुता न हो, इसलिए वे १ साल तक उससे पृथक् रहेंगे।

पं० रामस्वरुप जी भजनोपदेशक बयाना (भरतपुर) के प्रबन्ध मे बयाना तथा आस पास मे समाज का प्रचार हुआ।

आर्य्य समाज पीलवा (मारवाड़) की तरफ से भवरी (मारवाड़) में शीतलादेवी के मेले पर प्रबन्ध की व्यवस्था की गई थी। प्रबन्ध की आज्ञा मिल भी गई थी परन्तु बाद को ठाकुर साहब ने आज्ञा रद्द करदी और प्रार्थना करने पर भी पुन: आज्ञा न दी स्वयं सेवक वापस लौट गए।

११ अप्रैल को बयाना मे भयंकर आग लगी। ख़बर पाते ही आर्य्य सेवादल के स्वयं सेवक घटना स्थल पर पहुंचे और आग बुझाने मे लोगों को प्रशंसनीय योग दिया। कहा जाता है पुलीस और बोर्ड ने इस सम्बन्ध मे अपने कर्त्तव्य का पालन नहीं किया। इस प्रकार की लोक सेवा विशेष महत्व रखती है इसीलिए हम यहाँ इस घटना का उल्लेख कर रहे हैं।

आर्य्य समाज नागौर की तरफ से ठाकुर भोलासिंह जी वैश्य तथा ठाकुर हुकमसिंह जी पड़िहार भजनोपदेशक द्वारा पशुओ के मेले पर प्रचार कराया गया। यहां लोगो की आंखों के बहुत औप्रेशन हुए। स्थानीय आर्य सेवादल ने मरीजो की देख-रेख और सेवा सहायता का अच्छा कार्य किया। समाज ने अपने व्यय पर असहाय रोगियो को दूध इत्यादि की व्यवस्था करके सहायता की। इस प्रकार की लोक सेवा आर्य समाज की लोक प्रियता मे बहुत ज्यादा वृद्धि करने वाली हैं। आर्य समाज ऐसी लोक सेवाओ का जितना अधिक लाभ उठा सके उतना अच्छा।

आर्यसमाज झुंझुनू का प्रथम वार्षिकोत्सव बड़े समारोह के साथ ता० १७, १८ व १९ अप्रैल को मनाया गया। श्रीमती आर्यप्रतिनिधि सभा की ओर से श्री स्वा० अतानन्दजी महाराज श्री स्वा० नृसिंहदेवजी सरस्वती श्री मेहता जैमिनीजी वैदिक मिशनरी, पं० भगवानस्वरूपजी न्यायभूषण उपमंत्री सभा, और पं० चन्द्रभानुजी सिद्धान्तभूषण आदि उपदेष्टा और म० रामसेवक जी भजनीक इस उत्सव मे सम्मिलित हुए।

प्रचार का उत्तम प्रभाव रहा।

आर्य्य कुमार सम्मेलन

आर्य्य कुमार सम्मेलन देहली मे स्वीकृत प्रस्ताव जिन की चर्चा गत मास की प्रति के कालमो मे की गई थी हमे प्राप्त हो गए है वे इस प्रकार है —

प्रस्ताव संख्या १

यह सम्मेलन गत ढाई वर्षो में आर्य समाज के निम्न लिखित नेताओ के हम से दुखवश वियुक्त हो जाने पर उनकी आत्मा के लिए परमात्मा से सद्गति की तथा उनके शोक सन्तप्त परिवारों के लिये शान्ति की प्रार्थना करता है —

पडित घासी राम जी, M A.
,, वशी धर जी पाठक
,, इन्द्र वर्मा जी
, लक्ष्मण प्रसाद जी M A
स्वामी मुनीश्वरानन्द जी
, ओंकार सच्चिदानन्द जी
लाला देव राज जी जलधर निवासी
श्री मती यशोदा देवी जी।

प्रस्ताव संख्या २

यह सम्मेलन भारत में प्रचलित ग्राम सुधार तथा ग्राम प्रचार के आन्दोलन को अत्यावश्यक समझता है और आर्य कुमारो तथा आर्यकुमार सभाओं से अनुरोध करता है कि वे यथावकाश ग्राम सुधार तथा ग्राम प्रचार के कार्य में यथा शक्ति सहयोग दिया करें।

प्रस्ताव संख्या ३

यह सम्मेलन महाराजा ट्रावनकोर को उनके अस्पृश्यता निवारक घोषणापत्र पर हार्दिक बधाई देता है जिस में कि उन्होने अपने राज्य के समस्त मदिरों को अछूत कहे जाने वाले मनुष्यो के लिए खोल कर अपनी उदारता का परिचय दिया है। एव अन्य नरेशों से प्रार्थना करता है कि वे भी अपने राज्यों के मदिरों को अछूतो के लिए खोलकर अपने कर्तव्य का पालन करें।

प्रस्ताव संख्या ४

परिषद् के नियम सख्या ३३ ३६ के विषय मे यह निश्चय हुआ कि परिषद् की प्रान्तीय सभाओं की योजना पर विचार करन के लिए निम्न सज्जनो की एक उपसमिति बनाई जावे —

१ प्रोफैसर तोताराम जी
२ पंडित सूर्यदेव जी
३ प्रोफैसर मुन्शीराम जी
४ साहित्यरत्न रामचन्द्र जी
५ श्रीयुत् जगदीश प्रसाद जी
६ ,, बलदेवदास जी
७ ,, विद्याधर जी (सयोजक)

प्रस्ताव संख्या ५

सर्व सम्मति से यह निश्चय हुआ कि अन्तरंग सभा इस प्रश्न पर विचार करे कि यदि एक नगर में एक से अधिक आर्यकुमारसभाएँ हों तो उनका आपस म क्या सम्बन्ध हो।

प्रस्ताव संख्या ६

(क) क्योकि परिषद् के दफ़्तर को बार बार जगह जगह लेजाने में बहुत असुविधा होती है और

इससे पुराने रिकार्ड के खोए जाने का डर भी रहता है इस लिए परिषद् का दफ़्तर स्थायी रूप से एक स्थान पर रखा जावे।

(ख) वह स्थान दिल्ली होवे।

प्रस्ताव संख्या ७

वह सम्मेलन भारतीय धारा सभा मे प्रस्तावित आर्य मैरेज वैलिडेशन बिल तथा बाल विवाह विरोधक संशोधक बिल का बलपूर्वक समर्थन करता है और असेम्बली के सदस्यों से अनुरोध करता है कि इन बिलों को पास कराने का पूर्ण प्रयत्न करें।

(ख) यह सम्मेलन डाक्टर देशमुख जी को उन के हिन्दू स्त्रियों के आयदादी अधिकारों की रक्षा सम्बन्धी बिल के पास हो जाने पर बधाई देता है और आशा करता है कि इसी प्रकार के अन्य सामाजिक हितकारी कानूनों के बनाने का प्रयत्न जारी रहेगा।

प्रस्ताव संख्या ८

क्योंकि भारतवर्षीय आर्य कुमार परिषद् को स्थापितहुए २५ वर्ष हो चुके हैं इस लिए यह सम्मेलन निश्चय करता है कि आगामी दीपावली के अवसर पर भारत वर्ष भर की कुमार सभाएं रजत जयन्ती उत्सव (Silver Jubilee) मनावें। उत्सव का विस्तृत प्रोग्राम परिषद् की अंतरंग सभा निर्धारित करदे।

प्रस्ताव संख्या ९

यह सम्मेलन सार्वदेशिक आर्यप्रतिनिधिसभा एवं प्रान्तीय प्रतिनिधि सभाओं से प्रार्थना करता है कि वे अपनी अधीनस्थ समाजों को आदेश कर कि अपनी समाजों में आर्य कुमार सभाए स्थापित करें और अपने सभासदों से अनुरोध करें कि वे अपने ८ वर्ष से अधिक आयु वाले प्रत्येक बालकको आर्य कुमार सभा का सभासद अवश्य बनावें तथा आर्य कुमार सभा की उन्नति का पूर्ण प्रयत्न करते रहे।

(ख) यह सम्मेलन डी ए वी कौलेजों, स्कूलों, गुरुकुलो, अनाथालयों आदि संस्थाओं से अनुरोध करता है कि वे अपने यहा आर्य कुमार सभाएँ अवश्य स्थापतकरें।

प्रस्ताव संख्या १०

यह सम्मेलन समस्त आर्य समाजों से प्रार्थना करता है कि वे अपने स्थानों की आर्य कुमार सभाओं के प्रधानो को अपनी अन्तरग सभाओं मे अवश्य ले लिया करें।

प्रस्ताव संख्या ११

यह सम्मेलन अलीगढ के मुसलिम विद्यार्थियो को विशेषतया और साधारणतया उन सब मुसलिम विद्यार्थियो को बधाई देता है जिन्होने अलग मुसलिम विद्यार्थीसघ बनाने से इनकार करके अपनी देशभक्ति का सबूत दिया है और राष्ट्र की सेवा की है और यह घोषणा करता है कि संकुचित साम्प्रदायिकवाद देश की उन्नति के लिए सवथा हानिकारक है।

प्रस्ताव संख्या १२

बहु सम्मति से यह निश्चय किया गया कि आगामी भारत वर्षीय आर्य कुमार सम्मेलन बिजनौर में किया जावे।

प्रस्ताव संख्या १३

यह निश्चय हुआ कि आर्य कुमार परिषद् की ओर से समस्त भारत वर्षीय आर्य कुमार सम्मेलनों के सभापतियों के भाषण एकत्रित करके पुस्तकाकार

परिषद् की रजत जयन्ती के अवसर पर प्रकाशित किए जावे।

प्रस्ताव संख्या १४

यह निश्चय किया गया कि परिषद् आर्य कुमार पत्र शीघ्र प्रकाशित करने का प्रयत्न करे।

प्रस्ताव संख्या १५

आर्यकुमारों की वर्दी सम्बन्धी प्रश्न पर यह निश्चय किया गया कि सब आर्य कुमार सभाओं से इस विषय में सम्मति मांगी जावे।

प्रस्ताव संख्या १६

आर्य कुमार सभाओं के साप्ताहिक अधिवेशनों के कार्यक्रम के विषय में यह निश्चय हुआ कि सब कुमार सभाओं से इस पर सम्मति मांगी जावे।

प्रस्ताव संख्या १७

यह सम्मेलन आर्य कुमारो से अनुरोध करता है कि—

(१) नित्य प्रति किसी न किसी अच्छी पुस्तक का स्वाध्याय अवश्य किया करें चाहे वह पाँच मिनिट के लिये ही क्यों न हो।

(२) अपनी दिनचर्या हर रोज अवश्य लिखा करें और समय २ पर अपनी आदतों का निरीक्षण करते रहा करें।

(३) हर समय अपने पास एक डायरी और पैंसिल अवश्य रखा करें ताकि जो भी अच्छी या नई बात उनको मालूम हो तो उसे लिख लिया करें।

(४) जो कुमार हिन्दी नहीं जानते वे शीघ्र से शीघ्र हिन्दी अवश्य सीख लें।

(५) पहनने के लिये खादी अथवा स्वदेशी वस्त्र ही इस्तेमाल किया करें और अन्य चीजें भी जहाँ तक हो सके स्वदेशी ही बर्ता करें।

(६) अपने नामों के आगे जन्म जाति व उपजाति वाचक कोई शब्द शर्मा, वर्मा आदि न लगाया करें।

(७) चलते समय तथा बैठे हुए बिल्कुल सीधे चला और बैठा करें।

(८) हर स्थान पर थूकने तथा नाक साफ़ करने की आदत को दूर करें।

(९) फलों के छिलके, रद्दी कागज़ के टुकड़े आदि कभी सड़क या गली में न फेंकें।

(१०) अपनी सब वस्तुएँ उनके नियत स्थान पर ही रखा करें, इधर उधर नहीं।

(११) किसी की कोई वस्तु बिना उसकी आज्ञा के न लिया करें।

(१२) यथा संभव अपना अपना कार्य स्वयं ही किया करें। कपड़े धोना, बिस्तर बिछाना, चारपाई उठाना इत्यादि।

(१३) अपना स्वास्थ्य उत्तम करने के लिए नित्य प्रति कुछ न कुछ व्यायाम अवश्य किया करें। दाँत साफ़ किया करें तथा खेलों में भाग लिया करें।

(१४) अपनी सभा का कोई सभासद उनको मिले तो फ़ौरन नमस्ते अवश्य किया करें।

(१५) एक दूसरे की सहायता करने के लिए सदा तत्पर रहा करें और जिस भी कुमार को कोई आवश्यकता हो उसे पूरा करने की कोशिश किया करें।

(१६) अपने अधिवेशनों तथा अन्य मीटिंगों में जब और कार्यवाही हो रही हो तो आपस में बातें न किया करें और बिना प्रधान की आज्ञा के कोई न बोला करें।

(१७) आपस में बोल चाल मे कभी भी असभ्य शब्द इस्तेमाल न किया करें — खास कर बाजार आदि में चलते हुए।

(१८) जहाँ तक हो सके सादा जीवन ही व्यतीत किया करें। फैशनमें न पड़ें। पान आदि भी न खावें।

(१६) अपने बड़ों की धर्मानुकूल आज्ञा जिससे अपनी शारीरिक अथवा आत्मिक किसी भी प्रकार की हानि की संभावना न हो बिना चूं चरा किए माना करें चाहे खुद को कुछ कष्ट भी उठाना पड़े।

प्रस्ताव संख्या १८

क्योंकि यह दुःख के साथ देखा जा रहा है कि भारतीय युवकों का स्वास्थ्य दिन प्रति दिन गिरता आ रहा है और क्योंकि मानसिक उन्नति के लिए शारीरिक उन्नति अत्यावश्यक है इस लिए यह सम्मेलन समस्त आर्य कुमार सभाओं से प्रार्थना करता है कि वे अपने अपने स्थानों पर आर्य कुमार व्यायाम मडलो की स्थापना करें तथा समय २ पर खेलों (sports) को भी आयोजना करें।

प्रस्ताव संख्या १६

(क) क्योंकि आर्य कुमारों की शारीरिक उन्नति के लिए परिषद् ने कोई उचित प्रबन्ध अभी तक नहीं किया है और क्योंकि आर्य कुमारों की शारीरिक उन्नति बहुत ही महत्वपूर्ण विषय है इस लिए यह सम्मेलन आवश्यक समझता है कि दिल्ली में एक व्यायाम केन्द्र खोला जावे जो कि भारतवर्षीय आर्य कुमार परिषद के आधीन रहे।

(ख) इस व्यायाम केन्द्र में उन तमाम आर्य-कुमार सभाओं से जो कि परिषद से सम्बन्धित है, दो दो प्रतिनिधि व्यायाम सीखने के लिये आवें।

(ग) व्यायाम की पूरी शिक्षा समाप्त करके वे कुमार अपनी २ कुमार सभाओं में व्यायाम का खूब प्रचार करें।

विविध सामाजिक समाचार

"सारन जिला में मीरगंज आर्य समाज के प्रधान सुप्रसिद्ध देश भक्त बाबू गोपाल जी साहू ता० १४ फरवरी १९३७ की रात्रि में ८½ बजे इस संसार से चल बसे। वे इधर के एक प्रसिद्ध आर्य थे। आर्य सिद्धान्तों के व्यवहारिक पोषक थे। देश के लिये जब जब जरूरत पड़ा उन्होंने अनेक सकटों का सामना किया दो बार कृष्ण मन्दिर में हो आये थे। इसके अतिरिक्त जुर्माने में भी दोनो बार मिला कर ३००) दे चुके थे। उनका अन्त्येष्टि सस्कार शुद्ध वैदिक रीति से सम्पन्न किया गया। आज ता० २८-२-३७ दिन रविवार को उनके प्रति श्रद्धाञ्जलि अर्पण करने के लिये जिले भर के प्रसिद्ध कांग्रेस कर्म्मी तथा आर्य समाज के सुविख्यात उपदेशक तथा कार्य्यकर्त्ता जिन में प्रमुख बाबू वैद्यनाथ प्रसाद जी हेडमास्टर सीवान (सारन) प० रामरक्ष जी उपाध्याय, बाबू दीनानाथ जी आर्य गोपालगज (सारन) प० हरिनन्दन पाण्डेय जी महाराज राव जी कर मंत्री आर्य समाज (कुचाय कोट) सारन तथा बाबू कमला राय जी मन्त्री जिला कांग्रेस कमिटी इत्यादि शामिल थे। सवेरे ६½ बजे से सम्मिलित सन्ध्या हवन यज्ञ इत्यादि विधिवत् हुए। तत्पश्चात् दिवगत आत्मा के प्रति सबो ने श्रद्धाञ्जलि अर्पण की। श्राद्ध तथा तर्पण इत्यादि कपोल कल्पित मिथ्या कर्म्म नहीं किये गये। वीरात्मा गोपाल जी के सुपुत्र काशीनाथ जी भी बधाई के पात्र हैं, जिस दृढता से उन्होंने इस पाखण्ड को दूर किया है, वह हर एक नौ जवान तथा आर्य सभासद के लिये अनुकरणीय है। यहाँ के हर विचार

के लोग ब्राह्मण से लेकर शूद्र तकतथा मुसलमान भाइयों ने भी प्रचुर सख्या मे अर्थात् सब मिला कर ८०० व्यक्ति से भी ऊपर सहर्ष प्रतिभोज इत्यादि में शामिल हुए। इस प्रश्न का बड़ा सुन्दर प्रभाव पड़ा है।

श्याम देव नारायण
आर्य्य उपदेशक

ईश्वर की कृपा से आर्य समाज लातूर (निजाम स्टेट) का पांचवां होलिकोत्सव बड़े शान तथा आमद पूर्वक ता० २७ २८ २९ ३० मार्च को हुआ जिस में पं० पूर्ण चद जी, प० नरेंद्र जी प० मुनीश्वरदेव जी पं० बनारसीलाल जी तथा भजनीक प्रह्लाद जी का बड़ा प्रभाव शाली उपदेश हुआ। हाजरी ४ से ५ हजार तक रहती थी सारे कार्य कर्ताओं ने बड़े ही उत्साह से कार्य किया बाहर से एक हजार आर्य भाई उत्सव मे शरीक होने आये थे उनके खान पानादि का प्रबध भी उत्तम रीतिसे हुआ।

भवदीय
डी आर दास मत्री

बम्बई में आर्यपरिवारसंघ की स्थापना

नाम—इस संस्थाका नाम "आर्य परिवार संघ" होगा।

उद्देश—आधुनिक जन्ममूलक जाति बन्धनो से मुक्त होकर महर्षि दयानन्द प्रदर्शित वैदिक सिद्धान्तोंको पूर्णतया माननेवाले और तदनुसार आचरण करने वाले आर्य परिवारों का परस्पर सामाजिक सबन्ध स्थापित कर उनको सगठित करना इस आर्यपरिवार संघ का मुख्य उद्देश है।

सभासद—उपर्युक्त उद्देशको स्वीकार कर तदनुसार बर्ताव करनेकी प्रतिज्ञा लेनेवाला कोई भी आर्य परिवार देश, प्रांत या रग आदिके किसी भेद के बिना इस सघका सदस्य हो सकेगा। यदि कुटुबमें एक ही व्यक्ति हो तो उस को भी परिवार माना जायगा।

स्थान—इस संस्थाका मुख्य कार्यालय बम्बई में रहेगा।

शाखा—किसी शहर या ग्राम में इस संस्था के दश या दश से अधिक सदस्य होने पर वहां इस संघ की शाखा खोली जा सकती है।

अस्थिर प्रारभिक समिति—इस सघके उद्देश को सफल बनाने के लिए आवश्यक कार्य सपादनार्थ निम्न लिखित सज्जनो की अस्थिर प्रारभिक समिति (Provisional committee) बनाई जाती है। इस समितिको आवश्यकतानुसार अपने सदस्य बढानेका अधिकार दिया जाता है।

इस समितिके सदस्य

१ डा० कल्याणदासजी, २ प० आनंदप्रियजी, ३ पं० विजयशंकरजी, ४ श्री वल्लभदास रतनसिंह मेहता, ५ श्री कन्हैयालाल जी कोठारी, ६ स्ना० स्नातक सत्यव्रतजी, ७ श्रीयुत म० अमित जोषि, ८ श्री० गोकुलदास हिरजी, ९ पं० लक्ष्मणराव ओगले, १० पं० प्रियव्रतजी, ११ प० रामचन्द्र सिद्धांतालंकार, १२ श्री म महेंद्रचंद्रजी, १३, श्री म सभाजित, मिश्र, १४ म० सुशालदास पुरुषोत्तमदास १५ श्री० सुभद्रा कुमारी १६ श्री सुशीला कुमारी १७ प० महाराणी शंकरजी—

मन्त्री—इस अस्थिर कार्यवाहक समितिके मंत्री का कार्य वल्लभदास आर महेता तथा श्री स्नातक सत्यव्रतजी करेंगे और अपने अधिकारीगणस्वय समिति चुन लेगी।

यह समिति चार मासके भीतर उपर्युक्त एकसौ

बिछुड़ों का मिलाप तथा रक्षा कार्य

मध्य भारत हिन्दू धर्म रक्षिणी सभा इन्दौर के अधिष्ठाता प० लालाराम जी ने हाल ही में दो हिन्दू अबलाओं का मुसलमान गुन्डों के चगुल से उद्धार किया।

२१ मार्च को आर्यसमाज हावड़ा में प० रामलाल

का जितने हो सके उतने आर्य परिवारों को सभा को सभासद् बनाकर तथा संघके लिए स्थिर नियम इत्यादि बनाकर स्वकृत्यर्थ सभा बुला कर उस में पेश करेगी आशा है कि आर्य बन्धुगण अपने परिवारके साथ बड़ी संख्या में इस आर्य परिवार संघमें शामिल हो जायगे और अपने परिवार के जीवन को सच्चा आर्य जीवन बनाकर दिखावेंगे।

आर्य कन्या महाविद्यालय बड़ौदा

उक्त संस्था का नवम वार्षिक महोत्सव तथा स्नातिका बहनों का पदवी दान समारम्भ समारोह पूर्वक गत होली के अवसर पर मनाया गया। पदवी दान समारम्भ श्री महारानी चिमनाबाई साहेब गायकवाड़ के शुभ करकमलों से हुआ था। निम्न स्नातिकाएँ निकलीं।

ललिता कुमारी रेखा भाई सुभद्रा कुमारी जगदीशचन्द्र, यशोदा कुमारी, मोतीसिंह, रश्मिबाला कुमारी हरराम, अनन्त बाला कुमारी तुलसीराम, सरस्वती कुमारी भाई लाल, भगवती कुमारी रतिलाल, सत्यवती कुमारी गोवर्धन, कमलाकुमारी दयाल जी। इन बहनों को 'भारती समलकृता' की पदवी मिली है।

सुशीला कुमारी
मुख्याधिष्ठात्री।

नामक युवक की शुद्धि हुई। यह महाशय २० वर्ष पहले किसी कारण वश मुसलमान हो गये थे। शुद्धि संस्कार प० जगदीशचन्द्र जी विद्यावाचस्पति ने कराया।

आर्य कुमार सभा उतरौला (गौंडा) में गत १२ मार्च को एक कोरिन की शुद्धि की गई। यह २ साल से मुसलमानी हो गई थी।

११ अप्रैल को आर्य समाज पूना मे एक ईसाई लड़की कु० हीराबाई शङ्करराव को शुद्धि श्री पं० विद्याधर जी ने की। शुद्ध हुई का विवाह उसी समय एक ब्राह्मण लड़के के साथ कर दिया गया।

प० विश्वनाथ शर्मा भजनोपदेशक ने गया के डेल्टा नामक स्थान पर दो स्त्रियां तथा २ अनाथ बालकों की रक्षा की।

आर्य समाज वर विया मे एक नव मुसलिम को शुद्धि की गई।

टाउन आर्य समाज कराची मे २२ मार्च को र गूल के ईसाई युवक की शुद्धि की गई जो बी० एस० सी है। ४ अप्रैल को एक और ईसाई की शुद्धि कर उसका नाम रामचन्द्र रक्खा।

गत ९ अप्रैल को आर्यसमाज कारजा ने गुण्डों से एक हिन्दू अबला का उद्धार कर उसे अकोला विधवाश्रम में भेज दिया। इस स्त्री के साथ एक ७ साल की बहन भी थी। इस समाज ने एक और स्त्री का मुसलमानों के चगुल से छुड़ा कर उसकी शुद्धि की। यह भी आश्रम पहुंचाई गई।

२९ मार्च को आर्य समाज चावड़ी बाजार साप्ताहिक सत्संग के समय १ जन्म के मुसलमान परिवार की शुद्धि हुई। परिवार में ४ व्यक्ति थे। शुद्धि संस्कार पं० रामनारायण शर्मा सिद्धान्त रत्न प्रधान वैदिक धर्म प्रचारक मण्डल द्वारा किया गया। नाम देवदत्त आत्मप्रकाश हीरादेवी व चन्द्रादेवी रक्खा गया।

निरञ्जनदेव शर्मा।

आर्यसमाज मगनौर (मद्रास) द्वारा शुद्धियाँ

आर्य समाज मगनौर द्वारा निम्न शुद्धियां हुई —

हमजा ब्यारी और उसकी धर्मपत्नी अमीनम्मा हमजा जन्म का मुसलमान है उन्होंने एक हिन्दू स्त्री को मुसलमान बना कर उसके साथ शादी करली थी। शुद्ध करके उनका नाम ईश्वर और पार्वती रक्खा।

मि० एम डा क्रूज। ये हैदराबाद के जन्म के कैथोलिक ईसाई हैं। निजाम सरकार के एकाउन्ट विभाग में ये असिस्टेन्ट सुपरिंटेन्डेन्ट हैं। शुद्धि के बाद उनका नाम एम मनाथन रक्खा गया। उनकी शादी पुत्तुर तालुके के प्रसिद्ध आर्य समाजी म० सुब्बनय्या की पुत्री के साथ हुई।

मुहम्मद अब्दुल्ला। यह जन्म का सारस्वत ब्राह्मण था और कई वर्ष हुए मुसलमान बन गया था शुद्धि के बाद उसका नाम रामेश्वराव रहा।

विक्टर श्रीनिवासन। ये कन्नानौर के एक सुप्रतिष्ठित परिवार के थे। कुछ वर्ष हुए वे ईसाई हो गये थे। शुद्धि के बाद उनका नाम कृष्ण नय्यर रक्खा गया।

जुहस मजोरथ। ये हिन्दू जुलाहे थे। कुछ वर्ष हुए ईसाई हो गए थे। शुद्धि के बाद उनका नाम धर्मपाल रक्खा गया।

सार्वदेशिक सभा की सूचनाएँ

(१)

पंडित भास्करानन्द ने जो इस सभा के द्वारा दक्षिणी अमेरिका के उपनिवेशों में वैदिक धर्म प्रचारार्थ भेजे गये थे "अर्जुन" आदि पत्रोंमें कई लेख लिख कर सार्वदेशिक सभा तथा उसके द्वारा विदेश प्रचार कार्य की जो आलोचना की है, वह भ्रमोत्पादक है। आर्य जनता के ज्ञानार्थ के लिये हम इतना ही लिख देना पर्याप्त समझते हैं कि विदेश से आई हुई शिकायतों तथा अन्य कई कारणों से इस सभा ने उपरोक्त उपनिवेशों की सभाओं को जिनके आधीन वह प्रचार कार्य कर रहे थे अक्तूबर स० १९३६ ई० से सूचित कर दिया था कि उन्हें उपदेशक पद से पृथक् करदें। अत आर्यसमाज के विदेश प्रचार से प० भास्करानन्द का कोई सम्बन्ध नहीं है। जनता इस बात से सचेत रहे।

युद्धवीरसिंह
संयुक्त मन्त्री,
सार्वदेशिक सभा, देहली

(२)

डच गायना (दक्षिण अमेरिका) में आर्य प्रतिनिधि सभा सुरीनाम की स्थापना के पूर्व वहां "आर्य दिवाकर" नामक एक सस्था थी जिसके द्वारा कभी कभी वहा पर यत्र तत्र आर्य समाज के प्रचार का कार्य किया जाता था परन्तु इस सस्था के अधिकारियों मे अधिकाश ऐसे लोग थे जो आर्य समाज के सिद्धान्तों तथा उसके संगठन के

पोषक नहीं थे इस प्रकार इस संस्था की गति विधि के प्रति वहां की आर्यजनता में असन्तोष उत्पन्न हो गया। तब श्री प० अयोध्याप्रसाद जी ने उचित समझा कि वहा के आर्यसमाजों का संगठन सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा के नियमानुसार किया जावे। तदनुसार श्री पं० जी ने वहा पर आर्य प्रतिनिधि सभा सुरीनाम की स्थापना की और इसका सम्बन्ध सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा से उसकी अन्तरंग सभा तिथि ३१-१-३७ के निश्चय स० २ के अनुसार करा दिया। "आर्य दिवाकर" संस्था का इस सभा से कोई सम्बन्ध नहीं है बल्कि इस उपनिवेश में आर्य प्रतिनिधि सभा सुरीनाम ही सार्वदेशिक सभा से सम्बन्धित केवल एकमात्र आर्य संस्था है।

संयुक्त मंत्री
सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा।

(३)

श्री पं० अयोध्याप्रसाद जी जिन्होंने इस सभा की ओर से विदेशों में वैदिक धर्म का प्रचार किया, उनके उस प्रचार के विरुद्ध कुछ स्वार्थी व्यक्ति समय २ पर वेङ्कटेश्वर आदि समाचार पत्रों में भ्रमोत्पादक समाचार प्रकाशित कराते रहते हैं। हम संक्षेप में इस समय इतना ही लिख देना पर्याप्त समझते हैं कि श्री प० अयोध्याप्रसाद जी को विदेशों में वैदिक धर्म के प्रचार म महान् सफलता मिली है। शिकागो विश्वधर्मसम्मेलन के प्रधान तथा मन्त्री आदि अधिकारियों ने उनके उस योगदान के सम्बन्ध में जो पं० जी ने उस सम्मेलन में दिया था, हमारे पास कई प्रशसात्मक पत्र भेजे थे और उन्होंने इस सभा से यह भी अपनी प्रबल इच्छा प्रकट की थी कि यह सभा श्री प० जी को कुछ वर्ष संयुक्त राज्य अमेरिका में ठहरने की आज्ञा दे दे ताकि वह वहा की साधारण जनता को भी वैदिक धर्म के सिद्धान्तों से परिचित करा सकें। इसके अतिरिक्त श्री प० जी ने थोड़े से ही समय मे दक्षिण अमेरिका के उपनिवेशों में सैंकड़ों मनुष्यों को आर्य समाज में दीक्षित किया। कई आर्य समाज स्थापित किये, समाज मन्दिर निर्माण कराए, प्रतिनिधि सभा तथा सैन्ट्रल समाज स्थापित किये और उनका सम्बन्ध सार्वदेशिक सभा से करा दिया। श्री प० जी को अब भी जब कि वह भारतवर्ष मे अवकाश पर आये हुये हैं, उनको पुनः वहा शीघ्र बुलाने के लिये वहा की आर्य जनता के तकाजे पर तकाजे हमारे पास आ रहे हैं। अब तक इस सभा में किसी भी जिम्मेवार आर्य संस्था की श्री प० जी के विरुद्ध कोई शिकायत नहीं आई है। यदि कोई आई भी है तो वह गैर जिम्मेवार व्यक्तियों की ओर से है और वह शिकायतें सर्वथा निर्मूल हैं।

अतः श्री पं० अयोध्याप्रसाद जी द्वारा किये गये विदेश प्रचार के सम्बन्ध में इस सभा तथा समस्त आर्यजगत की पूर्ण सहमति तथा विश्वास है।

समाचार पत्रों के सम्पादक महानुभावों से भी हम विनम्र प्रार्थना करेंगे कि इस प्रकार के समाचारों को इस सभा से तसदीक कराकर ही प्रकाशित किया करें तो उचित होगा।

LIGHT OF TRUTH

या

सत्यार्थ प्रकाश (अंग्रेजी)

श्री स्वामी दयानन्द सरस्वती कृत

इसके विषय मे लिखना सूर्य को दीपक दिखाना है। इस एक पुस्तक ने जितनों को आर्य बनाया है उनका शतांश भी अन्य साधनों से नहीं।

अब तक अंग्रेजी मे इसका सुन्दर तथा सस्ता संस्करण नही था इसी कमी को आर्यसमाज मद्रास ने पूरा कर दिया है।

अजिल्द १।।), सजिल्द २)

The Innerman & Other Lectures on ARYA PHILOSOPHY

अजमेर अर्द्ध-शताब्दी के समय, आर्य-फिलासफी पर दिये गये अंग्रेजी व्याख्यानों का संग्रह है।

इनके व्याख्याता श्री पण्डित गङ्गाप्रसाद जी उपाध्याय, श्री पण्डित चमूपति जी तथा बाबू गङ्गाप्रसाद जी टेहरीवाले हैं। पुस्तककी भूमिका आचार्य रामदेव जी ने लिखी है।

फैदरवेट पेपर, बढिया छपाई। पृष्ठ संख्या १२८, मूल्य ।=) मात्र

THE OU[illegible]S OF ARYASAMAJ

आर्य समाज का सक्षिप्त परिचय

यह भी पण्डित केशवदेव जी ज्ञानी की लिखी पुस्तक है। इसमे अंग्रेजी पढ़े लिखो को सक्षेप से आर्य समाज के सब पहलुओं का परिचय कराया है। मूल्य -)

THE FOUNTAINHEAD OF RELIGION

या

"धर्मों का मूल स्रोत' (अंग्रेजी)

श्री गङ्गाप्रसादजी, चीफ जज, टेहरी वाले अपनी विद्वत्ता के लिए प्रसिद्ध है। यह पुस्तक उन्ही की गम्भीर लेखनी से निकली हुई है। इसके अनेक भाषाओं मे अनुवाद हो चुके हैं। प्रत्येक अंग्रेजी पढे युवक व युवती को इसका स्वाध्याय अवश्य करना चाहिए।

अजिल्द ।।।) सजिल्द २)

आर्य साहित्य

अंग्रेजी मे

लागत दामो पर

आर्य समाज मद्रास ने केवल मात्र लोकोपकार के भाव से प्रेरित होकर इन पुस्तकों को प्रकाशित किया है। ये पुस्तके सुन्दर कागज तथा छपाई के बावजूद भी निहायत सस्ती है। हमे आशा है कि आर्यसमाजे इन्हे अधिक संख्या मे मगा कर हमारा उत्साह बढ़ाएंगी।

पता—

मंत्री, आर्यसमाज,

मद्रास।

The Ten Principles of ARYASAMAJ

या

समाज के दस नियम (अंग्रेजी)

श्री पण्डित चमूपति जी कृत

इसमें योग्य पण्डित जी ने समाज के दस नियमो की वैदिक तथा वैज्ञानिक व्याख्या की है। आर्य स्कूलो व कालिजो मे उपहार देने के सर्वथा योग्य है। ऐण्टिक पेपर। सुन्दर छपाई। पृष्ठ संख्या १६०, मूल्य ।=) मात्र

The Vedic Caste System & PANCHAMA PROBLEM

वैदिक वर्ण व्यवस्था तथा हरिजन समस्या पर श्री पण्डित केशवदेव जी ज्ञानी ने यह समयोपयोगी पुस्तक लिखी है। प्रत्येक आर्य को पढ़नी चाहिए।

मूल्य =) मात्र।

विषय-सूची

नम्र निवेदन

[ले०—डा० बोसाराम रिटायर्ड स्टोरकीपर N W R आनरेरी सैक्रेटरी]

पजाब की राजधानी लाहौर मे रावी रोड पर केन्द्रिय अनाथालय है जिसका प्रवन्ध एक रजिस्टर्ड सभा क आधीन है, जिसके प्रधान श्री पूज्य स्वामी स्वतन्त्रानन्द जी महाराज उपप्रधान सार्वदेशिक आर्य्य प्रतिनिधि सभा देहली हैं। उपप्रधान श्री पण्डित विश्वम्भरनाथ जी भूतपूर्व गवर्नर गुरुकुल कागड़ी, श्री पण्डित ठाकुरदत्तजी वैद्यशास्त्री मुल्तानी, तथा डा० गणेशीलाल जी M B B. S हैं। इस अनाथालय को खुले हुए बीस वर्ष के लगभग हो चुके हैं। इसकी सहायता कवल लाहौर निवासी ही नही करते हैं, प्रत्युत सब प्रान्तों मे रहने वाले हिन्दू आर्य्य भाई भी करते हैं। यही कारण है कि यह अनाथालय भारतवर्ष के दूसरे प्रान्तो में भी सर्व प्रिय हो रहा है और दिन प्रतिदिन उन्नति कर रहा है, यहा तक कि अब सरकार भी जो चोरी किये हुए लडके लड़किया उनको मिलते हैं, जब तक उनके वारिसो का पता नही मिलता, तब तक उनको इस अनाथालय मे रखती है। इस तरह से अनाथालय मे बच्चो की संख्या बढ गई है। इस समय तक तो निवास स्थान पर्याप्त था परन्तु सख्या बढ जाने से कन्याओं के लिये स्थान काफ़ी नहीं है। इसलिए प्रबन्धक सभा ने निश्चय किया है, कि नवीन कमरे बनाए जायें, जिससे कन्याओ के स्थान का कष्ट मिट जाय। इनके बनाने के लिए धन की अपील की जावे। इसलिए मै दानी सज्जनो की सेवा मे विनीत भाव से प्रार्थना करता हूँ कि वे इस शुभ कार्य मे सभा की सहायता करें ताकि अनाथ और निस्सहाय बच्चो को प्रवेश करने मे बाधा न पडे। यदि हम ऐसा न कर सके तो वे बालक जिनको हम स्थान न दे सकेंगे, अन्य मत वालों के जाल मे फँसकर हमेशा के लिए धर्म से पतित हो जायेंगे और उसका पाप आर्य जाति को लगेगा। जो महानुभाव एक सौ से अधिक रुपया देंगे उनके नाम के पत्थर उन कमरो की दीवारो पर लगवा दिये जायेंगे। इस समय इस कार्य के लिये पाच सहस्र धन की शीघ्र आवश्यकता है जो दानी सज्जनों को पूरी करनी चाहिए।

इस अनाथालय के आधीन म्यूनिसिपल कमेटी से मंजूर एक मिडल स्कूल है जिसमे अनाथालय के तथा बाहर के लड़के पढ़ते हैं। एक दर्जी क्लास है जिसमे लड़के और लड़कियो को सीने का कार्य सिखलाया जाता है तथा बाहर के लडके इसमे काम सीख सकते है। आज कल बीस लड़के सीख रहे हैं। बीस के लगभग लडके यहा से काम सीख कर अपना निर्वाह भली प्रकार कर रहे हैं। अनाथालय में इस समय ११२ लड़के और ७० लड़किया हैं जिनके निवास, भोजन, पढाई आदि का प्रवन्ध अनाथालय की तरफ से किया जाता है। इस काम के लिये भी सहायता की आवश्यक [illegible] दानी तथा परोपकारप्रिय महानु[illegible]ों से प्रार्थना है कि वे इस ओर भी ध्यान करें अ[illegible] ण्य के भागी बनें अर्थात् आटा, दाल, चावल, घी [illegible] कर कृतार्थ करें। यह सस्था पूर्व भी आप [illegible] से आशा [illegible] आप अवश्य [illegible] के भागी

❀ ओ३म ❀

सार्वदेशिक

❀ सार्वदेशिक-आर्य-प्रतिनिधि सभा देहली का मासिक मुख पत्र ❀

वर्ष ११ | ज्येष्ठ १९९४ | अङ्क ४
जून १९३७ ई०] [दयानन्दाब्द ११३

❀ वेद की शिक्षाएँ ❀

या मेधां देवगणाः पितरश्चोपासते ।
तया मामद्य मेधयाग्ने मेधाविनं कुरु स्वाहा ॥

यजु० । अ० ३२ मं० १४ ।

हे प्रकाश स्वरूप परमेश्वर ! आपसे जिस बुद्धि की उपासना विद्वान् ज्ञानी और योगी लोग करते है, हमें भी उसी बुद्धि से युक्त सर्वदा कीजिए ।

सम्पादकीय—

काम-वासना

जब हम आर्यों की 'काम' सम्बन्धी नीति पर विचार करते हैं तो हमे विदित होता है कि उन्होने काम का बहुत ही सूक्ष्म निरीक्षण किया था और इसका ऐसा सुन्दर नियन्त्रण किया था जिससे कि मनुष्य की 'काम' की स्वाभाविक इच्छा की उपेक्षा न हो और यह मनुष्य के अन्तिम ध्येय की सिद्धि अर्थात् ईश्वर प्राप्ति मे बाधक भी सिद्ध न हो।

आर्यो ने जीवन को ४ विभागों अर्थात ब्रह्मचर्य, गृहस्थ, वानप्रस्थ और संन्यास ४ आश्रमों मे विभाजित करके काम के नियन्त्रण की ऐसी विधि उपस्थित की थी जिसकी उपयोगिता और वैज्ञानिकता पर ससार के बड़े से बडे दिमाग और समाज शास्त्री मुग्ध रहे है और जिससे बढ़कर कोई दूसरी विधि न अब तक विकसित हुई है और न शायद आगे होगी। इस विधि के अनुसार मनुष्य के ७५ वर्ष अर्थात् ३/४ जीवन 'काम' से पृथक् कर दिया गया है अर्थात केवल २५ वर्ष अर्थात १/४ जीवन मे 'काम' के उपभोग की आज्ञा दी गई है। और इस अवधि में उपभोग की ऐसी व्यवस्था की गई है जिसके उचित पालन से मनुष्य ब्रह्मचारी ही रह सकता है। इस प्रकार उनके काम के नियन्त्रण की विधि की आधार शिला ब्रह्मचर्य है। जीवन मे मन, वचन और कर्म से ब्रह्मचर्य व्रत के पालन से मनुष्य अमोघवीर्यत्व प्राप्त किया करता है और अमोघवीर्यत्व प्राप्त कर लेने पर मनुष्य का मन जिसका एक मात्र सम्बन्ध 'काम' से है काबू मे हुआ करता है और मन और बुद्धि के काबू मे हो जाने पर आत्मा की ओर लग जाता है और आत्मा की ओर लग जाने पर काम वासना क्षीण हो जाती है। विज्ञान भी इस बात का साक्षी है। हर्बर्ट स्पेंसर ने भी जो एक बडे विज्ञान वेत्ता थे स्थापना की है, कि जितनी ही आत्मिक शक्ति बढेगी उतनी ही काम-वासना कम होगी। काम-वासना के नियन्त्रण के लिये दूसरी जरूरी बात जिस पर आचरण आवश्यक है अर्थ शुद्धि है। अर्थ शुद्धि का अर्थ मोटे रूप मे शृंगार वर्जित सादा और तपस्वी जीवन है, और यह जीवन वह जीवन है जिसका कोई सुनिश्चित ध्येय हो। हमारे यहा यह ध्येय ईश्वर प्राप्ति है। बिना जीवन के ध्येय के सीधे सादे और तपस्वी जीवन का कोई अर्थ नहीं। उसकी तुलना ही की जाय तो वह जगली जीवन से ही भली प्रकार हो सकती है जिसमे विचार और बुद्धि का दाखिला नही होता और जो विशेषत यूरोपीय सभ्यता के प्रारम्भिक स्टेज मे देख पड़ता है और आजकल यूरोप के नग्न और नेचर-वाद मे देख पड़ रहा है।

आर्यों की सभ्यता में पुत्रोत्पत्ति के ३ सुनहरे सिद्धान्त देख पडते है। एक सिद्धान्त तो यह है कि विशेष २ व्यक्ति आजीवन ब्रह्मचारी रह कर मोक्ष की सिद्धि कर सकते है। इसका सुगम

तगी। अखण्ड ब्रह्मचर्य व्रत का पालन है। यूरोपीय इतिहासकार तथा उनका सा मत रखने वाले अन्य इतिहासकार यह आक्षेप करते हैं कि प्राचीन आर्य औलाद के पीछे दीवाने रहते थे। उपर्युक्त सिद्धान्त और इस पर आचरण के अनेकों ऐतिहासिक प्रमाणों के होते हुए उनका आक्षेप गलत सिद्ध होता है। दूसरा सिद्धान्त यह है कि योग्य पुरुष गृहस्थ में प्रविष्ट होकर एक दो सन्तान पैदा करके और उन्हें मोक्षाभिमुख बना कर सामाजिक सुविधा पैदा करे और समाज को बल पहुंचावे। इस सिद्धान्त की तह में मनोविज्ञान का उत्तम विश्लेषण छुपा हुआ है। यह सिद्धान्त बतलाता है कि काम से बचना हरेक का काम नहीं। प्रायः लोग गृहस्थ में प्रवेश किया करते हैं और उनका ऐसा करना अस्वाभाविक नहीं है वरन् एक प्रकार से मनुष्य का कर्त्तव्य भी है क्योंकि यदि गृहस्थ में प्रवेश न किया जाय तो अन्य आश्रमियों का जीवन निर्वाह जो सर्वथा इस पर अवलम्बित है, कठिन हो जाय। इसलिये सामाजिक सुविधा उत्पन्न करने, काम की स्वाभाविक इच्छा को मर्यादित और नियन्त्रित रूप मे पूरा करने, मोक्ष मार्ग को परिष्कृत करने तथा दूसरों के लिए मोक्ष सुलभ बनाने के लिये गृहस्थ धर्म का पालन जरूरी है। शर्त यह है कि केवल योग्य पुरुष ही इसमें प्रवेश करें तथा १-२ सन्तान उत्पन्न करें। अधिक सन्तान पैदा करने से उन पर कामुकता का आक्षेप आता है। तीसरा सिद्धान्त यह है कि सामाजिक और राष्ट्रीय सुविधा के लिये १-२ से अधिक दस सन्तान तक पैदा करे।

इन तीनों सिद्धान्तों में जहां आर्यों की अमोघ वीर्यत्व की शक्ति काम करती देख पड़ती है जहां सन्तान पैदा न करना, पैदा करना, वा कम पैदा करना और अत्यधिक पैदा करना सर्वथा मनुष्य के अधीन है, वहां यह भी स्वाप ? स्वीकार करने के लिए बाधित होना पड़ता है कि व्यक्ति, समाज और राष्ट्र को समय समय पर सन्तान की आवश्यकता, अनावश्यकता और अत्यधिक आवश्यकता होती है।

जिस समय समाज में शान्ति होती है उस समय मोक्ष मार्गियों के अलावा समाज को मृत्यु के परिमाण में सन्तान की जरूरत होती है। जिस समय युद्ध जारी होता है वा युद्ध बन्द होता है, उस समय सन्तान की बेहद आवश्यकता बढ़ जाती है। इसी तरह सुख शान्ति के कारण जब सन्तान बेहद बढ जाती है तब उसके कम करने की जरूरत होती है। अमोघ वीर्यत्व पुरुष में ही यह क्षमता होती है कि वह इच्छानुसार सन्तान पैदा कर, न करे, कम वा ज्यादा करे।

आज माल्थस थियोरी के पक्षपाती कृत्रिम साधनों के द्वारा सन्तति निग्रह करना चाहते हैं परन्तु हम दावे के साथ कह सकते हैं कि वे त्रिकाल में भी ऐसा नहीं कर सकते। यदि कर भी दें तो उससे स्वास्थ्य और उत्तम सन्तानों के अभाव की दृष्टि से समाज का जो अकल्याण होगा उसकी कल्पना ही भयावह है। सन्तति निरोध के प्रश्न का हल काम वासना के निरोध के बिना संभव नही और वर्तमान शृंगार मंडन

कामुकता-जन्य अनार्य सभ्यता में यह सभव नहीं। जो लोग कृत्रिम साधना द्वारा सतति निरोध चिल्लाते हैं वे उस चिल्लाहट में समस्या के दूसरे पहलू को भूल जाते प्रतीत होते हैं और वह पहलू शृगार मण्डित इस अनार्य सभ्यता के वीर्यपात को कराने वाले विविध प्रबन्ध हैं। उन्हें चाहिये कि वे शृगार मंडित इस अनार्य सभ्यता को शृगार वर्जित आर्य सभ्यता में परिवर्तित करने का यत्न करें सन्तति निरोध की समस्या स्वत. हल हो जायगी। शृगार मण्डित अनार्य्य सभ्यता मे सन्तति निरोध का यत्न समाज को दुराचार और रोगों की ओर प्रेरित करके उसे योग्य सन्तानो से विहीन करके उसका विनाश करना मात्र है।

कुछ लोगों का ख्याल है कि स्त्री को पुरुष और पुरुष को स्त्री उसी प्रकार जरूरी है जैसे भूख के लिए भोजन है। यह बात गलत है। यदि सत्य होती तो पहलवानों का सुरक्षित रहना कठिन हो जाता, विधवा तथा पातिव्रत धर्म का नाम न सुनाई पडता। ब्रह्मचर्य, वानप्रस्थ और सन्यास आश्रमों की उत्पत्ति न होती। परन्तु हम ये सब बात देख रहे हैं। इससे प्रतीत होता है 'काम' मन का ही विकार है और कमज़ोर मन वालों के दिमाग की ही उपर्युक्त स्थापना उपज है। वर्तमान अनार्य सभ्यता के कारण मनुष्य के मन बेहद अमर्यादित हो गए हैं और मनुष्य काम्य पदार्थ, काम्य अभिलाषा और काम्य कर्म मे लिप्त होकर निरन्तर वर्त्तमान अनार्य सभ्यता मे प्रचुर मात्रा मे प्रेरणा मिलती है कामी बन गया है और उसका मन कमज़ोर हो गया है।

यदि आज का मनुष्य समाज आर्यों की 'काम' सम्बन्धी नीति को जिसको हमने ऊपर की पंक्तियों में रखने का यत्न किया है अपनाकर उस पर आचरण करे तो ससार में जो कामुकता जन्य अशान्ति, दुःख और असमानताएँ व्याप्त हो रही हैं वे दूर हो जावें और ससार मे बहुत कुछ सुख और शान्ति का प्रसार हो जाय।

सीमाप्रान्त के हिन्दू

सीमा प्रान्त के हिन्दुओं की दुर्दशा के समाचार जो मिल रहे हैं वे बड़े भयावह और कारुणिक हैं। आए दिन हिन्दुओं को लूट जाने, उनके घरों को जलाए जाने, उनको भगाये जाने और कत्ल किए जाने के समाचार सुन पड़ते है। अभी हाल मे डाकू ४ नौजवान हिन्दू लड़कियों को भगाकर ले गए थे जिनमें से १ वापस मिल गई है। स्पष्ट है वहा हिन्दुओं की धन, सम्पत्ति और जान ही न केवल सुरक्षित नहीं है वरन् उनकी इज़्ज़त भी खतरे में है। उनकी मुसीबतों मे हमारी पूर्ण समवेदना है। इतनी बड़ी शक्ति के मुक़ाबले मे सीमाप्रांत के मुट्ठी भर डाकू बेक़ाबू हो रहे हैं और महीनों से हो रहे हैं और शान्ति स्थापित होने मे नहीं आती, यह बात बड़ी विचित्र जान पड़ रही है। ब्रिटिश सरकार के आगे ये डाकू कुछ भी हैसियत नहीं रखते हैं। यदि सरकार इनके होश ठिकाने लगाने पर तुल जाय तो कुछ दिनो मे उपद्रव शान्त हो सकते हैं। परन्तु न मालूम इस उपद्रव को शान्त करने मे सरकार क्या ढील से काम ले रही है।

इसका परिणाम वहां के हिन्दुओं को भुगतना पड़ रहा है। सरकार का फ़र्ज़ है कि वह इन सरहदी डाकुओं को उनकी उपद्रवकारी प्रगतियों से रोके और सख्ती से काम ले। जो लड़कियां जबरन भगाई गई हैं और वापस नहीं मिली हैं उन्हें वापस दिलाए, ठीक उसी प्रकार जिस प्रकार कुछ वर्ष पूर्व एक यूरोपियन महिलाको, जो सरहदी डाकुओं द्वारा उड़ाली गई थी और जिसको वापस लेने के लिए ब्रिटिश सरकार का तमाम ताक़त एक केन्द्र पर केन्द्रित हो गई थी, उसने वापस ले लिया था।

भोपाल नेताओं को सज़ा

उपर्युक्त शीर्षक में सहयोगी 'हिन्दू' लिखता है —

भोपाल सरकार ने जब गत सप्ताह स्थानीय हिन्दू प्रजा परिषद् का बैठक पर पाबन्दी लगाई और पीछे न केवल हिन्दू नेताओं को चुनचुन कर गिरफ्तार ही किया अपितु हिन्दू युवकों को लाठी चार्ज तथा दूसरे अन्यायाचारों द्वारा आतंक फैला कर त्रस्त किया तो देश भरके प्राय सारे समाचार पत्रों ने सरकार व पुलिस की निन्दा की। जो हिन्दू भाई अपने आपको राष्ट्रीय कहकर इस घटना को साम्प्रदायिक नहीं मानते हैं वे अब आँखें खोलकर देखें कि रियासत के अधिकारियों के मन में साम्प्रदायिकता है या नहीं।

मुकद्दमे में अभियुक्तों का पैरवी के लिये अपने विश्वस्त वकीलों को इजाज़त न देकर अधिकारियों ने अपना पक्षपात दिखलाया है। मौखिक बयान में श्री लालसिंह बी० ए० ने बताया है कि उन्होंने पुलिस आफ़िसर मि० आर्मस्ट्रांग को साफ २ बता दिया था कि कांफ्रेंस में कोई भी साम्प्रदायिक कार्यवाही नहीं की जायगी—नाहीं किसी बाहरी व्यक्ति को बुलाया जायगा।

इस पर भी जो सजायें दी गई हैं उनसे स्पष्ट है कि रियासत के अधिकारी केवल नेताओं को ही नहीं दबाना चाहते अपितु वे रियासत के हिन्दू मात्र पर अपना आतंक बिठाना चाहते हैं।

आज प्रजातन्त्र के युग में नवाब भोपाल जैसे नव शिक्षित शासक के राज्य में उनकी बहुसंख्यक प्रजा को ऐसे व्यवहार की कभी आशा नहीं हो सकती। क्या हम आशा करें कि, प्रभावशाली व्यक्ति विशेषत, भारत सरकार इस मामले में हस्तक्षेप कर भोपाल की निरीह हिन्दू प्रजा की सहायता करेगी। इधर देखना यह है कि भोपाल का प्रजा अपने मौलिक नागरिक अधिकारों की रक्षा के लिये कहाँ तक गम्भीर है?"

अनुकरणीय दान

लुध्याना निवासी श्री स्वर्गीय ला० लब्भूराम जी अग्रवालसे १०००) सार्वदेशिक सभाको विदेशप्रचार के निमित्त उनकी सम्पत्ति के ट्रस्ट के कार्यकर्त्ता श्री दीवान रामशरणदासजी से स्वर्गीय लाला जी की वसीयत के अनुसार प्राप्त हुए हैं। स्वर्गीय लाला जी की यह मिसाल जहां आर्य्य समाज के प्रति उनके प्रेम तथा विदेशों में वैदिक धर्म्म के प्रचार की उनकी इच्छा और चिन्ता की द्योतक है वहां धनी मानी सज्जनों के लिए अपने धन के सदुपयोग के लिए एक अनुकरणीय मिसाल है। क्या हम आशा करें अन्य धनी मानी सज्जन विदेश प्रचार के निमित्त जो सभा ने हाथ में लिया हुआ है और जिसके सुन्दर फल

आगे लगे हैं सभा के निर्णय पर ध्यान रक्खेंगे ?

ईरान में विवाह प्रणाली में सुधार

ईरान वेग के साथ उन्नति के मार्ग पर बढ़ा चला जा रहा है। वहां स्त्रियों में 'परदा' इत्यादि तो पहले ही नहीं और न मुस्लिम संस्कृति अपने वास्तविक रूप में वहां देख पड़ती है। अब वहां विवाह प्रणाली में यह सुधार किया गया है कि शादी करने वाली लड़की को अधिकार है कि वह अपना जीवन संगी स्वयं चुने और शादी के पूर्व उससे मिल भी सके।

लाठी राज्य का अनुकरणीय क़दम

काठियावाड़ की एक रियासत लाठी के शासक हिज़हाईनैस ठाकुर साहब ने प्रमेश्वर के प्रसिद्ध सार्वजनिक मन्दिर का दरवाजा हरिजनों के लिए खोल दिया है और तमाम हरिजनों को आज्ञा दे दी गई है कि वे उसमें जाकर उपासना कर सकते हैं। यह उदाहरण ट्रावन्कोर राज्य के क़दम के समर्थन के लिए एक अच्छा उदाहरण है।

बनारस के पंडितों की व्यवस्था

श्री पं० मदनमोहन जी मालवीय ने काशी के सनातनधर्मी पंडितों से अभी हाल में एक व्यवस्था ली है जिसके अनुसार एक वर्ण के अवान्तर भेदों का आपस में विवाह होना शास्त्रीय दृष्टि से जायज़ क़रार दे दिया गया है। इस व्यवस्था के अनुसार कान्यकुब्ज, मालवीय इत्यादि ब्राह्मणों का आपस में रोटी बेटी के व्यवहारों का बंधन तोड़ दिया गया है। यदि आज ऐसा होता है तो कल अन्तर्जातीय विवाहों बंधन भी टूट जायँगे, ऐसी आशा उचित रीति की जा सकती है। हिन्दू जाति के संगठन की दृष्टि से इस प्रकार के क़दम बड़े महत्व पूर्ण हैं। हिन्दू जाति का हित अपने दिलों में रखने वाले सज्जन निश्चय ही इस व्यवस्था का स्वागत करेंगे।

चिन्ताजनक समाचार

हमें यह जानकर बड़ी चिन्ता हुई है कि सार्वदेशिक सभा के माननीय प्रधान श्री बा० घनश्यामसिंह जी के दामाद श्री विश्वनाथ प्रसाद जी दानी केम्ब्रिज (लन्दन) में सख्त बीमार हैं। श्री दानी जी शीघ्र स्वास्थ्य लाभ करें, यही प्रभु से प्रार्थना है। हमें यह जानकर सन्तोष हुआ है कि लन्दन में श्री टेकचन्द जी तथा पं० ऋषिराम जी बी० ए०, आदि जो आर्य्य भाई वहां मौजूद हैं यथा शक्य उनका देख रेख कर रहे हैं। श्री प्रधान जी की पुत्री चि० शकुन्तला देवी दानी बी ए अपने पति के निकट पहुंच गई हैं। कदाचित श्री प्रधान जी को भी वहां जाना पड़ जाय।

एक निमन्त्रण

श्री ला० टेकचन्द जी आर्य्य (लंडन) ने हमें यह घोषणा करने की आज्ञा दी है कि जो भारतवासी लंडन में आवें वे उनकी सेवा से अवश्य लाभ उठावें। इस समय भाई टेकचन्द जी की उम्र ६४ वर्ष की है परन्तु आप में सेवा भाव अभी तक नवयुवकों के समान वेगवान है। हमें आशा है कि भाई टेकचन्द जी अपने जीवन के अन्तिम काल में विदेश प्रचार ... महत्व पूर्ण कार्य्य के सम्पादन में सार्वदेशिक

श्री ला० टेकचन्दजी आर्य्य



आप उन पुराने, सदाचारी और दृढ़ आर्य्य समाजियों में से हैं, जिन्हों ने आर्य्यसमाज की सेवा तन मन और धन से की है। आजकल आप लन्दन में व्यापार करते हैं। वहां आप ने अपने एक मकान आर्य्यसमाज के साप्ताहिक अधिवेशनों के लिए अर्पण कर रखे होने

२ बता

अध्यात्म धारा

तप और त्याग

(श्री० स्वामी केवलानन्दजी सरस्वती निगमाश्रम, गज, (बिजनौर)

यह एक निस्सन्देह और निर्विवाद बात है कि ससार के प्रत्येक कर्म-कलाप मे, उसके कर्त्ता के व्यक्तित्व का प्रभाव अवश्य पड़ता है। समस्त धार्मिक जगत् का इतिहास इस बात का साक्षी है कि प्रारम्भ काल मे उन उन धर्म या मतान्तरों के सस्थापक महानुभावों के वैयक्तिक जीवन ही ने तात्कालिक मानवमण्डल को अपनी ओर अधिक रूप से आकृष्ट किया था। क्योंकि जो कार्य्य सर्वात्मना रूप से किया जाता है वही पुष्पित और फलित होकर विस्तार को प्राप्त होता है। अतएव हमारे प्रात स्मरणीय ऋषि मुनियों ने धर्म-प्रचार के कार्य्य मे प्रचारक को सतत सावधान रहने का सर्व सुन्दर और सार-गर्भित उपदेश दिया है। साख्यशास्त्र मे लिखा है कि उपदेश, उपदेशक के ठीक होने से ही ठीक होता है नहीं तो अन्धपरम्परा अपना गहरा प्रभाव जमा कर मानवीय समाज को विवेक-शून्य बना देती है। तात्पर्य्य यह है कि उपदेशक को अपना कर्तव्य केवल कथनमात्र ही नही समझना चाहिये प्रत्युत उन सब बातों को अपने जीवन मे परिणत करके यथार्थ सत्योपदेष्टा होना चाहिये। और यही एक कठिन बात है। यदि जीवन में कथन और कर्म का समन्वय हो जाय तो फिर सत्पुरुषता से सम्बन्ध हो ही जाता है। परन्तु इस धराधाम पर ऐसे नर विरले ही नज़र आते है। महात्मा तुलसीदास जी ने कहा है —

पर-उपदेश कुशल बहुतेरे।
जे आचरहि ते नर न घनेरे।

एक और किसी अनुभवी का वचन है —

कथनी मीठी खाण्ड सी, करनी विष की लोय।
कथनी से करनी करे, तो विष से अमृत होय। १।
कथनी के शूरा घने-थोथे बाधे तीर।
प्रेम-चोट जिनके लगी, तिनके विकल शरीर ॥ २ ॥

सत्पुरुष का लक्षण भी तो यही है।

"यथा मतिस्तथोक्तिर्यथोक्तिस्तथा मति।
सत्पुरुषस्य लक्षणमतो विपरीतमसत्पुरुषस्य ।।

अर्थात्—मन वचन और कर्म की त्रिवेणी मे अवगाहन करने वाले तो सत्पुरुष, और इससे वञ्चित रहने वाले असत्पुरुष कहाते है। परन्तु यह सत्पुरुषता कोई बाजारू चीज नही है जो कुछ द्रव्य खर्च करके खरीद ली जाय। किन्तु जिसने अपने आपको सत्पथारूढ करके परमेश प्रेम का पुजारी बना लिया है, उसी के हाथ यह विविध भव्य भावापन्न रत्न-राशि लग जाती है। सचमुच वही महात्मा है जो मानवता को आध्यात्मिक शाश्वत शान्ति का रसास्वादन कराके अपनी इच्छा शक्ति के द्वारा विश्व-हितैषिता के

लिये अग्रसर कर देता है। यह कार्य तभी तो हो सकता है जब जीवन में तप और त्याग का समन्वय हो जाय। यद्यपि तप और त्याग ये शब्द लिखने और पढने में बहुत छोटे लगते हैं परन्तु विचार करने से इनकी गम्भीरता और उपयोगिता आगे से बढ़ती जाती है। यहा हम इन दोनों शब्दों का संक्षिप्त और उपयोगी वर्णन करने के पश्चात् स्वाभिमत अर्थ की ओर प्रिय पाठकों का ध्यान आकर्षित करेंगे। तप अन्तःकरण की उस वृत्ति के जागरण करने का नाम है जो मानवीय जीवन में द्वन्द्वातीत अवस्था उत्पन्न करके उसे स्वधर्मानुष्ठान की ओर अग्रसर कर देती है, अर्थात् सुख, दुख, हानि, लाभ, मान, आदि विरोधी भावनाओं में समबुद्धि रहने की अमोघ शक्ति प्रदान करके उन्नति के अत्युच्च शिखर पर विराजमान कर देती है। जिस प्रकार गगाप्रवाह दुर्गम, विषम पहाड़ों और सन्मुख आये पाषाण समुदाय को ठुकराता हुआ अपने गम्यस्थान समुद्र में ही जाकर विश्राम लेता है, इसी प्रकार तपस्वी की इच्छा शक्ति का पुण्य प्रवाह भी अपने विघ्न बाधाओं को तिरस्कृत करता हुआ करुणा वरुणालय भगवान् को प्राप्त करके सफल मनोरथ होता है। महाराज मनु का कथन है —

तपो विद्याच विप्रस्य निःश्रेयस्कर परम्।
तपसा किल्बिष हन्ति, विद्ययाऽमृतमश्नुते॥

भावार्थ यह है कि विवेकशील ब्राह्मण के लिये तप और ज्ञान ही मुक्ति धाम तक पहुँचाने का सर्व श्रेष्ठ साधन है। अर्थात् तपस्या से समस्त पाप-पुञ्ज को विनष्ट कर ज्ञान से मोक्षानन्द का अनुभव करना है। परन्तु सखेद लिखना पडता है कि वर्तमान काल में तपस्या का उद्देश्य प्राय बाह्यप्रक्रिया प्रदर्शन मात्र ही रह गया है। अन्दर चाहे कुछ भी हो परन्तु बाहर से हमारा वेष तापस ही होना चाहिये। बस इस भावना ने भारतवर्ष की विमल विभूति तपस्या के सारे सार को नष्ट प्राय कर दिया है। किसी कवि का वचन है —

काम क्रोधस्तथा लोभ तृष्णाव्याकुलचेतस।
नेऽपि तिष्ठन्ति तपसि, नरः सारस्ततो मतः॥

अर्थात् काम, क्रोध, लोभ, तथा तृष्णा के जटिल जाल में जकड़े हुए लोग भी तपस्वी बने फिरते हैं, अतएव तप का सार ही न मालूम कहा चला गया। कहा तक कहे तप की इस दुर्दशा का अवलोकन कर किस विचारशील मनुष्य को दुःख न होगा। न मालूम कब हमारे सुदिनों का सूर्योदय होगा। जबकि हम अपने असली रूप को समझ कर तपस्वी बनेंगे। अब रही त्याग की बात। इसके समझने में भी असह्य भूल हो चुकी है। इसे भी हमने बाह्य दृष्टि के पैमाने से नापने में अपनी बुद्धि का कौशल समझा है। भगवद्गीता के द्वितीय अध्याय में अर्जुन ने योगिराज श्रीकृष्ण से स्थितप्रज्ञ के सम्बन्ध में कतिपय प्रश्न किये हैं और पूछा है कि स्थितप्रज्ञ या ज्ञानी का बाह्यरूप तथा बोलचाल, बैठना उठना आदि किस प्रकार का है। इसके उत्तर में भगवान् कृष्ण ने कहा है —अर्जुन! जिस समय कोई श्रेष्ठ पन्थ का पथिक अपने मनगत समस्त विकारों को त्याग देता है तथा

अपने आप में ही मोद मुदित रहता है, तब उसको स्थित प्रज्ञ कहते हैं। इत्यादि सन्दर्भ से आपको पता चलेगा कि श्री कृष्ण महाराज ने जितने गुण बताये हैं वे सब आन्तरिक ही हैं बाह्य नहीं। क्योंकि बाह्य दृष्टि से ज्ञानी और अज्ञानी का कुछ पता नहीं चलता। इसी लिये अर्जुन के बाह्य दृष्टि वाले प्रश्नों का उत्तर न देकर महाराज कृष्ण ने आभ्यन्तरिक विशेषताओं का ही वर्णन किया है। ठीक तो है —

काक कृष्ण पिक कृष्ण को भेद पिककाकयो।
वसन्त समये प्राप्ते, काक काक पिक पिक॥

साराश यह है कि बाह्य दृष्टि से काक और कोयल दोनों ही काले हैं। परन्तु बसन्त इन दोनों का व्यावर्तक हो जाता है। अर्थात् आन्तरिक गुण से काक और कोयल भिन्न भिन्न अवगत हो जाते हैं। त्याग भी एक आन्तरिक भावना है जब तक वह जागृत नहीं होती तब तक बाह्य आडम्बरों से कुछ काम नहीं चलता। त्यागी तो होना ही कठिन है किसी अनुभवी विद्वान् का वचन है —

शतेषु जायते शूर सहस्रेषु च पण्डित।
वक्ता दशसहस्रेषु, त्यागी भवति वा न वा।

सैकड़ों मे कोई शूर वीर तथा हजारों मे कोई पण्डित, एव दश हजारों मे कोई वक्ता तो मिल सकता है परन्तु त्यागी मिलेगा या नहीं इस बात का शीघ्रतया नही कहा जा सकता।

वास्तव मे वासना के परित्याग को ही त्याग कहना चाहिये या यों कहो कि अपनी इच्छा पर निर्भर न रह कर ईश्वरेच्छा का आश्रय लेना ही सच्चा त्याग है। त्यागी पुरुष यह सोच कर कि सुख और दुःख अदृष्टमूलक है, अतएव प्रथम अदृष्ट का विश्वासी होता है फिर यह विचार कर कि अदृष्ट भी तो जड है वह भी किसी प्रेरक की अपेक्षा रखता है और वह प्रेरक शक्ति सिवाय ईश्वरेच्छा के और क्या हो सकती है। एव ईश्वरेच्छा भी न्याय मूलक है अत यथा—कर्म, फलदाता परमात्मा ही है। इस प्रकार यह भुवन पावन भगवान का विश्वासी बनकर तथा निमित्तमात्र विहित कर्मकलाप करता हुआ मनुष्य जीवन के मुख्य उद्देश्य को प्राप्त कर लेता है। इस सारे कथन का तात्पर्य्य यह है कि जब इस तप और त्याग की भावना किसी भावुक भक्त के हृदय मे भर जाती है तब काञ्चनमणि सयोगवत् इसका जीवन कान्त गुणों का आधार बनकर जगतीतल के मानव मण्डल को अनुकरणीय हो जाता है। ऐसा महिमा-महान महात्मा अपने दर्शनमात्र से मानव-समूह को पवित्र करता हुआ सबके लिये श्रद्धास्पद बन जाता है। इत्योम्

सत्यार्थप्रकाश लेखमाला—

गोत्र

[लेखक श्री स्वामी स्वतन्त्रतानन्द जी]

—*—

सत्यार्थ प्रकाश में गोत्र दो स्थानों पर मिलता है। एक तो दुर्योधन को महर्षि ने गोत्रहत्यारा लिखा है दूसरे विवाह प्रकरण में 'असगोत्रा च या पितु, पाठ है। विवाह में कन्या पिता के गोत्र की न हो, यह इसके अर्थ हैं।

अब चिंतनीय है कि गोत्र क्या है ' इस विषय पर आर्य मित्र में भी मैंने एक लेख पढा था उस लेख के लेखक महाशय ने लिखा था कि गोत्र स्थायी हैं जिस से प्रतीत होता है कि आपने गोत्र विषयक पुस्तक नहीं देखे हैं केवल सुनी सुनाई बातों को आधार मान कर गोत्र की स्थायी व्यवस्था करदी है। गोत्र विषयक जो पुस्तक हैं उनमें गोत्र प्रवर निबन्ध कदम्ब सब से मुख्य प्रतीत होता है। उसने इस विषय को विस्तार से लिखा है। उसमें यह साफ लिखा है गोत्र मुख्य ब्राह्मणों का ही होता है अन्य क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र का गोत्र नहीं होता है। शूद्र का तो और भी कई नहीं मानते हैं। क्षत्रिय, वैश्य के पुरोहित का गोत्र ही उनका गोत्र होता है ऐसा भी कई मानते हैं। इसके अतिरिक्त चारों वर्णों का अपना २ गोत्र होता है ऐसा मानने वाले भी हैं। स्मृति तत्व में १११ पृष्ठ पर इस विषय पर विचार किया गया है। आर्यसमाज भी चारों वर्णों का गोत्र मानता है। मैं इस विषय पर कुछ 'विवाह मर्यादा' शीर्षक लेख में लिख भी चुका हूं। परन्तु अब यह लिखना चाहता हूँ कि गोत्र कितने माने जाते थे उनके मुख्य २ भेद किस प्रकार हैं इस समय जो गोत्र कहलाते हैं वे वही हैं जो प्रथम थे अथवा नूतन हैं? ताकि पाठक गोत्र को समझ सकें कि यह क्या वस्तु है। मुख्य गोत्र आठ हैं यथा —

जमदग्निर्भरद्वाजो विश्वामित्रात्रिगोतमा।
वसिष्ठकश्यपागस्त्या मुनयो गोत्रकारिण ॥

जमदग्नि, भरद्वाज, विश्वामित्र, अत्रि, गोतम, वसिष्ठ, कश्यप, अगस्त्य, गोत्र करने वाले मुनि हैं अर्थात् यह आठ गोत्र होते हैं जो इनकी सन्तान हैं वह इनके नाम से कही जाती हैं यह उनके गोत्र हैं इसी प्रकार—

विश्वामित्रो जमदग्निर्भरद्वाजोऽथ गोतम।
अत्रि वसिष्ठ कश्यपा इत्येते सप्त ऋषय.।
सप्तानामृषीणामगस्त्याष्टमाना यदपत्यं तद्गोत्रम्।

विश्वामित्र, जमदग्नि, भरद्वाज, गोतम, अत्रि, वसिष्ठ, कश्यप सात ऋषि यह और आठवें अगस्त्य इनकी जो सन्तान है वह इसी नाम से कही जाती है। अर्थात् उनका यही गोत्र होता है।

यह जो आठ मुख्य गोत्र हैं इनके फिर आगे भेद हैं यह प्राय ४६ कहे जाते हैं। उनके नाम भी लिखे देता हूं ताकि पाठकों को विचार करने में सहायता मिले।

(१) कुशिका । (२) लोहिता । (३) गौलका (४) काम का पत्र । (५) अजा । (६) कना । (७) धनञ्जय । (८) अघमर्षण (९) पूर्णा । (१०) इन्द्रकौशिका ।

इनके पुन क्रम से ४२, ६, ३, ५, ३, ८, ६, ६, ३, २, भेद हैं। यदि सबके नाम देखना चाहें तो अन्य पुस्तकों को देखलें यहा नहीं लिखूंगा।

भारद्वाज ४ प्रकार के हैं—

(१) भारद्वाज (२) गर्गा (३) ऋक्षा (४) कपथ

इनके भेद क्रम विकल्प से निम्न हैं—

३ वा १६० । ५ वा ५० । ५ वा ९ । ३ वा २५ ।

अत्रि गोत्र के चार भेद हैं—

(१) अत्रय (२) वाद् भुतका (३) गविष्ठरा (४) मुद्गला ।

इनके क्रम से ५०, ३, १०, ११ भेद हैं

कश्यप गोत्र के चार भेद हैं

(१) निध्रुवा । (२) वश्यपा । (३) रेभा । (४) शाण्डिला ।

इनके क्रमसे ९०, २, ३, ३१ भेद हैं

लौगाक्षि गोत्र भी कश्यप के अंतर्भूत है।

वसिष्ठ पांच प्रकार के हैं—

(१) वसिष्ठ (२) कुण्डिना (३) उपमन्यव (४) पाराशरा (५) जातुकर्ण्य.

इनके क्रम से भेद यह हैं—

३२, २०, २२, ३०, ५ ॥

अगस्त्य गोत्र के भेद ४ वा १० हैं इनके नाम यह हैं—

(१) इध्मवाहा । (२) साम्भवाहा । (३) सोमवाहा । (४) यज्ञवाहा । (५) दर्भवाहा । (६) स्मार वाहा (७) अगस्त्या (८) पूर्णमासा । (९) हिमोदका । (१०) पाणिका ।

इनके भेद क्रम से इस संख्या में हैं—

५०, ३, ३, ३, ३, ३, ३, ३, ३, ३, हैं।

गोतम, भार्गव आंगिरस तीन एक ही माने जाते हैं पुन इनके भेद निम्न प्रकार से हैं।

गोतम गोत्र के १० भेद हैं—

(१) आयास्या। (२) शारद्वता (३) कौमण्डा (४) दीर्घ तमसः। (५) औशनस (६) कोणुपालेय (७) राहुगण । (८) सोमराजक । (९) वामदेवा (१०) वृहदुकथा ।

इनके भेद क्रमसे इतने हैं—

३ वा १८, ३ वा ७०, ५ वा १०, ३, ३, ३

आंगिरस चार प्रकार के हैं

(१) हारीत, (२) कुत्स, (३) कण्व (४) रथीतर । इनके पुन तीन ३ भेद हैं। भार्गव ७ भेद वाले हैं।

(१) वत्स, (२) आष्टिषेण (३) यस्का (४) मित्रयुव (५) वैन्या (६) विदा (७) शुनका ।

पुन इनके भेद ५ वा २००, ५ वा २०, ३ वा ५३, ३ वा ३०, ३, ५ वा २०, ३ वा १७ हैं।

इस समय जो गोत्र मिलते हैं वह इनमें नहीं हैं ब्राह्मणों के अवस्थी, शारदा, पाठक आदि इनसे बाहर ही हैं।

क्षत्रियों के रखन, वहल, चोपड़ा, चड्ढा, खन्ना भी वैसे ही है। वैश्यों के मित्तल, बासल

बाहर हैं।

इसी प्रकार जो अन्य जातिया मानी जाती हैं उनके गोत्र हैं। इस समय सहस्रों गोत्र हैं जैसा कि बोधायन लिखता है —

गोत्राणितु सहस्राणि अयुतान्यर्बुदानिच। जो इनमे नहीं आते हैं।

प्रतीत होता है जो व्यक्ति किसी वश मे प्रभाव वाला हुआ उससे गोत्र बनगया। जैसे महाराजा पटियाला सिद्धू है इनका कोई पूर्वज इस नाम से था उसी की सन्तान सिद्धू होगई। कायस्थों मे एक बरादरी भटनागर है यह भटनेर से आए हुए हैं। आज कल जिसे हनुमान गढ कहते है जो बीकानेर राज्यमे है प्रथम इसका नाम भटनेर था वहा से आने से वह भटनागर हो गए। जब यह अवस्था है तो गोत्र स्थायी कैसे माना जासकता। है यह अस्थायी वस्तु है। जैसा कि मेधातिथि ने मनुस्मृति टीका में लिखा है—

अन्येतु गोत्रं वश माहु। न तत्र.वध्यपेक्षा यावदे-तज्ज्ञायते वयमेकवशा ॥ अर्थात् गोत्र वश का नाम है जब तक ज्ञात हो कि हम एक बंश के हैं वहा गोत्र होना है इस लिये यह नूतन भी बन सकते है और बनते हैं। सत्याषाढ लिखता है—

अथाज्ञानबन्धो पुरोहितप्रवरेणेति। आचार्यगोत्रप्रवरानभिज्ञस्तु द्विज स्वय दत्त्वात्मान तु कस्मैचित्तद् गोत्रप्रवरो भवेत्।

अर्थात् गोत्र भूलजाने पर आचार्य का गोत्र मानले यह भी स्मरण न रहे तो अपने आप को किसी को देदे तो यही गोत्र होगा।

अत गोत्र अस्थायी ही मानना उचित है स्थायी नहीं। कोई प्रभावशाली व्यक्ति पूर्व गोत्र को बदल देता था और अबभी बदल देगा।

——

वेद और पुराणों का तारतम्य

(ले०—श्री प० सूर्यदेव शर्मा सिद्धान्त शास्त्री, साहित्यालङ्कार, एम ए एल टी अजमेर)

आज कल इस प्रकाश के युग मे भी हमारे अनेक भाई यह कह दिया करते हैं कि हिन्दू धम वेदपुराणानुमोदित है—अर्थात् उसके सिद्धान्त वेदों और पुराणों के आधार पर अवलम्बित हैं। यदि इस कथन मे उनका मतलब पुराणों से प्राचीन ब्राह्मण ग्रन्थों का हो, तब तो हमे कोई आपत्ति नहीं, लेकिन वे पुराणों का अर्थ वे अष्टादश पुराण करते हैं जो विभिन्न काल में भारत के भिन्न २ भागों मे बनते रहे हैं और जिनके कर्ता गलती से महर्षि वेदव्यास जी को बनाया जाता है, उसके लिये श्लोक भी गढ़ लिया गया है, जैसे—

"अष्टादशपुराणाना कर्त्ता सत्यवतीसुत ।"

अर्थात् १८ पुराणों के रचयिता सत्यवती के पुत्र व्यास जी है। इस कपोल कल्पित बात की पोल तो अब अनेक विद्वान खोल चुके हैं, और यह पूर्णतया सिद्ध किया जा चुका है कि सारे पुराण किसी एक ही व्यक्ति की रचना नहीं हैं, और न किसी एक ही समय में बने भी हैं। यद्यपि इस बात से इन्कार नहीं किया जा सकता कि पुराणों के अन्दर से प्राचीन भारतीय इतिहास की निर्माण-सामग्री प्रचुरता से मिल सकती है, और वे विपुल परिश्रम करने वाले इतिहास लेखक के लिये कुछ सहायक सिद्ध हो सकते हैं, लेकिन इससे समस्त पुराणों की सत्यता अथवा उनका एककालीन और एककर्तृत्व किसी प्रकार से सिद्ध नहीं हो सकता। इस बात को सनातनधर्म के महोपदेशक प ज्वालाप्रसाद जी ने भी अपनी पुस्तक "अष्टादश पुराणदर्पण" की भूमिका मे दबी जबान से ही स्वीकार किया है। लेकिन हमें हँसी तो उस समय आती है जब पुराणों को घसीट कर परम पुनीत वेदों के मुक़ाबिले मे रक्खा जाता है, यही नहीं किन्तु अनेक बातों में पुराणों के पक्षपाती अपनी अज्ञानता अथवा हठ के कारण उन्हें वेदों से भी श्रेष्ठ सिद्ध करने का व्यर्थ और हास्यास्पद प्रयत्न करते देखे जाते हैं। इसी मत का कुछ दिग्दर्शन और निराकरण इस लेख में किया जायगा।

सबसे पहली बात तो वेदों और पुराणों के उत्पत्तिकाल के विषय मे है। यह मत तो अब सर्वमान्य है कि ससार के साहित्य में वेद सब से प्राचीनतम पुस्तक हैं। पुराण बेचारों की तो गिनती ही किसी मे नहीं है जो उनकी तुलना में रखे जा सकें। वेदों की प्राचीनता को आज न केवल आर्यसमाजी और हिन्दू ही स्वीकार करते है किन्तु पाश्चात्य विद्वान् भी उनकी परमप्राचीनता के सम्मुख नतमस्तक होकर प्रो मैक्समूलर के शब्दों मे कहने लगते हैं —

"The Rigved is the oldest book in the Library of the world"

अर्थात ससार के पुस्तकालय में और मानव समाज के साहित्य मे यदि कोई सब से प्राचीन ग्रन्थ है तो वह ऋग्वेद है। न केवल पौरस्त्य और पाश्चात्य विद्वानों का ही इस विषय में ऐकमत्य है किन्तु अनुसन्धान के अन्य साधन पुरातत्वविभाग आदि द्वारा भी वेदों की प्राचीनता में अब किसी को सन्देह नहीं रहा है। लेकिन शाक है कि अन्यदेशीय और अन्यमतीय विद्वान् तो वेदों की सर्वप्राचीनता सिद्ध करें किन्तु हमारे पुराणों के पक्षपाती वेदों के मुकाबले में पुराणों की प्राचीनता सिद्ध करने का प्रयत्न करें। सुनिये पुराणों की उत्पत्ति के विषय में शिवपुराण स्वय क्या कहता ह –

प्रथमं सर्वशास्त्राणां पुराणं ब्रह्मणा स्मृतम्।
अनन्तरं तु वक्त्रेभ्यो वेदास्तस्य विनिर्गता ॥३२॥
(शिवपुराण वायुसहिता खण्ड १ अ. १)

अर्थात् सब शास्त्रों से पूर्व ब्रह्मा ने पुराण का स्मरण किया और तदनन्तर ब्रह्मा के मुखों से चारों वेद निकले। लीजिये हद हो गई! भाषा विज्ञानशास्त्र और तर्कशास्त्र सब एक ओर रक्खे रह गये! पुराण तो वेदों के भी ज्येष्ठ भाई हुये, इसलिये उनका महत्व अधिक माना जाना चाहिये। ऐसे २ अनर्गल प्रलापों से ही वेद की महत्ता लोगों के दिल से कम होती गई है। पुराणों के अनुवादकर्त्ता डा विल्सन जैसे विद्वान् भी ऐसे ही उद्धरणों को पढ़ कर वेदों से अश्रद्धालु से हो गये। शिवपुराण के इस श्लोक ने न मालूम वेद के कितने श्रद्धालुओं के दिलों पर हड़ताल फेर दी होगी। भला जिन पुराणों में मध्यकालीन इतिहास की घटनायें-ईसा और मुहम्मद का हाल और महारानी विक्टोरिया तक का वृत्तान्त दिया हो (जो किसी आगामी लेख में दिखाया जायगा) वे वेदों से भी अधिक प्राचीनता का दावा करें इससे बढ़ कर और हास्यास्पद मिथ्या दम्भ क्या हो सकता है? तब भी पुराणों के विश्वासी अपनी आंखें बन्द किये हुये ही उनको मानते चले जाते हैं।

दूसरी बात वेद और पुराणों के प्रामण्याप्रामाण्य विषय की है वेदों का स्वत प्रमाण होना ब्रह्मा से लेकर ऋषि दयानन्द पर्यन्त सभी मानते आये हैं। मनु महाराज ने तो यहा तक लिख दिया है —

"धर्मं जिज्ञासमानाना प्रमाणं परमं श्रुति"।

अर्थात् धर्म की जिज्ञासा रखने वालों के लिये सब से बढ़ कर प्रमाण यदि कोई है तो वह वेद ही का है। भला जिन वेदों में अटल भक्ति और श्रद्धा रखने वाले कुमारिल भट्टाचार्य यह कहते हुये कि "यदि वेदा प्रमाणं स्यु तर्हि जीवेयम्" छत से कूद पड़ते हैं और अपने जीवन की कुछ भी चिन्ता नहीं करते, और भला जिन वेदों की रक्षा के लिये यवनकाल में लाखों ब्राह्मण अपने सिर कटा देते हैं, उनके लिये पुराणों का निम्न लिखित कथन कितना गर्हित और निन्दनीय है —

तर्कोऽप्रतिष्ठ श्रुतयो विभिन्नाः
नासावृषिर्यस्य मत न भिन्नम्।
धर्मस्य तत्त्व निहित गुहाया
महाजनो येन गत स पन्थाः॥
(गरुड़पुराण आचार काण्ड अ० १०९-५१)

अर्थात् तर्क को कोई प्रतिष्ठा नहीं, वेद सब भिन्न २ मार्ग बतलाते हैं। कोई ऋषि भी ऐसा नहीं जिसका मत भिन्न न हो, ऐसी दशा में धर्म की गुफा में छिपा हुआ तत्व कैसे जाना जाय ?

देखा आपने ? यह है वेदों के प्रति श्रद्धा कम करने की शैली। भला इसको पढ़ कर "प्रमाण परम श्रुतिः" को कौन मानेगा। अप्रत्यक्ष रूप से न केवल वेदों की ही, किन्तु प्राचीन ऋषियों की और तर्क की भी जिसको निरुक्तकार ने "तर्क ऋषि" कहा था कितनी जोरदार निन्दा की गई है। जब वेदों का प्रमाण ही नहीं उसका ऐकमत्य ही नहीं, तो भला उसको कौन पढने लगा है ? उनमे श्रद्धा कौन रखने लगा है ? शायद यही कारण है कि आज हमारे बहुत से भाई वेदों के मुकाबिले मे पुराणों का अधिक आदर करते हैं। और वैदिक आर्य कहलाने की अपेक्षा पौराणिक कहलाना अधिक पसन्द करते हैं।

तीसरी बात वेदों की उत्पत्ति के प्रकार के विषय मे है। मनुस्मृति मे तो लिखा है "अग्निवायुरविभ्यस्तु त्रयं ब्रह्म सनातनम्"

इत्यादि। अर्थात् अग्नि, वायु, आदित्य से ऋक्, यजु, साम की उत्पत्तिया अभिव्यक्ति हुई। ब्राह्मण भी यही कहता है "अग्नेऋग्वेदो, वायोर्यजुर्वेद, सूर्यात्सामवेद"। और ऐसा ही आज तक के महर्षि और विद्वान् मानते भी आये हैं, लेकिन पुराणों मे उनका उत्पत्ति का एक तमाशा ही कर दिया। जैसा पूर्व लिखा जा चुका है-चारों वेद ब्रह्मा के चार मुखों से निकले हुए बतला दिये। इस प्रकार पुराणों ने वेद की प्रतिष्ठा घटानेमें यहा भी कोई बात उठा न रक्खी। एक ४ मुखवाला ब्रह्मा कल्पित कर उसके मुखों से एक एक वेद की उत्पत्ति बतलाना वेदों को असभवता की कोटि मे ले जाना है, जिससे उनके प्रति विद्वानो की श्रद्धा कम होती है, हा, मूर्खों को श्रद्धा भले ही बढ़ जाय।

चौथी बात पुराणों मे वर्णित उन सिद्धान्तो की है जो स्पष्ट वेद के विरुद्ध जाते हैं। उनमें से प्रत्येक की विवेचना करना तो इस छोटे से लेख मे सभव नही, लेकिन उनके स्मरण मात्र से यह ध्यान हो जाता है कि इन पुराण कर्त्ताओं को न मालूम सूझा क्या था और वे वेदों के विरुद्ध लोगों को अज्ञानान्धकार मे क्यों घसीट रहे थे ? हा, जैसा कि पद्म पुराण ने कह भी दिया है—

"व्यामोहाय चराचरस्य जगतश्चैते पुराणागमा"।

इन पराणों का आगम ससार मे चराचर को मोह में डालने के लिये हुआ है। वास्तव मे यही बात ठीक भी जचती है नही तो क्या आवश्यकता थी कि जिन देवों की वेद मे प्रतिष्ठा है उनकी पुराणों मे निन्दा। "छले दक्ष सुरा सर्वे मुनयश्च तपोधना" अर्थात् सब देवता और मुनि कपट छल में दक्ष है। वेद अवतारवाद मूर्तिपूजा आदि का निषेध करता है—ये पुराण उनका विधान बतलाते हैं। वेद मे हिंसा और मासभक्षण वर्जित है, पुराणों मे अनेक स्थानों पर मासभक्षण दिखलाया गया है। और "गवा लक्ष छेदनम्" तक कह कर आर्य

आर्य समाज का स्वरूप

ले० श्री ईश्वरी प्रसाद जी

आर्य समाज न तो राजनैतिक सोसाइटी है, न तार्किको का स्कूल है और न झगड़ालुओं का गिरोह ही है। यह एक धार्मिक सोसाइटी है और यदि यह शिक्षा और समाज की समस्याओं की ओर ध्यान देती है तो इसलिए कि यह इन समस्याओं को धार्मिक समस्याओ के साथ जुड़ा हुआ समझती है पृथक चीजें नहीं समझती है। आर्यसमाज का धर्म केवल परमात्मा वा परलोक में विश्वास पैदा करने तक सीमित नही है। वरन् आर्य समाज के धर्म में मनुष्य का सर्वाङ्गीण विकास यथा बौद्धिक, सामाजिक, नैतिक और आध्यात्मिक पूर्णताएँ सन्निहित है। ये धार्मिक जीवन के अङ्ग हैं और इनके द्वारा ही मनुष्य परमात्मा को प्राप्त करने मे समथ होता है। आर्य समाज अपनी विविध प्रगतियों के बावजूद भी धार्मिक सोसाइटी है और इसके अस्तित्व का मूलभूत उद्देश्य धार्मिक सुधार करना और प्राचीन वैदिक धर्म को पुनर्जीवित करना है।

आर्य समाज धार्मिक सोसाइटी है इससे यह न समझा जाना चाहिए कि वह स्वय कोई धर्म या मत है। यह धार्मिक समाज है जिसका विश्वास वैदिक सिद्धान्तो में है और उन्हीं सिद्धान्तों का प्रचार करना इस का उद्देश्य है। उस का मुख्योद्देश्य संसार का उपकार करना अर्थात् शारीरिक, आत्मिक और सामाजिक उन्नति करना है। यहा आर्य समाजके सैद्धान्तिक स्थापनाओं के विस्तार में जाना अप्रासङ्गिक ही होगा। वे आर्य समाज के संस्थापक ऋषि दयानन्द के ग्रन्थों से वा मूल शास्त्रों से भले प्रकार जानो जासकती हैं। आर्य समाज के धर्म के स्वरूप उसकी स्थापनाओं की पवित्रता और उसके प्रमाण पत्रों की युक्तियुक्तता का आभास मात्र कराने के लिए उन स्थापनाओं का संक्षिप्त परिचय ही पर्याप्त होगा।

यह ऊपर कहा जा चुका है कि आर्य समाज का विश्वास वैदिक सिद्धान्तों में है और वह वैदिक धर्मका अनुयायी है। इसलिए आर्य समाज के धर्म का परिचय देना वैदिक धर्म का परिचय देना है। और जितने संक्षेप में हम यह परिचय देना चाहते हैं उतने संक्षेप में यह

सभ्यता और वैदिक धर्म का खात्मा ही करना चाहा है।

कहा तक कहा जाय ऐसे ऐसे अनेक विषय हैं जिन पर पृथक् २ लेख लिखे जाने की आवश्यकता है। मेरा निवेदन पाठकों से केवल इतना ही है कि वे वेद और पुराणों की वास्तविक स्थिति से परिचित रहें और पुराणों के व्यामोह मे पड़ कर वेदों के प्रति श्रद्धा में कुछ भी कमी न करें किन्तु "वेद का पढ़ना पढ़ाना अपना परम धर्म" समझें।

——

परिचय देना आसान काम नहीं है तौभी वैदिक धर्म के मुख्य २ सिद्धान्तों का वर्णन करने का हम यत्न करते हैं।

"केवल एक परमात्मा है जो ससार का शासक, नित्य, पवित्र, न्यायकारी, सर्वव्यापक, सच्चिदानन्द इत्यादि २ है। उससे पृथक परन्तु उसके अधीन २ और सत्ताएँ हैं अर्थात् आत्मा और प्रकृति। ये तीनों दुनिया के सिद्धान्त हैं। जीव प्रकृति के साथ मिलकर कर्म करने और कर्मों का फल भोगने में समर्थ होता है। ईश्वर कर्मों का फल जीव से भुगवाता है। जीव अपने कर्मों से अपने भाग्य का निर्माण करता है। कर्म का यह सिद्धान्त जीव के आवागमन का प्रतिपादन करता है। आवागमन के चक्कर से जीव का छूटजाना मोक्ष है। पवित्र ज्ञान, पवित्र कर्म और पवित्र उपासना से मोक्ष की प्राप्ति होती है। मनुष्य और परमात्मा के बीच में कोई मध्यस्थ नही है। परन्तु परमात्मा ने मनुष्य को उसके भाग्य पर नही छोड़ा है। सृष्टि के आदि मे परमात्मा ने उसे वे भेद और विधिया बतलादी है जिसके सहारे मनुष्य उस तक (परमात्मा) पहुँच सकता है। उन्हीं भेदों और विधियों का संग्रह 'वेद' है। और ये सच्चे ज्ञान की पुस्तकें है। अविद्या तमाम दुखो का मूल है और इसका नाश करना चाहिए। परमात्मा की उपासना करने से बुद्धि और आत्मा पवित्र होती है और अविद्या का नाश होता है। मोक्ष प्राप्त करना मनुष्य का चरम लक्ष्य है और मोक्ष इस दुनिया के द्वारा ही प्राप्त होता है इस लिए दुनिया का तत्वज्ञान प्राप्त करना और इसका उचित उपयोग करना मुमुक्षु का प्रधान कर्त्तव्य है। धर्म के दश लक्षण है यथा—धैर्य्य, क्षमा, दम, अस्तेय, शोच, (पवित्रता) इन्द्रियनिग्रह, अध्ययन, ज्ञान, सत्य, अक्रोध।"

यहा हमें मुख्यतया धार्मिक समाज के रूप मे आर्यसमाज का स्वरूप उसकी कार्य प्रणाली उसकी विशेषताएँ और उसके मुख्य असूल बतलाने अभीष्ट हैं। इन पर हम आगे कुछ विचार करेंगे।

हमारे सात शत्रु

लेखक—
एक अनुभवी पत्रकार

कुछ महीनों के बाद सर हरिसिंह गौड़ फिर हिन्दू संस्कृति पर अपने उदार विचारों के साथ मैदान में आए हैं। उनके विचारों के प्रवाह को जिनसे उनका हृदय परिपूर्ण देख पड़ता है, देखते हुए ऐसा मालूम पड़ता है कि सर महोदय बड़े देश-भक्त हैं। परन्तु आश्चर्य यह है कि उन विचारों ने उन्हें एक कुछ भी कार्य की ओर अग्रसर नही किया है यद्यपि वे लोग जिनके विरुद्ध वे अपने हृदय के उद्‌गारों का प्रकाश करते हैं, बड़े महत्वपूर्ण सामाजिक और आध्यात्मिक आन्दोलनों में लगे हुए हैं। 'कलकत्ता रिव्यू' के पिछली जनवरी के अङ्क में जिस के स्तम्भ सर महोदय के विचित्र विचारों को स्थान देने मे नही थकते हैं सर महोदय ने भारत वर्ष के ७ शत्रुओं का आविष्कार किया है। वे सात शत्रु जलवायु, जातपात, अहिंसा, हमारे देवीदेवता दर्शन शास्त्र, भाषा और अकर्मण्यता है। भारतीय भाषाओं पर उनके विचार ध्यान देने योग्य हैं। ये भाषाएँ हम में भेद-भाव पैदा करने वाली हैं। हमें एक सम्मिलित भाषा की जरूरत है। केवल इंग्लिश ही इस आवश्यकता की पूर्ति कर सकती है। हिन्दी नहीं। इस लिए हमारी प्राचीन संस्कृति ने निराशा की एक दीवार खड़ी कर दी है और उस दीवार से टकराने से हम भयकर आर्थिक, सामाजिक, दार्शनिक, ऐहिक, धार्मिक और भौगोलिक (अन्यथा जल-वायु और किस प्रकार से बदला जासकता है?) क्रान्ति के द्वाराही बच सकते हैं।

इस भयकर तूफानके बाद बाकी क्या बचेगा? शून्य। हा, निश्चित रूप से हमारी गुलामी रह जायगी। यह सब हमे ससार का परिभ्रमण करने वाले एक भारतीय यात्रीके यात्राके अनुभवोंको जो हमने बचपन मे पढ़े थे स्मरण कराते हैं। जब वह यात्री पिछली शताब्दीके अन्तिम चरणोंमें ब्रिटिश द्वीप मे पहुचा तो वह उस स्थान की मनोरमता से इतना प्रभावित हुआ कि हठात् वह अपनी काली चमडी पर हाथ मलने लगा और उसकी प्रबल इच्छा हुई कि वह आगे उसी द्वीप मे जन्म लेवे। ऐसा प्रतीत होता है कि हमारे पढ़े लिखे लोग अभी तक १६ वी शताब्दी की नीद से पूर्णतया नहीं जागे हैं। कितने दुःख की बात है कि भाग्य ने हमे भिन्न देश, भिन्न भूनकाल और भिन्न सस्कृति में नही रखा है। धैर्य रखो! क्या हमारा उपद्रवकारी दर्शन शास्त्र आवागमन के सिद्धान्त के रूप मे हम तक आशा की किरण नहीं पहुंचाता है?

कुछ दार्शनिक विचार

लेखक—
एक मुस्लिम हृदय

संसार का इतिहास साक्षी है कि अन्त मे सत्य की ही विजय होती है और असत्य की भले ही वह सफल होता क्यों न देख पड़ा हो, अन्त में पराजय होती है। जब तक हम प्रकृति की उपासना करते हैं तब तक हम दासता मे रहते हैं। चेतन जगत् से घृणा करते है जैसा कि आजकल पश्चिम मे हो रहा है परन्तु ज्यों ही हम आध्यात्मिक स्वतन्त्रता और प्रकृति-उपासना के दुष्परिणामों को समझ लेते है त्यों ही यह प्रकृति हमारी गुलाम हो जाती है—

× × ×

मुझे केवल थोडे से व्यक्तियो की प्रसन्नता की चिन्ता है क्योकि समस्त देशों मे समझदार, विचार शील, न्याय प्रिय और वास्तव मे ईमानदार आदमियों की सख्या बहुत कम है। वे लोग जल्दबाजी मे और बिना विचार किए कोई फैसला नहीं दे देते हैं। वे स्वय सोचने का माद्दा रखते हैं और सम्मति बनाना जानते हैं। वे भावुकता की अपेक्षा बुद्धि और तर्क से ज्यादा प्रभावित होते हैं। बहुत से आदमियों की अपनी कोई सम्मति नहीं होती है। वे बहुधा अपने से अधिक शक्तिशाली व्यक्तियों के विचारों और भावों से प्रभावित रहते है और उन भावो और विचारों को ही ज्यों का त्यों उगल देते हैं। एक स्थान पर रिचर (Ritcher) कहता है कि बहुत से व्यक्तियो का फैसला बडा रद्दी होता है। क्या तुम बच्चों से अपनी तारीफ कराना चाहते हो ?

× × ×

मै गुणों के आधार पर आदमी की इज्जत करता हूँ जन्म के आधार पर नही, अर्थात् मेरी निगाह मे वही आदमी ऊँचा है जिसका आत्मा विकसित हो चुका है वा विकसित हो रहा है। यह शरीर, धन सपदा, मित्र सम्बन्धी और अन्यान्य सासारिक प्रिय वस्तु आज या कल नष्ट हो जायगी परन्तु हमारे कर्म्मो का लेखा पीढी दर-पीढ़ी कायम रहेगा। इस लिए हमारे कर्म्म ऐसे होने चाहिएँ जो इस जगत् में हमारी हस्ती को सार्थक सिद्ध करने वाले हो।

× × ×

कभी २ आदमी विपत्तियों और दुखों के बोझ से विचलित होता हुआ देख पडता है और अन्धकार के ऐसे अवसरों पर निराश हो कर सोचता है कि दयालु परमात्मा मेरा ध्यान क्यो नही करता और कभी २ प्राय ऐसे अवसरों पर इतना निराश हो जाता है कि उसे परमात्मा की सत्ता वा दयालुता में भी सन्देह होने लगता है। परन्तु यदि उसे अपने कर्मो के संग्रहालय के धुधले दर्शन भी हो जावें तो उसे सन्तोष हो

बच्चा

श्री प्रो० बी०आर० अग्रवाल के विचारों के आधार पर

सम्पत्ति अथवा स्वतन्त्र शक्ति

मनुष्य जाति की शिक्षित और अशिक्षित जातियों का बच्चे के प्रति जो व्यवहार रहा है उससे जाहिर है कि पैत्रिक प्रेम शताब्दियों से विकसित होना चला आरहा है और वर्तमान में बच्चा की शिक्षा और उनके कल्याण और सुधार की दिलचस्पी की उग्रता के अध्ययन से भी स्पष्ट है कि निकट भविष्य में पैत्रिकप्रेम और भी ज्यादा विकसित होगा।

जंगली जातियों के बच्चों के प्रति रुख को ध्यान में लाना भी दुखदायी है। यह रुख निर्दयता की करुण कहानी है। इस निर्दयता को समझने के लिए हमें याद रखना चाहिए कि बच्चा माता-पिता की मिल्कियत समझा जाता था और इस लिए माता-पिता अपनी अन्य सम्पत्ति के समान उसका जो चाहते थे बनाते थे।

न्यू गाइना के पापुआ लोग अपने बच्चो को मारकर खा जाते हैं। आस्ट्रेलिया की कुछ जगली जातियों में यह रिवाज है कि माता अपने पहले बच्चे को मारकर खाजाती है। उनका विश्वास है कि बाद के बच्चो के प्रसव के लिए ऐसा करने से माता मजबूत हो जाती है।

१७८३ ईस्वी के दुर्भिक्ष में जापान में बच्चे मारे तथा खाए गए थे।

कुछ जातियों में दुर्भिक्ष अथवा आर्थिक सकट की बनिस्बत बच्चों के मारे तथा खाए जाने के लिए धर्म ज्यादा जिम्मेवार रहा है। आदि कालीन इस्टराइल लोग अपने पहले बच्चे की बलि चढ़ादेते थे और देवता पर बलि चढ़े हुए बच्चेको वे लोग खा जाया करते थे।

जाय कि परमात्मा के अटूट नियम के अनुसार उसके साथ न्याय हो रहा है।

× × ×

पिता का अपने बच्चों को प्यार करना स्वाभाविक है और हम सब के पिता परमात्मा का हमे अधिक प्यार करना औरहमारे कल्याणपर ध्यान रखना और भी ज्यादा स्वाभाविक है। सच बात यह है उससे पृथक् हमारी हस्ती कोई अर्थ नहीं रखती है। हम सब उसमें हैं और वह हम में है। वह सर्व्व व्यापक, सर्व शक्तिमान् और सर्वज्ञ है। अपने प्रति मनुष्य के जरा से खयाल को भी वह देखता और स्वीकार करता है और उस के प्रति खिंचने के हमारे जरा से भी प्रयत्न का बहुमूल्य उपहार देता है। जब मनुष्य मन और बुद्धि के चक्र से निकल कर बाहर से भीतर की तरफ जाता है तब ही हृदय मन्दिर में परमात्मा के दर्शन होते हैं।

भारतवर्ष में बच्चे की बलि

भारतवर्ष में अभी कुछ वर्षों तक पहले बच्चे को गगा की भेंट चढ़ाने का रिवाज था। आज भी यह प्रथा भूतकाल की यादगार के रूप में रुढ़ि के रूप में बड़े पैमाने पर जीवित है और बंध मेलों के अवसर पर देखो जासकती है। पीले कपड़े पहने हुए बच्चा माता-पिताओं के द्वारा गंगा में फेंका जाता है। निस्सन्देह पंडा बच्चे को डूबने नही देता है और कुछ नकदी लेकर गगा के प्रतिनिधि की हैसियत मे बच्चे को माता-पिता को वापस कर देता है।

देवी देवताओं को बच्चों की बलि चढ़ाए जाने की बात सर्वथा भूतकाल की वस्तु नहीं है। बच्चों की धार्मिक बलि के वास्तविक समाचार अब भी कभी२ प्रकाशमे आते रहते हैं। बच्चोंके मारे तथा खाए जाने से कम भयकर बच्चों के बध की प्रथा है। बच्चों के बध का सबसे प्रबल हेतु भोजन की कमी की वजह से आबादी को कम करने की आर्थिक ज़रूरत थी।

बाल-हत्या सब प्रकार के होले-बहानों से व्यापक रूप में प्रचलित रही है। अफ्रीका में नव-जात बच्चों को दांतों से मार दिया जाता था। मैडा गास्कर में यदि कोई बच्चा वर्षा या तूफान के अवसर पर पैदा होता था तो वह मार दिया जाता था बसुटी नामक जाति में यदि बच्चा पैरों के बल, बाडई जाति में सिर के बल पैदा होता था तो मार दिया जाता था। इन सब बहानों के मूल में माता-पिता की दुर्बल भावना ही देख पड़ती है, जिसके वशीभूत होकर माता-पिता बच्चे को अवाञ्छनीय भार समझते हैं।

युद्धप्रिय जातियों में बच्चियों का बलि चढाई जाती रहीहै। शादी के अवसर पर भारी दहेज सेबचने के लिए प्राय लडकिया मारदी जाती थीं।

लड़की का कितना कम मूल्य था यह बात फ्रैक्स के कानून से भली भाति जाची जासकती है। इस कानून के अनुसार बाल-हत्या का दँड केवल जुर्माना था। १२ वर्ष की उम्र से कम की लड़की की हत्या का दँड २०० माउम (सिक्का विशेष) था और १२ वर्ष की उम्र के बाद ६०० साउस था।

चीन में बाल-हत्या बहुत प्रचलित रही है। १६५६ मे लड़कियों को डुबाने की प्रथा के विरुद्ध शाही फरमान जारी हुआ था।

बच्चा सौदेकी वस्तु

बाल हत्या के बाद दूसरी निर्दयी प्रथा नफे के लिये बच्चों के बेचने की प्रथा है। प्राचीन रोम के कानून ने पिता को अपने बच्चों के ऊपर पूर्ण अधिकार दिये हुए थे। वह उन्हें मार सकता था या बतौर गुलाम के बेच सकता था। प्राचीन स्मेरियन में बच्चों की बिक्री जायज और बहुत प्रचलित थी।

आर्थिक कारणों के कारण लडकियों ने अपने माता पिता के द्वारा बहुत मुसीबतें बर्दाश्त की हैं। यदि आर्थिक दृष्टि से माता पिता के लिए लड़कियां बेकार होती थी तो वे मारदी जाती थीं और यदि वे किसी मतलब की होती थीं तो वे वेश्या वृत्ति अथवा दूसरों की पत्नी बनने के

लिए बेच दी जाती थीं। इस पर भी मुझे आश्चर्य है कि अपनी लड़कियों को देवदासियों के रूप में अर्पण करने वाले माता-पिताओं को कोई लाभ होता है या नहीं ?

योरूप मे ७ वीं शताब्दी के अन्तिम चरणों तक बच्चे अन्न प्राप्ति की आवश्यकतावश बेच दिये जाते थे, और बिक्री के लिए बच्चे चुराये भी जाते थे। १६ वी और १७ वीं शताब्दी मे योरूप मे बच्चे सड़क के दाये बांये छोड़ दिये जाते थे या कूड़े करकट मे फेंक दिये जाते थे। उससे भी बुरी प्रथा भिखमगो के रूप में व्यवहृत होने के उद्देश्य से बच्चों को कुरूप बना देने की थी।

उसके बाद हम बच्चो को काम पर लगाने के काल पर आते हैं। योरुप म फैक्टरियों में बच्चों को २०-२० घण्टे तक प्रतिदिन काम पर लगाया रक्खा जाता था। यदि वे भाग जाते थे तो पकडे जाने पर पीटे जाते थे और यहा तक कि उनके पैरों मे जञ्जीरे डालदी जाती थी। वे बड़े भयङ्कर अस्वास्थ्यकर स्थानों मे रक्खे जाते थे और उनकी मृत्यु संख्या बहुत बढी-चढी थी।

नैपोलियन ने १८११ ई० मे असहाय, परित्यक्त और अनाथ बच्चों के सम्बन्ध मे राज्य के कर्त्तव्य निश्चित किये थे। यह आन्दोलन जारी रहा और वर्त्तमान वर्षों में इसने बहुत उन्नति की है। अब बच्चों पर माता पिता का वह अधिकार नहीं है जो पहले रह चुका है। अब यद्यपि माता पिता का उनके ऊपर संरक्षण है किन्तु इस सरक्षण के द्वारा उनपर अमानुषिक अत्याचार नहीं होसकते हैं। बच्चों द्वारा मेहनत मजदूरी अब बिल्कुल निषिद्ध करार देदी गई है, यदि आज्ञा है तो कतिपय अस्वास्थ्य कर गन्दे और अति परिश्रम के कार्य वर्जित हैं। उनकी देख रेख और रक्षण के लिए माता पिता जिम्मेवार ठहराये गये हैं। उनका प्रारम्भिक शिक्षण भी अनिवार्य होता जारहा है।

बच्चों के रक्षण के प्रति बढ़ती हुई दिलचस्पी

आज कल बच्चे अपने कृत्यों के लिए पूर्णतया जिम्मेवार नही समझे जाते है और इसी लिए उन के कृत्य जवानों के कृत्यों जैसे दण्डनीय नहीं हैं। बच्चों के अपराधों के विचार के लिए विशेष अदालतों की सृष्टि हुई है। मैडिकल स्कूलों में बच्चों की बीमारियों के लिए गद्दिया स्थापित हुई हैं। मनोविज्ञान ने एक विभाग को विकसित करके बच्चों के दिमाग के अध्ययन के लिए सुर-क्षित करदिया है। सार्वजनिक क्रीडा क्षेत्र, बच्चे के खेलने के अधिकारो की स्वीकृति की सूचना देरहे हैं। बच्चों की शिक्षा और उनके मानसिक विकास के सम्बन्ध में बहुतसी पुस्तकें लिखी जाचुकी है और लिखी जारही हैं। बच्चे की बुद्धि का वैज्ञानिक परीक्षण किया जाचुका है। उनके मनोरञ्जनों और रुझानों का ठीक २ अध्ययन करके लिया गया है।

उनके जीवन से थकान और रुक्षता दूर की जारही है। यदि वर्त्तमान शताब्दी 'बच्चे की शताब्दी' के नाम से पुकारी जा रही है तो इस में कोई आश्चर्य की बात नही है।

हम उस नूतनता की कल्पना कर सकते हैं जो बच्चों के प्रति माता पिता के प्रेम में आने वाली है। निकट भविष्य में माता पिता

अपने बच्चे को न सम्पत्ति ही समझेंगे और न कुत्ते बिल्ली ही समझेंगे बल्कि एक सत्ताधारी जीव समझेंगे जिसका अपना व्यक्तित्व होगा। माता पिता अपने बच्चे के बचपन के मनोविज्ञान का अध्ययन करना अपना जरूरी कर्त्तव्य समझेंगे और अध्ययन के परिणामों के प्रकाश में बच्चे के प्रति अपने सम्बन्ध निश्चित करेंगे जिससे कि बच्चा शरीर के और मानसिक स्वास्थ्य के लाभों से निश्चिन्त होजाय और बाद में दिमाग और शरीर दोनों के विकास और स्वास्थ्य के भोग के लिए भी निश्चिन्त होजाय ।

——

ब्रिटिश भारत के ३ महत्वपूर्ण सामाजिक कानून

'सार्वदेशिक' के पाठकों के लाभार्थ हिन्दू स्त्रियों के जायदादी अधिकारों का ऐक्ट, आर्य मैरेज ऐक्ट तथा शारदा ऐक्ट तीनों एक स्थान पर दिए जाते हैं। पहले दोनों ऐक्ट ताज़ा हैं जो अभी हाल में असेम्बली से पास हुए हैं और १७ अप्रैल १९३७ के गजट आव् इंडिया में सरकार द्वारा प्रकाशित भी हो गए हैं जिसका अर्थ यह है कि १७ अप्रैल से ये लागू हो गये हैं। शारदा ऐक्ट पुराना ऐक्ट है जो पिछले १ अप्रैल १९३० से प्रचलित है। यह ऐक्ट अंग्रेज़ी में इस समय नहीं दिया जा सका इस का हमें खेद है। यदि आवश्यक हुआ तो फिर कभी दे दिया जायगा। —सम्पादक

Act No XVIII of 1937

An Act to amend the Hindu Law governing Hindu Women's Rights to Property

Whereas it is expedient to amend the Hindu Law to give better rights to women in respect of property It is hereby enacted as follows –

Short title and extent

1 (1) This Act may be called the Hindu Women's Rights to Property Act 1937

(2) It extends to the whole of British India including British Baluchistan and the Sonthal Parganas but excluding Burma

Application

2 Notwithstanding any rule of Hindu Law or custom to the contrary, the provisions of section 3 shall apply where a Hindu dies intestate leaving a widow

हिन्दू स्त्रियों के जायदादी अधिकारों का कानून

१९३७ का १८ वा ऐक्ट

हिन्दू स्त्रियों के जायदाद सम्बन्धी अधिकारों पर लागू होने वाले हिन्दू कानून को संशोधित करने के लिए कानून

चूंकि सम्पत्ति के सम्बन्ध में स्त्रियों को और भी अच्छे अधिकार देने के लिए हिन्दू कानून का संशोधन आवश्यक है, इसलिए निम्न प्रकार कानून बनाया जाता है।

१. संक्षिप्त नाम और सीमा

१. यह कानून 'हिन्दू स्त्रियों के सम्पत्ति के अधिकारों' का १९३७ का कानून कहलायगा।

२ ब्रिटिश बलूचिस्तान और सन्थाल परगना को मिलाकर और ब्रह्मा को छोड़ कर यह कानून तमाम ब्रिटिश भारत पर लागू होगा।

२. लागू होना

धारा सं० ३ की शर्तें वहां लागू होंगी जहां कोई हिन्दू अपनी विधवा पत्नी को छोड़कर बिना वसीयत किए मर जाय भले ही हिन्दू कानून की कोई धारा या रिवाज इसके खिलाफ़ ही क्यों न हो।

Devolution of property

3 (1) When a Hindu governed by the Dayabhag school of Hindu Law dies intestate his property, and when a Hindu governed by any other school of Hindu Law or by customary law dies intestate leaving separate property, that separate property shall subject to the provision of sub section (3) devolves upon his widow along with his lineal descendents, if any, in like manner as it devolves upon a son

Provided that the widow of a predeceased son shall inherit in like manner as a son if there is no son surviving of such predeceased son, and shall inherit in like manner as a son's son if there is surviving a son or son's son of such predeceased son

Provided further that the same provision shall apply *mutatis mutandis* to the widow of a predeceased son of a predeceased son

(2) When Hindu governed by any school of Hindu Law other than the Dayabhag school or by customary law dies intestate having at the time of his death an interest in a Hindu joint family property, his widow shall, subject to the provisions of sub section (3) have in the property the same interest as he himself had

(3) Any interest devolving on a Hindu widow under the provision of this section shall be the limited interest known as a Hindu woman's estate provided however

३.जायदादका स्थानान्तरित होना वा सरकना

१ जब कोई हिन्दू जिस पर हिन्दू कानून का दाय भाग (बैंगाल मे प्रचलित) का लागू होता हो अपनी जायदाद की वसीयत किए बगैर मर जाय तो उसकी जायदाद और जब कोई हिन्दू जिस पर हिन्दू कानून का कोई दूसरा अंश या रिवाजी कानून लागू होता हो पृथक जायदाद छोड़कर बिना वसयत किए मर जाय तो वह पृथक् जायदाद उपधारा ३ की शर्तों के मुताबिक उसकी औलाद के साथ, यदि कोई हों, उसका विधवा को भी जायगी ठीक उसी प्रकार जिस प्रकार लड़के को जाती है।

पिता से पहले मरने वाले पुत्र की विधवा उसी प्रकार जायदाद की मालिक होगी जिस प्रकार पुत्र होता बशर्ते इस प्रकार के पुत्र का कोई पुत्र जिन्दा न हो और यदि इस प्रकार के पुत्र का पुत्र अथवा पौत्र जिन्दा हो तो विधवा को उसी प्रकार जायदाद मिलेगी जिस प्रकार पुत्र के पुत्र को मिलेगी।

पिता से पहले मरने वाले पुत्र के पुत्र की विधवा पर जो अपने पिता से पहले मर गया हो हूबहू एक जैसी शर्तें लागू होगी।

२ जब कोई हिन्दू जिस पर हिन्दू कानून के दाय भाग (बैंगाल) या रिवाज़ी कानून को छोड़ कर कोई दूसरा कानून लगता हो मृत्यु के समय मुश्तरका खान्दान की जायदाद मे कोई हिस्सा छोड़ कर बिना वसीयत किए मर जाय तो उसकी विधवा को उपधारा ३ की शर्तों के मुताबिक जायदाद में वह हक होगा जो स्वय उसको था।

३ इस धारा की शर्तो के आधीन हिन्दू विधवा को प्राप्त होने वाला हक 'हिन्दू स्त्री की रियासत' कहा जाने वाला परिमित (महदूद) हक होगा बशर्ते कि

that she shall have the same right of claiming partition as a male owner

XXXIX of 1925

(4) The provisions of this section shall not apply to an estate which by a customary or other rule of succession descends to a single heir or to any property to which the Indian Succession Act 1925 applies

Saving

4 Nothing in this Act shall apply to the property of any Hindu dying intestate before the commencement of this Act

बटवारे के दावे का उसे वही हक हासिल हो जो पुरुष मालिक को हो सकता है।

४. इस धारा की शर्तें उस रियासत पर लागू नही होगी जो उत्तराधिकार के किसी रिवाज़ी नियम या किसी दूसरे नियम से सिर्फ एक उत्तराधिकारी को जाने वाली हो। या किसी ऐसी जायदाद पर लागू नहीं होगी जिस पर १९२५ का इण्डियन सक्सेशन ऐक्ट (भारतीय उत्तराधिकार का कानून) लागू होता हो।

४. अपवाद

इस कानून के लागू होने से पहले अगर कोई हिन्दू बिना वसीयत किए कोई जायदाद छोड़ जायगा तो इस कानून मे से कुछ भी उस जायदाद पर लागू न होगा।

ARYA MARRIAGE VALIDATION ACT

To Recognise and remove doubts as to the validity of inter marriages current among arya samajists

Whereas it is expedient to recognise and place beyond doubt the validity of inter marriages of a class of Hindus known as Arya Samajists It is hereby enacted as follows—

Short Title and Extent

1 (1) This Act may be called the Arya Marriage Validation Act 193

(2) It extends to the whole of British India including British Baluchistan and the Sonthal Parganas, and applies also to all subjects of His Majesty within other parts

एक्ट नं० १९ सन् १९३७

आर्य्य समाजियो मे प्रचलित अन्तर्जातीय विवाहों का जायज होना स्वीकार करने और तत्सम्बन्धी शंकाओ को दूर करने के लिए।

चूंकि हिन्दुओ के आर्य्य समाजी नामक वर्ग के अन्तर्जातीय विवाह का जायज़ होना स्वीकार करने और तत्सम्बन्धी शंकाओं को दूर करने की ज़रूरत है इसलिए इसके ज़रिए नीचे लिखे मुताबिक कानून बनाया जाता है —

छोटा नाम और विस्तार

यह एक्ट आर्य्य विवाह जायज़ बनाने वाला एक्ट सन् १९३७ कहा जावेगा।

यह (एक्ट) तमाम ब्रिटिश हिन्दुस्तान को जिसमें ब्रिटिश बलूचिस्तान और सथाल परगने भी शामिल हैं, लागू होगा और हिंदुस्तान के अन्य भागों में

of India and to all Indian subjects of His Majesty without and beyond British India

सम्राट का समस्त प्रजा को और ब्रिटिश हिन्दुस्तान् के बाहर और उस पार की समस्त हिन्दुस्तानी प्रजा को भी लागू होगा।

Marriages between Arya Samajists not to be invalid

आर्य्य समाजियो का विवाह नाजायज़ नहीं होगा

2. Notwithstanding any provision of Hindu law, usage or custom to the contrary no marriage contracted whether before or after the commencement of this Act between two persons being at the time of the marriage Arya Samajists shall be invalid or shall be deemed ever to have been invalid by reason only of the fact that the parties at any time belonged to different castes or different sub-castes of Hindus or that either or both of the parties at any time before the marriage belonged to a religion other than Hinduism

बावजूद हिन्दू रीति या रिवाज के किसी विरुद्ध विधान के (हिन्दू कानून रीति या रिवाज़ कोई विधान इसके विरुद्ध रहते हुए भी) विवाहके समय आर्य्य समाजी रहने वाले दो व्यक्तियो के बीच का कोई भी विवाह चाहे वह विवाह सम्बन्ध इस एक्ट के लागू होने के पूर्व हुआ हो या तत्पश्चात हुआ हो, केवल इसी बात के कारण कि वे लोग किसी समय हिन्दू समाज के भिन्न भिन्न जाति या भिन्न भिन्न उपजाति के थे। या कि उनमें से कोई एक या दोनों ही विवाह के पूर्व किसी समय हिन्दू धर्मके सिवाय किसी अन्य धर्म के थे नाज़ायज़ नहीं होगा या कभी नाजायज था रहा हो) ऐसा नहीं माना जावेगा।

शारदा ऐक्ट

धारा १—

यह कानून सन् १९२९ का बाल विवाह निषेध कानून (Child Marriage Restraint Act 1929) कहलावेगा।

(२) इसका प्रयोग सारे ब्रिटिश भारतमें होगा जिसमे ब्रिटिश बिलोचिस्तान तथा सथाल परगने भी सम्मिलित हैं।

(३) यह ऐक्ट १ अप्रैल १९३० ई० से प्रयुक्त होगा।

धारा २, परिभाषायें:—

यदि कोई बात विषय या प्रसग के विपरीत न पड़ती हो तो इस ऐक्ट मे प्रयोग किये हुये निम्नलिखित शब्दो का अर्थ इस प्रकार होगा —

(१) बच्चा (Child) का अर्थ उस लड़के से है जो अठारह वर्ष से कम आयु का हो और उस लड़की से है जिसकी अवस्था १४ वर्ष से कम हो।

(२) 'बाल विवाह' (Child marriage) का अर्थ वह विवाह है जिसमे विवाह करने वाला लड़का,

लड़की कोई भी 'बच्चा' (Child) हो।

(३) 'विवाहसम्बन्ध करने वाले पक्ष (Contracting party) से अभिप्राय उन दोनों व्यक्तियों का है जिनका विवाह सम्बन्ध उस विवाह से स्थापित होता है।

(४) 'नाबालिग' (Minor) से अभिप्राय उस व्यक्ति से है जिसकी अवस्था १८ वर्ष से कम हो चाहे वह लड़का हो या लड़की।

धारा ३:—

बच्चे से विवाह करने वाले उस पुरुष के लिये जिसकी आयु २१ वर्ष से कम हो दण्ड —

जो पुरुष १८ वर्ष से अधिक परन्तु २१ वर्ष से कम आयु वाला बाल विवाह करेगा उसको एक हजार रुपय तक जुर्माना देने का दण्ड दिया जा सकेगा।

धारा ४ —

२१ वर्ष से बड़े पुरुष के लिये बाल विवाह करने के लिये दण्ड —

२१ वर्ष से अधिक आयु का जो पुरुष बालविवाह करेगा उसको एक मास तक का साधारण कारावास या एक हज़ार रुपया तक जुर्माना या दोनों दण्ड साथ साथ दिये जा सकेंगे।

धारा ५ —

बाल विवाह कराने के लिये दण्ड —

जो व्यक्ति बाल विवाह करेगा या करावेगा या करने की आज्ञा देगा उसको एक मास तक का साधारण कारावास या १००० रुपये जुर्माना या दोनों दण्ड साथ साथ दिये जा सकेंगे जब तक कि वह व्यक्ति यह सिद्ध न करदे कि उसके पास इस बात के विश्वास करने का कारण था कि जिस विवाह में वह भाग ले रहा है वह बाल विवाह नहीं है।

धारा ६—

बाल विवाह से सम्बन्ध रखने वाले माता, पिता या सरक्षक को दण्ड—

(१) उस दशा में जब कि कोई नाबालिग बाल विवाह करेगा तो उस व्यक्ति को, जो उस नाबालिग की निगरानी माता, पिता सरक्षक की हैसियत से या और किसी हैसियत से रखते हुये, चाहे वह निगरानी कानूनी हो या गैर कानूनी विवाह कराने के लिये कोई काम करेगा या उसके लिये जाने की इजाज़त देगा या उसके (बाल विवाह के) रोकने में अपनी असावधानी के कारण चूकेगा, एक मास तक का साधारण कारावास या एक हज़ार रुपये तक के जुर्माने का दण्ड या दोनो प्रकार के दण्ड एक साथ दिये जा सकेंगे किन्तु शर्त यह है कि किसी स्त्री को कारावास का दण्ड न दिया जावेगा।

(२) उस दशा में जब कोई नाबालिग बालविवाह कर लेगा तो इस धारा के लिये यह मान लिया जायगा, जब तक कि उसके विपरीत सिद्ध न कर दिया जावे, कि वह व्यक्ति जो ऐसे नाबालिग को निगरानी रखता है बाल विवाह को रोकने में अपनी असावधानी के कारण ही असमर्थ हुआ है।

धारा ७—

धारा ३ में कथित अपराधों में कारावास का दण्ड न दिया जायगा —

इस ऐक्ट की धारा तीन के अनुसार किसी अपराधी को दण्ड देते हुए न्यायालय को यह आज्ञा देने का अधिकार न होगा कि जुर्माना न अदा किये

जाने पर उसे किसी नियत समय के लिये कारावास भोगना पड़ेगा। यद्यपि सन् १८९७ ई० के जनरल क्लाजेज ऐक्ट की धारा ५ तथा ताज़ीरात हिन्द की धारा ६४ में इसके विपरीत लिखा है।

धारा ८—

इस ऐक्ट के अनुसार सुनवाई का अधिकार—

इस ऐक्ट के अनुसार किए हुए अपराधों की सुनवाई प्रेसीडेंसी मजिस्ट्रेट या डिस्ट्रिक्ट मजिस्ट्रेट के अतिरिक्त अन्य किसी मजिस्ट्रेट को नहीं होगा यद्यपि सन् १८९८ ई० के क्रीमिनल प्रोसीज़र कोड की धारा १९० में कुछ और दिया हुआ होवे।

धारा ९—

अपराधों की सुनवाई की विधि—

कोई अदालत इस ऐक्ट के अनुसार किए हुए जुर्मों की सुनवाई उस समय तक नहीं करेगी जब तक कि उस विवाह के होने से एक वर्ष के भीतर इस्तगासा दायर न किया जाय जिसके सम्बन्ध में अपराध किया जाना बतलाया जाता हो।

धारा १०—

इस ऐक्ट के अनुसार किए हुए अपराधों की प्रारम्भिक जांच — यदि वह अदालत जो इस ऐक्ट के अनुसार किए हुए अपराध को सुनवाई कर रही हो सन् १८९८ के क्रामिनल प्रोसीजर कोड की धारा २०३ के अनुसार इस्तगासे को खारिज न कर दे तो वह या तो स्वयं जांच करेगी या अपने आधीन किसी दर्जा अव्वल के मजिस्ट्रेट से उस कोड की धारा २०२ के अनुसार जांच करायेगी।

धारा ११—

मुस्तगीस से ज़मानत लेने का अधिकार।

मुस्तगीस के बयान लेने के बाद मुलज़िम की हाज़िरी के लिए इत्तलानामा जारी करने से पहिले अदालत किसी समय भी मुस्तगीस से सौ रु० तक का मुचलका बिला ज़मानती या मय ज़मानत के दाखिल करायेगी परन्तु वह तहरीरी वजूहात बताने पर ऐसा न भी करेगी। यह मुचलका उस मुआवज़े की अदायगी के लिए होगा जो मुलज़िम को सन् १८९८ के क्रामिनल प्रोसीज़र कोड की धारा २५० के अनुसार मुस्तगीस से दिलाया जा सकता है और यदि ऐसी ज़मानत अदालत द्वारा नियत किये हुए पर्याप्त समय के भीतर न दाखिल की जायगी तो वह इस्तगासा खारिज कर दिया जायेगा।

(२) इस धारा के अन्दर जो मुचलका लिया जावेगा वह सन् १८९८ के क्रीमिनल प्रोसीजर कोड के अनुसार समझा जायगा और उसके लिए कोड की धारा ४२ लागू होगी।

स्त्री-शिक्षा

लेखिका—
श्रीमती सरस्वती देवी

स्त्री और पुरुष मे आज दिन बराबरी के लिए एक प्रकार का युद्ध सा छिड़ा हुआ है। फलत यह दोनो के सम्बन्ध का परिवर्तन काल (Transition period) है।

परिवर्तन काल मे हमारे सामने का मार्ग बहुधा स्पष्ट नहीं रहता, उसमे एक प्रकार का कोहरा सा छाया रहता है। इस कोहरे को भेद कर ठीक मार्ग पहचानने का काम बहुत कम लोग कर सकते हैं। इस लिये इस काल मे बहुत से लोग भटक कर गलत रास्ते पर जा खडे होते है। यह समय खूब सोच विचार कर चलने का है। मार्ग निश्चित करने मे थोडा समय नष्ट करना उतावली मे पडकर गलत रास्ते पर जा पहुचने की अपेक्षा कहीं श्रेयस्कर है।

बराबरी का यह अर्थ कभी नहीं होता कि अगर आप का जोडी दार काना हैं तो आप भी अपनी एक आंख फोड डालिये। इस लिये सबसे पहिली बात यह है कि हम बराबरी का अथ ठीक ठीक समझले। आज कल बराबरी का अर्थ समझने मे भी भारी गडबड़ी मची हुई है।

एक सिहांसन पर बैठे हुए दो व्यक्तियो में भी कुछ न कुछ अन्तर रहता है। एक का जो वाम कर है दूसरे का वही दाहिना हाथ है। वास्तव मे इस संसार में ही आदमी या दो वस्तुएँ पूर्ण रूप में बराबर या समान हो ही नहीं सकती।

स्त्री और पुरुष में जहा २ मनुष्यता की दृष्टि से बात आ पडे वहा तो हम उन्हे अवश्य ही बराबरी का स्थान देने के लिये तैयार हैं। मनुष्य की हैसियत से हम संसार में दोनो का स्थान बराबर है। कोई एक दूसरे से छोटा या बडा नही। दोनो एक ही आत्मा के प्रकाश है। दो पहलू है। लेकिन दोनों के कार्य क्षेत्र अलग है। दोनो के धर्म एव प्रकृति मे अन्तर है।

फिलहाल तो हमे प्रचलित प्रकृति के सामने सिर झुका कर उसकी व्यवस्था स्वीकार करनी पड़ेगी। और पुरुष के लिये योग्य पिता तथा स्त्री के लिये योग्य माता बनने का साधन जुटाना होगा।

एक दल इस विचार का भी है कि स्त्रियां सन्तान तो उत्पन्न अवश्य करें, लेकिन क्या हर्ज है यदि पुरुष सन्तान के लालन पालन मे अधिक समय बितावें, किन्तु यह विचार भी ठीक नही।

सन्तान को दूध पिलाने की व्यवस्था पुरुष से न होगी। इसके अलावा सन्तान पालन मे जिस प्रेम की आवश्यकता है, वह प्राकृतिक नियम के अनुसार माता मे पिता की अपेक्षा अधिक है। एक तीसरी बात और भी है। यदि पुरुष सन्तानपालन के लिये घर मे रुक जाय तो रोज़ी कौन कमाये? क्योकि गर्भादि प्राकृतिक कारणो के कारण स्त्रियां इसे कर नहीं सकतीं।

शिक्षा के सम्बन्ध मे भी हमें इस नियम को ध्यान में रखना होगा। मनुष्यता के नाते यह मान लेने पर भी कि दोनों बराबर हैं, तथा दोनों को शिक्षा पाने का बराबर हक है। हमें उसी शिक्षा की व्यवस्था करनी

पड़गी जिससे पुरुष योग्य पिता बन सके। धनोपार्जन कर सके तथा स्त्री योग्य गृहिणी एवं माता बने।

यहां पर हम पुरुषों की शिक्षा का विचार न करेंगे करेंगे केवल स्त्रियों का लेकिन यह जरूरी होगा कि हम प्रचलित प्रणाली की समालोचना करते हुए यह देखें कि उसका पुरुषों पर क्या असर हुआ है।

यह बात प्राय निर्विवाद सिद्ध हो चुकी है कि विदेशी शासन द्वारा दी जाने वाली शिक्षा हमें मनुष्य नहीं बना रही है। हमारे मानवी गुणों का विकास नहीं कर रही है। वरन वह हमारी राष्ट्रीय विशेषताओं को हमारे जीवन की असलियत को धीरे २ मिटा रही है। एक बात और है। बालकों को दी जाने वाली आजकल की शिक्षा में प्रधान दोष यह है कि प्राथमिक तथा माध्यमिक शिक्षा की अपेक्षा शुरू से ऊँची शिक्षा का प्रयोजन अधिक है।

राष्ट्रीय सम्पत्ति अथवा प्रबन्ध का यदि सबको समान अधिकार माना जाय तो यह मानना होगा कि न्याय की दृष्टि से पहली बात तो यह जरूरी है कि सब के लिये प्राथमिक शिक्षा का प्रबन्ध होने के बाद यदि द्रव्य बच जाय तो माध्यमिक शिक्षा तथा उसके बाद सुविधा होने पर तब कहीं ऊँची शिक्षा का नम्बर आना चाहिये।

ऊँच शिक्षा से एक दूसरी हानि यह भी है कि जितने लोग ऊँची शिक्षा प्राप्त कर निकलते हैं उनके लिये हम काम नहीं दे सकते।

सुधारक चाहे कितना ही वावेला मचावे ऊँची शिक्षा प्राप्त कर लोग माली धोबी आदि का छोटा काम करना स्वीकार न करेंगे।

लेकिन राष्ट्र को तो हर तरह की जरूरत है। उसे तो मोची भी चाहिये चमार भी चाहिये और भंगी भी चाहिये। वर्तमान शिक्षा राष्ट्र में यह असाम्य ला रही है जिससे प्रत्येक दशा के लोगों में असन्तोष फैल गया है।

प्रत्येक आदमी शिक्षा के लिये दौड़ता है जिससे सभी दशा में योग्य मनुष्यों की कमी हो रही है और शिक्षितों में बेकारी के कारण असन्तोष बढ़ रहा है।

आजकल की ऊँची शिक्षा का यह भी दोष है कि जो जितनी शिक्षा ग्रहण करेगा गुजर के लिये उसे उतना ही अधिक द्रव्य चाहिये। पर प्रश्न यह है कि द्रव्य आयगा कहां से?

स्त्री शिक्षा पर आयोजन करते समय हमें इन गलतियों से बचने का ध्यान रखना होगी। लेकिन हमारे कहने का तात्पर्य यह कदापि नहीं है कि स्त्रियों के लिये ऊँची शिक्षा की मनाई रहे।

इसके अलावा कई कामों के लिये तो उच्च शिक्षा प्राप्त महिलाओं की बड़ी आवश्यकता है। मसलन स्त्रियों को शिक्षा के लिये हो प्रोफेसर चाहिये लेकिन किसी राष्ट्रीय आयोजना के समय हम अपवादों पर नहीं वरन साधारण बातों पर दृष्टि रखनी चाहिये। हम ऊँची शिक्षा की व्यवस्था करनी होगी लेकिन ध्यान रखना होगा कि अधिकांश बालिकाओं को साधारण शिक्षा (प्राथमिक तथा माध्यमिक) की आवश्यकता है। एम० ए० डाक्टर बनने की नहीं। स्त्रियों के लिये अपनी भाषा में ही शिक्षा होनी चाहिये।

एक तो साधारणतः विदेशी भाषा में दक्षता प्राप्त करने का उनके लिये जरूरत ही नहीं दूसरे जब हम इस बात को भी मान चुके हैं कि बालकों की

विदेशी भाषा का माध्यम हानि पहुंचा रहा है तब बालिकाओं के ऊपर यह भार लादने से क्या लाभ ? हां ! अवश्य ही जिन महिलाओं को अंग्रेजी में खास दखल रखने की ख्वाहिश हो वे इसको अलग विषय लेकर पढ़ें । अब रही विषय की बात—

बालिकाओं को कौन कौन विषय पढ़न पर जोर दिया जाय यह विषय उपरोक्त सिद्धान्त को मान लेने पर गौण एवं सरल हो जाता है । इस पर मतभेद भी अधिक न होगा अगर होगा भी तो आगे चल कर एक राह निकल आयेगी। साधारण तौर पर बालिकाओं के लिये धर्म, मातृभाषा, गृह विज्ञान, धातृ विद्या, संगीत, गणित चरित्र गठन एवं व्यायाम ये विषय आवश्यक होंगे। गौण विषय में जिनमें १ या दो लेना चाहिये इतिहास भूगोल तथा और दो चार विषय रख दिये जायेंगे।

——

हिमालय प्रदेश में वैदिक धर्म प्रचार की आवश्यकता

[हमारे विशेष सम्वाददाता द्वारा]

[पाठकों से हम इस लेख को ध्यानपूर्वक पढने का अनुरोध करते है। बङ्गाल की प्रतिनिधि सभा तथा दार्जिलिंग की आर्यसमाज तथा वहा के आर्यपुरुषो का ध्यान इस ओर विशेषतया आकर्षित करते है। यदि कोई आर्य वकील महोदय उस प्रान्त मे जाकर बस जाना चाहे तो वे मन्त्री सावदेशिक सभा से पत्र-व्यवहार करे । स०]

दार्जिलिंग का नाम लगभग सभी शिक्षित अशिक्षित व्यक्ति जानते हैं। यद्यपि यह बगाल की ग्रीष्म ऋतु की राजधानी है पर यहा के निवासियो मे बगाली नाम मात्र को हैं और असली निवासी नैपाली हैं। दार्जिलिंग जिले के अन्तर्गत तीन सबडिवाजन हैं— करसग, सीलीगोडी, और कालिम्पोङ्ग । सीलीगोडी तो प्रसिद्ध रेलवे स्टेशन है और व्यापार का केन्द्र भी। यही से हिमालय प्रदेश मे रेल या मोटरें जाती है। दार्जिलिंग और करसग तक तो रेल और मोटर जाती है और कालिम्पोङ्ग, जो सीलीगोडी (E B Rulway) से लगभग ४० माल का दूरी पर है मोटरे जाती हैं। यद्यपि गीलीखाला तक H D H Ry रेल ले गई है परन्तु आगे ११ माल तक मोटरो को छोड़कर वहा जाने का कोई उपाय नही। यह सारा प्रान्त हिमालय पर्वत पर स्थित है।

यहा की जनता

हिमालय प्रान्त की जनता निर्धन है। यहां के लोग नैपाली हैं। यहा के रास्ते तिब्बत, भूटान आदि का मार्ग होने से भोटिये और तिब्बत के लोग भी बस गये हैं। भोटियो के झुण्ड के झुण्ड जाडो में यहां आ जाते हैं और जाडो में प्राय यहीं रहते है। ये लोग नैपालियों की अपेक्षा सपन्न हैं और इन्हीं के द्वारा यहा के लोगो का व्यापार चलता है। ये लोग प्राय बौद्ध हैं। ईसाइयो के प्रचार के कारण कुछ लोग ईसाई भी हो गये हैं।

यहा जमीन खास महल की है और अधिकारी मनमाना कर वसूल करते हैं। ये लोग नैपाली भाषा बोलते हैं नैपाली और हिन्दी की लिपि एक सी है शब्द भी अधिकाश मिलते जुलते है। इसीलिये हिन्दी का कुछ प्रचार बढा है। यहा बिहारी और मारवाडी लोग भी बहुत बड़ी सख्या मे बस गये है और यहा का व्यापार इन्ही लोगो के हाथ मे है। नैपाली अधिकाश अशिक्षित है पर मिशनरियों के उद्योग से यहा बहुत से स्कूल कालिज खुल गये है और नवयुवको में पश्चिमीय शिक्षा और सभ्यता तेजी से फैल रही है। सामाजिक अवस्था तो अच्छी है, स्त्रियों मे परदा बिल्कुल नही है और छूतछात तो नाम को भी नहीं है। मासाहार आम है और घर घर लोग मुर्गी पालते है और बहुत से लोग सूअर भी पालते है।

मिशनरियों का प्रचार

मिशनरी लोग बहुत दिन हुए इस प्रान्त मे आये

ये और उन का बहुत बड़ा विस्तृत प्रचार कार्य है। ये लोग अपने मिशन में सफल भी हुए हैं। आर्य समाज तो केवल दार्जिलिंग में है। वहां के कुछ उद्योगी कार्यकर्ताओं ने सन् १८८२ में आर्य समाज की स्थापना की थी। उसके बाद कुछ दानी महानुभावों की कृपा से आर्यसमाज का अपना भवन बन गया है और एक कन्या पाठशाला भी है। एक उत्साही नैपाली ने सत्यार्थप्रकाश के प्रथम ११ समुल्लास का नेपाली अनुवाद करा के प्रकाशित भी कराया था। परन्तु यह सब होते हुए भी ये लोग मिशनरियों के प्रचार को रोकने में सफल नहीं हुए हैं। शायद इन लोगों का ध्येय भी यह नहीं है। हम यह भी ज्ञात हुआ है कि आर्यसमाज भवन दार्जिलिंग की वहां के लोग निजी सम्पत्ति बनाने की फिक्र में है। मिशनरियों ने प्रत्येक ग्राम में एक पाठशाला खोली है। प्रत्येक मेले और हाट में ये लोग प्रचार कार्य करते हैं और लोगों को ईसाई बनाते हैं। इस समय अकेले कालिम्पोङ्ग में इनकी कई संस्थाएं हैं। यह छोटी जगह है फिर भी यहां एक इण्टरमिडियेट कालिज, लड़कों का हाई स्कूल, ट्रेनिङ्ग स्कूल, लड़कियों का स्कूल और दस्तकारी स्कूल है। इसके अतिरिक्त एंग्लो इण्डियन लड़के लड़कियों के लिए 'होम्स' नामक संस्था है और केवल लड़कियों के लिए कन्वेन्ट स्कूल है। दो-तीन अच्छे अस्पताल हैं जो मुफ्त दवा देते हैं। मिशनरी अपने स्कूलों में बाईबिल की शिक्षा पर जोर देते हैं और स्कूल में दो एक अध्यापकों को छोड़ कर ईसाई ही रखते हैं। इनमें बहुत से भद्रपुरुष और महिलाएं भी हैं जो बहुत दिनों से अपना धर्म छोड़ बैठे हैं। मिशनरी सरकारी सहायता अपनी सेवा और धन के बल पर ईसाइयत का प्रचार कर रहे हैं। यही कारण है हिन्दू तो यहां दिन २ कम होते जा रहे हैं और शेष या तो ईसाई हैं या बौद्ध। मिशन स्कूलों से निकले नवयुवक हिन्दू होते हुए भी ईसाई हैं।

हम क्या करें ?

आवश्यकता यह है कि आर्यसमाजें ऐसे स्थानों में प्रचार की उपयोगिता को समझें और सार्वदेशिक सभा इस प्रान्त की ओर विशेष ध्यान दे। यहां कुछ उपदेशक भेजकर संगठित रूप से प्रचार कार्य किया जाय। अच्छा हो इन सबका नियन्त्रण एक वकील के हाथ में हो जो कानून से अभिज्ञ हो और वकालत के द्वारा गरीब जनता की सेवा करे और शेष समय में प्रचारकार्य का संगठन करे। इस कार्य के लिए बड़ा तत्परता की आवश्यकता है। यहां बहुत दिनों से स्वामी सच्चिदानन्द जी हिन्दू सभा तथा शुद्धि के द्वारा अपने धर्म की रक्षा में तत्पर हैं। आवश्यकता इस बात की है कि लोग उनका हाथ बटावें। सेठ जुगलकिशोर जी बिड़ला उनको ४०) मासिक सहायता भेजते हैं। यदि वे या और कोई दानी महानुभाव इसी प्रकार इस पुनीत कार्य में सहयोग दें तो बहुत से बिछुड़े भाई बहनों को पुनः हिन्दू धर्म में दाखिल किया जा सकता है, पर केवल बातों से काम नहीं चलेगा। परिश्रमी और दृढ़ व्यक्तियों को इस प्रान्त में निश्चित रूप से रहना होगा और यहीं अपना घर समझकर काम करना होगा और ईसाइयों के उन गुणों को अपनाना होगा जिन के कारण वे लोग अपने कार्य में कृतकार्य हुए हैं। यहां की शिक्षित जनता में आर्य समाज के अंग्रेजी साहित्य का वितरण और अशिक्षितों में नैपाली का

साहित्य समालोचना

सन्ध्या रहस्य

लेखक—श्री प्रो० विश्वनाथ जी विद्यालङ्कार वेदोपाध्याय गुरुकुल काङ्गडी।

प्रकाशक—मुख्याधिष्ठाता गुरुकुल कांगडी। पृष्ठ संख्या १६६ मूल्य १)

यह उत्तम पुस्तक गुरुकुल स्वाध्यायमञ्जरी के अष्टम पुष्प के रूप में इस वर्ष गुरुकुल कांगड़ी की ओर से प्रकाशित की गई है। इसके द्वारा वैदिक सन्ध्या विषयक साहित्य में एक प्रशंसनीय वृद्धि हुई है। पुस्तक लेखक वेदों के सुप्रसिद्ध विद्वान् हैं उन्होंने मनसा परिक्रमा के मन्त्रों पर ज्योतिष तथा विज्ञान शास्त्र की दृष्टि से विशेष प्रकाश डालने का प्रयत्न किया है, जिसमें पाठकों को बहुत सी नई बातें ज्ञात होंगी। उपस्थानमन्त्रों की भी इस पुस्तक में बड़ी उत्तम व्याख्या की गई है। "उद्वयं तमसस्परि स्वः पश्यन्त उत्तरम् देवं देवत्रा सूर्यमगन्म ज्योतिरुत्तमम्।" की व्याख्या करते हुए लेखक महोदय ने ठीक लिखा है कि "शन्नो देवी" मन्त्र से सन्ध्या आरम्भ कर इस प्रथम उपस्थान मन्त्र पर पहुंच कर उपासक को वास्तव में परमात्मा के दर्शन की अनुभूति हो जानी चाहिये तब समझना चाहिये कि उपासक सन्ध्या कर रहा है और उसका मन सन्ध्या में लगा हुआ है। हज़ारों सन्ध्या करने वालों में से कोई शायद ही ऐसा सौभाग्यशाली उपासक होगा जिसे कि इस मन्त्र के जाप के समय तक परमात्मा का दर्शन हो जाता हो। इस मन्त्र के जाप के समय तक भक्त के मन की ऐसी अवस्था हो जानी चाहिये कि 'वह और उसका प्रभु' मानो एक दूसरे के सामने सामने होकर भक्ति का उपहार दे सकें और ले सकें।' (पृ० १२१)

इस प्रकार यह पुस्तक सम्पूर्णतया अत्यन्त उपयोगी निर्देशों से पूर्ण है पर 'संभवत.' और 'प्रतीत होता है" का अत्यधिक प्रयोग जो सुयोग्य लेखक महोदय की नम्रता का भी सूचक हो सकता है पाठकों को ज़रूर खटकता है। 'प्रतीची दिग्वरुणो रक्षिता' की व्याख्या में "वह वरुण जो कि पृदाकु है अर्थात् Vernal Equinox या वसन्त सम्पात है और जो कि हिड्रा (Hydra) पर किसीसमय होता था, रक्षक था—रक्षा करने वाला था।" इत्यादि वाक्य वैदिक ईश्वरीय ज्ञानवाद की दृष्टि से अत्यन्त विचित्र तथा आक्षेप योग्य हैं। आशा है योग्य लेखक महोदय इनकी सुसम्बद्ध तथा सार्वकालिक व्याख्या का प्रयत्न फिर करेंगे क्योंकि यह व्याख्या वेदों की एक विशेषकालिकता की ध्वनि देती हुई प्रतीत होती है और सन्तोषजनक नहीं है।

एक और बात जिसकी ओर मैं विशेष रूप से सुयोग्य लेखक महोदय का ध्यान आकर्षित करना चाहता हूं और जो कायजनता को भ्रम में डालने

अनुवाद वितरण मुख्य कार्य है। फिर स्थान २ पर आर्यसमाजों की स्थापना और उसके कार्य को स्थायी रूप देने के लिए कोई संस्था खोलना भी आवश्यक होगा यदि अब भी हम न जागे तो अन्त में हमें पछताना पड़ेगा।

—०—

वाली है, यह भूमिका पृ० १७ में की गई यह स्थापना है कि "यह लखनऊ वाली 'सन्ध्योपासनादि पञ्चमहायज्ञविधि' महर्षि दयानन्द की रचित है। इस पुस्तक की लेख शैली ऐसी है जिससे निश्चय होता है कि यह पुस्तक ऋषि द्वारा ही लिखी गई है।"

इसी प्रसङ्ग में सुयोग्य लेखक महोदय ने स्वयं निर्देश किया है कि परन्तु अगले पृष्ठपर 'श्री गणेशाय नमः' लिखा है। ऋषिकृत किसी पुस्तक में 'श्रीगणेशाय नमः' नहीं लिखा मिलता अपितु सत्यार्थप्रकाश में ऐसे मङ्गलाचरणों का ऋषि ने खण्डन किया है। इससे प्रतीत होता है कि यन्त्रालय के व्यक्तियों ने अपनी पौराणिक प्रथा के अनुसार यह नमस्कार छाप दिया है।" (पृ० १७)

मुझे ऐसे प्रतीत होता है कि लेखक महोदय ने इस 'सन्ध्योपासनादि पञ्चमहायज्ञ विधि' नामक पुस्तक को सम्पूर्णतया पढ़ने का कष्ट नहीं उठाया अन्यथा उन्हें कभी उपर्युक्त भ्रामक स्थापना को करने का साहस न होता। इस समालोचना को लिखते हुए उपर्युक्त पुस्तक मेरे सामने विद्यमान है उस में सैंकड़ों अवैदिक तथा ऋषि दयानन्दके मन्तव्यके विरुद्ध बाते हैं। उसके पृ०४पर लिखा है 'गायत्र्या मन्त्रेणार्घत्रयं सूर्याभिमुखं प्रक्षिप्य पर ब्रह्म प्रार्थयेत" यह गायत्री मन्त्रसे तीन अर्घ सूर्यके सन्मुख फैंकना ऋषिके मन्तव्यके अनुकूल नहीं, यह सब जानते हैं। विशेषतः संवत् १९३९ वा जुलाई सन् १८८२ में सत्यार्थप्रकाश के लिखने के भी पश्चात् ऋषि ने ऐसा लिखा है, यह सर्वथा मानने योग्य बात नहीं। इसमें परिक्रमामन्त्र "ओ ...गत नमः' ओ सारस्वताय नमः" 'ओं कुबेराय नमः' आदि लिखे हैं जो वैदिक तथा प्रामाणिक आर्ष वाक्य नहीं हैं और जिनका वैदिक प्रेस अजमेर में छपी पञ्चमहायज्ञ विधि से भेद अत्यन्त स्पष्ट है। इसके अलावा और भी बहुत से उद्धरण दिए जा सकते हैं।

ऐसे अवैदिक ऋषि मन्तव्य विरुद्ध पौराणिक भावों के प्रतिपादक ग्रन्थ को महर्षि दयानन्दकृत बतलाकर श्री प० विश्वनाथ जी ने बड़ी घोर अक्षन्तव्य भूल की है। यद्यपि मेरा दृढ़ विश्वास है कि सारी पुस्तक को पढ़ने का कष्ट न उठाने से ही उन से ऐसी भूल हो गई है। जिसका यदि स्वयं उन्होंने तत्काल प्रामाणिक पत्रों में स्वीकार करके अपनी उपर्युक्त स्थापना को स्पष्ट शब्दों में वापिस न लौटाया तो उसका बड़ा भयङ्कर परिणाम होगा और पौराणिक भाइयों को ऋषि दयानन्द के नाम से अपनी पौराणिक कल्पनाओं के समर्थन का अवसर मिलेगा। इस प्रसङ्ग में यह बात भी उल्लेखनीय है कि मेरे तथा प० चन्द्रभानु जी के ध्यान आकर्षित करने पर श्रीमती सार्वदेशिक सभा देहली ने इस 'सन्ध्योपासनादिपञ्च महायज्ञ विधि' के विषय में पूरी जांच कराई थी और अपने एक प्रतिनिधि को इस कार्यार्थ लखनऊ भेजा था। इस जांच के परिणाम स्वरूप प्र० सभा ने एक घोषणा 'सार्वदेशिक' तथा अन्य पत्रों में प्रकाशित कराई थी जिसमें स्पष्ट किया था कि यह सध्या श्री स्वामी जी कृत नहीं है। इस ओर श्री प० विश्वनाथ जी का ध्यान आकर्षित करते हुए मैं उनसे सानुरोध निवेदन करूंगा कि वे अपनी प्रमादजनित किन्तु भयङ्कर भूल के लिये खेद प्रकाशित करते हुए उपर्युक्त स्थापना को स्पष्टतया वापिस ले लें। आशा है सत्य प्रेमी श्री प० विश्वनाथ जी ऐसा करने में ज़रा भी सकोच व विलम्ब न करेंगे

धर्मदेव विद्यावाचस्पति
बगलौर

विविध पत्र-पत्रिकाएँ

आर्य्यमित्र 'कार्यकर्त्ता क्यों नहीं मिलते' शीर्षक से लिखता है—

आये दिन यह प्रश्न उठता रहता है कि आर्य संस्थाओं को सद्भावना पूर्वक काम करने वाले व्यक्ति क्या नहीं मिलते। गुरुदत्त और लेखराम क्यों नहीं पैदा होते। प्रश्न का उत्तर सीधासादा और सुस्पष्ट है। आर्यसंस्थाएं ऐसे व्यक्तियों को प्राप्त करना नहीं जानतीं और प्राप्त होजाने पर उन्हें रख नहीं सकतीं। आर्य संस्थाओं में कोई कितने ही विशुद्ध भाव से क्यों न आवे, भले ही वह कर्तव्यपालन में अपने जीवन की आहुति दे दे, पर तु यदि वह अपने परिवार पोषण के लिये चांदी के चन्द टुकड़े लेता है तो घोर अनर्थ करता है। फिर वह नौकर है, गुलाम है, कर्मदास है, और न जाने क्या क्या है! उसके लिये न समाज में कोई अधिकार है और न पद। उसका बस एक ही कर्त्तव्य है, अगर उसे नौकरी करनी है तो वह अपने आकाओं का आज्ञा पालन करता हुआ सहिष्णुता पूर्वक नीची गर्दन किये सब कुछ सहता और सुनता रहे। ज़रा भी आह की तो आफ़त आयी, समता का नाम लिया तो क़यामत बरपा हुई, न्याय की पुकार की तो कुठार का प्रहार हुआ। अबतक न जाने कितने कार्यकर्त्ता अपनी आशा लताओं को संस्थाधिकारियों की कोपाग्नि में झुलसा कर सदा सर्वदा के लिये निराश हो बैठे हैं। हमें अपने प्रान्त की कितनी ही संस्थाओं का हाल मालूम है, जिनमें धुरन्धर विद्वान् केवल सेवा भाव से प्रेरित होकर आये, परन्तु वे वहां कुछ महिनों से अधिक न ठहर सके! क्यों? इसलिये कि वे जीवन निर्वाहार्थ कुछ टके लेने का गुरुतर अपराध करते थे। बिना कुछ लिये काम करने की शक्ति नहीं। लेकर सेवा करना अपराध समझा जाय, तब बताइये गुरुदत्त और लेखराम कैसे जन्म लें। दुर्भाग्य से पंजाब में ऐसी प्रवृत्ति नहीं है इसीलिये वहां अब भी निर्वाहार्थ लेकर काम करने वाले ऐसे ऐसे विद्वान् मिशनरी मौजूद हैं, जिन पर सारी आर्य-जनता समान रुप से गर्व कर सकती है। यू० पी० अ

Glimpses of Dayanand

लेखक—श्री प० चमूपति जी एम० ए०

प्रकाशक—शारदा मन्दिर लिमिटेड नई सड़क देहली। मूल्य १।)

आर्य्यसमाज के प्रसिद्ध विद्वान् श्री पं० चमूपति जी एम० ए० के लिखे Glimpses of Dayanand नामक अंग्रेजी ग्रन्थ को, देहली के प्रसिद्ध प्रकाशन गृह शारदा मन्दिर, नई सड़क, देहली ने प्रकाशित किया है। ग्रन्थ में ऋषि दयानन्द के जीवन की प्रसिद्ध प्रसिद्ध घटनाओं का बड़ी ओजस्विनी भाषा में, उल्लेख किया गया है। पुस्तक इतनी रोचक है कि समाप्त किए बिना हाथ से पृथक् करने को जी नहीं चाहता। अंग्रेजी स्कूलों के विद्यार्थियों तथा विदेश के यात्रियों के लिए, पुस्तक बड़े काम की चीज़ है और उन तक पहुंचाने का यत्न करना आर्यो, आर्य्य समाजों और प्रान्तिक सभाओं का काम है। पुस्तक की छपाई, क़ाग़ज़ और गेटप सभी अच्छे हैं और इसी लिए १।) मूल्य अधिक नहीं है।

नारायण स्वामी

भी जिन आर्य संस्थाओं में सरकार का हाथ है, उनमें सत्यावादियों की ज़्यादा घिसपिस नहीं चलती और ऐसी संस्थाओं को सुयोग्य कार्यकर्ता भी मिले हुए हैं। परन्तु आफ़त तो उन बेचारों की है, जिनका भाग्य-निर्णय अधिकार सत्ता सागर में डूबे, तथा दलबन्दी की दूषित भावना से युक्त व्यक्तियों के हाथों में होता है। जब दूसरे लोग दूर से देखते हैं, कि आर्य संस्थाओं में काम करने वाले व्यक्ति शान्ति, सन्तोष, आदर और सद्भावना का जीवन व्यतीत न कर केवल अपने दिन काट रहे हैं, तो उन्हें इस ओर आने की हिम्मत ही नहीं होती। वे अन्यत्र काम करना पसन्द करते हैं, परन्तु आर्यसमाज की ओर मुंह नहीं करते। जब से दलबन्दियों का दौरा-दौरा बढ़ा है तब से तो यह परिस्थिति और भी अधिक भयानक हो गई है। कार्यकर्ताओं और कर्मचारियों को या तो परिस्थिति के अनुकूल बन कर हां में हां मिलाने को तैयार रहना चाहिये अथवा उनके लिए अपमान पूर्वक घर जाने को मार्ग खुला हुआ है। यही कारण है कि आर्य संस्थाओं में उच्च कोटि के कार्यकर्ताओं का प्रवेश नहीं होरहा, उनमें निस्वार्थ सेवकों का कमी है। कोई कितना ही त्यागी, तपस्वी और निस्वार्थ क्यों न हो परन्तु स्वाभिमान की हानि किसी को सह्य नहीं होती। आर्यसमाजें ज़रा अपने कार्यकर्ताओं का आदर करना सीखें, और उन्हें नौकर तथा गुलाम न समझें तो अवश्य काल ही में कितने ही बड़े बड़े मिशनरी मैदान में आकर कार्य करते दिखाई देंगे। अच्छा व्यवहार शत्रु को भी मित्र बना लेता है जहां यह समझा जाता है कि वेतन वालों में धर्म, ईमान, सत्य स्वाभिमान् कुछ नहीं होता वहाँ भयङ्कर अनर्थ काम करता है। किसी ने ठीक कहा है—

गुन न हिरानो, गुनगाहक हिरानो है।

———

आर्य्य गजट 'महात्मा गांधी की निंदनीय व्यवस्था' शीर्षक से लिखता है —

महात्मा गांधी ने अपने पत्र 'हरिजन' में एक अनोखी व्यवस्था दी है। आपसे एक व्यक्ति ने एक निंदनीय घटना के सम्बन्ध में सम्मति पूछी। वह घटना क्या थी उसका सारांश हम यहां नक़ल किए देते हैं।

एक क्वारी लड़की का मामा जिसकी आयु २१ साल की थी एक कालेज में पढ़ता था। उस लड़के के यहां आने से आकर उसकी क्वारी भांजी उसकी काम वासना की शिकार बन गई। लड़की को गर्भ रह गया। अन्त में बात खुल गई तो इन दोनों ने आत्महत्या कर ली।

महात्मा जी ने इस सम्बन्ध में निम्न प्रकार सम्मति दी है।

'मेरी तो यह सम्मति है कि ऐसे सम्बन्ध जिस समाज में त्याज्य माने जाते हैं वहां पर ऐसे सम्बन्ध सहसा ही विवाह का रूप नहीं ले सकते परन्तु किसी की स्वतन्त्रता पर समाज या इसके सम्बन्धी आक्रमण क्यों करें? ये मामा और भांजी सयानी उम्र के थे। अपना हिताहित समझ सकते थे। उन्हें पति पत्नी के सम्बन्ध से रोकने का किसी को अधिकार न था।"

हम समझ नहीं आती कि महात्मा जी जहां ब्रह्मचर्य पर इतना ज़ोर देते हैं वहां व्यभिचार में बढ़ने वाले ऐसे नवयुवकों को क्यों खुली छुट्टी दे रहे हैं कि वे अपनी मनमानी कार्य्यवाहियां करें? आप

फ़रमाते हैं कि "किसी की स्वतन्त्रता पर समाज या सम्बन्धी आक्रमण क्यों करें ?" इसका मतलब तो यह है कि उचित और अनुचित इच्छाओं की पूर्ति के लिए प्रत्येक व्यक्ति को खुली छुट्टी होनी चाहिए। किसी का कोई वास्ता नहीं कि वह किसी को आज़ादी में दखल दे। न मालूम यह अनुत्तरदायित्वपूर्ण व्यवस्था महात्मा जी जैसे उच्च कोटि के व्यक्ति के कलम से कैसे निकल गई ?

यदि ऐसेही विचारों का प्रचार शुरु हो जाय तो आज ही समाज नष्ट भ्रष्ट हो जाय। एक चोर को चोरी से इसलिए मना न करना कि उसकी आज़ादी में फर्क आ जायगा उसका फल इसके सिवा और क्या हो सकता है कि तमाम घर लुट जावें।

बिछुड़ों का मिलाप

—४ मई को अमानगंज (पन्ना) की एक ब्राह्मण स्त्री तथा उसके बच्चे की हटा (सागर) में शुद्धि की गई। यह कुछ समय से एक मुसलमान के चंगुल में फंस गए थे। शुद्धि के समय अनेक प्रतिष्ठित व्यक्ति उपस्थित थे।

—११ अप्रैल को एक नव मुस्लिम की शुद्धि की गई और उसका पूर्व नाम चन्द्रिकाप्रसाद रक्खा गया। यह कुछ समय पूर्व मुसलमान हो गए थे। मार्ग व्यय देकर इन्हें इनके घर भेजा गया।

—आर्य समाज फ़रीदकोट ने एक नव मुस्लिम की शुद्धि की। रस्म मौलाना देशराज जी ने अदा की।

आर्य समाज की अप्रैल-मई की प्रगति

— ❀ —

संयुक्त प्रान्त

श्री सम्पादक जी नमस्ते !

मैंने अपने पिछले पत्र में आर्य समाज आगरा के मुकद्दमे पर प्रकाश डाला था और लिखा था कि अदालत के फ़ैसले के अनुसार समाज की सम्पत्ति बड़ी अदालतके फ़ैसले तक सरकार के अधीन रहेगी, यह भी कि आर्य्य समाज के प्रमुख २ सज्जनों को एक निर्णायक समिति के सुपुर्द यह मामला फ़ैसले के लिए कर दिया गया है और दोनों पक्षों ने लिख कर दे दिया है कि समिति का फ़ैसला माननीय होगा। हर्ष है कि समिति ने फ़ैसला दे दिया है। इस के अनुसार जो मुकद्दमे अदालत में चल रहे थे वे वापस लेलिये जायंगे और आर्य समाज आगरा पूर्ववत् प्रतिनिधि सभाका अङ्ग रहेगा। हम आशा है कि दोनों पक्ष इस फ़ैसले से सन्तुष्ट होंगे और उसे क्रिया में लाकर इस बात का सबूत देंगे कि आर्य समाजी अपनी पंचायतों के निर्णयों का मान करना जानते हैं और आगरा आर्य्य समाज को प्रान्तमें मिल कर फिर वही शक्ति बनादेंगे जो वह इस झगड़े से पूर्व थी। इस फैसले के बाद कौन पक्ष गलती पर था और कौन नहीं था इस प्रकार की चर्चा का नाम भी नहीं सुनाई पड़ना चाहिए। कहना व्यर्थ है इस प्रकार की चर्चाएं शान्ति रक्षा के लिए हानि कारक होती हैं, आर्यों को प्रेम और उदारता का ही परिचय देना चाहिए। आर्य्य समाज का हित यही तकाज़ा करता है।

संयुक्त प्रान्तीय सभा ने अपनी योजना के आधीन प्रान्त के शिक्षा केन्द्रों में वैदिक धर्म के प्रचारार्थ एक विद्वान् को नियुक्त किया है और योजना को क्रिया में लाने की दिशामें क़दम उठा दिया है। इन विद्वान महोदयका नाम श्री नित्यगोपाल जी भट्टाचार्य है। ये अंग्रेजी के एम० ए० हैं। दर्शन उनका ख़ास विषय है। लंदन यूनिवर्सिटी में आपने पौरस्त्य और पाश्चात्य क्रियात्मक्रिया का तुलनात्मक अध्ययन किया है। आर्य्यसमाज के सिद्धान्तों का ज्ञान है। अंग्रेज़ी के अच्छे वक्ता हैं। उत्साही भी हैं। सचमुच शिक्षा केन्द्रों में प्रचार के लिए एक प्रचारक की नियुक्ति करके हमारी सभा ने समय की एक बड़ी ज़रूरत की पूर्ति की है। अन्य सभाओं को इसका अनुकरण करना चाहिए। हमें सन्देह है कि हमारी वर्तमान प्रचार पद्धति से अभीष्ट की सिद्धि हो। इसके लिए एक विशेष प्रकार की प्रचार पद्धति के अनुसरण की ज़रूरत है। देखना है शिक्षा केन्द्रों में प्रचार की कौनसी सफल पद्धति सामने आती है।

गुरुकुल वृन्दावन ने बाहर के विद्यार्थियों को अपने आयुर्वेद महाविद्यालय में दाख़िल करने का निर्णय कर दिया है। अविवाहित और सदाचारी तथा नियमित फ़ीस देने वाले विद्यार्थी ही दाख़िल हो सकेंगे। उनकी शिक्षा सम्बन्धी योग्यता संस्कृत मध्यमा या उससे मिलती जुलती कोई परीक्षा, संस्कृत प्रथमा

और मैट्रिक वा किसी गुरुकुल की दसवीं श्रेणी का पास होना ज़रूरी है। देखना है यह परीक्षण गुरुकुल शब्द की महत्ता की रक्षा की दृष्टि से कहां तक सफल होता है।

मेरठ का समाचार है कि वहां एक विवाह १) में हुआ है। वर पक्ष की ओर से कोई बारात नहीं आई थी। केवल वर आया था। मेरठ नगर के केवल ५ प्रतिष्ठित व्यक्तियों के समक्ष संस्कार वैदिक विधि से हुआ था। संस्कार विधि में लिखित ७ प्रतिज्ञा मन्त्रों का हिन्दी अनुवाद प्रतिज्ञा पत्र के रूप में लिखकर वर, कन्या तथा पांचों सज्जनों के हस्ताक्षर कराए गए थे। पुत्री के पिता का नाम त्रिविक्रम कृष्ण सहाय जी है। मेरठ में मुलाज़िम हैं। वर महोदय के पिता का नाम प० कन्हैयालाल है। वे शाहजहांपुर के रहने वाले हैं।

पलभत में श्री डा फुन्दनलाल जी एम डी आर्य की अध्यक्षता में यज्ञ प्रचारक मंडल की स्थापना हुई है। इसका उद्देश्य यज्ञ के द्वारा तपदिक और संग्रहणी जैसे रोगों की मुफ्त चिकित्सा करना होगा यज्ञ द्वारा तपेदिक के रोगियों का अच्छा होना मुख्यत पश्चिम के वैज्ञानिकों के लिए एक चमत्कार होगा। देखें, मंडल के परीक्षण कितने सफल होते हैं।

पंजाब प्रान्त

श्री सम्पादक जी नमस्ते !

प्रकाश में आया है कि पं० बुद्धदेव जी पंजाब सभा के वैतनिक प्रचारक पद से पृथक् हो गए हैं। प्रतीत होता है कि गृह कलह ही इसका कारण है— जब तक वैतनिक प्रचारक पद से पृथक् होने का औचित्य साफ़ नहीं हो जाता है तब तक आर्य्य जनता इस घटना को आर्य्यसमाज के हितकी दृष्टिसे दुःखद ही समझेगी।

(विदित हुआ है कि पंजाब की जनरल सभा ने अन्तरंग सभा को आदेश किया है कि वह प० जी के इस्तीफ़े की स्वीकृति से सम्बन्धित प्रस्ताव को रद्द कर दे और प० जी को इस्तीफ़ा वापस लेने की प्रेरणा की गई है।—सम्पादक)

सुना है, पंजाब सरकार ने गोपाल मिश्र की गन्दी पुस्तक 'कलजुगी इन्सान, उर्फ़ 'रंगीले दयानन्द' को जिसके विरुद्ध आर्य्य जगत् ने घोर असन्तोष प्रगट किया था और जिसके विरुद्ध कार्य्यवाही किए जाने की हमने अपने पत्रों में चर्चा की थी, पंजाब सरकार ने अन्य ५-६ सनातनियों और आर्य्य समाजियों की दावाबी किताबों के साथ ज़ब्त कर दिया है। पंजाब सरकार ने जितनी देर में यह कदम उठाया है और जिन परिस्थितियों में उठाया है वह पंजाब के अख़बारों को पढ़ने वाले जानते हैं। इसलिए हम उसे साधुवाद नहीं दे सकते हैं।

अख़बारों से विदित हुआ है कि उपदेशक विद्यालय का मामला, फैसले के लिए श्री० दीवान बद्रीदास जी के सुपुर्द किया गया है। दीवान साहब के उच्च व्यक्तित्व, इस कार्य्य की योग्यता और आर्य्यसमाज की हित चिन्ता के सम्बन्ध में किसी को सन्देह नहीं है। आशा है वे शीघ्र इस मामले का फैसला कर देंगे और वह फैसला जनता के समक्ष आ जायगा।

आर्य प्रतिनिधि सभा राजस्थान व मालवा का मास अप्रेल का कार्य विवरण

इस मास में नीचे लिखे समाजों के वार्षिकोत्सव समारोह के साथ सम्पन्न हुए—

आर्यसमाज (केसर गंज) अजमेर, आर्य-समाज बांदीकुई, बांरा (कोटा), शाजापुर (ग्वालियर), सुजानगढ़ (बीकानेर), टमकौर (जयपुर), झुंझनू (शेखावाटी, जयपुर) और चित्रगुप्त गंज लश्कर (ग्वालियर)।

इन सभी उत्सवों पर सभा की ओर से श्रीमान् संन्यासी महात्मा, उपदेशक व भजनीक गए। इन उत्सवों में भाग लेने वालों में श्री स्वामी केवलानन्द जी महाराज अजमेर, श्री० स्वामी नृसिंह देव जी सरस्वती जयपुर, श्री० स्वामी नारायणानन्द जी, श्री० स्वामी ब्रह्मानन्द जी महाराज चित्तौड़गढ़, पं० गुरुदेव जी शास्त्री, पं० सुधीन्द्र जी सिद्धान्त शिरोमणि, प० भगवान स्वरुप जी न्यायभूषण उपमन्त्री सभा प० चन्द्र भानु जी विद्या भूषण देहली, प० राम सहाय जी आर्योपदेशक और बा० मूलचन्द जी अग्रवाल रींगस तथा भजनीकों में प० गोकुलदत्त जी, प० भगवती प्रसाद जी व प० रामस्वरुप जी के नाम उल्लेखनीय हैं।

इस मास में कुछ समय श्रीमान् मेहता जैमिनी की वैदिक मिशनरी ने राजस्थान में प्रचारार्थ भ्रमण किया और कई उत्सवों में सभा के सहयोग से सम्मिलित होकर प्रचार कार्य किया।

आर्य समाज शाजापुर के उत्सव पर वहाँ के कुछ मुसलमानों ने उपद्रव करने की ठानी, और आर्य समाजके नगर कीर्तन में विघ्न उपस्थित किया। आर्य समाज के कार्यकर्त्ताओं ने बड़ी चतुरता से स्थिति संभाली, परन्तु खेद है कि ग्वालियर स्टेट के कुछ मुसलमान अधिकारियों ने वहाँ पर बड़ी ही लापरवाही से कार्य किया। इस सम्बन्ध में उच्च अधिकारियों से लिखापढ़ी हो रही है। आशा है कि स्टेट के उच्च अधिकारी ऐसा प्रबन्ध करेंगे कि भविष्य में इस प्रकार की किसी कार्यवाही का अवसर नहीं आने पायेगा।

आर्य समाज नारायणगढ़ (होल्कर स्टेट) में एक झगड़ा कई महीनों से ऐसा चल रहा था कि पोलिस ने वहां के आर्य समाजियों के विरुद्ध कई केस चला रक्खे थे। प्रसन्नता है कि एक २ करके सब केसों का निर्णय आर्य समाज के अनुकूल होता जा रहा है। इस से ही प्रगट होता है कि ये केस पोलिस ने केवल आर्य समाजियों को परेशान करने के लिए तैयार किए थे। सुना है कि सब इन्स्पेक्टर पोलिस वहां से बदल दिया गया है। आशा है कि होल्कर गवर्नमेन्ट इसका उचित प्रबन्ध करेगा कि राजभक्त आर्य समाजी व्यर्थ परेशान न किए जावें।

——

सिंध

श्री सम्पादक जी

नमस्ते।

सिन्ध प्रान्त आर्यसमाज के प्रचार की दृष्टि से बड़ा पिछड़ा हुआ प्रान्त है। इसके अनेक कारण हो सकते हैं, एक जबरदस्त कारण आर्य समाजियों

का आपस का कलह भी है। इस कलह को मिटाकर आर्य-समाज के प्रचार के लिए वातावरण अनुकूल बनाने और प्रचार को बढ़ाने का यत्न किया जा रहा है।

सिंध प्रान्त मे गुरुकुल स्थापित करने का यत्न किया जा रहा है। श्री स्वामी सेवकानन्द जी ने इस कार्यका बीड़ा उठाया हुआ है। गुरुकुल सक्खर या हैद्राबाद म से किसी स्थानपर खोला जायेगा। दो सज्जनों ने जो सक्खर और हैद्राबाद के निवासी हैं भूमि दान देन का वचन दिया है। स्थिर रूप से सहायता देने वाले सज्जनों का सहयोग प्राप्त किया जारहा है। १६ लाइफ मेम्बर बन चुके बतलाए जाते हैं जो १०१) एकमुश्त देने के अलावा २५) साल दिया करेंगे। २५० और सदस्य बन चुके हैं जो ३) से लेकर २५) प्रति वर्ष सहायता दिया करेंगे। अन्य हर प्रकार की सहायता प्राप्त करने का यत्न जारी है। शिक्षा प्रणाली गुरुकुल कांगडी जैसी होगी। गुरुकुल की कई शाखाए होंगी। जिनमे दशवीं श्रेणी तक की शिक्षा मुफ्त होगी। भोजन व वस्त्रादि का कुछ नहीं लिया जायगा।

मद्रास–प्रचार

केरल

[१]

मार्च ३७

कनानौर के स्कूलों मे धर्म शिक्षा की व्यवस्था की और शिक्षण कार्य प्रारम्भ किया। लगभग २५ लड़के साप्ताहिक सत्सग मे भाग लेते हैं। इस मास कासर गोड होसदुर्ग, पय्यानूर, की यात्रा की और इन स्थानो मे आर्य-समाजो को व्यवस्थित करने का यत्न किया। इस मास ७ व्याख्यान और ३ धार्मिक उपदेश दिए। मलयालम भाषा म (Glory of the Vedas) नामक पुस्तक का अनुवाद किया जा लगभग पूरा हो चुका है।

—साधु शिवप्रसाद

[२]

मार्च १९३७

मौखिक प्रचार —पापलकरी, आपूकरा, चिरकडव, कुडभालूर और तिरुवल्ला मे व्याख्यान दिया।

मेला प्रचार —मण्णारडमन्दिर के मेले में वैदिक धर्म प्रचार किया। कोट्टयम मन्दिर के मेले के कानवेंशन में भाग लिया। समाज सम्बन्धी छोटी पुस्तक जनता म बाटी गई।

शुद्धि —चार अछूत जो कई वर्ष से ईसाई हुए थे उनकी शुद्धि की गई।

इस के अतिरिक्त प्रचार और शुद्धि के सिलसिले मे कुम्मनम, किडङ्गूर, वेल्लूर, पांपाडी, अयिरूर आदि स्थानों की या । की । लोगों का ध्यान शुद्धि की ओर आकर्षित किया। इन स्थानों मे विधर्म में गए हुए अछूतों की काफ़ी संख्या में शुद्धि होने की सभावना है।

नारायण दत्त

आर्य समाज मंगलौर

(दक्षिण कनारा)

मंगलौर आर्य समाज का १६ वा वार्षिकोत्सव शिवरात्रि के अवसर पर ११/३/३७ को मनाया गया। प्रात छ बजे ज्ञानोदय समाज मन्दिर से लगभग २०० नर नारियों का जलूस रवाना हुआ और ७॥ बजे के लगभग नगर मे सकीर्तन करता हुआ आर्यसमाज मन्दिर मे पहुँचा। यहा ईश प्रार्थना के बाद महिलाओं ने झंडाभिवादन किया। इसके बाद श्रीयुत गोपाल-नायक जी ने ईश्वर प्रार्थना की और उपदेश

दिया । ६।। बजे श्रीयुत बस्ती दरुपा शिनाय 'वैदिक सभ्यता' के महत्व पर बोले और श्रीयुत सुब्र कृष्णम्पा ब्रह्म समाज के मिशनरी ने वेद की शिक्षाओं पर निबन्ध पढ़ा। ज्ञानोदय समाज की संकीर्तन मण्डली का सुमधुर गान हुआ और मूर्ति पूजा, अवतार वाद और जात-पात इत्यादि अवैदिक प्रथाओं का खण्डन किया। इस अवसर पर एक सहभोज हुआ जिसमें भिन्न २ वर्णों के ३ सौ हिन्दुओं ने भाग लिया।

दोपहर के बाद २ बजे वैदिक धर्म के प्रचार के लिये "वैदिक धर्म प्रचार मंडल" सभा की स्थापना हुई और बहुत से आदमी इस सभा के सदस्य बने। इस सभा का उद्देश्य ट्रैक्टों इत्यादि के द्वारा प्रचार करना है। सेंट अलासियस कालेज के संस्कृत प्रोफेसर पण्डित अनन्त उपाध्याय द्वारा कनरी भाषा मे लिखी हुई 'वेदों का महत्व' नामक पुस्तक मुफ्त बांटी गई। आर्य समाज कार्कल के श्रीयुत मंजुनाथ शिनाय का एक सार गर्भित भाषण हुआ।

शामको ४ बजे श्रीयुत एम० आर० कृष्णमूर्ति पन्थूलू गारु एम० ए० बी० ए० अवकाश-प्राप्त डिनेट जज के प्रधानत्व मे एक सार्वजनिक सभा ऋषिबोधोत्सव मनाने के लिए हुई। श्री बाबू मोहनप्यार्थिगलाय मन्त्री समाज द्वारा वार्षिक रिपोर्ट सुनाए जाने के बाद सार्वदेशिक सभा के प्रचारक साधु शिवप्रसाद जी का व्याख्यान हिन्दुओ की पतितवस्था पर हुआ। कुमारी अहल्या बाई बी०ए०, स्वामी दयानन्द सरस्वती के महान कार्यों पर बोली, सभा पतिजी के सार गर्भित भाषण तथा सभापति को धन्यवाद के प्रस्ताव के बाद सभा विसर्जित हुई।

विदेश-प्रचार

लण्डन की चिट्ठी

लण्डन में वैदिक संस्कार

लण्डनमें सैकड़ों हिन्दू परिवार हैं, स्वभावत ऐसे अवसर आते हैं, जिन पर सस्कारों की आवश्यकता होती है। परन्तु शोक है कि इस समय तक इस आवश्यकता को पूरा करने के लिए यहा कोई स्थायी और सन्तोषजनक प्रबन्ध नही। बहुतसें हिन्दू राजे-महाराजे आते हैं, लाखों रुपया खर्च कर जाते है, दूसरे धनी व्यक्ति भी प्रति-वर्ष सैकड़ों की संख्या में आते हैं, और हजारों रुपये खर्च कर चले जाते हैं। हिन्दुओं की यह निर्बलता है कि वह धार्मिक मामलों मे बिलकुल ध्यान नहीं देते, और न कुछ खर्च करने के लिए तय्यार होते है। लण्डन मे मुसलमानो की दो मसजिदें हैं, और वह प्रति वर्ष इस कार्य के लिए हजारों पौण्ड खर्च करते है। गत वर्ष यहा के कुछ प्रतिष्ठित हिन्दुओ ने हिन्दु "ऐसोसियेशन आफ युरुप" इस उद्देश्यसे बनाई है। परन्तु उनके आर्थिक साधन बहुत थोडे हैं, और भारतवर्ष से धर्म प्रेमी हिन्दुओ की सहायता के बिना यह कार्य स्थायी रूप से नही हो सकता। मैंने मार्च के अन्त तक यहा रहनेका प्रोग्राम बनाया था, जिसको आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा ने कृपा पूर्वक स्वीकार किया था और अब मुझे दक्षिण आफ्रीका जाने का आदेश हुआ है। यहा के लोगों ने मुझे दो तीन मास और ठहरनेके लिए सभा से आग्रह किया है। यदि ऐसा हुआ तब भी मैं यह जून तक ही ठहर सकूंगा।

गत ६ मासमे साप्ताहिक सत्संगोंके अतिरिक्त भिन्न २ संस्कार भी होते रहे हैं। लोगों को ज्ञात होगया है कि संस्कार कराने वाले पण्डित यहा विद्यमान हैं और उनकी सेवा से लाभ उठाया जासकता है।

परन्तु किसी योग्य पण्डित के न होने से यदि संस्कार कराने की इच्छा भी हो तो भी दबानी ही पड़ती है, क्योंकि उसकी पूर्ति का कोई साधन नहीं।

३० मार्च को श्रीयुत बालकृष्ण मुंजे के पुत्र का नामकरण संस्कार हुआ। आप हमारे देश के प्रसिद्ध डाक्टर मुन्जे के बड़े पुत्र हैं और कई वर्षों से यहां व्यापार करते हैं, उन्होंने एक अंग्रेज महिला से विवाह कर लिया है। कुछ दिन हुए उनके घर पुत्र जन्म हुआ और उनकी तीव्र इच्छा हुई कि आरम्भ से ही बच्चे को हिन्दू संस्कार दिया जावे। उन्होने मुझे टेलीफोन किया और मैंने सहर्ष संस्कार करना स्वीकार किया। श्रीयुत मुंजे और उनकी धर्मपत्नी श्रद्धापूर्वक अग्निहोत्र के लिए बैठे और बालक का नाम विजयकृष्ण मुंजे रक्खा गया। उपस्थित सज्जनों में कुछ अंग्रेज स्त्री पुरुष भी थे। हवन क्रिया को देखकर सब बहुत प्रभावित हुए। एक महाराष्ट्र सज्जन इतने प्रसन्न हुए कि उन्होंने इच्छा प्रकट की कि लण्डन में बृहत्यज्ञ होना चाहिए और इसका उद्देश्य यहां के लोगों को बतलाना चाहिए। श्रीमान् और श्रीमती मुंजे ने अतिथियों का प्रेम पूर्वक स्त्कार किया और हिन्दू एसोसियेसन को २१ शिलिंग दान दिया। कुछ दिन पुर्व एक नैपाली हिन्दु का देहान्त होगया। यहां नैपाल महाराजा की तरफ से एक राजदूत रहते हैं, उन्होंने केवल अपने लोगों के लिए एक पृथक् मिशन बनवाया हुआ है। जिसमे खुली हवा मे दाह संस्कार किया जाता है। साधारण तौर पर यहां ऐसा करने की आज्ञा नहीं। उनकी तरफ से मुझे सूचना मिली कि मैं इस संस्कार को कराऊं। स्थान खुला था वृष्टि भी हो रही थी। सामग्री का प्रबन्ध नही हो सका, घृत का प्रयोग किया गया और संस्कार विधि से अन्त्येष्टि करके मन्त्र पढ़े गए। इसी प्रकार जब किसी विद्यार्थी का देहान्त होता है जिसका कोई रक्षक नही हो तो उसकी सूचना 'इण्डिया हाउस' मे जाती है और वे उस के दाह कर्म का प्रबन्ध करते हैं। पहले बिना किसी हिन्दु संस्कार के वह गैस की भट्टी में जलादिये जाते थे, परन्तु अब मुझे सूचना दे देते है। गत दो मास मे मुझे ऐसे दो संस्कार कराने पड़े हैं और यथावसर प्रार्थनादि कराई जाती है। यदि यहां स्थायी रूप से कोई योग्य पण्डित आजायँ तो सभी हिन्दु परिवारों मे संस्कार का होना आरम्भ हो सकता है नहीं तो इनकी सन्तानें एंगलो इण्डियन या युरेशियन ही बनेंगी। प्रचार के लिए भी बहुत क्षेत्र है।

ऋषिराम
आर्य भवन

गढ़वाल प्रान्त में प्रचार

फरवरी, मार्च १९३७ का विस्तृत विवरण

१ चेलूसैणमे ईसाइयोंका स्कूल सन् १९१० से खुला है, जिसमे ब्राह्मण राजपूतों के लड़के पढ़ते हैं। यहां ८० लडके हैं और सात मास्टर ब्राह्मण राजपूत हैं जिनको लडकों की फीस से वेतन मिलता है, और एक हेड मास्टर आर० पोटर नाम का ईसाई है जिसको मिशन वेतन देती है। इस स्कूल की आठ बिल्डिंग हैं, दलित भाइयों के लड़के यहां नहीं पढते। कुकाडी ग्राम मे सन् १९१० के पहिले एक ईसाई हुआ है। बाकी इन स्थानों मे कोई ईसाई नहीं।

बिरादरी का भूत

१ इस गढवाल प्रान्त के आर्य भाइयों को बिरादरी का बड़ा ही भय है। इस पौराणिक बिरादरी ने कितने ही आर्य सिद्धान्तों के पालने वालों को परास्त कर दिया है। जिन आर्य भाइयों

की वैदिक सिद्धान्तों के पालने में या उपदेश देने में दृढ़ता देखी थी और जो आर्य भाई बाहर देशों में रहते हैं उनकी भी सिद्धान्तों पर चलने की प्रशंसा सुनी जाती है तो बड़ी ही प्रसन्नता होती है। किन्तु जब बिरादरी का भूत सवार होने लगता है तो मृतक श्राद्ध तेराई मे पौराणिक नियमों का पालन करते हुये पाये हैं। अन्य २ संस्कारों मे भी इसी प्रकार पौराणिक धर्म का पालन करते हैं। इसलिये ऐसे आर्य भाइयों से प्रार्थना की कि बिरादरी का भय न करते हुये ऋषि सिद्धान्तों के जाननेवाले बनो। ऐसा करनेसे ही आपका भला होगा और वैदिक सिद्धान्तों की रक्षा होगी। लोग आपको सत्यवादी कहेंगे। नहीं तो दृढ़ आर्यों को पौराणिक लोग कई प्रकार का भय दिखाकर कहते हैं बड़े २ आर्यों की नहीं चली, तुम्हारी क्या चल सकेगी।

२. अन्य देशों की अपेक्षा यहा के आर्यों को पौराणक धर्मियों से बड़ा दु:ख है। कारण इसका यह है कि पहिले आर्य भाई ही थोड़ी संख्या मे हैं। इस पर भी कोई २० मील पर [illegible] और कोई तीस मील पर है। तीन तीन पट्टियों में एक आर्य कहने को मिलेगा। ऐसी हालत में बिना सगठन के दु:ख अवश्य होगा। इसलिये आर्य भाइयों से नम्र निवेदन से कहा कि धर्म के नियमों के पालने मे हम जितना कष्ट सहेंगे, उतना ही हमारा त्याग और तप बढ़ेगा। ऐसे ही श्रेष्ठ पुरुषों का ईश्वर भी सहायक होता है।

ऋषि बोध सप्ताह

मार्च ता० ५ से ११ तक ऋषिबोध सप्ताह पर दिन और रात में १४ व्याख्यान दिये। और ११ स्थानों मे हवन यज्ञ किया। चढ़ाई उतराई पर चलकर ४१ मील, ग्रामों म उपदेश दिया। आर्य भाईयों को सिद्धान्तों पर दृढ़ रहने के लिए उपदेश किया। दलित भाइयों से शुद्धाचरण तथा [illegible] पाठन के लिए प्रतिज्ञायें करवाई। इन सब [illegible] मे एक हजार से अधिक नर और नारियों की जन सख्या में वैदिक धर्म के भिन्न २ विषयों पर ऋषी ने आर्य जाति पर क्या २ उपकार किये हैं उस पर प्रकाश डाला। दो "सार्वदेशिक" के ग्राहक बनाये, और दो आर्यसमाज के मेम्बर बनाये हैं। इन स्थानों मे आर्यसमाज चौन्दकोट के प्रधान श्री महाशय केशरसिंह जी तथा कुछ स्थानों में मेम्बरों ने उपदेश कार्य मे साथ दिया। इस सप्ताह में वैदिक धर्म का जनता पर अच्छा प्रभाव पड़ा।

२ पुन. इसके बाद जहरीखाल होकर लैन्सडौन गया। इस जहरीखाल स्थान मे जो मकान आर्य समाज का है उसका कुछ हिस्सा गिर गया है। इसके लिये नकशा बनाया गया, और खर्च कितना लगेगा यह विचार किया, जिसके बनने मे कुल ८०० आठसौ रुपये लगेंगे। इस स्थान में आर्य मन्दिर की बड़ी आवश्यकता है। क्योंकि यहा जब बाहर देशों से पूज्य आर्य अतिथि आते हैं तो उनको ठहराने के लिये कहीं स्थान नहीं मिलता। लैन्सडौन छावनी होने से आर्य अतिथियों के लिये कई प्रकार [illegible] रहती हैं। इस स्थान पर यह मकान [illegible] य तो गढ़वा[illegible] के पुरुषों के भी भाग्य खुल [illegible] धर्मियों [illegible] न कोई आदर्श विद्वान सन्यासी [illegible] आकर ठहर सकते हैं, और गढ़वालियों को उपदे[illegible] देते रहेंगे। इस स्थान पर हाई स्कूल के विद्यार्थी [illegible]ध्यापक तथा दुकानदार वा गढ़वाल के [illegible] कर्मचारी वकील इत्यादि लोग रहा करते हैं। यहां से गेन्द-पुर, दुगड्डा, कोटद्वार प्रचार करते हुये गुरुकुल कागड़ा क उत्सव पर पहुंचा। यहां श्री पूज्य अधिष्ठाता जी से गढ़वाली आर्य भाइयों सहित मिलकर प्रचार कार्य के लिये परामर्श हुआ।

रघुवरदयालु

प्रचारक सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा

LIGHT OF TRUTH

या

सत्यार्थ प्रकाश (अंग्रेजी)

श्री स्वामी दयानन्द सरस्वती कृत

इसके विषय मे लिखना सूर्य को दीपक दिखाना है। इस एक पुस्तक ने जितनो को आर्य बनाया है उनका शतांश भी अन्य साधनो से नही।

अब तक अंग्रेजी मे इसका सुन्दर तथा सस्ता संस्करण नही था इसी कमी को आर्यसमाज मद्रास ने पूरा कर दिया है।

अजिल्द १॥), सजिल्द २)

THE FOUNTAINHEAD OF RELIGION

या

"धर्मो का मूल स्रोत" (अंग्रेजी)

श्री गङ्गाप्रसादजी, चीफ जज, टेहरी वाले अपनी विद्वत्ता के लिए प्रसिद्ध है। यह पुस्तक उन्ही की गम्भीर लेखनी से निकली हुई है। इसके अनेक भाषाओ मे अनुवाद हो चुके हैं। प्रत्येक अंग्रेजी पढे युवक व युवती को इसका स्वाध्याय अवश्य करना चाहिए।

अजिल्द ॥) सजिल्द १)

The Innerman & Other Lectures on ARYA PHILOSOPHY

अजमेर अर्द्ध-शताब्दी के समय, आर्य-फिलासफी पर दिये गये अंग्रेजी व्याख्यानो का संग्रह है।

इनके व्याख्याता श्री पण्डित गङ्गाप्रसाद जी उपाध्याय, श्री पण्डित चमूपति जी तथा बाबू गङ्गाप्रसाद जी [illegible]रीवाले है। पुस्तककी भूमिका आचार्य रामदेव जी ने लिखी है।

फैदरवेट पेपर, बढिया छपाई।

पृष्ठ संख्या १२८, मूल्य ।≈) मात्र

THE OUTLINES OF ARYASAMAJ

आर्य समाज का सक्षिप्त परिचय

यह भी पण्डित केशवदेव जी ज्ञानी की लिखी पुस्तक है। इसमे अंग्रेजी पढ़े लिखों को सक्षेप से आर्य समाज के सब पहलुओं का परिचय कराया है। मूल्य –)

आर्य साहित्य

अंग्रेजी मे

लागत दामो पर

आर्य समाज मद्रास ने केवल मात्र लोकोपकार के भाव से प्रेरित होकर इन पुस्तको को प्रकाशित किया है। ये पुस्तके सुन्दर कागज तथा छपाई के बावजूद भी निहायत सस्ती हैं। हमें आशा है कि आर्यसमाजे इन्हे अधिक संख्या मे मगा कर हमारा उत्साह बढाएंगी।

पता—

मन्त्री, आर्य समाज,

मद्रास

The Ten Principles of ARYASAMAJ

या

समाज के दस नियम (अंग्रेजी)

श्री पण्डित चमूपति जी कृत

इसमे योग्य पण्डित जी ने समाजके दस नियमो की वैदिक तथा वैज्ञानिक व्याख्या की है। आर्य स्कूलो व कालिजो मे उपहार देनेके सर्वथा योग्य है। ऐण्टिक पेपर। सुन्दर छपाई। पृष्ठ संख्या १६०, मूल्य ।≈) मात्र

The Vedic Caste System & PANCHAMA PROBLEM

वैदिक वर्ण व्यवस्था तथा हरिजन समस्या पर श्री पण्डित केशवदेव जी ज्ञानी ने यह समयोपयोगी पुस्तक लिखी है। प्रत्येक आर्य को पढनी चाहिए।

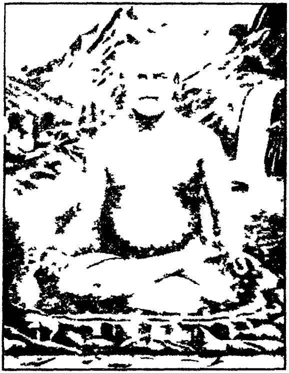
मूल्य ≈) मात्र।

पं० रघुनाथ प्रसाद पाठक—पब्लिशर के लिय 'चन्द्र प्रिंटिङ्ग प्रेस' देहली,
में प्रकाशित ।

जुलाई १९३९ Reg No L 2121

ऋग्वेद ॐ यजुर्वेद

सार्वदेशिक



सम्पादक—प्रो० सुधाकर एम० ए०

स० सम्पादक—श्री रघुनाथ प्रसाद पाठक   एक प्रति का ।)
वार्षिक मू० २)   विदेश से ९ शिलिंग

अथर्ववेद सामवेद

विषय-सूची

आवश्यक सूचना

ता० २२, २३, २४ जोलाई सन् ३७ को निगमागम संस्कृत विद्यालय गंज जिला बिजनौर का द्वितीय वार्षिकोत्सव होगा, जिस मे प्रमुख संन्यासी, उपदेशक और भजनीक पधारेंगे। सब सज्जनों को मित्र मण्डल सहित पधारना चाहिये। नवीन छात्रों का प्रवेश २२ जौलाई ३७ को होगा।

स्वामी केवलानन्द संन्यासी

नम्र निवेदन

[ले० ला० बोसाराम रिटायर्ड स्टोरकीपर N, W R. आनरेरी -सैक्रेटरी]

पञ्जाब की राजधानी लाहौर में रावीरोड़ पर केन्द्रीय अनाथालय है जिसका प्रबन्ध एक रजिस्टर्ड सभा के आधीन है, जिसके प्रधान श्री पूज्य स्वामी स्वतन्त्रानन्द जी महाराज उपप्रधान सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा देहली हैं। उपप्रधान श्री पण्डित विश्वम्भर नाथ जी भूत पूर्व गवर्नर गुरुकुल कांगड़ी, श्री पण्डित ठाकुर दत्त जी वैद्यशास्त्री मुल्तानी तथा डा० गणेशीलाल जी M, B B S हैं इस अनाथालय को खुले हुये बीस वर्ष के लगभग होचुके हैं। इसकी सहायता केवल लाहौर निवासी ही नहीं करते, प्रत्युत सब प्रान्तों में रहने वाले हिंदू आर्य भाई भी करते हैं। यही कारण है कि यह अनाथालय भारत के दूसरे प्रान्तों में भी सर्वप्रिय हो रहा है और दिन प्रतिदिन उन्नति कर रहा है, यहा तक कि अब सरकार भी जो चोरी किये हुये लड़के लड़किया उनको मिलते हैं जब तक उनके वारिसों का पता नहीं मिलता, तब तक उनको इस अनाथालय मे रखती है। इस के अतिरिक्त ऐसे नवजात बालक वा बालिकायें भी आने लग गई हैं जिनकी माताएं मर जाती हैं या वह उनको कई गुप्त कारणों से रखना नहीं चाहतीं और इनके लिये एक Trained नर्स भी रखी हुई है। इस तरह से अनाथालयमें बच्चों की सख्या बढ़गई है। इस समय तक तो निवास स्थान पर्याप्त था परन्तु सख्या बढ़ जाने से कन्याओं के लिये स्थान काफी नहीं है। इस लिये प्रबन्धक सभा ने निश्चय किया है कि नवीन कमरे बनवाये जायें, जिस से कन्याओं के स्थान का कष्ट मिट जाय। इनके बनाने के लिय धन की अपील की जावे। इसलिये मैं दानी सज्जनों की सेवा में विनीत भाव से प्रार्थना करता हूँ के वे इस शुभ कार्य में सभा की सहायता करें ताकि अनाथ और निस्सहाय बच्चों को प्रवेश करने में बाधा न पड़े। यदि हम ऐसा न करसके तो वे बालक जिनको हम स्थान न दे सकेंगे अन्य मतवालों के जाल में फस कर हमेशा के लिये धर्म से पतित हो जावेंगे और उसका पाप आर्य जाति को लगेगा। जो महानुभाव एक सौ से अधिक रुपया देंगे, उनके नामों के पत्थर उन कमरों की दीवारों पर लगवा दिये जायेंगे। इस समय इस कार्य के लिये पाच सहस्र धन की शीघ्र आवश्यकता है जो दानी सज्जनों को पूरी करनी चाहिये। इस अनाथालयके आधीन म्यूनिसिपैलटी तथा गवर्नमैंट से मंजूर एक प्राइमरी इण्डस्ट्रीयल मिडल स्कूल है। जिसमें अनाथालय के तथा बाहर के लड़के पढ़ते हैं। एक [illegible] है जिसमें लड़के और लड़कियों को सीने का कार्य सिखलाया जाता है तथा बाहर के [illegible] में काम सीख सकते हैं आजकल ४० लड़के और ४२ लड़किया सीख रही हैं। बीस के लगभग लड़के यहा से काम सीख कर अपना निर्वाह भली प्रकार कर रहे हैं। अनाथालय में इस समय १०६ लड़के और ६५ लड़किया हैं जिनके निवास, भोजन, पढ़ाई आदि का प्रबन्ध अनाथालय की तरफ से किया जाता है। इस काम के लिये भी सहायता की आवश्यकता है। दानी तथा परोपकार प्रिय महानुभावों से प्रार्थना है कि वे इस ओर भी दया करें और जिस प्रकार की भी सहायता दे सकें, दे कर पुण्य के भागी बनें अर्थात् आटा, दाल, चावल, घी आदि खाद्य पदार्थ और पहनने के लिये वस्त्र देकर कृतार्थ करें। यह संस्था पूर्व भी आप जैसे दानियों के दान से चल रही है, अब भी आपसे आशा की जाती है कि अवश्य सहायता देकर अनाथों का आशीर्वाद लेंगे और पुण्य के भागी बनेंगे।

❀ ओ३म् ❀

सार्वदेशिक

❀ सार्वदेशिक-आर्य-प्रतिनिधि सभा देहली का मासिक मुख पत्र ❀

वर्ष ११ { आषाढ १९९४ } अङ्क ५
जौलाई १९३७ ई०] [दयानन्दाब्द ११३

❀ वेद की शिक्षाएँ ❀

यां मेधामृभवो विदुर्यां मेधामसुरा विदुः ।
ऋषयो भद्रां मेधां यां विदुस्तां मय्यावेशयामसि ॥ ३ ॥

अ० ६ । १०८ ।

(यां मेधां) जिस मेधाको (ऋभवः विदुः) ज्ञानी जानते हैं, जिस (मेधां) बुद्धिको (असुराः विदुः) असुर जानते हैं, (यां भद्रां मेधां) जिस कल्याणमयी बुद्धिको ऋषि जानते हैं, (तां मयि आवेशयामसि) उस श्रेष्ठ बुद्धिको अपने अंदर स्थापित करता हूँ ।

ही हम उनके जीवन काल में अनुभव करते तो शायद उनके अन्तिम दिन निराशा में न कटते। इस विषय पर अधिक लिखना ठीक नहीं। केवल इस बात की ओर हम निर्देश कर देना चाहते हैं कि अब पंडित चमूपति जी के परिवार की ओर हमारा विशेष कर्तव्य है। उसको निभाना चाहिये। जिस व्यक्ति ने अपने जीवन का एक एक क्षण तथा अपने खून का एक एक क़तरा समाज सेवा के अर्पण किया, उसके परिवार की चिन्ता यदि हम न करें तो हमारी कृतघ्नता की सीमा न होगी। इतना लिखने पर हमें विदित हुआ कि पंजाब प्रतिनिधि सभा ने पंडित जी के बच्चों की भावी शिक्षा का सारा प्रबंध अपने हाथ में लिया है। इसके साथ ही महाशय कृष्ण जी ने ५ हज़ार की अपील पंडित जी के मित्रों से की है, ताकि यह धन दो सप्ताह में इकट्ठा करके उनके परिवार को साधारण जीवन निर्वाह के लिये दिया जावे हम आशा करते हैं कि इस अपील का उचित उत्तर देकर हम इस दुखी परिवार के दुख को किसी हद तक कम कर सकेंगे।

ईसाई और हरिजन

हम कई बार यह लिख चुके हैं कि आजकल लोगों के धर्म परिवर्तन का मूल कारण उन का आर्थिक अथवा सामाजिक संकट होता है। ईसाई और मुसलमान हिन्दुओं में दलित जातियों के इस संकट का लाभ उठा रहे हैं। महात्मा गांधी जी ने अपने पत्र "हरिजन-सेवक" के पिछले अंक में इसी तथ्य पर इस प्रकार प्रकाश डाला है। वह लिखते हैं —

"इससे स्पष्ट है कि यह प्रचार-कार्य बड़ा सफा-मक रूप धारण कर रहा है और इस तरह अपना धर्म छोड़कर ईसाई बननेवालों की संख्या शीघ्र ही इतनी बढ़ जायगी कि जिसका हम अन्दाज़ा भी नहीं लगा सकते। हां, जितने भी नये-पुराने लोग ईसाई हुए हैं उनमें से एक ऐसा उदाहरण नहीं मिलता जो अपने धार्मिक विश्वास के कारण ईसाई बना हो। ईसाइयों के प्रचार को जो सफलता मिली उसका कारण तो यह है कि हरिजन अपनी मौजूदा असह्य स्थिति से बेहद असंतुष्ट हो रहे थे और उन्हें यह आशा थी कि इस परिवर्त्तन से शायद उनकी स्थिति सुधर जाय। इसलिए धर्म परिवर्त्तन का मुख्य कारण तो आर्थिक तथा सामाजिक ही है। आम तौर पर हरिजनों को कई अन्याययुक्त लागें भी देनी पड़ती हैं और उन्हें बड़ा ज़लील किया जाता है जो अब उनके लिए असह्य हो रहा है। अगर प्रतिकार करते हैं तो मामला अदालतों तक जाता है। फिर मिशनरी इन बातों से अनुचित लाभ उठाते हैं। पर ये धर्मान्तर आम तौर पर स्थायी नहीं होते।"

आर्य समाज यदि चाहता है कि दलित जातियों का उद्धार करे तथा उनको मनुष्योचित स्थिति प्रदान करे तो उनके आर्थिक और सामाजिक संकटों को शीघ्रातिशीघ्र दूर करने का उपाय होना चाहिये। हमारे ख्याल में आर्थिक संकटों के दूर हो जाने पर उनके सामाजिक संकट भी बहुत कुछ दूर हो जावेंगे। अतः इन जातियों को व्यापारिक तथा औद्योगिक शिक्षा देने का प्रबंध होना चाहिये ताकि वे जीवन संग्राम

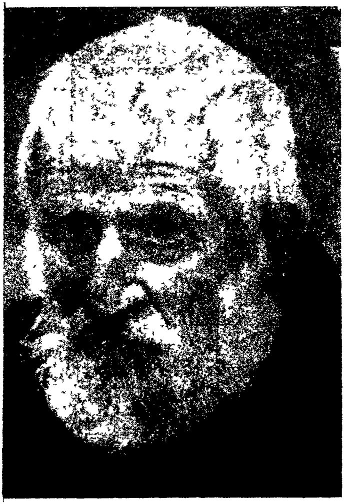


आर्य्य मैरिज एक्ट के अनुमार यह पहिला विवाह नागपुर मे वैदिक रीति से सम्पादित हुआ है। बर का नाम श्री शिवलाल है जो विलायत की यूनोवर्सिटी के एक ग्रेजुएट है और पञ्जाबी है और वधू श्री मती चन्द्राकेला बी० ए० नागपुर के एक इन्जोनियर की पुत्री हैं।

चन्द्र प्रिंटिंग प्रेस, देहली।



श्री सेठ जुगल किशोर जी बिड़ला



रूस का एक वृद्ध पुरुष

१५७ वर्ष का यह बूढ़ा इस समय में विद्यमान है। इसके शरीर के सब अङ्ग अच्छी तरह अपना कार्य्य कर रहे हैं। दो तीन साल प्रति दिन पहाड़ों पर यह घूमता है। हम चाहते हैं कि हमारे पाठक इस बूढ़े की आयु को प्राप्त करने का प्रयत्न करें।

मे अपने पावों पर खड़े होकर दूसरों का मु ह न ताकते रहे।

विश्व-संस्कृति मे भारत का भाग

कलकत्ता विश्व विद्यालय के सुप्रसिद्ध उपाध्याय श्री डा० कालीदास नाग आजकल हवाई विश्व विद्यालय मे उपरोक्त विषय पर मनोरञ्जक व्याख्यान दे रहे हैं। उनके व्याख्यानो में न केवल विश्वविद्यालय के विद्यार्थी ही उपस्थित होते है अपितु अन्य पठित स्त्री पुरुष भी डाक्टर साहब के विचारों से लाभ उठा रहे हैं। हमें भारत के इस सपूत पर गर्व है। वह भारत का तथा उसकी सस्कृति का गौरव विदेशो मे फैला रहा है। आर्य समाज की ओर से लडन में पडित अयाराम जी इसी मिशन को लेकर पहुचे है। हम दिल से चाहते हैं कि उनको सफलता प्राप्त हो। 'इण्डियन सोशल रिफ़ार्मर'' में जो उनका लेख छपा है उससे ज्ञात होता है कि वह वहा "हिन्दू सस्कृति" का एक केन्द्र स्थापित करना चाहते हैं। अच्छा होता यदि वह 'हिन्दू सस्कृति' के स्थान पर 'आर्य सस्कृति' का केन्द्र बनाते। इससे उनके प्रभाव का क्षेत्र बहुत विस्तृत हो जाता और आर्य समाज जिसके वे योग्य मिशनरी है, उसको भी अपनी विशेषता प्रकट करने का अवसर प्राप्त हो जाता। हिन्दू सस्कृति का भाव हिन्दुओ को एक स्थान पर एकत्रित कर सकता है परन्तु आर्य-सस्कृति का भाव हिन्दुओ से अतिरिक्त अन्य जातियो के लिये भी आकर्षण रखता है। उस आकर्षण से हमे लाभ उठाना चाहिये।

आदर्शों का भेद

बर्ट्रेण्ड रस्सल इगलैण्ड के सुप्रसिद्ध विद्वान और दार्शनिक लेखक है। आपकी पुस्तकें भारतवर्ष तथा सभी देशों मे बड़े चाव से पढ़ी जाती है। दार्शनिकों की श्रेणी मे आपका बहुत ऊंचा स्थान है। इस समय आपकी आयु ६४ वर्ष की है। हमारे पाठक यह सुनकर आश्चर्य करेंगे कि हाल में ही उनके पुत्र उत्पन्न हुआ है और उनकी स्त्री की आयु केवल २७ वर्ष की है और यह उनकी तीसरी स्त्री है। उनकी दूसरी स्त्री ने १९३४ में उन्हें तलाक दे दिया था। यह बातें लिखने मे हमारा केवल इतना ही प्रयोजन है कि आदर्शों का भेद मनुष्य को कहा से कहा पहुचा देता है। अपने यहा के दार्शनिक इस आयु मे विश्व के विधाता तथा ब्रह्माण्ड के स्रोत मे विलीन होकर जहा विलक्षण शक्तियों के प्रसार का कारण बनते हैं वहा पाश्चात्य दार्शनिक गृहस्थ जीवन से ही ऊंचे उठ नही पाते। अपने देश मे इसी आयु के महात्मा गाधी तथा रवीन्द्रनाथ ठाकुर लगभग इसी आयु के है परन्तु उनके जीवन का प्रवाह किस ओर है और रस्सल साहब के जीवन का प्रवाह किस ओर।

श्री सेठ जुगलकिशोर जी बिडला

पाठक श्री सेठ जी के नाम से भली प्रकार परिचित हैं। आप अपने सात्विक दान से हिन्दू तथा आर्य जाति को जिस प्रकार उपकृत कर रहे हे उसको आज कौन नही जानता? यो तो दानी ससार मे बहुत है और भारत में भी दान देने वालो और लेने वालो की कमी नही, परन्तु सेठ जी को दान देने के लिये एक विशेष प्रतिभा प्राप्त है। आप का दान सदा एक

विशिष्ट प्रयोजन लिये रहता है। आप पहले किसी तीव्र आवश्यकता को अनुभव करते है, उसके पीछे उस आवश्यकता की पूर्ति के साधन सोचते है, उसके पश्चात यह देखते है कि उन साधनो को कौन व्यक्ति या समाज जुटा सकता है। इतना कुछ विचार करने के पीछे वह अपने दान के पात्र को ढूढ कर अपनी दान की राशि उसके सपुर्द कर देते है। इसलिये हम सेठ जी को दानवीर कहते है। सेठजी के दान की गणना करना हमे यहा अभीष्ट नहीं और नही हमे उस गणना की सामर्थ्य है। हा यह हम अवश्य कहगे कि इस समय श्री सेठ जी के दान से भारतवर्ष मे अनेक उपयुक्त कार्य चल रहे है। हमारी सभा का विदेश प्रचार कार्य केवल सेठ जी की कृपा पर ही अवलम्बित रहा है। सेठ जी के हृदय मे आर्य सस्कृति को देश देशान्तरो मे फैलाने की प्रचड अग्नि प्रज्वलित हो रही है वह चाहते है कि यह संस्कृति सर्वत्र संसार मे फैले। जहा भी उनको ऐसे व्यक्ति दीखते है जो इस कार्यको सम्पादन करने मे उनके सहायक बन सकते है वह उनकी सहायता को तय्यार हो जाते है। इस समय देश मे समाज सुधार, जाति सुधार, सस्कृति प्रचार, स्त्री शिक्षा, हरिजन उत्थान इत्यादि जितने कार्य हो रहे है, प्राय सभी मे श्री सेठ जी की सहायता का हाथ विद्यमान है। हम ईश्वर से प्रार्थना करते है कि सेठ जी का उत्साह और सामर्थ्य दिनो दिन बढते रहे ताकि यह परोपकार के कार्य उनकी सहायता से जारी रहे।

आर्य समाज का विस्तार

ले०—श्री प०
इन्द्र जी विद्यावाचस्पति

तीन वर्ष का कार्यक्रम

मैंने सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिध सभा की अन्तरग सभा में निम्नलिखित प्रस्ताव उपस्थित किया था, जो थोड़े से आवश्यक परिवर्तन के साथ स्वीकार होगया—

(१) वर्तमान में आर्य समाजों के लिए ऐसा कार्यक्रम बनाया जाय जो सामूहिक और अपील करने वाला हो और वह कार्य क्रम १६४१ में होने वाली मनुष्य गणना को लक्ष में रख कर बनाया जाय।

(२) यह कार्य क्रम कम से कम ३ वर्ष का होना चाहिए और इस काल में आर्य सभासदों और आर्यों की सख्या बढ़ाई जानी चाहिए।

(३) समाजों को प्रेरणा की जानी चाहिए कि वे नई २ सस्थाएं खोलने का यत्न न करें।

(४) आर्य समाजों को प्रेरणा की जाय कि अन्य धर्मावलम्बियों के साथ सघर्ष से बचा जाय। अनिवार्य होने पर ही सघर्ष मे पड़ना चाहिए।

(५) यत्न होना चाहिए कि ३ साल में आर्य समाजों की सख्या तिगुनी और आर्य सभासदों की सख्या दस गुनी होनी चाहिए।

(६) नौजवानों के सगठन को समाज अपने हाथ मे ले और उन्हें आर्य समाज की ओर आकर्षित करने का यत्न होना चाहिए।

(७) आर्य समाज के अधिक से अधिक शिक्षणालय होते हुए भी शिक्षा की समस्या बड़ी जटिल हो रही है। उस पर पूर्ण विचार होकर उसे नया ढंग या Impetus मिले। नित नई सस्थाओं का उद्घाटन न होना चाहिए।

विचार के बाद प्रस्ताव सर्व सम्मति से स्वीकृत हुआ। निश्चय हुआ कि निम्न सज्जनों की एक उपसमिति बनाई जाय जो इस सम्बन्ध में अपनी विस्तृत रिपोर्ट सभा मे पेश करे —

(१) श्री प० इन्द्रजी

(२) श्री डा० युद्धवीर सिंह जी

(३) श्री ला० नारायणदत्त जी

इस प्रस्ताव के तीन भाग हैं।

पहला भाग विधायक है। वह इस प्रस्ताव का मुख्य भाग है। उसमे कहा गया है कि आगामी ३ वर्षों में आर्य समाजों की संख्या तिगुनी और आर्य-सभासदों की संख्या १० गुनी हो जानी चाहिये।

दूसरा भाग निषेधात्मक है। उसमे कहा गया है कि यथासभव दो चीजों को रोकने का प्रयत्न किया जाय। अन्य धर्मावलम्बियों से व्यर्थ सघर्ष में न पड़ा जाय, और ढरें पर चल कर व्यर्थ में ही सस्थाओं के खोलने का प्रयत्न बन्द कर देना चाहिये।

प्रस्ताव के तीसरे भाग में पहले भाग को कार्य परिणत करनेके लिये उपसमिति का निर्माण किया गया है।

इनमें से पहला भाग ही सबसे आवश्यक है। वही प्रस्ताव की जान है। शेष दोनों भाग उस के

केवल सहायक हैं। उनकी यही आवश्यकता है कि वह पहले भाग में बताये हुये कार्य क्रम को पूरा करने योग्य परिस्थिति पैदा कर सकते हैं।

मैं इस लेख मे प्रस्ताव के मुख्य भाग को समझाने का प्रयत्न करूगा।

उपनिषदों में कहा है 'भूमा वै बलम्' सख्या में बल है। यह मानी हुई बात है कि आर्य-समाज के सदस्यों की प्रारम्भिक सख्या-वृद्धि आज से शायद २५ वर्ष पूर्व ही समाप्त हो गई थी। उसके पीछे यदि कुछ सख्या वृद्धि हुई है तो वह कुदरत का परिणाम है, प्रयत्न का नहीं। आर्य-समाजियों की सन्तान अपने को आर्य समाजी कहने लगी और इस प्रकार परिवार के परिवार आर्य समाजी होगये। जो व्यक्ति अब से २५ वर्ष पूर्व आर्य समाजी बन चुके थे, इस समय उन्हीं का विस्तार है। प्रयत्न से नये बनाये हुये नये आर्य समाजियों की सख्या बहुत ही कम है।

इस त्रुटि के अनेक कारण हैं। सब से मुख्य कारण तो यह है कि आर्यसमाज ने अपने आप को स्वय ही अपना लक्ष्य बना लिया है। जैसे कोई मनुष्य लम्बी यात्रा तय करने के लिये गाड़ी बनाये, परन्तु उस गाड़ी को अपना लक्ष्य बनाकर उसीके रंगने और सजाने मे सारी आयु व्यतीत करदे। आर्यसमाज की वैसी ही दशा हुई है। आर्यसमाज का संगठन एक लक्ष के लिये हुआ था। वैदिक धर्मका अधिकसे अधिक प्रचार करना, संसारमें आर्यसमाज के सिद्धान्तों को मानने और तदनुसार आचरण करने वालों की सख्या में अधिक से अधिक वृद्धि करना उसका लक्ष था। परन्तु हुआ क्या? आर्यसमाज अपने असली लक्ष्य को तो भूलगया, और अपने सगठन को ही लक्ष्य मान कर उसी के पालन पोषण में लग गया। जो साधनमात्र, था उसे साध्य बनाकर पूजने लगा।

सख्या में रुकावट पडने का दूसरा कारण यह था कि आर्यसमाज भूल करने में इस से भी आगे बढ़ा। उसने केवल अपने कोही लक्ष्य बना लेने की भूल नही की, उसने अपनी खोली हुई सस्थाओं को भी पवित्र मान लिया नई सस्थाओं की स्थापना और पुरानी सस्थाओं का सचालन उनके लिये एक धर्म सा बन गया है। जो लोग सस्थाओंके उपासक हैं, उनसे पूछिये कि क्या आर्यसमाज उन्नतिकर रहा है? तो उत्तर मिलेगा 'क्यों नहीं'। आर्यसमाज अवश्य उन्नति कर रहा है। देखिए बीस वर्ष पहले आर्यसमाज के पास जितने स्कूल थे, आज उससे ४गुने है। जितना कन्या पाठशालायें थीं उसस १० गुनी हैं, और अनाथालय भी अधिक हैं। ऐसे संस्थापक सज्जनों को जानना चाहिये कि सस्था बनाना आर्यसमाज का कोई उद्देश्य नहीं है। संख्या यदि आर्यसमाज के लक्ष्य की पूर्ति में सहायक है तो ठीक है, अन्यथा वह केवल बोझ है। इस समय की संस्थाओं का अधिक भाग आर्यसमाज पर बोझ ही है। जो शक्ति प्रचार मे लगनी चाहिये, वह सस्थाओं मे व्यय होगई है। आर्यसमाज की दशा बिलकुल उस बाल-गृहस्थ जैसी हुई है, जिस पर छोटी आयु मे ही सन्तान का बोझ पड जाय। जैसे उस मनुष्य की उन्नति कुण्ठित हो जाती है आर्यसमाज की भी वैसी ही दशा हुई है।

एक और भी भ्रान्ति है जो आर्यसमाज के

विस्तार के मार्ग में बाधक होती रही है। प्रारम्भ काल में यह आवश्यक था कि आर्यसमाज के प्रचारक खण्डन और शास्त्रार्थ की रीति का अनुसरण करते। उस समय जनता सीधी थी, और सचाई को सुनने के लिये उद्यत थी परन्तु अब दशा बिलकुल बदल गई है। मतमतान्तरों ने शास्त्रार्थ और खण्डन की पद्धति की निर्बलताओं को समझकर उन से पूरा लाभ उठाने का प्रयत्न किया है। अब न शास्त्रार्थ होतेहैं, और न वाद— अब तो शास्त्रार्थ के नाम से अधिकत तू तू मै मै और वितण्डे का ही प्रयोग होता है। उससे सत्या-सत्य निर्णय तो खाक भी नही होता, उल्टा धर्म का मजाक बनता है, और परस्पर वैमनस्य के बीज बोये जाते हैं।

इस प्रस्ताव में सस्था और शास्त्रार्थ को सीमाओं मे परिणत करते हुए आर्य-समाज के सामने प्रचार के कार्य को मुख्यता के साथ रखागया है।

१६४१ मे मनुष्य गणना होने वाली है। हम चाहते हैं कि आगामी तीन वर्षो मे आर्यसमाज के सन्देश को इतने वेग से और दूर २ तक पहुँचाया जाय कि यदि आज उनकी सख्या २० लाख है, तो १६४१ में उनकी सख्या कम से कम २ करोड होनी चाहिये। साथ ही उस बढ़ी हुई सख्या को सम्भालने के लिये आर्यसमाज के केन्द्रों में वृद्धि करने की भी आवश्यकता है। आर्यसमाजों की सख्या को तिगुना करदेने के विचार की तह में यही बात है।

सार्वदेशिकआर्यप्रति॰ि. सभा कीआर्य अन्तरग सभा ने इस प्रस्ताव को स्वीकार करके आर्यसमाज को एक सही मार्ग दिखलाया है। यदि सभा ने सचेत होकर पथ-प्रदर्शन किया, और आर्यसमाज ने उत्साह दिखलाया तो तीन वर्षों मे आर्यों का दस गुना और आर्यसमाजो का तीन गुना होजाना कुछ कठिन नहीं है। इच्छा और प्रयास का थोडा सा सहारा चाहिये, कार्य की पूर्ति बहुत ही सुलभ है।

कम्बोज Combodia की प्राचीन आर्य सभ्यता

लेखक—
श्री पं०के०ज्ञानी जी मद्रास

'Little do they know of India who only India know"

अर्थात् भारतवर्ष के अतीत गौरव तथा पुरातन आर्य सभ्यता को समझने के लिये आवश्यक है कि हम अन्य देशों—विशेषतः चीन, जापान तथा समीपवर्ती द्वीपों को देखें जहां आर्य-धर्म व आर्य-संस्कृति की अमिट छाप पड़ चुकी है।

अभी गत दस-पन्द्रह वर्षों से भारतीय विद्वानों का ध्यान इस ओर गया है और प्रो० फणीन्द्रनाथ बोस, डा० काली दास नाग आदि ने वृहत्तर-भारत की खोज शुरू की है। इनसे पूर्व अनेक डच तथा फ्रैञ्च विद्वानों ने सस्कृत, पाली व ख्मेर भाषा के शिला लेखों से वृहत्तर-भारत की प्राचीन सभ्यता का पता लगाने का प्रयत्न किया है।

यदि हम भूगोल के नक्शे पर देखें तो हमे पता चलेगा कि ब्रह्म देश से लेकर स्याम, इण्डो-चाइना, लका, पिनाँग, सुमात्रा, जावा बोर्नियो और फिलिपाइन्स आदि प्राय सब प्रान्त ही किसी समय भारत से सलग्न थे और यहां के राज्य वंश, धर्म, साहित्य, सभ्यता आदि पर आर्यों का अपूर्व प्रभाव था।

इस लेखमें हम कम्बोडिया तथा उसकी राजधानी अङ्गकोर का जिक्र करेंगे।

ऐतिहासिक दृष्टि से इस उपनिवेश का प्रारम्भ कोण्डिन्य नामक महा-पुरुषने किया जो उत्तर से आयाथा। उसके साथ अन्य भारतीयभी थे। इन्हो ने पहिले 'मेकांग' नदी के किनारे आबादी बढ़ाई। यह ईसा की प्रथम शताब्दी के समय की बात है कौण्डिन्य वंश के बाद चौथी सदी में "कम्बु स्वयम्भव"नामक राजा का वर्णन मिलता है जिसे वर्तमान राज-परिवार अपना पूर्वज मानता है। कम्बु स्वयम्भव के समय इस उपनिवेश ने बहुत उन्नति की और सम्भवत 'भरत से भारत' के समान इस राजा कम्बु से इस देश का नाम काम्बोज प्रसिद्ध हुआ है जिसे अंग्रेजी मे "कम्बोडिया" कहते है।

ऐतिहासिकों की अन्वेषणाओं से पता चलता है कि ८वीं ९वीं सदियों मे कम्बोडिया का सुमात्रा के प्रसिद्ध श्री विजय साम्राज्य से पर्याप्त सम्बन्ध था। पीछे से प्रबल मतभेद होने के कारण कम्बोडिया का राज्य कमजोर हो चला था जब कि जावा के जयवर्मन् २य ने इसे पुन. सगठित किया

प्रतीत होता है कि "वर्मन्" नाम दक्षिण-भारत के पल्लव वशी राजाओं के सम्पर्क से पड़ा क्योंकि उस समय यहां के राजाओं के सम्बन्ध दक्षिण की राजकन्याओं यथा राजेन्द्र देवी आदि से होते थे और यही कारण है कि ८वीं सदी के पश्चात् कम्बोडिया में अनेक मन्दिर आदि बने जिनकी कला तथा स्तूपादि निर्माण शैली दक्षिण

भारत के मन्दिरो से हूबहू मिलती है।

आगेकी छ सदियो मे कम्बोडियाने बहुत उन्नति की। अनेक मन्दिर, मठ, स्तूप तथा भवन बने। बौद्धधर्म के साथ शैव तथा वैष्णव धर्मो का भी प्रचार हुआ। लोगो मे प्रशंसनीय धार्मिक सहिष्णुता पाई गई। यह प्राचीन कम्बोज का स्वर्णयुग समझना चाहिये।

इसी समय मे ही सुप्रसिद्ध अगकोर की राजधानी व अगकोर मन्दिर का निर्माण हुआ। इ-के विषय मे एक डच विद्वान् ने लिखा है —

'Judged by the architectural remains of Angkor which lie scattered in varying states of preservation over hundreds of miles in the Combodian wilds, this civilization far outclassed that of any other overseas Hindu settlement."

अर्थात् यदि भवन-निर्माण कला की दृष्टि से देखा जाय तो अंगकोर के सैकड़ो मीलो के खण्डरात से पता चलेगा कि यह उपनिवेश अन्य-हिन्दू उपनिवेशो से बहुत बढ़ा चढा था।

अंगकोर धाम या राजधानी को राजा यशोवर्मन्‌ने दशमी शताब्दीके प्रारम्भमे बसाया। उस समय इसका नाम यशोधर पुर रखा गया। उसके पीछे ५म जयवमन् ने ईश्वरपुर बसाया जिसे आज कल बैंटियै स्रो (Banteay Srey) कहते है।

अंगकोर वट या मन्दिर १२ वी सदी मे २ य सूर्य-वर्मन्‌ने बनाया। यह समस्त अंगकोर खण्डरात का मुख्य तथा अमूल्य भाग है। यह समय अंगकोर के ऐश्वर्य का था। यही कारण है कि पडोमी बौद्ध स्याम तथा हिन्दू चम्पा के आक्रमणो का वर्णन मिलता है।

श्री फणीन्द्र बोस के लेखानु ार अगकोर वह 'नागरवट" का अपभ्र श है। संभव है कि एक विशाल वट वृक्ष हो जिसके समीप प्रसिद्ध मन्दिर बनाया गया हो। अगकोर या नगर—राजधानी के समीप होने से ऐसा नाम पड गया हो।

फ्रेंच विद्वान् Foucher ने इस मन्दिर के विषय मे लिखा है —

मन्दिर चतु. कोण है। एक ऊंची चट्टान पर तिमंजला बना है। मन्दिर का विमान १८० फीट ऊंचा है। गोपुर उससे भी अधिक। मन्दिर का निमाण द्रावि रीति से हुआ है। मन्दिरमे देवता विष्णु हे। प्रतीत होता हे कि पीछे से बौद्ध-साम्राज्य आने पर इस मन्दिर मे अवलोकितेश्वर की मूर्ति रखी गई है। मन्दिर की दीवारो, विमान तथा गोपुरम पर महाभारत और रामायण के चित्र है। युद्धक्षेत्रमे श्रीकृष्णार्जुन-सम्वाद द्रौपदी-वस्त्राहरण, युधिष्ठर का स्वर्गारोहण, यम चित्र गुप्त यात्रा, कैकेयी विशाद सीता की अग्नि परीक्षा, लङ्का विजय आदि। मन्दिर के बाहर देवासुर संग्राम, समुद्र- मंथन आदि चित्र है।"

इसी के समीप 'बायन" या बुद्ध का मन्दिर है जो पीछेसे शिवालयमे परिवर्तित किया गयाहै। भारत के समान वहां भी बौद्धो व शैवो के झगड़े खासे हुए है, ऐसा स्पष्ट प्रतीत होता है।

एक मन्दिर और भी है जिसे Ti Prohm अथवा ब्रह्मा का मन्दिर कहते हैं। यह बहुत विशाल है इसके इर्द-गिर्द १००×१००० गज की चारदीवार है। इसके अन्दर पाए गये अनुशासनों के पढ़ने से पता चलता है कि किसी समय इस मन्दिर के १८ मुख्य पुरोहित तथा २७४० सामान्य अर्चक थे। मन्दिर के आधीन ६१५ देवदासियां तथा ६६, ६२५ अन्य परिचारक थे। मन्दिर के पीछे एक विशाल सरोवर ४५० गज चौड़ा और ९०० गज लम्बा अभी तक बना है यद्यपि जंगली वृक्षों ने उसे बहुत कुछ विकृत कर दिया है।

फ्रांसीसी अन्वेषक संघ के अनुसार "मेकॉग" की घाटी में लगभग ६०० पुराने खण्डरात हैं जिन की यदि पूरी २ खोज हुई तो न केवल प्राचीन कम्बोज अपितु समस्त हिन्दू-उपनिवेशों के उत्थान-पतन के इतिहास का पता चलेगा और उसका भारतीय इतिहास पर भी पर्याप्त प्रभाव पड़ेगा, यह निस्सन्देह है।

हमारी प्रबल भावना है कि आर्यसमाज को वृहत्तर-भारत में शीघ्र अपने प्रचारक भेजने चाहिए जो प्राचीन आर्य संस्कृति की खोज के साथ वहाँ के वर्तमान निवासियों में आर्य-धर्म व आर्य भावनाओं को जाग्रत करेंगे।

———

चीन जापान में वैदिक-धर्म का स्वप्न

लेखक—
श्री पं० ईश्वरदत्तजी 'विशारद'

अभी तक हमारा विदेश प्रचार कार्य जो हो रहा है और उस मे कहां तक हमें सफलता मिली है, इस लेख मे उसका दिग्दर्शन कराना हमारा उद्देश्य नही है। हम ने विदेश प्रचार मे योरोप, अमेरिका डच गायना और ट्रीनीडाड तक धावे किए है। कुछ पाठशालाए और आर्य समाज के भवन वहां बनवा कर उन्हें कुछ समय को सन्ध्या हवनादि से गु जा कर हम अपने को सफल मानने लग गए। हमारे मनस्वी विद्वानो ने "वसन्त वल्लोक हित चरन्त" को दृष्टि मे रख कर सुदूर देशो मे प्रचार किया। उस का प्रभाव वहां के निवासियों को कहां तक अक्षुण्ण बनाए रहा है, उस ओर हमने बाद में क्या किया ? इस ओर सोचने-विचारने का हम को शायद ही कभी मौका मिला है। विदेश प्रचार के धुनी और अलमस्त हमारे यहां अंगुलियो पर गिने जा सकते है।

मुझे जापान रहने और जापानियो की प्रकृति, आचार-विचार का अध्ययन करने का मौका मिला है। कुछ चीनी विद्यार्थी भी मिले है जो धार्मिक मामलों मे अधिक असहिष्णु नही दीखे। मेरा ख्याल है कि हमारी प्रचार-गति यदि पास पड़ौस के निवासियों मे प्रसार पाती, बढ़ती तो हमे आज से कहीं अधिक सफलता मिली होती।

"कृण्वन्तो विश्वमार्यम्" वेद भगवान् की आज्ञा को सम्मुख रख कर हमारा दावा कहां तक समादरणीय हुआ है। अब भी श्री० राहुल जैसा कर्मठ बौद्ध भिक्षु हमारे यहां कहां ! क्या तिब्बत और उत्तर के पार्वत्य प्रदेशों मे हमारा वैदिक नाद गूंज गया ? क्या कभी हमारे यहां के आदरणीय उपदेशको ने कन्धे पर कम्बल डाल कर उन गह्वर प्रदेशो मे जाने का, वहाँ की स्थिति को समझने का प्रयत्न किया है। क्या करें ? कैसे जांए ? भोजन और दूध की क्या व्यवस्था होगी ? धूप, बरसात और ओलो की मार कैसे सहे ?

भगवान बुद्ध के अनुयाइयो ने उनके बाद भी कैसा प्रचार कार्य किया है उसका इतिहास साक्षी है। पर आज कठिनाइयां बहुत है, भाषा ही नही आती, कैसे होगा और क्या होगा ? यही सोचते विचारते दिखाई देते हैं। क्या कभी किसी ने 'भीमताल' सप्तताल के सरोवरों पर दूर पहाड़ों पर स्थित ईसाई पादरियो की गति-विधि को देखा है ? हिम से श्वेत बाल और जीर्ण गत शरीर लिए हुए अहर्निश वे महा तपस्वी अपने उद्देश्य के लिये अपने को खपा देने के लिए तैयार बैठे हैं।

हमारे यहां प्रचार कार्य का ढंग ही अद्भुत है ! उसके लिए न तो ट्रेनिंग कैंप ही है और न पास पड़ौस के नकशे। उन्हे समझे भी तो कोन ? हजारों रुपया इस ओर व्यय हो रहा है। सार्व-

देशिक सभा का इस ओर प्रस्तुत्य कार्य हो रहा है पर उस मे भी इस दिशा में सुधार की अत्यन्त आवश्यकता है।

जापान जैसे समृद्धशाली देश मे और चीन से बड़े प्रदेश मे, आप वैदिक नाद गुंजा सकते हैं। इन पास पडौस के लोगों से मिलकर उन्हें अपने में मिलाकर आप अपनी बात समझा सकते है और बडी सरलता से। पर इस के लिए तप, त्याग और कष्ट मय जीवन भोगने के लिए आप को उद्यत होना होगा। १८५९ तक प्रोटेस्टेन्ट ईसाई पादरियोंने जापानमे कैसे-कैसे कष्ट उठाए! उन धीर वीर लगों ने भूखों प्यासे चोरी छिपे पड़े रह कर अपने प्रचार कार्य को कभी बन्द न किया।

वहां ११ फरवरी १८८९ में जब सब को धर्म-स्वातन्त्र्य हो गया अब इन की तपस्या का मीठा फल चखने को इन्हें मिला है। ईसाई धर्म अब अपनी सभ्यता, संस्कृति का जापानियोंके दिलोंपर बैठकर अनेक प्रकारके राग अलाप रहा है। जापान और चीन मे भारतवर्ष के श्रेष्ठ माननीय विचारों और स्तुत्य भावों का बहुत समय से आदर रहा बौद्ध धम का "अहिंसा परमो धर्मः" का है और अब भी जैसा तैसा चला ही आरहा है। सिद्धान्त तो वहां अब नाम मात्र को ही अवशिष्ट रह गया है। अब भी वे भारत के प्रति अपने को ऋणी समझते हैं। वे हृदय को अपील करने वाले धार्मिक उपदेश सुनने को उत्सुक हैं। आर्य समाज के योग्य विद्वान कुछ ही दिनो में वहाँ अपना प्रभाव जमा सकते है। मानिए आप को किसी प्रकार की दिक्कत नहीं उठानी पड़ेगी।

शाक, सब्जी, फल, दूध और शाकाहारी भोजन सर्वत्र छोटे से छोटे स्थानों पर सुविधा से मिल सकता है। यदि किसी समय भोजन नहीं भी मिलता तो उस के लिए क्या? बौद्ध भिक्षु सिर्फ दिन में एक बार भोजन करता है। रात्रि को वह चाहे कैसा ही थका मांदा निस्तेज क्यो न हो दूध तक न पियेगा। यदि वास्तव में हमें इस ओर लगन है तो कुछ योग्य उपदेशकों को अपने अनुभवी विद्वानो और सन्यासियों के पाद पद्म बैठाना होगा। विदेश प्रचार के लिए उन्हें सब बातों से सज्जित करना होगा। वहां की भाषा अध्ययन का प्रबन्ध करना पडेगा। जापान-चीन की भाषा मे हमारे यहां जैसी ही वाक्य-रचना होती है। बोलने समझने और व्याख्यान देने की क्षमता आप शीघ्र ग्रहण कर सकते हैं। हां! पुस्तक पढ़ने और समझानेके लिए कुछ समय और धैर्य की प्रतीक्षा करनी पडेगी।

आप को पहले बता चुके हैं कि चीन-जापान में ईसाई, मुसलमान दिनों-दिन अधिक संख्या मे बढ़ रहे हैं। सच्चे उपदेशों और हृदय को अपील न करने वाली बातों से पाठको ने चीन की हलचलों में देखा होगा। वहां के निवासियों ने किस प्रकार बाइबल की पुस्तकों के ढेर-के ढेर सडकों पर जला डाले हैं। यदि हमारे प्रचार कार्य की अव्यवस्थित प्रणाली को ठीक ढंग पर लाकर व्यवस्थित रूप दिया जाए तो हम पास पडौस के लोगों मेंअपने आदर्श वैदिक सिद्धान्तों का भली प्रकार प्रचार कर सकते हैं और फिर बढ़ते हुए हम सारे संसार में वैदिक-नाद बजा सकते हैं।

इस सब के लिए रुपया कोई अड़चन नहीं

है। आप का आदरणीय उपदेशक विदेश में भूखा नही मर सकता है। अब भी भारत का मुसलमान मौलवी रंगून, पिनांग, सिंगापुर, हांगकोंग मे ठहरता और प्रचार करता हुआ आगे बढ़ता ही जाता है। सब जगह के भारत व्यापारी लोग उसे सहायता देते रहते हैं। और वह मजे से चीन-जापान मे प्रवेश कर लेता है। हिन्दू व्यापारी भी तृषित नेत्रों से वहां आप की बाट देख रहे है। आप जाइए तो यश के साथ आप को धन राशि भी मिलेगी और आदर भी होगा।

"तत्कुरू पौरूषम" को सम्मुख रख कर हमे अपना मार्ग स्वयं बना लेना होगा। ससार की बाधाएं हमें रोक नही सकतीं। मेह, आंधी, झंझा वात और भूख-प्यास हमारे मार्ग को पथ-भ्रष्ट नहीं कर सकते।

वास्तव मे यदि हमें अपने वैदिक धर्म का दिग् दिगन्त मे प्रसार देखना है तो उस के लिए तप, त्याग, और तपस्या का जीवन व्यतीत करना होगा। सुदूर पूर्व के कोरिया चीन जापान पास पड़ौस के लोगो मे आप बैठ कर अपनी सभ्यता, सस्कृति और प्रभु के सत्य मगलमय उपदेश को सुना सकते हैं। दूर स्थित योरोपीय देशों से कहीं अधिक आप का व्यापक प्रभाव इन पर पड़ेगा। कुछ समय ही में आप देखेंगे कि हमारा प्रचार कार्य सुसंगठित हो रहा है और बिना विशेष प्रयत्न के आगे बढ़ रहा है।

वैदिक भक्तिवाद

श्री पूज्य महात्मा
नारायणस्वामी जी महाराज

भक्ति उत्कृष्ट प्रेम को कहते हैं। उत्कृष्ट प्रेम वह होता है जिस मे प्रेमी अपने प्रियतम के प्रेम में इस प्रकार लीन होजावे कि उसे अपनी सुध बुध न रहे। वेद में इसी अवस्था के लिये एक जगह इस प्रकार सकेत किया गया है कि "हे ज्योतिमय प्रभू! यदि मै तू होजाऊ और तू मै होजावे तब प्रेमी तेरे अमरता के जीवन रूप आशीर्वादको प्राप्त करलेता है।" (ऋ० ८।४४।२३) ऋग्वेद की इन ऋचा में जहा यह कहा गया है कि "मै तू हो जाऊ और तू मै होजावे।" इस का भाव स्पष्ट है कि प्रियतम और प्रेमी के बीच में मेरे तेरे पन का भाव नहीं रहना चाहिये। यह मेरे तेरे पन का भाव उस समय प्रेमी के हृदय से दूर हुआ करता है जब वह अहंकार के जाल से बाहर होजाया करता है। जब तक अहंकार के माया जाल में प्रेमी रहा करता है तब तक उस के प्रेम को उत्कृष्ट या अगाध प्रेम नहीं कह सकते। उसका प्रेम अधूरा है उस ने अभी भक्ति का रूप ग्रहण नहीं किया है। कारण स्पष्ट है कि प्रेमी का ज्ञान अभी केवल इन्द्रिय-ज्ञान है वह ज्ञान केवल पदार्थों को केन्द्र बनानेकी योग्यता वाला ज्ञान है। जब प्रेमी इस ज्ञान से ऊपर होता है तब वह अन्तर्मुखी होकर विशेष ज्ञान=विज्ञान प्राप्त कर ता है। यह विशेष ज्ञान अभ्यन्तर प्रमूत (आत्म-ज्ञान) होता है। प्रेमी इसी ज्ञान (विज्ञान) को, जिस में भक्ति की पुट रहा करती है, प्राप्त करके अहंकार के माया जाल को तोड़ देता है और मेरे तेरे पन के भाव से ऊंचा हो जाता है। अब प्रेमी ने उस अवस्था को प्राप्त कर लिया है जिसमे वह समझता है कि अब सब कुछ प्रियतमके समर्पित है। यहीआत्म समर्पण वैदिक भक्तिवादका चरम लक्ष्यहै। आत्म समर्पण करना प्रियतमकेसाथ तादात्म्य होजाना है। इसी अवस्था के लिये ऋग्वेदकी ऊपर संकेतित ऋचाका उल्लेख हुआ है —

यदग्नेस्या अहं त्व त्व वा घा स्या अहम्।
स्युष्टे सत्या इहाशिष।

इसी अवस्था के लिये कबीर ने कहा है —

जब में थी तब हर नहीं जब हर तब में नाय।
प्रेम गली अति साकरी जा मे दो न समाय॥

इसी अवस्था के लिये एक उर्दू के कवि ने लिखा है —

बेखुदी छाजाय ऐसी दिल से मिट जाये खुदी।
उनके मिलने का तरीक़ा अपने खो जाने मे है॥

ज्ञान-गाम्भीर्य

❀

अक्षण्वन्तः कर्णवन्तः सखायो
मनो जवे ष्वसमावभ्रुवुः।
आदघ्नाश उप कक्षास उत्वे
हृदा इव स्नात्वा उत्वे ददृशे॥

ऋग्वेदीय इस मन्त्र के शब्दों का भाव यह है कि नेत्रादि समस्त इन्द्रियों की विशेष समता के कारण, समस्त मानव-मण्डल समान सा प्रतीत होता है, परन्तु मनोवेग और बुद्धि-बल में सब समान नहीं हैं। उदाहरण के लिए कल्पना कीजिये अथवा कल्पना ही क्यों? मंत्र में आये हुए हृदा शब्द पर गम्भीर दृष्टि से देखिये! ज्ञान का एक अथाह शान्त सरोवर विशालता और कमनीयता का केन्द्र बन कर सब प्राणियों को अपनी ओर आकर्षित कर रहा है और कह रहा है कि मुझ में स्नान कर के मानव जीवन को सफल बनाने के लिए बद्ध परिकर होजाइये इत्यादि। परन्तु कोई विरले सुधी, सुधीर धर्मात्मा पुरुष ही इसमें गोता लगा कर मौक्तिक लाभ प्राप्त करते हैं। दूसरे तो, कोई मुख पर्यन्त, और कोई बगल पर्यन्त इस में उतरते हैं। एव कोई किनारे पर बैठ कर केवल स्नान मात्र कर लेते हैं। हा! कोई ऐसेभी तो हैं जो दर्शन मात्र से ही अपने उद्योग्य की इति श्री समझ लेते हैं। और कोई कोई ऐसे भी हैं कि इस की ओर भूल से भी नहीं जाते। केवल परमात्मा की कमियों का कथन करते करते दुर्दैव के प्रकोप का आह्वान करते रहते हैं। भला! इस में किसी का क्या दोष? अपनी तैयारी तथा उद्योग की हीनता ही इस अज्ञान्तता का कारण है। वसन्त में भी करीर, पत्र हीन रहे तो वसन्त का क्या दोष? चारों ओर धाराधरों की अविरल जल धारा से जगतीतल के आप्लावित होने पर भी चातक—पोत—चंचु रिक्त रहे ता धाराधर १४४ की धारा में नहीं आसकता। अजी! दिवान्ध यदि दिनकर की किरणों का सदुपयोग नहीं करता तो क्या सूर्य ही दोषी है? कदापि नहीं। हम अपनी विषमता के आप ही कारण हैं। पंजाब में कहा करते हैं, "एका अक्ल खुदाये दी,एका सीख लई। एका मूल में आमदी, पत्थर बून्द पयी॥"

चाहे कोई कितना ही कहो निपट हठीले अट-पटे अपनी मनमानी चाल नहीं छोड़ते। साख्य शास्त्र में लिखा है। (न मलीन चेतस्युपदेश बीज प्ररोहोऽजवत्) अज नाम यहा ऊषर भूमि का परिचायक है नकि इन्दुमति पति का। एक दरिद्री यावद आयु एक ऐसी भूमि पर बैठा रहा जिस की एक गज गहराई में विपुल धनराशि गडी हुई थी जब वह मर गया तब किसी दूसरे ने सोचा कि मरने वाला मागता मागता ही मरा है, इसने यहा कुछ जरूर रखा होगा। थोड़ीसी भूमि खोदी फिर क्या था? बिल्ली के भाग्य छींका टूट पडा। एक लोकोक्ति भी तो है—सकल पदारथ हैं जग माहीं। करम हीन कछु पावत नाहीं।

कबीर जी कहते हैं—

पानी में मीन पियासी। मोही देखत आवे हासी॥

—विरम्यतेऽधुना।

श्री स्वामी
केवलानन्द सन्यासी

सत्यार्थप्रकाश लेखमाला

कठोरता

[लेखक—श्री स्वामी स्वतंत्रानन्द जी महाराज]

सत्यार्थ प्रकाश में मूर्ति पूजा का निषेध है इस विषय में जो शब्द महर्षि जी ने लिखे हैं कई सज्जन कहते हैं वह कठोर है। ऐसे शब्दों का प्रयोग नहीं होना चाहिये था। मैं इस विषयमें कुछ लिखने को तैयार नहीं कि ऐसे शब्दों का प्रयोग होना चाहिये वा न होना चाहिये परन्तु मैं इस लेख मे अपनी ओर से कुछ न लिख कर दूसरे भक्तों के शब्द लिखना चाहता हूँ जिससे यह पता लगा जाय कि वह इस विषय में किस प्रकार के शब्दों का प्रयोग करते हैं। इसमें भी प्रथम सत्यार्थ-प्रकाश का एक पाठ लिखता हूँ। उसके पश्चात सिखों की धर्म पुस्तक गुरु ग्रंथ साहिब और दशम ग्रथादि के कुछ पाठ लिखूंगा। पश्चात् कबीर जी, दादूजी तथा शिवदास जी लिखित ग्रंथों मे से पाठ लिखूंगा ताकि पाठकों को निर्णय करने में सरलता हो और वह निश्चित रूप से निश्चय करसकें कि सत्यार्थ प्रकाश का पाठ कितना कठोर है और दूसरे पुस्तकोंका पाठ कितना कठोर है। आशा है पाठक इस पद्धति से अवश्य लाभ उठावेंगे।

सत्यार्थ प्रकाश मे एकादश समुल्लास मे वेद को धम पुस्तक मानने वाले मतों का खण्डन है उसी में मूर्ति पूजा विषय पर निम्न पाठ मिलता है "जो माता पितादि के सामने नैवेद्य वा भेंट पूजा धरेंगे तो वे स्वय खालें गे और भेट पूजा लेंगे तो हमारे मुख वा हाथ में कुछ न पड़ेगा। इससे पाषाणादि की मूर्ति बना, उसके आगे नैवेद्य धर घंटा-नाद टं ट पू पूं शंख बजा, कोलाहल कर अंगूठा दिखला अर्थात् "त्वमगुष्ठ गृहाण भोजन पदार्थं वाहं ग्रहीष्यामि" जैसे कोई किसीको छले वा चिढावे कि तू घटा ले और अंगूठा दिखलावे उसके आगे से सब पदार्थ ले आप भोगे, वैसे ही लीला इन पुजारियों अर्थात् पूजा-नाम-सत्कार के शत्रुओं की है। मूढ़ों को चटक, मटक, चलक, झलक मूर्तियों को बनाठना आप वेश्या वा भडुआ के तुल्य बन-ठन के विचारे निर्बुद्धि अबोधों का माल मार के मौज करते हैं—सत्यार्थ प्रकाश ११ समुल्लास (३३४ पृष्ठ)। जिन के नीचे रेखा है वह शब्द ध्यान मे रखने चाहिये।

(१) एके पाथर कीजे भाउ।
दूजे पाथर धरीए पाउ॥
जे ओह देउता ओह भी देवा।
(राग गुजरी नाम देव)

(२) घर महि ठाकुर नदर न आवे।
गल महि पाहन लै लटकावे॥
जिस पाहन कउ ठाकुर कहता।
ओह पाहन लै उसको डुबता॥
गुनहगार, लूणहरामी।
पाहन नाव न पार गिरामी॥
राम सूही म० ५ (गु० अर्जुन)

(३) जो पाथर को कहते देव ।
ताकी विरथा होवे सेव ॥
न पाथर बोले न किछ देइ ।
फोकट धर्म निष्फल है सेव ॥
(राग भैरव म० ५ कबीर)

(४) कुंगू चन्दन फूल चढाए ।
पैरी पै पै बहुतमनाए ॥
माणुया मग मग पहने खाइ ।
अन्धी कमी अन्ध सजाइ ॥
भुखिया देइ न मादिया रखे ।
अन्धा झगडा अन्धी सत्थे ॥
(सारग वार म० १ नानक जी)

(५) पाहन परमेश्वर किया पूजे सब ससार ।
इस भावा से जो रहे बूडे काली धार ॥
(कबीर)

(६) काहूँ लै पाहन पूज धरयो सिर ,
काहूँ लै लिंग गरे लटकायो ।
काहूँ लखयो हरि अवाची दिसा महि,
काहूँ पछाहि को सीस नवायो ॥
कोऊ बुत्तान को पूजत हैं पसु,
कोऊ मृतान को पूजन धायो ।
कूर क्रिया उरभयो सब ही जग,
श्री भगवान को भेद न पायो ॥
(जाप जी ३० गुरू गोबिन्द सिह जी)

(७) पान थके पाहन कर परसत,
कछु कर सिद्ध न आई ।
अछत, धूप, दीप अरपत है,
पाहन कछु न खै है ।
तामें कहा सिद्ध है रे जड़,
तोहि कहा वर दै है ॥ (हजारे शब्द ६
-गु० गोबिन्द सिंह)

(८) काहे को पूजत पाहन को,
कछु पाहन मे परमेश्वर नाहीं ।
ताही को ध्यान परमान सदा,
यह फोकट धर्म करे फल नाही ॥ १६

(६) जो जगतै करहैं तपसा,
कछु तोहि प्रसन्न न पाहन कै है ।
हाथ उठाय भली विधिसों जड़,
तोहि कछु वरदान न दैहै ।
कौन भरोस भयो इह को कह,
भीर परी नहीं आन बचै है ।
जान रे जान अजान हठी,
इह फोकट धर्म सुभरम गवै हैं ॥ २२

(१०) नाको कर पाहन अनुमानत,
महामूढ़ कछु भेद न जानत । ॥ ३६२

(११) पाहन की प्रतिमा को अध कध है पुजारी,
अन्तर अज्ञान मत ज्ञान गुर हीनो है ।
४८५ । कवित सवैये (गु० गो०)

इस पाठ में गुनहगार, लूणहरामी, अन्धा-झगड़ा, अन्धी सत्थ, पसु, जड़, अज्ञान, हठी, फोकट-धम, महामूढ़, अन्धा शब्द मूर्ति पूजकों के लिये हैं। इसी भांति और

(१२) अन्धे गु गे अन्ध अन्धार ।
पाथर ले पूजहि मुगध गवार ॥
(वार विलावल मे है)

(१३) भात पिहत अर लापसी करकरा कासार ।

भोगए हारे भोगया उस मूरत दे मुह छार ॥
राग सोरठ म० १ (गुरु नानकजी)

इस में अन्धे, गुंगे, मुग्ध, गवार शब्द हैं और खाने वाले पुजारी है मूर्ति के मुंह में छार ही है। क्या यह शब्द महर्षि के मात्र को ही नहीं कह रहे हैं ?

१. माटी के कर देवी देवा,
काट २ जीव देइया जी।
जो तुहरा है साचा देवा,
खेत चरन क्यों न लेइया जी ॥
कबीर बीजक पृ० २२६ शब्द ७६

२. कहहि कबीर झूंठे मिल झूठा,
ठग ही ठग बिवहारा।
कबीर बीजक पृ० २५८ श० ६३

प्रथम में निषेध, और दूसरे में झूठे और ठग लिया है

३. जल पीवे पाषाण धोय,
सोतो आदि अन्त पाषाण होय।
आकाश शीस पाताल पाप,
सो संपुट में कैसे आप।

४ पथर पूजियां हर न मिलेरे,
सब कोई पूजो जाय।
पूजो नी घररी घरटिया,
सब जग पीसर खाय।

इस में पाषाण होने का आदेस है और चक्की पूजने की युक्ति है। यह दोनों पाठ राम स्नेही धर्म प्रकाशके हैं।

५. पथर पीवै धोय कर, पथर पूजे प्राण।
अन्त काल पथर भए, बहु बूड़े इह ज्ञान ॥
दादूजी ॥१४०

इस में भी पथर पूजा से पथर होने का विधान है।

६. गरीब पाहन सेती प्रतकी, चेतन सेती दोष
दोजख धारा जाहिंगे कदी न पावे मोक्ष ॥
॥ चाणिक अङ्ग २

गरीब गाल बजाए क्या हुआ,
तुलसी डाल कटोर।
भूले भक्ति भगवत की,
पाहन सेंसिर फोर ॥ ३०

गरीब पाती तोरे वृक्ष की,
जड देवा नहीं खाय।
इससे चौरासी भली,
ऊंट अजा ले जाय ॥ १९

गरीब भेड़ अजा सेवन करो,
ये ठाकुर तहकीक।
जड आगे चेतन खडा,
नाहक गाबे गीत ॥ २०

गरीब जडकूंजूनी पूजता,
जड जूनी नहीं देत।
सो तो निश्चय जानीए,
वागड़ थलके पेत ॥ ६६

एक सोने का सालिंग, जरी बाय पहरान।
गरीबदास इस मनुष्य तें, अकल बड़ी अक श्वान ॥

काशीपुर के सालिंग, समै समदे आय।
गरीबदास कुत्ता तहा मूते टांग उठाय ॥
कुत्ता मुख में मूत है, कैसे सालिग्राम।

गरीव दास जुलहा कहे, गई अकल किस गाम
धोय धाय नीके किये, फिर आय मारी धार ।
गरीबदास उस पुरी में, जुलहाहसे चमार ॥
पा०

पीतल ही का थाल है, पीतल का लोटा ।
जड़ मूरत को पूजते, आवेगा टोटा ।
पीतल चामच्या पूजिए, जो खान परोसे ।
जेड़ मूरत किस काम की, मत रहो भरोसे ।
विलावल ।

बाल मुकुन्द मुख बोलत नाहीं, लटक विहारी लूटे।
गरुवा के सिर मार परेगी, पिण्डाकदे न छुटे ॥

गरुवा के सिर फरुवा फोडो घर से काढ घसीटो ।
इसके मारे पाप नहीं है, याको निश्चय पीटो ॥
या देवलमें देव नहीं है, पान पता से खाई ।
बीली बीठ सीसपर कीन्ही, कुते धार चलाई ॥
मूरत के नहीं श्रवण जिसमें, गरुवा घंट वजावे।
खीर खांड का भोजन धरके, आपन ही गुटकावे ॥
वैरागर की परख नहीं है, पाहन गाठी बाचे ।
या गरुवा के भीतर लावो, ये गरुवा सब आंचे ॥

पाहनकू परमेश्वर कहते, या निंधा वड़ी भारी ।
याकी मोकू समझ नपरही,पूजा करीका गारी ।
६ भैरो भूत मसानी पूजें, दुरगा देवी ध्यावै ।
ऊती के तो तवही वाजै बकरे आन कटावैं ॥

नैन, नाक, मुख,श्रवण कीहै,
मुख ते कदे न बोले ।
पाडे की तो अकल गई है,
यह जग मारया झोले ॥

पग नहीं चले, दसब नहीं देवै,
न कुछ खाय न पीवे ।
बड़ा अन्देसा मोकू है,
यौह देवा मरे कि जीवे ॥
(राग आसावरी)

गरीबदासजी के ग्रथ मे सेकुछ शब्द दिये हैं । इसी भाव के इसी ढंग पर उसमें अनेक शब्द हैं इन को पाठक ध्यान से पढ़े और फिर देखें। गरीब दास जीने जो शब्द लिखे हैं वह कठोर हैं अथवा सत्यार्थ प्रकाश में महर्षि लिखित शब्द कठोर हैं ।

मेरी सम्मति में तो यह है कि जिस किसीने मूर्ति पूजा का खडन किया है उसने कठोरता का विचार नहीं किया । उसने घटनाओंको सामने रखकर उस पर लिखा है । उसी दृष्टि से पाठकों को देखना चाहिये ।

सामवेद स्वाध्याय मञ्जरी

लेखक—
पं० धर्मदेव सिद्धान्तालङ्कार,
विद्यावाचस्पति, बंगलौर

मन्त्रों का पद्यानुवाद

आग्नेय काण्डम्

प्रथम अध्याय

२ ३ १ २   ३ १ ‍ ३ २
(१) ओ३म् अग्न आयाहि वीतये गृणानो
३ १ २   १ ‍   ३ १ २
हव्यदातये । निहोता सत्सि बर्हिषि ॥

पद्यानुवाद— ऋ० ६।१६।१०

हे ज्ञानरूप ईश्वर! हिय में मेरे समाओ।
अज्ञानतम है छाया, इसको परे हटाओ॥
दे ज्ञान ज्योति इसको, परमेश जगमगाओ।
निर्मल हृदयके आसनपर तुम विराज जाओ।

१ ‍   ३ २ ३   २ ३
(२) ओ३म् त्वमग्ने यज्ञाना ँ होता-
१ २   ३ २   ३ २ ३ १ २ ३ १ २
विश्वेषा ँ हितः । देवेभिर्मानुषे जने ॥

पद्यानुवाद— ऋ० ६।१६।१

शुभकर्म जो भी जग में, उपकार के लिये हो।
स्वीकार तुम खुशी से, उसको सदा किये हो।
हितकारि तुम सभी के, हे प्रेममय प्रभो हो।
ज्ञानी जनोंके हिय में आसीन तुम विभो हो॥

(३) ओ३म् अग्निं दूतं वृणीमहे होतारं
विश्ववेदसम् । अस्ययज्ञस्य सुक्रतुम् ॥

पद्यानुवाद— ऋ० १।१२।१

वरण करें परमेश्वर का हम, मित्ररूपसे जो स्वामी।
कष्ट निवारक है सुखदायक, सर्वज्ञातान्तर्यामी।
इस उत्तम संसार यज्ञ का, जो जगदीश्वर कर्त्ता है।
ज्ञानरूप जो सर्वशक्तिमय, सब लोकों का धर्त्ता है॥

(४) ओ३म् अग्निर्वृत्राणि जंघनद् द्रविणस्यु-
र्विपन्यया । समिद्धः शुक्र आहुतः ॥

पद्यानुवाद— ऋ० ६।१६।३४

नाश करे परमेश्वर तमका, विघ्नों का अरु पापोंका।
सर्वशक्तिमय उसके आगे, नहीं काम सन्तापोंका॥
शुद्धरूप से स्तुति करता जो,
तन मन धन जन अर्पण कर।
ज्योतिर्मय हरि उसके संकट,
लेता है क्षण भर में हर॥

(५) ओ३म् प्रेष्ठं वो अतिथि ँ स्तुषेमित्र-
मिव प्रियम् । अग्ने रथं न वेद्यम् ॥

पद्यानुवाद— ऋ० ८।८४।१

प्राणों से बढ़कर प्यारे उस
ईश्वर की स्तुति करता हूँ।
जो प्रिय मित्र समान सुखप्रद
ध्यान उसीका धरता हूँ॥
सर्वव्यापक अतिथि सदृश जो
पूज्य उसी का स्मरण करूँ।
रथ समान सुखवाहक को स्मर
भय चिन्ता का हरण करूँ॥

(क्रमशः)

अनुवादक की टिप्पणी—गत एप्रिल मास में वानप्रस्थाश्रम ज्वालापुर में मैंने लगभग १५ दिन सामवेद की कथा की थी जिसमें व्याख्या के साथ साथ पद्यानुवाद भी बनाकर सुनाया था। अनेक सत्संगियों के अनुरोध से उसे प्रकाशित किया जा रहा है। —धर्मदेव

आर्यसमाज में "आशा" और "निराशा" वाद !

ले०—
श्री शिवचन्द्र जी

संसार के लिए आर्यसमाज का सन्देश आशा का सदेश था परन्तु गत १० वर्षों में इस समाज में सर्वत्र निराशा क्यों छा गई ? यह एक प्रश्न है जिसका हल हमें सोचना चाहिये ! बहुत से पाठक इस बात को अनुभव करते होंगे कि ससार में नास्तिकता को फैलाने का कारण वस्तुत आस्तिक ही सिद्ध हुए हैं ! यह क्यों ? जनता ने बहुतसे आ-स्तिकों को अपने पाण्डित्य, तर्क-बल, वाक्य-चातुर्य तथा लेखन शक्ति द्वारा आस्तिकता तथा प्रभु की सर्वव्यापकता का प्रचार करते हुए देखा और उनके प्रबल प्रमाणों तथा युक्तियों पर वाह वाह की ! परन्तु जब जनता ने उन्हीं आस्तिकों को प्रचार के बाद सासारिक व्यवहार में देखा तो उन्हें दुराचार करते, मद्यमास का सेवन करते, रिश्वत लेते, झूठ बोलते, छल कपट करते, बेईमानी करते, दूसरों को कष्ट पहुंचाते तथा इसी प्रकार के अन्य दुष्कर्म करते हुए पाया तो उनके इस आचार और विचार के घोर भेद ने जन साधारण को ऐसा आघात पहुँचाया कि वे आस्तिकता के भव्य भवन को छोड़ कर नास्तिकता के द्वार पर पहुँच गए ! ठीक ऐसा ही दृष्टान्त आर्यसमाज में आई हुई निराशा पर घटता है !

आर्य समाज में भी निराशा को फैलाने वाले वस्तुत आशावादी ही हैं ! इन आशावादियों ने जन साधारण को सब्ज बाग दिखा दिखा कर इस अवस्था तक पहुँचा दिया कि वह सवत्र सुनहरा दुर्ग देखने के स्वप्न लेने लगे ! परन्तु इन आशावादियों की धुआधार वक्तृताओं के पश्चात् जब जन साधारण इनके व्यवहार, चरित्र और साधारण गति-विधि देखने लगी तो उनको आशा निराशा में परिवर्तित हो गई ! इसकी पुष्टि मे कई प्रमाण हो सकते हैं जिनमें से सक्षिप्त में कुछेक निम्न प्रकार हैं —

भगवान दयानन्द के बाद से ही कतिपय महान व्यक्तियों को छोड़कर अन्य बहुत से कार्य-कर्त्ता वेद का नाम लेकर ऐसी बातों का भी प्रचार करते रहे हैं जिनपर वे स्वय ही आमिल नहीं रहे हैं ! जनता ने उन्हें बहुरूपिया और उनके उस प्रचार को बहुरूपिया पन समझा !

फर्वरी १९२५ में भगवान दयानन्द की जन्म शताब्दी मनाई गई। जनता को इस अवसर पर बड़ी बड़ी आशायें दिलाई गई थी ! जिस प्रकार बौद्धकाल में बौद्धमत का विस्तार करने के लिए समय समय पर चार बड़ी कौंसिलों की आयोजना की गई थी, उसीप्रकार समस्त भूमण्डल पर वैदिक धर्म के विस्तार के लिए इसे आर्य समाजकी प्रथम

कौन्सिल बताया गया था। वहां पर बड़े बड़े भिन्न भिन्न सम्मेलन हुये, बड़ी २ स्कीमें और प्रस्ताव स्वीकार किए गए। ऐसा प्रतीत होता था मानो कुछ वर्षों के अन्दर ही सारी पृथ्वी पर आर्य-धर्म का प्रसार हो जावेगा। परन्तु इस महा यज्ञमें स्वीकार किए गए प्रस्तावों को आशावादियों ने कार्यरूप में परिणत न किया। निस्सन्देह यह महायज्ञ बड़ा शानदार हुआ था परन्तु इसके बाद इसकी क्रियात्मक रूपी दक्षिणा नहीं चुकाई गई इसीलिए यह यज्ञ निष्फल रहा। वास्तव में यहीं से आर्य समाज में 'निराशा' का सूत्रपात होता है। इसके बाद से ही 'निराशा' आर्य समाज में जन साधारण की रोजमर्राह की वस्तु बन गई और आर्य समाज के सच्चे हितैषियों तथा वास्तविक प्रेमियों के हृदयों के लिए निरन्तर वेदना का कारण बन गई। आर्य समाज से सम्बन्धित कोई भी ऐसा पत्र न रहा जिसके प्रत्येक अङ्क में आर्य समाज में बढ़ती हुई निराशा के सम्बन्ध में दुःख के आंसू न बहाये जाते रहे हों।

इसके बाद सन् १६२७ में आर्य समाजियों के नागरिक अधिकारों की रक्षा के उद्देश्य से देहली में आर्य्यन कांग्रेस हुई उस समय आर्य जनता की उमङ्गें और जोश देखने योग्य था बड़ी धुआंधार वक्तृतायें हुईं। बड़े मार्के के प्रस्ताव पास हुये परन्तु इस कांग्रेस का भी इन आशावादियों द्वारा कोई परिणाम न निकला और निराशा की गति अधिक तीव्र हो गई।

अक्तूबर सन् १६३३ में ऋषिकी निर्वाण अर्द्ध शताब्दी अजमेर में होने को थी। यह प्रगट किया गया था कि जो कार्य अबतक नहीं हो सका। इसके बाद अवश्य किया जावेगा। इस अवसर पर भी एक वृहदार्य सम्मेलन की रचना की गई इसमें बड़े लम्बे वादविवाद हुए, बड़े २ निश्चय हुए, परन्तु आशा वादियों ने इसके पश्चात् भी कुछ न कर इस महा सम्मेलन को भी एक महान् आडम्बर सिद्ध किया और निराशा में वृद्धि की।

इसके बाद आर्यसमाज के उपनियमों के संशोधन की चर्चा चली और जन साधारण का यह ख्याल था कि उनका संशोधन हो जाने के बाद आर्य समाज में से पदलोलुपता लड़ाई-झगड़े तथा शिथिलता आदि दोष बहुत कुछ दूर हो जावेंगे परन्तु इसका भी परिणाम कुछ न हुआ और निराशा दिन दूनी, रात चौगुनी बढ़ने लगी।

हमें निराशा वादियों से भी कम शिकायत नहीं है यद्यपि इनके जन्मदाता आशावादी ही हैं। आर्य समाज में निराशावादियों की दो श्रेणियां हैं। एक तो वे हैं जो आर्य समाज को दिनरात केवल कोसते, नुक़्ता चीनी करते रहते हैं। वे न अपने जीवन को आर्य जीवन बनाते हैं, न अपने परिवार के जीवन को और नाही आर्य समाज के सेवा कार्यों में अपना कोई समय देते हैं। ऐसे व्यक्तियों के साथ हमारी कोई सहानुभूति नहीं है और न हम उनको आर्य ही कहने के लिय तैयार हैं। हम चाहते है कि यदि ऐसे लोग पहिले अपने को आर्य न बनावें और दूसरों पर नुक़्ताचीनी करते रहें तो वे जितनी जल्दी हो आर्य समाज को छोड़ देवें उतना ही अच्छा है। जिस विषय में मैं शामिल नहीं मुझे

उस विषय मे दूसरे पर उगली उठाने का कोई नैतिक अधिकार नहीं ।

दूसरे निराशावादी वे हैं जिनके हृदय मे ऋषि के मिशन को नष्ट होते देख कर वास्तव में आन्तरिक वेदना होती है और उनका अपना तथा कतिपय के अपने परिवारों का भी जीवन आर्य है। उन्होंने बहुत वर्षों तक आर्य समाज की सेवा भी की है, वे लोग शान्ति पसन्द रहे हैं। परन्तु जब उन्होंने आर्य समाज में कलह, द्वेष, लडाई-झगडे और स्वार्थहित साधनों के लिये पार्टी बाज़ी को बढते हुये देखा तो उन्होंने आर्य समाज के संगठन से किनाराकशी कर ली और शनै शनै करते चले जाते हैं। हम उनके इस रवैये से सहमत नही हैं। हम चाहते हैं जिनका आर्य समाज की सेवा में कोई स्वार्थहित तथा पद लोलुपता नही है और जो ऋषि के मिशन को आगे बढता हुआ देखना चाहते हैं, उन्हे अपना सगठन कर आर्य समाज की सेवा में जुट जाना चाहिये। संगठन को त्याग कर बाहर हो जाना एक प्रकार की कायरता है।

हम निराशावादी नही हैं और न ही निराशावाद को आर्य समाज में फैलते देखना चाहते हैं परन्तु हम आशावादियो से यह नम्र निवेदन करेंगे कि अपने वह 'आशावाद' को क्रियात्मक रूप देवें जिन आशाओं (विचारों,प्रोग्रामों तथा निश्चयों आदि) को वह जनता के सम्मुख रक्खें, उन आशाओं की पूर्ति में वे अपना तन, मन, धन लगा देवें। यदि उनका आचरण और व्यवहार उनके आशावाद में उनका साथ नहीं देता तो वे आर्य समाज में निराशा को फैलाने में सहायक सिद्ध होंगे। यह बात उनके उद्देश्य से विरुद्ध है। अत इस प्रकार के आशावादी जो आचरण को साथ नहीं रखते उन्हें आर्य समाज मे अपना स्थान दूसरों के लिये रिक्त कर देना चाहिये ताकि दूसरे अपने उत्तरदायित्व को महसूस कर अपने आचार और व्यवहार के बल पर आर्य समाज की आशाओं को व्यवहारिक रूप देकर जनता को दिनों दिन उन्नति के मार्ग पर ले जा सकें। तब ही वास्तव मे आर्य समाज में से निराशावाद दूर होकर आशावाद की सच्ची स्थापना हो सकती है।

—❀—

शंका समाधान

बनारस के श्री पं० भगवद्दत्त जी पुरोहित ने धर्म्मार्य्य सभा के अध्यक्ष से कुछ प्रश्नों के उत्तर प्राप्त किए हैं। उन प्रश्नों को और उत्तरों को हम 'सार्वदेशिक' के पाठकों के लाभार्थ यहां देते है —

प्रश्नावली

१ क्या आर्यसमाज चारों वर्णों (ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र) को आर्य मानता है या द्विजों ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य) को ही आर्य मानता है? स्पष्ट करें कि शूद्र आर्य कोटि में हैं या अनार्य कोटि में?

२ अनार्य शब्दको व्याख्या जो भगवान् दयानद जी महाराज ने अपने ग्रथों में की है वही स्पष्ट है या कुछ और भी की जायगी?, यदि है त स्पष्ट व्याख्या लिखें?

३ क्या शूद्र को और शूद्र के बालक को यज्ञोपवीत और वेदाध्ययन का अधिकार है? यदि है तो—

क—किस आयु में? और,

ख—किस विधान से?

ग—किस आधार पर?

४ जब आर्य समाज वर्ण-व्यवस्था गुण कर्मानुसार मानता है तो कौन २ कर्म किस २ वर्ण का कर्म है? और किस आधार पर? यथा—

मट्टी के पात्र बनाना, तेल निकालना, पानी भरना, क्षौर कर्म (हजामत बनाना), कपड़े धोना, चमड़ेका काम करना, पाखाना साफ करना आदि। उपरोक्त कर्मों की व्यवस्था दें कि कौन २ कर्म किस २ वर्ण का है और क्यों?

५. शूद्र मुंह पर पट्टी बाध कर भोजन बनावें (दशम् स)

क—ऐसा आदेश क्यों किया?

ख—क्या आर्य जगत् में इसका पालन हो रहा है?

ग—क्या गुरुकुलादि मे याचक क्या शूद्र हैं?

घ—क्या वे यज्ञोपवीत शून्य हैं? स्पष्ट करें।

६. जब आर्य समाज वर्ण व्यवस्था कर्म से मानता है तो सूचित करें कि एक वर्ण का पिता और दूसरे वर्ण की माता पर सतान किस वर्ण की मानी जायगी? पिता के वर्ण की या माता के वर्ण की?

ख—सतानका कर्म भावी जीवनके लिए निश्चित कर दिया जायगा या अपनी योग्यतानुसार करने के लिये जैसे क्षत्रिय से ब्राह्मणी में उत्पन्न हुई संतान क—किस वर्ण मे? ख— उसके लिये क्या कर्म निश्चित हैं? ग—स्वतत्र इच्छानुसार कर्म कर सकता है? स्पष्ट करें।

७. क्या आर्य समाज और ऋषि दयानद की की दृष्टि में वर्णसंकरत्व जन्मना वा कर्मणा कोई वस्तु है? यदि है तो क्या और कैसे?

८. भंगी, चमार, म्लेच्छ, धीमर, कहार, कुम्हार आदि २ जन्म से माने जायेंगे या गुण कर्मानुसार? ख—इनकी संतान अपना पैत्रिक कर्म करने को बाध्य की जायगी या प्रत्येक कर्म करने में स्वतंत्र रहेंगे?

९ कुम्हार, धोबी, भंगी, चमार आदि का

आतिथ्य अतिथि लोग क्यों न स्वीकार करें ? जब कि वह अपना जीवन आचार विचार पूर्वक रखता हो ?

१०. वेद मर्यादा और वर्णाश्रम धर्म केवल आर्यों के लिये ही है या सब मनुष्यों के लिये ?

नोट—क्या इसमें कोई भूल तो नही है ?

क—ऋषि दयानन्द और आर्य समाज मे कोई अन्तर नहीं है।

ख—ऋषि दयानन्द कृत ग्रथ आर्य समाज के प्रतिनिधि हैं।

उत्तर

(१) चारों वर्ण आर्य हैं। वेदमे रुचनोवेहि

(२) जब तक उस से काम चलगा वहा है। यदि किसीको संदेह होगा तो उसे दूर करना होगा। उसके लिये स्पष्ट करना आवश्यक है।

(३) शूद्र के बालक का उपवीत होने मे कोई प्रतिबन्ध नही क्योंकि वर्ण गृहस्थाश्रम में होते हैं वह अभी गृहस्थी नही है।

(४) जो पुस्तको मे लिखे हैं वा उन से मिलते जुलते और कर्म। यह वैश्य हो सकते है।

(५) जो भोजन बनाए उन सब के लिये विधान ह।

गुरुकुलों मे तो नही देखा। मुह बाधनेकी पद्धति कहीं २ साधुओं मे देखी है।

(६) सन्तान अपनी योग्यता से २४ वर्ष की आयु में किसी वर्ण मे गिनी जायगी।

(७) जिस मे विरुद्ध कर्म हों वह वर्ण संकर है। वह भी कर्मसे होगा।

(८) गुण, कर्म से।

(९) अतिथि बनना वा बनाना अपनी अपनी इच्छा पर निर्भर है। जो चाहे करले न चाहे न करे।

(१०) आर्यों के लिये आवश्यक है वह इसी नाम से (ब्राह्मणादि) कहे जायगे दूसरे काम तो करें नाम वह न मानेंगे।

—— ——

बिछुड़ों का मिलाप तथा रक्षा कार्य्य

—६ मई से १६ मई १९३७ तक डाल्टनगञ्ज मे २२७ ईसाइयो की शुद्धि हुई। पलामू जिले में लगभग २० हजार ईसाई है ।

—चन्द्रिका प्रसाद वर्मा

—आर्य्य समाज हावड़ा ने एक ब्राह्मण युवक श्री दुर्गादास जी दीक्षित को शुद्ध किया। शुद्धि-संस्कार पं० जगदीशचन्द्र जी विद्यावाचस्पति मुख्याध्यापक हावड़ा आर्य विद्यालय द्वारा किया गया। यह महाशय कुछ समय पहले मुसल्मान हो गए थे।

—गत २ जून को गोवती (कासगज) के ठा० वजीर सिंह जी को उनके परिवार सहित आर्य्यसमाज कासगञ्ज ने शुद्ध किया। इस परिवार ने लगभग १०० वर्ष पहले इस्लाम धर्म स्वीकार कर लिया था। शुद्ध शुदा १० व्यक्ति है। इस शुद्धि मे श्रीयुत रुचिराम जी न बड़ी सहायता दी —मन्त्री

—८ जून को आर्य्य समाज शामली ने एक जाट नवयुवक की शुद्धि की। यह कुछ समय पूर्व मुसल्मान हो गया था।

—६ जून को आर्य कुमार सभा उतरौला ने एक कोरिन की शुद्धि करके उसको बिरादरी में मिलवा दिया। यह कुछ दिन पहले अपने तीन बच्चो के साथ मुसल्मान हो गई थी। इस कुमार सभा ने ३ महीने मे २० हिन्दू स्त्रियो को विधर्मियों के फन्देसे छुड़ाकर उनके धर्म की रक्षा की।

—आर्य समाज मिंटगुमरी (पञ्जाब) मे डालू राम नामक एक व्यक्ति जो किसी स्त्री के मामले मे मुसल्मान हो गया था और उसका मुसल्मानी नाम दीन मुहम्मद था उसकी प्रार्थना पर शुद्ध किया गया।

—दयानन्द साल्वेशन मिशन होशियारपुर ने राम प्यारी नामक हिन्दू लड़की को जिसकी उम्र २१ साल की थी मुसल्मानो के पञ्जे से बड़ी मेहनत से निकाल कर उसकी शादी एक हिन्दू नवयुवक के साथ करदी।

—अबोहर आर्य समाज मन्दिर मे एक १८ वर्षीया जन्म की ईसाई लड़की को उसकी प्रार्थना पर शुद्ध किया गया और उसे मिशन से वनिता विश्राम आश्रम में प्रविष्ट किया।

—आर्य्य समाज सिरसा मे १ जून को एक जन्म की मुस्लिम स्त्री और उसकी लड़कियों की शुद्धि पं० श्रीराम जी ने की। इस स्त्री की ६ जून को सूरजसिंह राजपूत के साथ शादी की गई।

मन्त्री

—मई १९३७ मे दयानन्द साल्वेशन मिशन होशियारपुर ने अपने कार्य कर्त्ताओ के सहयोग से २४६ विधर्मियो की शुद्धि की। मन्त्री

—आर्य स्वराज्य सभा पञ्जाब लाहौर के तत्वावधान मे निम्न शुद्धियां हुईं।

(१) जन्म के एक सिक्ख मुसल्मान की।

(२) जन्म के एक हिन्दू मुसल्मान की।

(३) ,, एक मुस्लिम देवी की।

(४) ,,के दो मुसल्मान नव युवको की।

—२० जून के लगभग आर्य समाज सतनगर के सत्सङ्ग में एक जन्म की मुसल्मान स्त्री की जो आ० स० बच्छोवाली (लाहौर) द्वारा शुद्ध हुई थी

बंगलौर आर्य समाज द्वारा एक ईसाई मिशनरी की लड़की लेडी डाक्टर को शुद्धि

डा० भाग्यम्मा M.B.B.S. ने जो किंग जॉर्ज हास्पिटल महारानी पेथ विज़गापट्टम मे लेडी असिस्टेन्ट सर्जन और गोरीबिदनूर (मैसूर रियासत) के रेवरेन्डमिशनरी भग्यप्पा की सुपुत्री है। ९ जून को बंगलौर आर्यसमाज के मन्त्री के नाम प्रार्थना पत्र भेजते हुए निम्न निवेदन किया "I am at present a member of the South Indian United Church, and it is my most solemn and deliberate desire to change over and adopt the Religion of the Vedic Rishis as my own. I request you to admit me to the Religion of the Vedas, with due ceremonial, on Sunday the 13th instt

' अर्थात् मैं अब दक्षिणभारतीय चर्च की सदस्या हू, किन्तु मेरी यह अत्यन्त गम्भीर और विचारपूर्ण इच्छा है कि मैं वैदिक धर्म को अपनाऊं इसलिये मैं आपसे प्रार्थना करता हूं कि मुझे १३ ता० आदित्य वार को शुद्धिसंस्कार पूर्वक वैदिकधर्म में दीक्षित करें"।

इसके अनुसार १३ जून को बंगलौर आर्यसमाज भवन (कैलासपाल्यम्) में बड़े समारोह के साथ डा० भाग्यम्मा का शुद्धि संस्कार पं० धर्मदेव विद्यावाचस्पति ने कराया। सुप्रतिष्ठित देवियां तथा सज्जन बड़ी सख्या मे उपस्थित थे। डा० भाग्यम्मा ने अपना प्रार्थनापत्र सभा में पढ़ कर सुनाया और धर्म दीक्षार्थ निवेदन किया। शुद्धि संस्कार की विधि के अनन्तर पं० धर्मदेव जाने वैदिक धर्म के मुख्य तत्वों की व्याख्या करते हुए ईसाई मत के साथ उसकी तुलना की और वैदिक धर्म की युक्तियुक्तता तथा वैज्ञानिकता का प्रतिपादन किया। उपस्थित जनता की ओर से स्वामी भास्करानन्द जी और सुप्रसिद्ध समाज सुधारक राव बहादुर कुप्पुस्वामी ऐय्यर ने दीक्षिता सुशिक्षिता महिला को आशीर्वाद और उपदेश दिया। भजन और मिष्टान्न वितरण के बाद यह कार्यवाही समाप्त हुई। डा० भाग्यम्मा गत २,३ वर्षों से आर्य धर्म विषयक ग्रन्थों का स्वाध्याय करती रही हैं। उन्होंने शुद्धि संस्कार विषयक खर्च के अतिरिक्त इस अवसर पर ५) बंगलौर आर्यसमाज को दान दिये और २) प्रतिमास देने का वचन दिया। ६ जून को स्व० जोसेफ मेनुयल की पुत्री मिस एमिली का शुद्धि संस्कार बंगलौर आर्यसमाज भवन मे प० धर्मदेव जी ने कराया और उसे विमला देवी नाम दिया गया। शीघ्र ही अनेक अन्य शुद्धियों की आशा है।   —मन्त्री आर्य समाज बंगलौर

उसकी एक अविवाहित नवयुवक के साथ शादी की गई। इस संस्कार में पौराणिक और सिक्ख भाइयों ने सोत्साह भाग लिया। शादी को देखने के लिये सैंकड़ों स्त्री पुरुष आये थे।

ता० ३०-४-३७ को आर्यसमाज देहरादून ने एक ईसाई परिवार की शुद्धि की जिस मे सब मिला कर ७ व्यक्ति हैं। यह व्यक्ति लगभग २० साल से ईसाई मज़हब का प्रचार करता था। इतने वर्ष के अनुभव के पश्चात ईसाइयत की असलियत का पता लगने पर वैदिक धर्म की शरण ली। समाज का भवन खचाखच भरा हुआ था। सबन शुद्ध हुये परिवार के हाथ से मिठाई ली सायकाल को उसके मकान पर जाकर सन्ध्या हवनादि हुआ। जनतापर अच्छा प्रभाव पड़ा।

विविध पत्र पत्रिकाएं

जर्मनी और ईसाई मत

श्री. भाई परमानन्द जी एम ए 'आर्य्य गजट' मे लिखते हुए एर्यन और सेमेटिक लहरो पर निम्न प्रकार प्रकाश डालते हैं —

"इस समय ससार मे दो बडी ज़बरदस्त लहरें चल रही हैं जिनका सहारा लेकर भिन्न विचार पैदा होते है। एक लहर पुराने 'आर्य्य' विचार की है और दूसरी 'सेमेटिक' विचार की। आर्य्य लहर का स्रोत भारतवर्ष था—जिससे वर्तमान हिन्दुत्व और बौद्ध मत की लाइन पर विचार फैले। सैमेटिक लहर का स्रोत फिलस्तीन था जहाँ से यहूदी, ईसाई और मुस्लिम लाइन पर फैलने वाले विचार निकले। आर्य्य विचार इस ससार और उसके अन्दर काम करने वाली प्रकृति को लेकर चलते हैं। उनके सामने सवाल यह था कि यह ब्रह्माण्ड क्या है कहाँ से आया और क्यो बना है? आर्य्य जाति के फ़िलास्फ़रो ने उनका जवाब ढू ढा और खास नतीजो पर पहु चे। सैमेटिक विचार विल्कुल सासारिक लाइन पर चलता है। एक खुदा दुनिया का पैदा करने वाला है। शैतान उसका एक बडा विरोधी है। वह खुदा इन्सान का एक बडा दोस्त है। वह इसान की मदद करता है और उसके दुश्मनों को मुसीबत में डालता है। यहूदी क़बीलो के बुज़ुर्ग इस प्रकार के ख़याल रखते थे। उनके ख़यालात को लेकर ईसाइयो और मुसलमानों ने भी ऐसा ही कहना आवश्यक समझा।"

इसके आगे श्री भाई जी जर्मनी में ईसाई मत के दाखिले और वर्तमान में वहा उसकी गति पर लिखते हुए लिखते हैं—

'प्राचीन यूरोप में यूनान और रोम दो बडी सभ्य जातियां थीं—इन दोनों की विचार धारा एर्यनलाइन पर थीं। चौथी पांचवीं सदी में उन्होंने ईसाई विचारों को ग्रहण किया। लगभग १ हज़ार वर्ष तक जर्मन जाति ईसाई मत की अनुयायी रही। पिछले सौ डेढ सौ वर्ष के अन्दर जर्मनी मे कई बडे फ़िलासफ़र पैदा हुए उनकी फ़िलासफ़ी और शिक्षा की गति ईसाइयत के विरुद्ध रही है। वे ईसाई धर्म के सिद्धान्तों के और बाद मे इसकी आचारिक शिक्षा के विरुद्ध हो गये, आर्यो के विचार और कलचर को स्थिर रखने वाला यदि कोई देश था तो वह भारतवर्ष था, अतएव जर्मन फ़िलासफ़ी भारतीय साहित्य की ओर झुकती गई। इस फ़िलासफ़ी की उपज के तौर पर एक मैन आफ एक्शन (Man of action) मैदान में आया है। हिटलर ने सलीब को जवाब देकर स्वस्तिक का चिन्ह स्वीकृत कर लिया है। उसने स्पष्टतया ईसाइयत के विरुद्ध युद्ध छेड रखा है। हिटलर जर्मन जाति को इस १०००–१५०० वर्ष के अन्धकार और मूर्खता से निकाल कर वह जर्मन चर्च मे जो कलचर में आर्यन चर्च है, ले आना चाहता है। जर्मन की जनता हिटलर की पूजा करती है वह बाइबिल की जगह "मेरीजग" को पढ़ती है, किन्तु रोमन कैथोलक और प्रोटेस्टेंट चर्च दोनों ने हिटलर के विरुद्ध सिर उठाया है। पोप भी अपने रोमन कैथोलिक चेलो को हिटलर के खिलाफ़ उकसा

रहा है। हिटलर के सिद्धान्त अपने नहीं है वह एर्यन फिलासफी को क्रियात्मक रूपदे रहा है। इस फिलासफी का सबसे बड़ा प्रचारक निटशे है। निटशे मनु के धर्म शास्त्र को दुनियां में सबसे ऊंची पुस्तक समझता है, इसकी सारी फिलासफी मनु के सिद्धान्तों पर आश्रित है, इस लिहाज़से जर्मनीकी फिलासफी और चर्च एर्यन है।

एक नवयुवक की मुश्किल

जमालपुर (ईस्टइंडिया रेलवे) से एक नवयुवक आर्य के आए हुए पत्रके हवाले से सहयोगी 'आर्य्य गजट' इन प्रश्नों पर क्या आर्यों के शुद्धि प्रचार की मौजूदगी में हिन्दू मुस्लिम ऐक्य मुमकिन है और क्या सब धर्म समान हैं ? प्रकाश डालता हुआ लिखता है —

"हिन्दू मुस्लिम एकता ठीक बात है और जो लोग यह समझते हैं कि हिन्दुओं का शुद्धि का प्रोग्राम इसको ख़राब कर सकता है वे इसकी वास्तविक महत्ता को नहीं समझते। यदि मुसल्मानों की तवलीग इसको खराब नहीं कर सकती तो हिन्दुओं की शुद्धि कैसे कर सकती है ? वास्तविक हिन्दू मुस्लिम एकता तब ही कायम रह सकती है जब लोगों को पूरी २ धार्मिक आजादी हो। यदि हिन्दू मुस्लिम इत्तिहाद की दीवार रवादारी पर कायम न की जायगा तो एकता का यह प्रोग्राम कभी पूर्णता को नहीं पहुंच सकेगा और यही कारण है कि आज तक पूर्णता तक नहीं पहुंच सका है। यह विचार कि सब धर्म एक हैं कोई नया नहीं है। आर्य समाजी तो हमेशा यह कहते हैं वैदिक धर्म आदि सृष्टि से है और दूसरे धर्मों मे जितनी सचाइयां हैं वे इसी से ली गई हैं। सारांश में वैदिक धर्म सब धर्मों का मूल स्रोत है। इसके साथ ही हमारा यह विचार है कि वैदिक धर्म की शिक्षा आजकल प्रत्येक हिन्दू नवयुवक को देनी चाहिए क्योंकि इस शिक्षा की बदौलत ही नवयुवकों में अधर्म, नास्तिकता और प्रकृति पूजा की लहर को रोका जा सकता है।"

कांग्रेस और मुस्लिम जाति

उपर्युक्त शीर्षक से माडर्नरिव्यू लिखता है:—

"कांग्रेस में मुसल्मानों को लाने और कांग्रेस में मुस्लिम सदस्यों की संख्या में वृद्धि करने के लिये जो कोशिशें होरहीं हैं हम उनका पूरा २ समर्थन करते हैं। मुख्यतया यू० पी० के मुसल्मानों की कांफ्रेंस में जो इलाहबाद में हुई है कांग्रेस में बिना किसी शर्त के प्रवेशके हक़में जो निश्चय हुआ है वह ठीक ही हुआ है। तमाम धार्मिक सोसाइटियों और जनताके समस्त वर्गों को कांग्रेस में लानेके लिए उनके साथ शर्तपूर्ण माहिदे करना कांग्रेस के लिए न तो सम्भव ही है. और न वांछनीय ही है। देश को स्वतन्त्र करना भारत वर्ष के सब निवासियों का कर्तव्य है। कांग्रेस ने अपने ५० वर्ष के इतिहास मे ऐसा कोई प्रस्ताव नहीं किया है जिसने प्रत्यक्ष वा अप्रत्यक्षरूपमें किसी अल्प मत वर्ग को हानि पहुंचाई हो।

कुछ मुसल्मान कहते हैं कि चूंकि कांग्रेस कम्यूनिष्ट और सोशलिस्ट विचारों की होगई है इसलिए मुसल्मानोंको इसमें प्रवेश नहीं करना चाहिए। कांग्रेस का यह लक्षण ठीक है या नहीं बगैर इसका विवेचन किए यह पूछा जा सकता है कि जब कांग्रेस ने असहयोग और सविनय अवज्ञा अथवा सोशलिस्ट विचारों का आश्रय नहीं लिया था, मुसल्मान कांग्रेस से पृथक् क्यों रहे ?

मुसल्मानों को कांग्रेस में लाने का आंदोलन

संयुक्त प्रान्त में जहां उनकी आबादी प्रान्त की आबादी का १५ फ़ी सदी है शुरू हुआ है और वहीं इसे कुछ महत्व प्राप्त हुआ है। जब उन प्रान्तों मे जहाँ मुसलमानों का बहुमत है इस प्रकार का आन्दोलन होगा तब ही इस आन्दोलन की प्रामाणिकता संदेहकी सीमा से बाहर होगी।

आर्य्य समाज का साहित्य और सरकारी नीति

अभी हाल मे आर्य्य समाज की पुस्तक 'पोल प्रकाश' को पंजाब गवर्नमेन्ट ने जब्त किया है। यह पुस्तक प्रसिद्ध पौराणिक कालूराम शास्त्री की 'आर्य्य समाज की मौत' नामक पुस्तक के उत्तर में लिखी गई थी। सहयोगी 'प्रकाश' इस सम्बन्ध में सरकार की पक्षपातपूर्ण नीति पर निम्न प्रकाश डालता है —

"आश्चर्य यह है कि गवर्नमेन्ट ने असल किताब को ज़ब्त नहीं किया और जवाबी किताब को ज़ब्त कर लिया है। क्या सरकार की यह नीति है कि आर्य्य समाज के खिलाफ जो किताबें निकलती रहें उन्हें हाथ न लगाया जाय, लेकिन आर्य्यसमाज की तरफ से जो पुस्तकें निकलें उन्हें ज़ब्त कर लिया जाय। अभी पिछले दिनों आर्य्य समाज के कुछ प्रकाशन ज़ब्त किए गए थे। आनन्द यह है कि वे पुस्तकें भी स्वतन्त्र नहीं थीं। वर्तमान गवर्नमेन्ट की यह नीति है कि इसके बक्र में जो पुस्तकें छपें सिर्फ उनके खिलाफ कार्यवाही की जाय या कि आर्य्य समाज न्याय का अधिकारी नहीं, इस पर जो भी चाहे चोट करे, लेकिन इसे चोटका उत्तर देने का हक नहीं। जैसा कि हम पहले लिख चुके हैं हम इस प्रकार की पुस्तकों को पसन्द नहीं करते चाहे सनातन धर्म्म सभा की तरफ से हों या आर्य्य समाज की तरफ से। परन्तु यह ज़रूर चाहते हैं सबके साथ एकसा सलूक किया जाय। यदि कोई पुस्तक आपत्तिजनक हो तो उसे ज़ब्त किया जाय लेकिन यह न हो कि वह सिर्फ आर्य्य समाज की ही हो। आर्य्य समाज की ओर से जो भी पुस्तकें प्रकाशित होती हैं वे प्रायः जवाब में होती हैं इसलिए उसकी किताबें ज़ब्ती के योग्य समझी जाती हैं तो कोई कारण नहीं कि वे पुस्तकें सुरक्षित रहें जिनके जवाबमें ये किताबें प्रकाशित होती हैं।

मेरी भूल

म०गांधी हरिजनमे 'मेरी भूल' शीर्षकमें लिखते हैं—

१ मई के 'हरिजन-सेवक' में 'धर्म-संकट' शीर्षक लेख में मैंने लिखा है कि मामा भांजी के विवाह सम्बन्ध दक्षिण में उच्च माने जाने वाले ब्राह्मणों तक में त्याज्य नहीं हैं, बल्कि स्तुत्य भी माने जाते हैं—ईसाई, मुसलमान, पारसी इत्यादि क़ौमों में भी ऐसे संबन्ध त्याज्य नहीं माने जाते। प्रो० बलवन्त राय ठाकोर ने इस सम्बन्ध में एक दिलचस्प पत्र लिख कर मेरी इस गलती को सुधारा है, और उन्होंने बताया है कि मामा-फूफी के लड़के-लड़की के बीच दक्षिण में विवाह-सम्बन्ध होसकता है, पर मामा-भाँजी में नहीं। मुसलमानों में ऐसा सम्बन्ध मना है, ऐसा कवि चमन बतलाते हैं। इन भूल सुधारों के लिए इन दोनों सज्जनों का मैं आभार मानता हूँ। मामा फूफी के लड़के-लड़की के सम्बन्धका मुझे प्रत्यक्ष ज्ञान था। तो मामा-भांजी के बीच भी सम्बन्ध होता होगा,ऐसा अनुमान निकालकर मैंने निश्चयात्मक वाक्य लिखदिया। इसके लिए मैं अपने को अपराधी समझता हूँ। ऐसे विषयमें ऐसे अनुमानों के लिए स्थान नहीं होता, यह मुझे समझ लेना चाहिए था। यदि अनुमान निकाला, तो शंका को स्थान देना चाहिए था। पर मैंने तो निःशंक रीति से जिसका मुझे प्रत्यक्ष ज्ञान न था उसे इस तरह लिख मारा मानों वह प्रत्यक्ष ज्ञान है। इसमें मेरे सत्य के आग्रह को लांछन लगा है। इसकी माफ़ी पाठकों से तो मांगता ही हूं। वे तो उदारतापूर्वक माफ़ी देदेंगे, पर मेरी अन्तरात्मा यों झट से माफ कर देने वाली नहीं। अनुमान-प्रमाण निकालने मे बहुत सावधानी से काम लेना पड़ता है, यह सार मर्म अपनो इस भूल में से मैं अधिक स्पष्टतापूर्वक निकालता हूँ, और इसके बाद अब ऐसी भूल न करने मे अधिक सावधान रहने का प्रयत्न करूंगा।

पहाड़ी क्षेत्रों में प्रचार

(अप्रैल मई मास का विवरण)

गढ़वाल

१—अप्रैल १५ तक चौन्दकोट आर्य समाज के उत्सव तथा ऐकेश्वर मेला प्रचार के लिये कुछ ग्रामोंमें उपदेश देकर भली प्रकार परिश्रम किया। ईश्वर कृपा से अन्य सालों की अपेक्षा इस साल में आर्य बन्धुवों ने बड़े उत्साह से कार्य किया। १३००० (तेरह हजार) की जन संख्या के बीच मे दो ओ३म् के झण्डे लेकर दो टोलिया भजन गाकर नगर कीर्तन करती थी। मेलामें जगह २ पर खड़े होकर व्याख्यान हुआ करते थे। श्री प्रधान ठा० केशर सिंह जी लोगों को उपदेश सुनने के लिये अपने व्याख्यान से उत्साह बढा रहे थे। सुनने वालों की सख्या अगले सालों से कहीं अधिक थी। यह वही स्थान है जिस मे १४ साल के पूर्व आर्यों पर बड़ी भयानक मार पडीथी, तीन दिन तक प्रचार कार्य हुआ। मैंने अपने व्याख्यानों मे यह बताया कि भगवान रामचन्द्रजी वा श्रीकृष्ण महाराज जी ईश्वर-भक्ति सन्ध्या अग्निहोत्र से ही किया करते थे, फिर आर्य समाज को मूर्ति-पूजा खण्डनके लिये क्यों बुरा माना जाता है। इस पर कुछ पौराणिक पण्डित शास्त्रार्थ के लिये तैयार होगये। उनको समय दिया गया, किन्तु जो श्लोक बाल्मीकि और महाभारत के पढ़ कर मै ने उनके सामने रखे हैं उनमें मूर्ति पूजा सिद्ध न कर सके। पुन आर्य समाज में अपनी पूर्ण सहानुभूति प्रकट की जिस से जनता में आर्य सिद्धान्तों का और भी अधिक प्रभाव पड़ा।

बहिन श्री सत्यवती जी से स्त्री शिक्षा के विषय में व्याख्यान दिलाया। जिससे स्त्री शिक्षा के विरोधियों पर वा माताओं पर अधिक [illegible] पड़ा। श्री मंत्री चन्द्रसिंह जी का लेख वैदिक्म विषय पर बहुत ही अच्छा था।

२—तारीख २४ तक, हिन्दी मिलाप मे चौन्दकोट तथा बछेली ग्राममें दलितों को सताया जाने का लेख छपा था। दलितोंके घरों पर जाकर उनके दु खोंके विषयमे पूछ-ताछकी। बछेलीग्राममें कांग्रेस उम्मेदवारको वोट न देने के विषयमें एक हरिजन भाई पर एक रुपया दण्ड पञ्चायत ने रखा था। मेरे समझाने पर वह दण्ड नही लिया गया। दलित भाइयों के घर पर कई जीव हत्या देवी देवतों के नाम हो रही है। विवाह आदि में इन लोगो के यहा रडियों के नाच की कुप्रथा बढ़ रही है। कहीं इनको सुधार की बातें सुनाने के लिये इकट्ठा किया जाता है तो नहीं होते। अपने सुधार की ओर बिल्कुल भी ध्यान नहीं देते हैं।

३—मेटे ग्राम में एक बिधवा थी जिसकी एक लड़की पूर्व पति की है। उसी ग्राम मे उसने अपने लिये दूसरा पति नियुक्त किया हुआ था। किन्तु गाव के लोग उनका सयोग नहीं होने देते थे, और उसको उस ग्राम से बाहर करना चाहते थे, जिस मे पतित होने का भय था। वहा जाकर लोगों को समझा कर उन दोनों का सयोग कराया

४—दो सस्कार किये, एक नाम करण सस्कार किया। जिनका सस्कार धन-हीन होने से पौराणिक

पण्डित ने नहीं किया था, इसलिये वह आदमी मेरे पास आया, उसके बच्चे का नामकरण किया। दूसरा अन्नप्राशन किया।

५—मई १ से १४ तक अन्य ग्रामों में प्रचार करके, तारीख १७ तक महादेव सेरो मेला मे जाकर उपदेश दिया। उस स्थान मे महादेव के मन्दिर के पास ही उच्च जाति की लोगों की सभा का स्थान हुआ था, वहापर एक हरिजन भाई की 'आ-ारों को क्या करना चाहिये, इस विषय उप व्याख्यान दिलाया। उच्च वर्ण के लोगों ने अपने बीच मे खड़े होने मे कोई आपत्ति नहीं की और उसके व्याख्यान को भली प्रकार सुनते रहे।

६—तारीख १८ से २४ तक ग्रामो मे प्रचार करते हुये, चौन्दकोट आर्य समाज के प्रधान जी की आज्ञा हुई, कि सुना है कि एक व्यक्ति ने जो अपने को प्रतिष्ठित आर्य कहता है और बाहर देशो में भी माना जाता है उसने पशु बलि अष्ठ-बोली मे जाकर (अष्ठबोली जिसमे आठ जीवो की हत्या होता है) सहायता दी है। इसलिये आप वहा जाकर निर्णय करके लावें। वहा जाकर यह बातें सत्य मिला ह।

बडे दु ख से कहना पड़ता है कि इस प्रकार के लोग अपने को आर्य कहने मे क्यो पाप नही समझते।

७—तारीख २६ तक दीप मेला मे उपदेश का कार्य किया तथा अन्य ग्रामोमे भी प्रचारकार्य किया।

यदि गढ़वालके आर्य सज्जन आर्य नियमो पर चलने की दृढ प्रतिज्ञा करें तो गढवाल मे दिनोंदिन जनता आर्य सिद्धान्तोंको आदरकी दृष्टिसे देखेगी। मेलोंमे आर्यसमाज का प्रचार करना बड़ा कठिन होता था, परन्तु अब लोग भली प्रकार उपदेश सुना करते हैं। गुरु दयानन्द के सिद्धान्तो क न मानने वाले आर्यो पर जनता दोषारोपण करती है और आदर्श आर्यों को आदर दे रही है।

—रघुबर दयाल उपदेशक

मद्रास-प्रचार

प्रचार कार्य का संक्षिप्त विवरण

मार्च से मई सन् १९३७ तक

बंगलौर आर्य समाज का हरिजनों द्वारा कार्य

बंगलौर, मगलौर, मैसूर तथा कर्णाटक प्रान्त के अनेक भागों में ऋषि बोधोत्सव सप्ताह बडे समारोह से मार्च ६ से ११ तक उत्साह पूर्वक मनाया गया। बंगलौर आर्य समाज (कैलास-पाल्यम) की तरफ से जो श्रीमती सार्वदेशिक सभा से सम्बद्ध (Affiliated) है इस सप्ताह मौखिक तथा लिखित प्रचारके अतिरिक्त हरिजनो-द्धारकार्य विशेष रूप से किया गया। १० मार्च को ऋषि दयानन्द जन्म दिन के उपलक्ष्य मे आर्य समाज भवन कैलाशपाल्यम में श्रीयुत सम्पत आयगार जी B A B L Retd Judge के सभापतित्व मे सार्वजनिक सभा हुई जिसमें हवन प्रार्थना के पश्चात प० धर्म देवजी विद्या-वाचस्पति आदि के भाषण हुए और फिर अन्तर्जा-तीय प्रीत भोज समाज मन्दिर में किया गया जिस में सब जातियों के (१५ से अधिक हरिजन भाई बहिन भी) सज्जन और देविया सम्मिलित हुए। ११ मार्च को शिवरात्रि अथवा ऋषिबोधोत्सव के उपलक्ष्य मे पुनः समाज मन्दिर मे बड़ी सार्व जनिक सभा हुई जिस मे १०० के करीब हरिजन भाई बहिन भी सम्मिलित हुए। श्रीयुत सम्पत आयगार रिटायर्ड जज, श्रीयुत पुट्टैय्या रिटायर्ड सुपरिन्टेन्डेन्ट गवर्नमेन्ट प्रेस, श्रीयुत वेंकट वरद

आयंगार और प० धर्मदेव जी वि० वा० के ऋषिदयानन्द तथा ऐकेश्वरवाद विषयक भाषण हुए जिनके पश्चात सब ने बिना किसी पुकार के भेद भाव क मिठाई खाई। इस सभा में सम्मिलित हरिजन भाई बहिनों के गायत्री आदि मन्त्र पाठ और भजनोंसे सब लोग बहुत प्रभावित हुए। बगलोर आर्य समाज मावल्ली और गगम्माचरी नामक हरिजन बस्तियों के उद्धार पर इस वर्ष अपने ध्यान को केन्द्रित कर रहा है जिसका परिणाम यह है कि सैकड़ोंने प्रतिदिन स्नान करना करना तथा सफाई से रहना शुरू कर दिया है, मद्य मास का परित्याग कर दिया है तथा वैदिक मन्त्रों और भजनों का अभ्यास कर लिया है। आर्य समाज गरीब हरिजनों की पुस्तक, वस्त्रादि द्वारा भी सहायता कर रहा है। हरिजन बस्तियो मे प्रति दिन जा कर उनके सब कष्टों के निवारण थ म्युनिसपिलिटी के अधिकारियो द्वारा भी प्रयत्न किया जा रहा है। ७५ के करीब हरिजन भाई बहिन बड़े प्रेम से आर्य समाज के साप्ताहिक सत्सङ्ग मे शामिल हो कर भजनादि गाते हैं। मार्च मे प० लेखराम बलिदान दिवस तथा एप्रिल में आर्य समाज स्थापना दिवस उत्साह पूर्वक मनाये गये। प० धर्म देवजी के उत्तर भारत अवकाश पर जाने पर जहा वे धर्मार्यसभा, गुरुकुलोत्सवादि में सम्मिलित हो कर भाग लेते रहे श्रीयुत गुरुदत्त मल्लिक जी सयुक्त मन्त्री आय समाज बॅगलौर ने बडे उत्साह और लगन से समाज कार्य चलाया। श्रीयुत मल्लिकजी बड़े ही उत्साही कर्म योगी हैं। २६ एप्रिल को अवकाश से लौटने पर पॅ० धर्म देव जी ने समाज कार्य बड़े उत्साह से पुन शुरू किया। मावल्ली, गगम्माचेरी, श्री रामपुर आदि में प्रचार तथा दलितोद्धार कार्य के अतिरिक्त मई मास मे प्रचारार्थ पॅ० धर्म देवजी हिन्दूपुर काकनहल्ली, कैनानोई इत्यादि गये। हिन्दूपुर मे पॅ० धर्मदेव जी के पास म्युनिसपिलटी के Special officer श्रीमल्ल प्यागाहके सभापतित्व मे The message of the Gita हरिजन वस्ती मे 'हरिजनोंद्धार विषयक भाषण तथा आर्य समाज में ३ हरिजनों की शुद्धि और २ उपनयन संस्कार हुए। काकनहल्ली में 'विवाह का वैदिक आदर्श', 'वैदिक धर्म' ऋषि दयानन्द का अद्भुत कार्य'' पर ३ व्याख्यान के अतिरिक्त जो दयानन्द विद्यार्थीमिल्य' में दिये गये वैदिक धर्म विषयक शङ्का समाधान होता रहा जिस से जनता अत्यन्त सन्तुष्ट हुई। ३० मई को पॅ० धर्मदेवजीके सभापतित्व में कैनानोर (मलाबार) मे एक देव सम्मेलन (one God Conference) और 'एकधर्म सम्मेलन' हुए जिनका वृत्तान्त अगले अंक मे दिया जायगा। 'एक जाति सम्मेलन' में भी जोरदार व्याख्यान देते हुए पॅ० धर्मदेवजी ने युवकोंसे जाति-भेदको जान-बूझकर तोड़ने की अपील की जो धार्मिक सामाजिक दृष्टि से अत्यन्त हानिकार है।

आर्य समाज की मई जून मास की प्रगति

—❀—

संयुक्तप्रान्त

श्री सम्पादक जी न-स्ते

इस मास आर्य समाज को श्री बाबू गौरीशंकर प्रसाद जी (बनारस) तथा श्री प० रामचन्द्र जी वैद्य (कनखल) के निधन में अपने २ प्रसिद्ध सेवकों से वंचित होना पड़ा स्व० बाबू गौरी शंकर जी न केवल बनारस में ही वरन् प्रान्त में आर्य समाज के प्रमुख व्यक्तियों में से थे। वे अपने पीछे सार्वजनिक सेवा का उत्तम रिकार्ड छोड़ गए हैं। बनारस और आर्य जगत में उनकी मृत्यु से वह स्थान रिक्त हुआ है जिस की पूर्ति असम्भव नहीं तो कठिन अवश्य है। डी०ए०वी०हाई स्कूल बनारस, आर्य विद्या सभा, वेद विद्यालय काशी इत्यादि संस्थाएं उनके विभिन्न स्मृति चिन्हों में से है। वैद्य रामचन्द्र जी ने प्रान्त में अपने लोकोपकारी व्यवसाय से समाज, देश, और धर्म की बड़ी सेवाएं की थी। सम्पादक जी ! आर्य समाज के चुने हुए व्यक्तियों का शीघ्र एक एक करके हमसे छिन जाना हमारे लिये एक विशेष चेतावनी देता है। यह चेतावनी है कि आर्य समाज को रिक्त स्थानों की पूर्ति की ओर विशेष ध्यान देना चाहिये जिसे हरसंभव उपाय से अपने विदा होने वाले सुयोग्य व्यक्तियोंका स्थान लेनेके लिये सुयोग्य व्यक्तियोंको तैयार करते रहना चाहिये। यदि उसने इस चेतावनी पर ध्यान न दिया और उसके सुयोग्य व्यक्ति जिस तेजी से हमसे बिछुड़ रहे हैं उसी तेजी से बिछुड़ते रहे और अन्य सुयोग्य व्यक्ति स्थान ग्रहण करने के लिए न आते रहे तो निश्चय ही आर्य समाज के लिए यह बड़े दुर्भाग्य की बात होगी।

प्रान्त में एक अरुचिकर आन्दोलन ने सिर उठाया है। अभी हाल में गुरुकुल वृन्दावन के जाच कमीशन की रिपोर्ट छपी थी और सभा मे भेजी गई थी। उसपर प्रतिनिधि सभा की अन्तरंग के कुछ प्रस्ताव भी प्रकाश मे आए थे। कुछ भाइयों को अन्तरंग की उक्त कार्यवाही पर असन्तोष है और उनकी माग है कि कमीशन के प्रस्ताव ज्योंके त्यों स्वीकार किए जाय अन्यथा वे लोग स्वर्ण जयन्ती महोत्सवसे असहयोग करदेंगे संयुक्त प्रान्तीय आर्य प्रतिनिधि सभा के माननीय प्रधान ने एक वक्तव्य अखबारों मे छपाया है। उस मे उन्होने स्पष्ट कर दिया है कि यह माग उचित नहीं है और अपील की है कि वे महोत्सव को सफल बनानेमे अपनी शक्ति और पुरुषार्थ लगाएं। इस प्रकार के आन्दोलनों के अनुचित कार्य में 'नहीं'। जाच कमीशन अन्तरग सभा ने नियुक्त किया था। कमीशन की रिपोर्ट पर विचार करने का उसका काम था। यदि वह अक्षरश रिपोर्ट को स्वीकार नहीं करती है और इसी लिये आर्य भाई आन्दोलन करते हैं। अक्षरशः उसे मानने का मतालबा करते हैं तो एक प्रकार से वे आर्य प्रतिनिधि सभा की अथारिटी को चैलैञ्ज देते हैं

उनक यह कार्यवाहि चूंकि अनुचित मूर्खता पूर्ण, आवाञ्छनीय और सभा सोसाइटियों के नियमो और अनुशासन के विरुद्ध है इसलिए आन्दोलन-कारियों को सफलता मिलनी कठिन है ।

स्वर्ण जयन्ती महोत्सव के लिए धन जन सग्रह का कार्य उत्साह और वेग के साथ होरहा है। सभा के अधिकारी तथा अन्य कार्य कर्त्ता विभिन्न स्थानो मे दौरा कर रहे है। देखना है कि धन जन की अपील का प्रान्त से कैसा उत्तर मिलता है। हम अबतक के इस कार्य के प्रामाणिक विवरणों की उत्सुकता पूवक प्रतीक्षा कर रहे है। प्राप्त होने पर अपके पाठको के सामने रखने का यत्न करेंगे।

पंजाब

श्री सम्पादक जी नमस्ते

प्रान्त का आर्य जगत एक दुखद घटना से क्षुब्ध और बेचैन हो रहा है। यह घटना श्री प० चमूपति जी का निधन है। प० चमूपति जी आर्य जगत के चोटी के विद्वान थे। उनकी विद्वत्ता उनकी वाणी वा लेखनी से ही नहीं टपकती थी वरन उनके जीवन से—शान्त, गभीर और सुमधुर जीवन से टपकती थी। वे असाधारण कोटि के न केवल पडित ही थे वरन व्यक्ति थे। उनकी मृत्यु को आर्य समाज बहुत अनुभव कर रहा है और करेगा। पंडित जी अपने पीछे ६ छोटे २ बच्चे तथा विधवा धर्म पत्नी छोड गए है। प्रान्त के आर्य बन्धु उनके गुजारे के स्थिर प्रबन्ध का यत्न कर रहे हैं और इस के लिए ५०००) एकत्रित करके स्व० पडित जी के परिवार को अर्पण करने का निश्चय किया है।

बच्चो की शिक्षा का प्रबन्ध प्रान्त की सभा पृथक करेगी। प्रान्त के आर्य बन्धुओ के इन यत्नों की हम प्रशंसा करते है और सफलताकी कामना करते है।

इस मास प्रान्तीय सभा के अधिकारियो तथा अन्तरग सदस्यो का नया वार्षिकनिर्वाचन हुआ है। प्रधान श्री दीवान बद्रीदास जी तथा मन्त्री प० भीमसेन जी निर्वाचित हुए है। परन्तु विदित हुआ है कि दीवान साहब ने किन्ही कारणो से इस्तीफा दे दिया है। यह बड़े दुख की बात है। प्रान्त के आर्य बन्धुओं की अभिलाषा दीवान साहब को इस पद पर आरुढ़ देखने और प्रान्त मे शान्ति का वातावरण लाने मे उन्हें कार्य करता हुआ देखने को, जिसके लिए वे सर्वथा उपयुक्त है है।' देखे यह अभिलाषा पूर्ण होती है वा नहीं है।

सरकार ने अभी हाल मे दो पुस्तको को जब्त किया है। इनमे से एक सनातन धर्मियों को तरफ से लिखी गई है जिसका नाम है 'पंडित बुद्धदेव का जूता स्वामी दयानन्द के सरपर।' यह आत्माराम शोम्न देहलवी की कृति है और मेरठ मे छपी थी। दूसरी किताब पंडित मन्साराम जी आर्योपदेशक को कृति पौराणिक पोल प्रकाश (हिन्दी) है जिसे आर्य साहित्य मदिर लाहौर ने प्रकाशित किया था इस पुस्तक की जब्ती के सिलसिले में भी पडित भीमसेन जी के नवयुग प्रेस लाहौर की १०००) की जमानत जब्त हो गई है।

सार्वदेशिक सभा

अन्तरङ्ग सभा के महत्वपूर्ण निश्चय

ता० ६—६—१६३७

नि० मं० ६

नोटिस का विषय सं० ३—क्या कोई व्यक्ति एक समय मे भिन्न भिन्न प्रान्तो में एक से अधिक समाजों का सदस्य रह सकता है ?

विचार के पश्चात् सर्व सम्मति से निश्चय हुआ कि एक प्रान्त वा भिन्न भिन्न प्रान्तों मे एक व्यक्ति एक ही समाज का सभासद हो सकता है, दो का नही ।

नि० स० ६

नोटिस का विषय स०६—आर्य समाज का भावी कार्य क्रम निर्धारित किए जाने का विषय प० इन्द्र जी के निम्न प्रस्ताव के साथ पेश हुआ ।

(१) वर्तमान मे आर्य समाजों के लिए कार्य क्रम बनाया जाय जो सामूहिक और अपील करने वाला हो और वह कार्य क्रम १६४१ मे होने वाली मनुष्य गणना को लक्ष में रख कर बनाया जाय ।

(२) यह कार्यक्रम कम से कम ३ वर्ष का होना [illegible]र इस काल मे आर्य सभासदों [illegible] की स ख्या बढ़ाई जानी चाहिये ।

(३) समाजों को प्रेरणा की जानी चाहिये कि नई नई स स्थाए खोलने का यत्न न करे ।

(४) आर्य समाजों को प्ररेणा की जाय कि अन्य धर्मावलम्बियों के साथ स घर्ष से बचा जाय । अनिवार्य होने पर ही स घर्ष मे प[illegible] चाहिए ।

(५) यत्न होना चाहिए कि ३ साल में आय समाजों की सख्या तिगुनी और आर्य सभासदों की सख्या दस गुनी होनी चाहिए ।

(६) नौजवानों के सगठन को समाज अपने हाथ मे ले और उन्हें आय समाज की ओर आकर्षित करने का यत्न होना चाहिए ।

(७) आर्य समाज के अधिक से अधिक शिक्षणालय होते हुए भी शिक्षा की समस्या बडी जटिल हो रही है । बस [illegible] पूर्ण विचार हो कर उसे नया ढंग या Impet[illegible] मिले ।

विचार के बाद [illegible] सम्मति से स्वीकृत हुआ । निश्च[illegible] कि निम्न सज्जनो की एक उपसमिति बना[illegible] इस स[illegible]ध में अपनी विस्तृत रिपोर्ट स[illegible] पेश क[illegible]

[illegible]) श्री पं० इन्द्र जी[illegible]

(२) „ [illegible]० युद्ध[illegible]सिंह जी ।

(३) „ [illegible]० नारा[illegible]दत्त जी ।

आर्य समाज मद्रास द्वारा प्रकाशित

सस्ता आर्य-साहित्य (अंग्रेजी में)

Light of Truth श्री स्वामी दयानन्द सरस्वती कृत सत्यार्थ प्रकाश का यह अंग्रेजी अनुवाद है। इसकी भाषा शुद्ध व सुन्दर है। भावों के विषय में इतना कहना पर्याप्त है कि इस अकेली पुस्तक ने जितनों को आर्य बनाया है उतना अन्य साधनों ने नहीं।

ग्लेज पेपर, कैलिको की मजबूत जिल्द २)
अजिल्द १॥)

Fountainhead of Religion इस पुस्तक के विद्वान लेखक श्री गंगाप्रसाद जी चीफ जज टिहरी ने पुष्कल प्रमाणों द्वारा वैदिक धर्म को समस्त धर्मों का मूल स्रोत सिद्ध किया है। इस पुस्तक के अनेक भाषाओं में अनुवाद हो चुके हैं। केवल अंग्रेजी में ही कई संस्करण छप कर हाथों हाथ बिक चुके हैं।

फस्टक्लास पेपर, सुन्दर छपाई। अजिल्द ॥) सजिल्द १)।

Ten Principles of Aryasamaj गुरुकुल-कांगड़ी के ... आचार्य श्री चमूपति एम० ए० ने इस पुस्तक में आर्यसमाज के दस नियमों की विस्तृत, ... व्याख्या की है।

पृष्ठ संख्या १६० मूल्य ।=) मात्र।

Arya Philosophy अजमेर अर्धशताब्दी पर दिये गये अंग्रेजी व्याख्यानों का यह संग्रह है। देश तथा विदेश में ... प्रचार का अत्युत्तम साधन है। इसकी भूमिका श्री आचार्य रामदेव जी ने लिखी है। मूल्य ।=) मात्र

Vedic Caste System and Panchama Problem यह समयोपयोगी ट्रैक्ट श्री पं० केशवदेव जी ज्ञानी मद्रास ने लिखा है। इसमें युक्ति-प्रमाण द्वारा आर्य समाज के पक्ष की पुष्टि की गई है। मूल्य =)

The outlines of Aryasamaj लेखक श्री पं० केशवदेव जी ज्ञानी, मद्रास। इसमें आर्य समाज के सिद्धान्तों का संक्षिप्त परिचय है। ४र्थ संस्करण। मूल्य -)

Sayings of Swami Dayanand इसमें ईश्वर, वेद, वर्ण, आश्रम, शिक्षा राजनीति आदि विषयों पर श्री स्वामी दयानन्द सरस्वती जी के वचनों का संग्रह है। मूल्य -)

Hinduism Vs Xinity श्री पण्डित केशवदेव जी ज्ञानी ने इस पुस्तिका में हिन्दू-धर्म तथा ईसाईयत का मुकाबिला किया है। शुद्धि प्रचार के लिए उपयोगी है। मूल्य -)

Hinduism Vs Islam ले० पं० केशवदेव जी ज्ञानी। इसमें हिन्दू धर्म व इस्लाम का मुकाबिला है। शिक्षित मुसलमानों के हाथ दिया जाने योग्य है। मूल्य -)

...दित

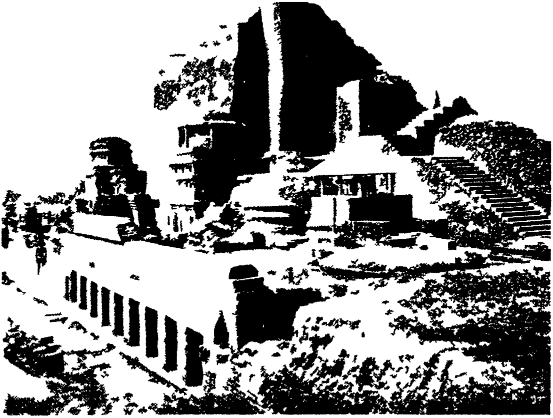
पता
श्री मंत्री आर्य समाज
१७०, चाइना बाजार, मद्रास

विषय-सूची

नम्र निवेदन

[ले० डा० बोलाराम रिटायर्ड स्टोरकीपर N, W R आनरेरी सैक्रेटरी]

पञ्जाब की राजधानी लाहौर मे रावीरोड पर केन्द्रीय अनाथालय है जिसका प्रबन्ध एक रजिस्टर्ड सभा के आधीन है, जिसके प्रधान श्री पूज्य स्वामी स्वतन्त्रानन्द जी महाराज उपप्रधान सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा देहली हैं। उपप्रधान श्री पण्डित विश्वम्भर नाथ जी भूतपूर्व गवर्नर गुरुकुल कागडी, श्री पण्डित ठाकुर दत्त जी वैद्यशास्त्री मुल्तानी तथा डा० गणेशीलाल जी M, B B S हैं। इस अनाथालय को खुले हुये बीस वर्ष के लगभग होचुके हैं। इसकी सहायता केवल लाहौर निवासी ही नही करते, प्रत्युत सब प्रान्तो मे रहने वाले हिंदू आर्य भाई भी करते हैं। यही कारण है कि यह अनाथालय भारत के दूसरे प्रान्तो में भी सर्वप्रिय हो रहा है और दिन प्रतिदिन उन्नति कर रहा है। यहा तक कि अब सरकार भी जो चोरी किये हुये लड़के लड़किया उनको मिलते है जब तक उनके वारिसों का पता नही मिलता, तब तक उनको इस अनाथालय मे रखती है। इस के अतिरिक्त ऐसे नवजात बालक वा बालिकाये भी आने लग गई है जिनकी माताएं मर जाती है या वह उनको कई गुप्त कारणों से रखना नही चाहती और इनके लिये एक Trained नर्स भी रखी हुई है। इस तरह से अनाथालयमे बच्चो की संख्या बढ़गई है। इस समय तक तो निवास स्थान पर्याप्त था परन्तु संख्या बढ जाने से कन्याओं के लिये स्थान काफी नहीं है। इस लिये प्रबन्धक सभा ने निश्चय किया है कि नवीन कमरे बनवाये जायें, जिस से कन्याओं के स्थान का कष्ट मिट जाय। इनके बनाने के लिये धन की अपील की जावे। इसलिये मैं दानी सज्जनो की सेवा मे विनीत भाव से प्रार्थना करता हूँ कि वे इस शुभ कार्य मे सभा की सहायता करें ताकि अनाथ और निस्सहाय बच्चों को प्रवेश करने मे बाधा न पड़े। यदि हम ऐसा न करसके तो वे बालक जिनको हम स्थान न दे सकेंगे अन्य मतवालों के जाल मे फस कर हमेशा के लिये धर्म से पतित हो जावेंगे और उसका पाप आर्य जाति को लगेगा। जो महानुभाव एक सौ से अधिक रुपया देंगे, उनके नामो के पत्थर उन कमरो की दीवारों पर लगवा दिये जायेंगे। इस समय इस कार्य के लिये पाच सहस्र धन की शीघ्र आवश्यकता है जो दानी सज्जनो को पूरी करनी चाहिये। इस अनाथालयके आधीन म्यूनिसिपैलटी तथा गवर्नमैंट से मंजूर एक प्राइमरी इंडस्ट्रीयल मिडिल स्कूल है। जिसमे अनाथालय के तथा बाहर के लड़के पढते है। एक दर्जी क्लास है जिसमे लड़के और लडकियो को सीने का कार्य सिखलाया जाता है तथा बाहर के लडके इस मे काम सीख सकते हैं। आजकल ५० लड़के और ४२ लड़किया सीख रही हैं। बीस के लगभग लड़के यहा से काम सीख कर अपना निर्वाह भली प्रकार कर रहे हैं। अनाथालय मे इस समय [illegible]६ लडके और ६५ लड़किया है जिनके निवास, भोजन, [illegible] प्रबन्ध अनाथालय की तरफ से किया जाता है। इस काम के लिये भी सहायता की आवश्यकता [illegible] तथा परोपकारी [illegible] महानुभावो से प्रार्थना है कि वे इस ओर भी दया करें और जिस प्रकार की भी सहायता दे सके, दे कर पुण्य के भागी बनें अर्थात् आटा, दाल, चावल घी आदि खाद्य पदार्थ और पहनने के लिये वस्त्र देकर कृतार्थ करें। यह संस्था पूर्व भी आप जैसे दानियोंकेदान से चल रही है, अब भी आपसे आशा की जाती है कि अवश्य सहायता देकर अनाथों का आशीर्वाद लेंगे और पुण्य के भागी बनेंगे।



...सार प्रसिद्ध ... विश्वविद्यालय का एक स्तूप। जो अभी हाल में विद्यालय के ... अवशेषों की खुदाई के सिलसिले में मिला है।

चन्द्र प्रिंटिङ्ग प्रेस देहली



नालन्दा विश्व-विद्यालय का विशाल हाल, जिसमे [illegible] विद्याध्ययन करते थे।

चन्द्र प्रिंटिङ्ग प्रेस

❀ ओ३म् ❀

सार्वदेशिक

❀ सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा देहली का मासिक मुख पत्र ❀

वर्ष ११ | श्रावण १९९४ | अङ्क ६
[अगस्त १९३७ ई०] [दयानन्दाब्द ११३]

❀ वेद की शिक्षाएं ❀

[illegible] सुपथा [illegible]येऽस्मान्, विश्वानि देव वयुनानि विद्वान् ।
[illegible]ज्जुहुराणमे[illegible], भूयिष्ठान्ते नम उक्तिं विधेम ।

[illegible] हे भ[illegible] आप ज्ञान के भण्डार हैं। हम इस संसार में [illegible] तथा शान्ति की प्राप्ति के लि[illegible] मार्ग दि[illegible]। आप सर्वान्तर्यामी हैं। हमारे भले तथा बुरे सब कामों को जानते हैं। पिता जी ! [illegible] हमारे ऊपर ऐसी कृपा करें कि हमारे जीवनों से कुटिलता तथा पाप दूर हो जांय, [illegible] की स्तुति, प्रार्थना तथा उपासना करते हुये इस मानव जीवन को सफल करें।

सम्पादकीय—

नया शासन विधान और आर्यसमाज

देश में कांग्रेस द्वारा पद-ग्रहण की समस्या हल हो चुकी है। छः प्रान्तों मे कांग्रेसी मन्त्री-मण्डल भी स्थापित हो चुके हैं। इस पर सर्वत्र सन्तोष और प्रसन्नता प्रगट की गई है। ऐसा प्रतीत होता है कि देश की जनता यह चाहती है कि उसके द्वारा निर्वाचित मन्त्री क्रियात्मक रूप से उसके सुख दुःख में हाथ बटाएं। इसमें कोई सन्देह भी नहीं कि अच्छे से अच्छा विदेशी शासन, स्वदेशी शासन का स्थान नहीं ले सकता। अब हमें ये देखना है कि हमारे अपने प्रतिनिधि शासन की बागडोर अपने हाथ में लेकर प्रजा के कष्टों के निवारण मे कहांतक सफल हो सकते हैं।

इसमें भी सन्देह नहीं कि कांग्रेसको अभीतक स्वतन्त्रता का ध्येय प्राप्त नहीं हुआ फिर भी जो कुछ थोड़ी बहुत स्वतन्त्रता प्रान्तिक शासन-विधान के रूप में उसे प्राप्त हुई है उसका पूर्ण उपयोग लेना ही चाहिये। यह बात भी याद रखने लायक है कि जब से कांग्रेस ने जन्म लिया है तभी से आर्य्य समाज भी इस देश की सामाजिक, धार्मिक तथा राजनैतिक उन्नति मे पूर्ण रूप से सहयोग देता रहा है। यदि विचार-पूर्वक देखा जावे तो मालूम होगा कि इस समय का अधिकांश कांग्रेस-प्रोग्राम आर्य्य-समाज के निरन्तर प्रचार का ही फल स्वरूप है। सब से पहिले स्वराज-शब्द का प्रचार आर्य्य-समाज ने ही किया था। देश में सर्वत्र शिक्षा का फैलाना, शिक्षा का माध्यम मातृ-भाषा को बनाना, शिक्षा को निःशुल्क (Free) रूप मे देना, शिक्षा के क्षेत्र में तप, तपस्या और त्याग की भावना को लाना, छूत-छात और ऊंच-नीचके भावों को मिटाना, मनुष्यमात्र में समता के भावों को स्थापित करना, देश की ग़रीबी को दूर करने के लिये व्यावसायिक और औद्योगिक शिक्षा का प्रचार करना तथा शराब आदि मादक द्रव्यों के प्रयोग को हटाना, इत्यादि सभी समस्याओं को सुलझाने मे आर्य्य-समाज ने अभी तक अपनी सामूहिक शक्तियों को भलीभांति लगाया है और इन्हीं समस्याओं को अब राजनैतिक क्षेत्र मे चरितार्थ करने के लिये कांग्रेसी मन्त्री-मण्डल पूरा प्रयत्न करेंगे। इस दृष्टि से कांग्रेस का सबसे बड़ा सहायक आर्य्य-समाज है। कांग्रेसी नेता अपने विचारों के लिये आर्य्य-समाज के ऋणी हैं। हाल ही में राष्ट्रपति प० जवाहरलाल जी ने कांग्रेसी मन्त्री-मण्डल को त्याग और तपस्या का उपदेश देते हुए कहा था कि मुझे आश्चर्य है कि शिक्षा और विद्या के क्षेत्र में बड़े २ प्रोफेसर और उपाध्याय भी अपनी योग्यता का अन्दाजा अपने वेतनों से लगाते हैं। हमारे राष्ट्रपति को यह अवश्य मालूम होगा कि इस बात में भी आर्य्य-समाज द्वारा स्थापित गुरुकुलों में भिन्न आदर्श को अपनाया हुआ है। वहां गुरु-शिष्य के परस्पर सम्बन्ध के बीच मे निःस्वार्थ भावना के अतिरिक्त किसी और भाव को नहीं आने दिया जाता। ज्ञान केवल ज्ञान की खातिर ही दिया और लिया जाता है।

कांग्रेसी मन्त्री मण्डल से हमारा एक नम्र-निवेदन है। आर्य्य-समाज ने गुरुकुल विशुद्ध

राष्ट्रीयता के आधार पर बनाये और चलाये हैं। जहां देश में अन्य राष्ट्रीय शिक्षणालय या तो मर चुके हैं या सिसक रहे है, वहां गुरुकुल दिनों दिन वृद्धि और उन्नति को प्राप्त हो रहे हैं। इसका कारण यह है कि गुरुकुलों में देश की आत्मा बसती है, उनके सामने ऊंचे मौलिक आदर्श हैं जो इस देश की अपनी संस्कृति पर आश्रित है। दुर्भाग्य से अभी तक देश के विदेशी शासन में गुरुकुल जैसी राष्ट्रीय संस्थाओं को नहीं अपनाया गया था, उसके स्नातकों को जो मान प्रतिष्ठा मिलनी चाहिये थी वह उन्हें नहीं मिल सकी। इसके कारण देश उनकी निःस्वार्थ सेवाओं से बहुत कुछ वञ्चित रहा है। कांग्रेस मन्त्री-मण्डल को राष्ट्रीय महाविद्यालयों की उपाधि (Degree) को स्वीकार कर लेना चाहिये और उनके स्नातकों के मार्ग में सार्वजनिक सेवाओं (Public Services) को स्वीकार करने में जो बाधाएं हैं उन सब का एकदम दूर कर देना चाहिये। ऐसा करने पर देश को बेशुमार निःस्वार्थ सेवकों की सेवा का लाभ प्राप्त हो जायगा।

आर्य्य-समाज के राष्ट्रीय कार्यकर्ताओं से भी हमे यह कहना है कि अब उन्हें यह सुअवसर प्राप्त हुआ है कि जबकि वे आर्य-समाज के चौमुखी प्रोग्राम को राजनैतिक क्षेत्र मे प्रचलित करवा सकते हैं और नये शासन की शक्ति द्वारा उसे जनता द्वारा स्वीकार करवा सकते हैं। अभी आर्य्य-भाइयों को जो राष्ट्रीय क्षेत्र मे काम कर रहे हैं इसी ध्येय को सामने रख कर कार्य्य करना चाहिये और जहां तक बन सके नये शासन-विधान को आर्य्य-समाज तथा उस के कार्य के प्रोत्साहन में लगाने की चेष्टा करनी चाहिये। हमारा धर्म राष्ट्र उन्नति को तथा देश भक्ति को बड़ा ऊँचा स्थान देता है।

भीलों में रक्षाकार्य—

मध्य भारत के भीलों मे भयंकर दुष्काल के उपद्रवों तथा भूख की ज्वाला को शान्त करने के लिए हज़ारों भीलों के ईसाइयों की शरण मे चले जाने के दुखद समाचार हमारे पाठक दैनिक तथा साप्ताहिक पत्रों में पढ़ चुके होंगे। उन्होंने यह भी पढ़ा होगा कि आर्य-समाज वहाँ पहुँच चुका है और आर्य प्रादेशिक तथा सार्वदेशिक सभाओं की ओर से रक्षा तथा सहायता कार्य हो रहा है। सार्वदेशिक सभा की ओर से श्री० बा० शिवचन्द्र जी सहायक मन्त्री आर्य रक्षा समिति काम कर रहे हैं। वहाँ कार्य सफलतापूर्वक हो रहा है और सफलता की पूरी २ आशा है। यहां हम पाठकों की सूचना के लिए इतनाही निवेदन करदेना उचित समझते हैं।

एक महान सत्य की पुष्टि में—

इस्तम्बोल का १० जुलाई का समाचार है कि वहाँ शिकारियों ने ६ वर्ष की एक लड़की को जिसका पालन एक रीछनी ने किया था पकड़ा है। विशेष इलाज के लिए वह लड़की इस्पताल मे रखी गई है जिसमे दिमाग़ सम्बन्धी रोगों और त्रुटियों का इलाज होता है।

इस समय लड़की छोटे रीछ की तरह गुर्राती है और जो आदमी उसके पास जाते है उन पर स्वभावत

हमला करती है। डाक्टरों को आशा है वे उसके मनुष्य स्वभाव को जाग्रत कर लेंगे।

सन् १९२१ मे न्रूसा नाम के गाँव से एक ३ मास की लड़की गुम हुई थी। लोगों का विश्वास है यह वही गुम शुदा लड़की है। लड़की की तलाश आस-पास के सभी पहाड़ों और जगलों में करली गई थी परन्तु लड़की नहीं मिली थी और अन्त में उसकी ज़िन्दगी की आशा भी छोड़दी गई थी।

जब कुछ शिकारी न्रूसा ग्राम के पास के जगल से गुज़र रहे थे उन्हों ने एक बड़ी रीछनी को गुफा के सामने धूप में पड़े हुए देखा। उन्हों ने उसे मार डाला और जब वे उसके शव के पास पहुँचे तो वह लड़की गुफा में से निकली। वह बिल्कुल नगी थी और हमला करने की धमकी दे रही थी।

लड़की को चोट न आजाय इस ख़याल से शिकारियों को उसे पकड़ने में बड़ी कठिनता का सामना करना पड़ा। उसने दांतों और नाखूनों से उन शिकारियों पर हमला भी किया और उन्हें पशुओं की तरह से काटा भी। लड़की की प्रत्येक चेष्टा से स्पष्ट होता है कि जब से वह गुम हुई थी तबसे ही रीछनी ने अपने निजके बच्च की तरह उसे खिलाया है और उसकी देख भाल की है तथा अपने बच्चों के साथ उसका पालन-पोषण किया है।

लड़की को हस्पताल में बिल्कुल अलग रखा गया है क्योंकि जो उसके पास जाता है वह उस पर अब भी हमला करती है।"

भेड़िए की माद से निकले हुए बच्चों की भी ठीक इसी प्रकार की हालत पाई गई है। इस प्रकार की घटनाओं से स्पष्ट है कि मनुष्य में स्वाभाविक ज्ञान नहीं है। जो कुछ भी उसे ज्ञान की प्राप्ति होती है वह निमित्त से ही होती है। यदि मनुष्य को असली हालत मे रखा जाय और कुछ सिखाया न जाय तो उसकी हालत आजके पैदा हुए बच्चे के सदृश होगी। पैदा होने के दिन से बच्चे को जो कुछ ज्ञान की प्राप्ति होती है वह निमित्त अर्थात् दूसरों से होती है। यदि वह मनुष्यों के ससर्ग मे रहेगा तो उसे मनुष्यों का सा ज्ञान होगा, यदि पशुओं के ससर्ग मे रहेगा तो पशुओं का सा ज्ञान होगा। यह भी प्रत्यक्ष है कि मनुष्य के अतिरिक्त जितने प्राणी हैं वे बिना किसी शिक्षाके अपने स्वाभाविक ज्ञान से अपनी जीवन यात्रा के कार्य सपादन कर लेते हैं। घर ढूढने, आहार तलाश करने, सन्तान पैदा करने तथा उसका पालन करने का ज्ञान उन्हें बिना सिखाए आप से आप आजाता है और वह ज्ञान मरने तक एक जैसा बना रहता है, घटता-बढ़ता नहीं। परन्तु मनुष्य अपने स्वाभाविक ज्ञान से बिना सिखाए न घर बनाना जाने, न आहार पहचाने, न स्त्री-पुरुष में तमीज़ कर सके, न सहवास जाने न बोल सके, न खडा हो सके, न हाथ से खा-पी सके, गरज कि वह एक दिन भी नहीं जी सकता। यह भी स्पष्ट है कि यदि वह मूर्खों की सोहबत मे रहेगा तो मूर्ख हो जायगा यदि विद्वानों की सोहबत मे रहे तो विद्वान हो जायगा। कहने का मतलब यह है कि मनुष्य को निमित्त से ही ज्ञान की प्राप्ति होती , स्वय ज्ञानकी प्राप्ति नहीं हो सकती। आदि में यह ज्ञान मनुष्यों को परमात्मा के निमित्त से प्राप्त होता है और अब भी दूसरों से ही प्राप्त

होता है, इतिहास और विद्वानों की स्थापनाओं से यह बात स्पष्ट है।

इस मूलज्ञान के सम्बन्ध मे हम २, ३ पाश्चात्य विद्वानो की सम्मतिया प्रस्तुत करते है। हमारे श्रेष्ठ दिमागों की तो उपर्युक्त स्थापना है ही, उन के सम्बन्ध मे कहना व्यर्थ है।

डिस्कार टीज कहता है कि—"जब मैं बहुत दूर और गहराई तक सोचता हूँ तो ज्ञात होता है कि ईश्वर सम्बन्धी ज्ञान मनुष्य आपही आप अपने हृदय मे पैदा नही कर सकता। क्योंकि वह अनन्त है, हमारा मन सान्त है, वह व्यापक है और हम एकदेशी हैं। इससे यह स्पष्ट है कि मूल विचारों को हमने स्वय नहीं बनाया किन्तु परमात्माने आदि पुरुषों के हृदयों मे अपने हाथ से छाप दिया है।"

मेडम ब्लेवेट्स्की 'सीक्रेट डाक्ट्रिन् (Secret Doctrine) में कहती है—अनेक बड़े २ विद्वानो ने कहा है कि उस समय भी कोई नवीन धर्म्म प्रवर्त्तक नहीं हुआ जब आर्यों, सेमीटिकों और तूरानियों ने नया धर्म व नवीन सचाई का आविष्कार किया था। वे धर्म प्रवर्त्तक भी धर्म के पुनरुद्धारक थे मूल शिक्षक नहीं।"

'चिप्स फ्राम ए० 'जर्मन वर्कशाप' नामी पुस्तक में प्रो० मैक्स मूलर कहते हैं—"आदि सृष्टि से लेकर आज तक कोई भी बिल्कुल नया धर्म नहीं हुआ।

इन प्रमाणों से जाहिर है आदि ज्ञान मनुष्य कृत नहीं और न क्रमश, विकाशका फल है, वरन् वह ईश्वरीय है और अपौरुषेय है।

सत्यार्थ प्रकाश का सस्ता संस्करण

आर्य प्रतिनिधि सभा संयुक्त प्रान्त ने अपनी स्वर्ण जयन्ती के अवसर पर सत्यार्थ प्रकाश की १ लाख प्रतियों के प्रचार का सकल्प किया है और इस कार्य मे आर्य्य साहित्य मण्डल अजमेर की सहायता प्राप्त की है कि वह इस अवसर पर सत्यार्थ प्रकाश के ।) वाले सस्करणकी उपर्युक्त संख्या में प्रतिया छापे।

यह संकल्प शुभ है और हम चाहते हैं कि उसका यह सकल्प पूरा हो। हमतो यह भी चाहते हैं कि एक लाख की नियत सख्या में ही नही वरन् अपरिमित सख्या में इस ग्रन्थ रत्न का उस अवसर पर प्रचार हो। सार्वदेशिक सभा ने अभी हाल मे १० हजार का सत्यार्थ प्रकाश का सस्ता संस्करण छापा है। यह सस्करण समाजों में जा रहा है। हम सार्वदेशिक सभा की ओर से युक्त प्रान्त की सभा को सहायता का निमत्रण देते हैं कि वह सभा के स्टाक को ले लेवे या प्रचारित कराए। आशा है इस निमन्त्रण को वह स्वीकार करेगी। शेष प्रतियां के लिए-वह साहित्य मण्डल की सहायता ले सकती है।

आर्य्य प्रादेशिक सभा से

समाचार मिला है कि डच गयाना की 'आर्य्य दिवाकर' सभा लाहौर की आर्य्य प्रादेशिक सभा के साथ सम्बद्ध होने का यत्न कर रही है। यदि इस समाचार में कोई सचाई है तो इस सम्बन्ध में हम प्रादेशिक सभा को एक निवेदन करेंगे और वह यह कि यह सभा सार्वदेशिक सभा के साथ सम्बद्ध थी और इस सभा की आर्य्य समाज विरोधी प्रगतियों की वजह से डच गयाना के आर्य्यों की शिकायतों के आधार पर सार्वदेशिक सभा ने इसे अपने से पृथक किया हुआ है। इस बात से कदाचित प्रादेशिक सभा भी परिचित होगी। प्रादेशिक सभा इस सभा को मिलाने में स्वतन्त्र है परन्तु फिर भी हम उससे यह

ज़रूर कहेंगे कि यदि उसने सिर्फ इसलिये कि सार्वदेशिक सभा द्वारा पृथक की हुई संस्था को ज़रूर शरण देनी चाहिए— मिलाने का निश्चय किया यद्यपि हमें उससे यह आशा नहीं है तो संस्थाओं से उसके संगठन में कोई उल्लेख योग्य वृद्धि तो होगी नहीं हाँ उस सभा को अनुचित प्रोत्साहन मिल जायगा और यह आर्य समाज की असेवा इस प्रकार की ही होगी। आशा है प्रादेशिक सभा हमारे इस निवेदन पर विशेष ध्यान देगी।

महता जैमिनी जी और सार्वदेशिक पत्र—

अगस्त १६३६ के 'सार्वदेशिक' पत्र में एक नोट छपा था जिस के आधार पर तभी से महता जैमिनी जी लगातार सार्वदेशिक सभा तथा उसके विदेश प्रचार को स्थान २ पर बदनाम करने में अपना समय व्यर्थ खो रहे हैं। हम इस समय तक इसलिए चुप रहे हैं कि हम नहीं चाहते थे कि महता जी को उनकी इस वृद्ध अवस्था में किसी अवांछनीय संघर्ष में डाला जाय। परन्तु विदेश से जो हाल में हमे पत्र मिले हैं उनसे मालूम होता है कि महता जी की अनथक लेखनी 'सार्वदेशिक' को बदनाम करने के व्यर्थ प्रयास में अभी तक भी बन्द नहीं हुई है।

हम यहां पाठकों के निर्णय के लिए 'सार्वदेशिक' पत्र की उस टिप्पणि के आवश्यक अंश को उद्धृत करते हैं जो महता जी के असीम रोष का कारण बनी है —

'जनता का कर्त्तव्य है कि वह ऐसे नामधारी प्रचारकों को प्रोत्साहन न देवे और सार्वदेशिक सभा आर्य जगत का आवश्यक मार्ग प्रदर्शन करती रहे तथा अपने विदेश प्रचार को अधिकाधिक व्यवस्थित करती और व्यापक बनाती रहे। हमें यह देख कर दुःख होता है कि हमारे कतिपय पत्र, हमारी कोई २ सभा सोसा इटी जान में वा अनजान में ऐसे प्रचारकों को अनुचित प्रोत्साहन देते हुए जनता का ठीक २ मार्ग प्रदर्शन न करने की भूल करदेती हैं। ऐसी भूलें नहीं होनी चाहियें और जनता का ठीक २ मार्ग प्रदर्शन होना चाहिए इसी में आर्य समाज का हित है।"

अब पाठक स्वयं विचारें कि इन पंक्तियों पर सिवाय नामधारी प्रचारकों के अन्य किसी को क्यों आपत्ति हो सकती है? म०ता जी के एक पत्र के उत्तर में इसी विषय पर सार्वदेशिक सभा के दफ्तर से उन्हें जो उत्तर दिया गया था उसका आवश्यक भाग हम यहां दर्ज किए देते हैं" —

"हमारा विदेश प्रचार अबतक बहुत बदनाम रहा है और इस बदनामी का कारण हमारे कतिपय ग़ैर जिम्मेवार और वे प्रचारक रहे हैं जिनका मुख्य ध्येय प्रचार की आड़ में विदेश की भारत-भक्त जनता से व्यक्तिगत लाभ उठाना रहा है। यह एक सचाई है जो दिन की तरह रोशन है और जिससे आर्य जगत भली भांति परिचित है और जिसके अनेकों प्रमाण इस सभा के दफ्तर में मौजूद हैं। यदि सभा का मुख पत्र इस सम्बन्ध में जनता का उचित मार्ग प्रदर्शन करता है तो वस्तुतः वह अपने एक कर्त्तव्यका पालन करता है। वह आलोचना बड़ी व्यापक है और ऐसी ही व्यापक आलोचनाएं इस तथा अन्य आर्य पत्रों में निकली हैं। ऐसी अवस्था में कोई खास व्यक्ति उसे अपने ऊपर कैसे घटा सकता है, यह समझ में नहीं आता और न यही समझ में आता है कि आपही उसे अपने ऊपर क्यों घटाते हैं जबकि आपका उसमें जिक्र नहीं और आपही अकेले प्रचारक नहीं

जो विदेशों में प्रचारार्थ गए हों ।"

हमें आशा थी कि उपर्युक्त पत्र से महता जी को सन्तोष हो जायगा और वे सार्वदेशिक-सभा को बदनाम करने के व्यर्थ प्रयास को छोड़देंगे, परन्तु ऐसा प्रतीत होता है उनके हृदय का गुबार अभी तक शान्त नहीं हुआ है और वे लम्बे २ पत्र लिख कर व्यर्थ मे अपना और दूसरों का समय बर्बाद कर रहे हैं। हमें खेद से लिखना पड़ता है यदि महता जी अपनी इस प्रवृत्ति का दमन नहीं करेंगे तो 'सार्वदेशिक' को अपना कर्त्तव्य पालन करना पड़ेगा। हमें इस बातका और भी अधिक दुख है कि महता जी कई पूज्य व्यक्तियों जैसे श्री डा० केशवदेव जा शास्त्री, श्री भाई परमानन्द जी तथा श्री आचार्य रामदेव जी इत्यादि महानुभावों का जो विदेश मे प्रचारार्थ जा चुके हैं, नाम ले ले कर उनके प्रति अन्याय कर रहे हैं और जनता मे मिथ्या भ्रम फैला रहे हैं।

हम यहा स्पष्ट लिखदेना चाहते हैं कि हमारी टिप्पणी व्यापक रूप में केवल नामधारी, स्वार्थी, अर्थ लोलुप और आर्य समाज को बदनाम करने वालों के ऊपर थी। हमें समझ में नहीं आता कि महता जी अपने व्यवहार से 'चोर की दाढ़ी मे तिनका' वाली कहावत क्यों चरितार्थ कर रहे है ?

एक उपयोगी प्रस्ताव—

आर्य समाज कांठ (मुरादाबाद) ने एक उपयोगी प्रस्ताव भेजा है जिसके शब्द इस प्रकार हैं —

"सार्वदेशिक सभा से प्रार्थना की जावे कि उक्त सभा देशी राज्यों की राजधानियों में स्थापित आर्य समाजों को आदेश करे कि वे अपने महाराजाओं की सेवा में उनके राज्याभिषेक आदि अवसरों पर ऋषि दयानन्द कृत एव वैदिक सम्पत्ति आदि वैदिक ग्रन्थ समर्पित करे"

हम रियासत की समाजों का ध्यान इस ओर आकर्षित करते है।

सीमाप्रान्त का सरक्यूलर—

आखिर सीमा प्रान्त की सरकार ने अपने हिन्दी, गुरुमुखी विरोधी सरक्यूलर को जिसके विरुद्ध शुरू से ही घोर आन्दोलन हुआ था और इन स्तम्भों में भी समय २ पर प्रकाश पड़ता रहा था, वापस ले लिया है। इसे हम लोकमत की विजय ही समझते हैं। सीमा प्रान्त की सरकार यदि पहलेही अपने इस कदम की अदूरदर्शिता को अनुभव करलेती तो अच्छा करती।

भीषण रेलवे दुर्घटना—

अभी हाल मे बिहटा (बिहार) में रेलवे की एक भीषण दुर्घटना से समाचार पत्रों की रिपोर्ट के अनुसार १०० से अधिक व्यक्ति मरे तथा २०० के लगभग घायल हुए हैं। मृत व्यक्तियों के सम्बन्धियों तथा घायलों के प्रति उनके महान् दु:ख मे हम अपना हार्दिक समवेदना का प्रकाश करते हैं और मृत व्यक्तियों की आत्माओं की शान्ति और सद्‌गति के लिये परमात्मा से प्रार्थना करते हैं। जो इस दुर्घटना के प्रभाव से बचे हैं हम उन्हें बधाई देते है। ऐसी लोमहर्षक घटनाए यत्न करके सरकार को भविष्य मे असम्भव बना देनी चाहिएं। विदित हुआ है घटना के वास्तविक कारण का पता लगाए जाने का जोरों से यत्न हो रहा है। यदि इस घटना का कारण मनुष्य हुआ तो निश्चय ही उसका यह अपराध मानव जाति के प्रति अक्षम्य अपराध होगा और इसके लिए अनेकों रोते,

सिसकते और तड़पते हुए हृदय उसे धिक्कारेंगे। घायलों और मृतकों के सम्बन्धियों को मुआवज़े या सहायता के रूप में जैसी अवस्था हो, अवश्य कुछ मिलना चाहिए। इससे भी उनके महान् दुःख में कमी ही होगी। जिन व्यक्तियों और सोसाइटियों ने इस अवसर पर दुर्घटना से पीड़ित व्यक्तियों की सेवा और सहायता की है वा जो इस समय सेवा-सहायता कर रहे हैं वे सब धन्यवाद के पात्र है।

महत्व-पूर्ण निर्णय—

देहली के 'हिन्दुस्तान टाइम्स' के ७ जून के अङ्क में शेख़ुपुरा का निम्न समाचार प्रकाशित हुआ था—

'श्री मौलवी मुहम्मद इब्राहीम सब जज फ़र्स्ट क्लास शेख़ूपुरा ने एक मुक़दमे के फ़ैसले में जो आइशा नामक मुस्लिम स्त्री ने अपनी शादी के विच्छेद की आज्ञा प्राप्त करने के लिए दायर किया था, एक मुख्य बात पर विचार किया। वह बात यह थी कि क्या तलाक हासिल करने के लिए मुस्लिम स्त्री का यह बयान दे देना कि वह इस्लाम का परित्याग करती है काफी है।

मुद्दायलाह की ओर से यह कहा गया था कि स्त्री ने इस्लाम का परित्याग नहीं किया है और उसका यह बयान कि उसने ईसाई धर्म्म ग्रहण कर लिया है बनावटी है।

सब जज ने विचार कोटि में इस बात को नहीं रक्खा कि मुकदमा दायर करने से पूर्व स्त्री ने इस्लाम का परित्याग कर दिया था वा नहीं और नियमानुसार ईसाई धर्म्म ग्रहण किया था वा नहीं।

अदालत ने इस्लाम के सिद्धान्तों पर विचार करने के बाद यह स्थापना की कि मुस्लिम स्त्री को सिर्फ इस नियमित घोषणा के आधार पर कि उसने इस्लाम का परित्याग कर दिया है तलाक हासिल करने का हक है। परित्याग के बाद यह अनावश्यक है कि परित्याग का इरादा शुद्ध था या नहीं या विवाह-विच्छेद का यह बहाना मात्र था। इस्लाम क्रिया-कलापों का धर्म्म नहीं है। इस्लाम में प्रवेश और उसका परित्याग करने के लिए मनुष्य को हार्दिक घोषणा कर देना मात्र पर्य्याप्त है।

अदालत ने मुद्दई को वांछित घोषणा करने के पक्ष में फैसला दे दिया'।

इस फैसले से इस्लाम तथा उसकी तलाक प्रथा पर उत्तम प्रकाश प्राप्त होता है।

धर्म्म परिवर्तन और हिन्दू स्त्री

उपर्युक्त शीर्षक मे 'इण्डियन सोशियल रिफ़ार्मर' लिखता है —

हिन्दू स्त्री की स्थिति जो पति से छुटकारा पाने के लिए धर्म्म परिवर्तन करती है आसान नहीं है। जहा तक स्त्री का सम्बन्ध है हिन्दू विवाह अटूट सम्बन्ध है। धर्म्म परिवर्तन करने मात्र से ही वह अपने विवाह से मुक्त नहीं हो जाती है। ऐसा करने के लिए उसे अदालत की सहायता लेनी होती है। पहले उसे अपने पति को अपने पास रहने के लिए बुलाना होता है। यदि वह इन्कार कर देता है तो वह अदालत को दर्ख़ास्त करती है कि वह ऐसा करने अर्थात् उसके साथ रहने के लिए उसे बाध्य करे वा विकल्प के रूप में उसे शादी से मुक्त कर दे। पति अदालत में बुलाया जाता है और उससे पूछा जाता है कि वह अपनी पत्नी से वैवाहिक सम्बन्ध रखने के लिए तय्यार है वा नहीं। यदि वह इन्कार कर देता है तो अदालत एक साल तक अपने निर्णय को सुरक्षित रखती है जिससे इस अर्से में पति वा पत्नी अपना विचार बदल सकें।

———

स्वागताध्यक्ष संयुक्त प्रान्तीय आर्य कुमार सम्मेलन श्री पं० रामनारायण जी मिश्र
बी० ए० काशी का

भाषण

आर्य कुमार सम्मेलन के स्वागताध्यक्ष का एकमात्र कर्तव्य है कि वह प्रतिनिधियों का स्वागत करे। यह कर्तव्य सहल नहीं है। अतिथियों का आदर करना आर्य जाति के शिष्टाचार पद्धति मे बड़ा ऊचा स्थान रखता है। वर्तमान युग की कठिनाइयों के कारण हम लोग उस ऊँचे आदर्श से नीचे गिर गये हैं, इसलिए जब मै आप लोगों का हृदय से स्वागत करता हूँ, तब मै यह भी जानता हूँ कि मै आप लोगों की यथोचित सेवा नही कर सका।

थोड़े दिन हुए, मैने समाचार पत्रों मे पढ़ा था कि दो नवयुवक कलकत्ते से पेशावर इसलिए पैदल जा रहे है कि भारत के गावों की अवस्था से जानकारी प्राप्त करे। यूरोपीय नवयुवकों मे इस प्रकार के उत्साह और साहस की कथाये अधिक सुनने में आती है। कोई बाईसिकिल उठाता है और ससार का परिक्रमा करने का सकल्प कर लेता है। कोई अपने साथ एक किश्ती लेता है और समुद्रों तथा नदियों के खतरनाक रास्तों द्वारा विश्व भ्रमण का निश्चय कर लेता है। कोई पैदल ही चल पड़ता है और पर्वतों की श्रेणियों और दुर्गम मार्गों को पार करने का हौसला करता है। हमारे देश के नवयुवक इस अंश में अभी पीछे है। इसलिए जब मैने इन दो नवयुवकों के कलकत्ते से पेशावर तक जाने की कथा पढ़ी और यह भी जाना कि वे गावों की अवस्था जानने के अभिप्राय से ऐसा कर रहे हैं, तो मुझे बड़ी ही प्रसन्नता हुई। भविष्य में भारतीय नवयुवकों को अपना केन्द्र गावों मे बनाना पड़ेगा। गांवों मे अब भी सच्चा भारत विराजमान है। अतिथि सत्कार में, त्याग में परिश्रमी जीवन मे, स्वाभाविक सरलता मे और खान पान के सयम मे वे शहर वालों से आगे हैं। हमारे सम्मानित पथ प्रदर्शक बाबा राघवदास जी का कहना सच है कि ग्रामीण लोग हमारे शिक्षक हैं। बहुत से विदेशी यात्रियों ने जो सौ बरस पहले भारत आये थे- भारत वासियों की सच्चाई की बडी तारीफ की है। यह सचाई अब भी गावों मे मिलती है परन्तु जिन स्थानों पर कचहरियों का प्रभाव अधिक पडा है वहा झूठ का साम्राज्य है। अब भी हिमालय पर्वत के गावों में चोरी का नाम नही। कोई चीज़ आप कही भूल आइये, उसे आप बरस-छ महीने के बाद भी वहीं पायेंगे। मुझे ३७ बरस से देश के नवयुवकों और बालकों की सेवा करने का सौभाग्य प्राप्त हुआ है। बालचरों मे मैंने यह अनुभव किया है कि जितनी जल्दी ग्रामीण लोग बालचर-शिक्षा प्राप्त कर लेते हैं, उतनी जल्दी शहर के बालक प्राप्त नही कर सकते। दौड़-धूप फुर्ती, सादगी तो उनके साधारण गुण है। उनमें आह्लाद की अधिकता और परिश्रम करने की आदत स्वाभाविक होती है। उनके दुर्भाग्य से वे निर्धन रहते हैं, इसलिए उनकी उन्नति रुक जाती है। उन का क्षितिज सकीर्ण होता है, इसलिए वे आगे नही बढ सकते। जहा गाव वालों मे इतना गुण है, वहा यह भी मानना पडेगा कि स्त्री पुरुषों की अशिक्षा के साथ-साथ वहा मिथ्या विश्वास बाल विवाह, जात-पात की कठोरता और अनेक प्रकार की कुरीतिया पाई जाती है, जिनको दूर करने के अभिप्राय से भी आवश्यक है कि आर्य कुमार सम्मेलन गावों को अपना कार्य क्षेत्र बनाये और वहा के नवयुवकों को अपनी ओर आकर्षित करे।

मुझे दु ख है कि आर्य समाजो की तरह कहीं कहीं आर्य कुमार भी शास्त्रार्थ आदि उलझनो मे पड़ कर अपना जीवन नष्ट करते हैं। मनुष्य को बुद्धि से तर्क से काम अवश्य लेना चाहिये परन्तु तर्क को ही जीवनकी कसौटी नहीं बनाना चाहिए। कवीन्द्र रवीन्द्र ने ठीक कहा है A mind all logic is like a knife all Blade—तर्क युक्त मस्तिष्क ऐसे चाकू के समान है, जिसमें फल नहीं होता। हमारा उच्च जीवन, हमारी उत्कृष्ट भावनायें, हमारे दैनिक जीवन की पवित्रता दूसरे लोगो को हमारी ओर जल्दी आकर्षित करती हैं। अभी थोडे ही दिन हुए, आजमगढ़ के जिले मे एक स्काटिश जमीदारकी मृत्यु हुई है। उनका नाम था मि० मार्टिन। वे देहात ही मे रहते थे। मैं उनसे भली भाति परिचित था। ७६ वर्ष की अवस्था मे अभी उनकी मृत्यु हुई है। मरने के पहले उन्होंने यह घोषित किया कि वे हिन्दू है और उन्होंने यह इच्छा प्रकटकी कि उनकी अन्त्येष्टि क्रिया हिन्दू रीति से की जाय। उनके जीवन में यह परिवर्तन गाव वालोके ससर्ग का परिणाम था। इसलिए आर्य कुमारो से मेरी पहली प्रार्थना यह है कि वे गावों को अपना केन्द्र बनायें और ग्रामीण नवयुवकों को अपनी ओर आकर्षित करें।

आर्यकुमार सम्मेलनो मे कुमार कम देखने मे आते है। अधिक सख्या मे ऐसे ही लोग दिखलाई देते है, जिनकी जिन्दगी के सब हौसले पस्त हो गये हैं। योरोप मे Y M C A, Y W C A, Youth Leagues, Scout Association, Wander Wogles, Bahla सुनने और देखने में आते है। उनमे अद्भुत आत्मिक बल होता है। मुझे कुछ थोडा सा परिचय उन सस्थाओं से प्राप्त हुआ था और उनमे से बहुतो से अभी तक मुझे पत्र-व्यवहार करने का सौभाग्य प्राप्त है। हमे उनकी कार्य प्रणाली से शिक्षा लेनी चाहिये। मैं चाहता हूँ कि अधिक से अधिक सख्या मे आर्य कुमारों को दौडते हुए तैरते हुए नये स्थानों में परिभ्रमण करते हुए, रोगियों की सेवा करते हुए, निरक्षर लोगों मे साक्षरता का प्रचार करते हुए, स्थान २ मे स्वाध्याय-मण्डल, कथा और हवन का आयोजन करते हुए देखू। यदि इस प्रकार सुसंगठित कार्य-क्रम बनाया जाय तो आर्य कुमार सम्मेलनों को सफलता प्राप्त होगी। प्रत्येक आर्य कुमार का कर्तव्य है कि वह ससार की प्रगति से परिचय प्राप्त करे। उसको मालूम रहना चाहिये कि योरप, अमरिका आदि किस ओर जा रहे है, कौनसी ऐसी बातें हैं कि जो उनको गढे मे ढकेल रही है और कौनसी ऐसी बातें हैं कि जो उन्हे ससार मे अग्रगण्य बना रही है। मै चाहता हूं कि एक प्रान्त के नवयुवक दूसरे प्रान्त के नवयुवकों से मिलें-जुलें। हिन्दी प्रान्त के नौजवानों को कम से कम एक दूसरे प्रान्त की भाषा जानना चाहिए। जैसे बङ्गाली, गुजराती, मराठी, पञ्जाबी इत्यादि।

ये सब बातें हमारे आर्य कुमार सीखें और सिखायें, परन्तु याद रखें कि वे आर्य पहले है और कुमार पीछे। कुमार लोग जल्दी कुमार्ग मे पड सकते हैं, प्रलोभन उन्हें सत्य मार्ग से हटा सकते हैं, परन्तु यदि वे इस बात को नहीं भूलेंगे कि वे आर्य हैं, तो वे सत्य पथ से कभी नहीं डिगेंगे। इसलिये मैं आशा करता हूँ कि वे मनसा-वाचा कर्मणा आर्यत्व के ऊचे आदर्श का परिचय देते रहेंगे तथा देश और धर्म की सेवा करते रहेंगे। आर्य कुमारो के सामने सब से बड़ा आदर्श है महर्षि स्वामी दयानन्द सरस्वतीका। विद्वान्, तपस्वी, त्यागी, ब्रह्मचारी, देश भक्त और दृढ़ व्रत धारी ये सब गुण किसी एक महापुरुष मे एक साथ कम मिलते हैं। महर्षि का ऊँचा आदर्श सामने रख कर देश, काल और अवस्था के अनुसार आगे बढ़िये, यही मेरा निवेदन है।

सोना कसौटी और ज़ेवर

श्री बा० पूर्णचन्द्र जी,
बी ए एल एल बी एडवोकेट

ससार में सोने का बड़ा मूल्य है। सोने के आभूषण बड़े मूल्यवान समझे जाते हैं। सोने का सिक्का अन्य धातुओं के सिक्के से अच्छा समझा जाता है। सोना शरीर के लिए भी अच्छा है। इस तरह सोना एक अच्छी वस्तु है, और इसीलिए प्रत्येक व्यक्ति उसको अपने पास रखना चाहता है। परन्तु सोने की उपयोगिता के साथ-साथ तीन प्रश्न हमारे सामने आते हैं। (१) सोने का वास्तविक स्वरूप क्या है ? (२) सोने की पहचान क्या है। (३) यदि असली सोना मिल भी जाय तो उस को किस प्रकार उपयोग मे लाया जावे। संसार में ऐसे देश हैं, या किसी समय मे थे, कि जहा अनेक सोने की खान उपस्थित थीं, परन्तु वहा के निवासियों को पता तक नहीं था। जब उनको पता चला तो उनके पास न उसके परखने के साधन थे और न उपयोग में लाने की बुद्धि थी।

ससार में ऐसे भी देश हैं, जहा अनेक परखने वाले उपस्थित हैं, परन्तु सोना ही नहीं जिस को परखें। तीसरी एक वह श्रेणी है कि जहा सोने का पता भी है, और परखने के साधन भी उपस्थित हैं, परन्तु उपयोग में लाने के न साधन हैं और न शिक्षा। सोने का कितना ही अधिक मूल्य क्यों न हो, पर उसका उपयोग तभी होगा, जब वह खान से निकल आवेगा और साफ होकर उसके सिक्के, आभूषण तथा औषधिया बन ने लगेंगी। इस को और स्पष्ट करने के लिए हम आगरे के किनारी बाजार मे तीन दुकानों की कल्पना कर सकते हैं। एक दूकान मे धातु एकत्रित हैं। वहा पीतल भी है, और सोना भी। और दूसरी दूकान पर जहां एक चादनी बिछी हुई है और अनेक प्रकार की कसौटिया रक्खी हुई हैं। उस दूकान के मालिक से पूछा कि क्या बेचते हो ? वह बोला कि कुछ नहीं। हम तो दिन भर बैठे हुए परखते रहते हैं। जो व्यक्ति सोना लेकर यहा आता है, वह अपना सोना परखवा ले जाता है। तीसरी दूकान है जहा बहुत दिनों से खुट-खुट होती रहती है, चिरकाल से सोने का कार्य होता है, परन्तु उसे न असली सोने के मिलने का स्थान विदित है और न परखने के साधनों का ज्ञान है। उस का मालिक बड़े गर्व से यह कहता है कि हमतो सदैव से यही करते आए हैं, हमारे पुरुषाओं ने भी कभी अगर-मगर की और न हम करें। विचार और व्यवहार की दृष्टि से तीनों प्रकार की दूकानें अपूर्ण हैं, और उनमें समानता उत्पन्न करने के लिए, वास्तविक रूप में उपयोगी बनाने के लिए तीनों में एक तारतम्य उत्पन्न कर देने की आ-

वश्यकता है। असली सोना, ठीक कसौटी और चतुर स्वर्णकार को एक जगह एकत्रित कर देना है। फिर देखिए कि बिना सुगध के भी सोने की कैसी प्रसिद्धि होती है। अब जरा इस उदाहरण का धार्मिक जगत् मे प्रयोग करके देखें। धार्मिक जगत् मे ऐसे सम्प्रदाय हैं, जिनके पास अनेक प्राचीन शास्त्र उपस्थित हैं। परन्तु न उनके पास समझने के लिये तर्क है, और न क्रियात्मक रूप से जीवनमे उनके अनुसार कार्य करने के साधन। सैकडो-लाखो पुस्तकें पुस्तकालय मे भरी हैं। परन्तु उनके पढने-पढ़ाने, सुनने-सुनाने की कोई विधि नही है। उनके अतिरिक्त ऐसे तर्कवादी हैं, कि जो आयुपर्यन्त तर्क करते रहते हैं, परन्तु किस पर तर्क करें इसका कोई आधार नहीं। तीसरे वह धार्मिक सम्प्रदाय हैं, जो केवल रूढिवाद में फँसे हुए हैं, उन्हें न असली सिद्धान्तों का ज्ञान है और न उसके जाच के साधन है। ससार की यात्रा मे अथवा अपने जीवन को सफल बनाने के लिए ससार में सुख और शान्ति स्थापित करने के लिए उपर्युक्त तीनों प्रकार के सम्प्रदाय असफल रहे हैं। ऐतिहासिक दृष्टि से हमने देखा कि पौराणिक हिन्दुओं के प्राचीन शास्त्र व ब्रह्मसमाजियो का शुष्क तर्कवाद और बौद्धों का केवल आचरणवाद तीनों ही असफल रहे हैं। अपने को सनातन धर्मी कहने वाले भाई प्राचीन शास्त्रों की दुहाई देते हैं, परन्तु 'बाबा वाक्य प्रमाणम्' के आधार पर उन शास्त्रों के समझने व समझाने की चिन्ता नही करते। उनके इस प्रकार के अन्ध-विश्वास से दुःखी होकर ऐसे दल उपस्थित हो जाते हैं जो किसी भी प्राचीन शास्त्र की सत्ता व महत्ता को स्वीकार नही करते। और फिर एक ओर अन्ध-विश्वास देख कर और दूसरी ओर केवल दन्त-कटाकिट देख कर प्राचीन शास्त्र व उनकी विवेचना दोनों से उदासीन हो जाते हैं। केवल आचरणों पर बल देने लगते हैं। आचरण पर बल देने वाली बात बहुत अच्छी होते हुए भी कुछ समय के पश्चात् इसी प्रकार असफल हो जाती है, जैसे बिना बुनियाद के एक बड़ा सुन्दर मकान कुछ समय के पश्चात् ही वायु या जल के प्रवाह से नष्ट-भ्रष्ट हो जाता है। गौतम बुद्ध ने वाममार्ग से प्रभावित दुराचरणों को दूर करने के लिए सदाचार पर बल दिया और ईश्वर तथा वेद की विवेचना का विरोध नहीं किया परन्तु उसको अनावश्यक समझा। इस का परिणाम बहुत भयंकर हुआ। अहिसा के पुजारी गौतम बुद्ध के अनुयायी आज प्रबल मास भक्षक हैं और नास्तिक भी है। ऋषि दयानद सब अर्थों मे ऋषि थे। और उनको भारतवर्ष ही नहीं समस्त ससार के वास्तविक सुधार की आवश्यकता थी, इसलिए उन्होने सर्वाङ्गपूर्ण धर्म ससार के सम्मुख रक्खा। जिस वैदिक धर्म का ऋषि दयानद पुन प्रचलित करना चाहते थे, वह श्रद्धा, तर्क और क्रियात्मक जीवन का एक सुन्दर मिश्रण है। ऋषि ने आर्य समाज के १० नियमों में भी इस सुन्दर मिश्रण की ओर सङ्केत किया है। वेद असली सोना है, और उनको पढना-पढ़ाना तथा सुनने-सुनाने और वह भी सत्य को ग्रहण करने और असत्य

को त्यागने के लिए उद्यत होकर। यह असली सोने की जाच के लिए असली अचूक कसौटी है। और सब काम धर्मानुसार करने की शिक्षा परखे हुए सोने से लाभ उठाना है। हमे न केवल वेदों पर गर्व करना चाहिए और न समस्त समय शास्त्रार्थों मे लगाना चाहिए, बल्कि प्राचीन वैदिक शास्त्रों का तर्क के आधार पर प्रचार और उनके अनुसार जीवन व्यतीत करने के लिए उत्साहित करना चाहिए। ऐसे सर्वाङ्ग पूर्ण मार्ग को the Golden Rule कह सकेंगे। रूल आफ गोल्ड नहीं। सम्प्रति ससार मे दी रूल आफ गोल्ड है अर्थात धनिकों का प्रभुत्व है, और स्वार्थ का बोल बाला है। और इसलिए सारे ससार में दुःख और अशान्ति फैली हुई है। इस रूल आफ गोल्ड को दी गोल्डेन रूल से बदल देने की आवश्यकता है। और उसकी केवल एक ही विधि है। वह है आर्य समाज का प्रचार। आर्य समाज के प्रचार से प्राचीन वेदों का महत्त्व और तर्क से उस की सिद्धि और क्रियात्मक जीवन में उनकी उपयोगिता सिद्ध होगी।

ऋषि दयानन्द और पाठन प्रणाली

लेखक—श्री प० गगाप्रसाद जी उपाध्याय प्रयाग

महर्षि दयानन्द द्वारा प्रस्तुत पाठ्य प्रणाली वर्तमान में कहाँ तक व्यवहार्य है और कहाँ तक हमारे गुरुकुलों इत्यादि में यह व्यवहृत हो रही है, विद्वान लेखक ने इस लेख में यह चर्चा छेड़ी है। वे चाहते हैं कि 'सार्वदेशिक' में इसकी मीमांसा की जाय और इसके लिए उन्हों ने आर्य विद्वानों को निमन्त्रण दिया है। यह मीमांसा स्वागत योग्य है। हम अपने आर्य-विद्वानों से इस सम्बन्ध में विचार करने का अनुरोध करेंगे और निवेदन करेंगे कि 'सार्वदेशिक' के कालम इस मीमांसा के लिए उनके निर्णय पर रहेंगे—

सम्पादक

ऋषि दयानन्द की पाठन-प्रणाली के विषय मे मैंने अनेक व्याख्यान, लेख, वादविवाद आदि पढे तथा सुने हैं और अपनी योग्यतानुसार विचार भी किया है। गुरुकुलों की स्थापना का आरंभ ही ऋषि प्रणाली से होता है। गुरुकुलों की पाठ प्रणाली में समय समय पर परिवर्तन भी होते रहे हैं। गुरुकुल भी कई है और कई प्रकार के हैं। कोई छोटे है कोई बडे। कोई प्रतिनिधि सभाओं के आधीन हैं कोई स्वतन्त्र कमेटियों के। कोई साधारण पाठशालाओं के समान हैं, कोई उन से भेद रखते हैं। परन्तु सभी गुरुकुलों के अधिकारी कहते हैं कि वे यथाशक्ति, यथाकाल और यथादेश ऋषि प्रणाली का अवलम्बन करते हैं। यथाशक्ति, यथाकाल और यथादेश में बड़ी गुंजाइश है। यह कहना कठिन होजाता है कि 'यथा' शब्द का कहा तक अनुचित प्रयोग हुआ और

कहा तक उचित। जब कभी किसी सज्जन को किसी गुरुकुल के विरुद्ध कुछ कहना होता है तो वह बडे जोरदार शब्दों मे आक्षेप करता है कि ऋषि-प्रणाली के विरुद्ध कार्य हो रहा है 'ऋषि का विरोध' यह शब्द जादू का काम करते हैं और स्पीकर को अवश्य ही जनता को अप्रसन्न तथा कुपित करने में सफलता प्राप्त होजाती है। ऐसी सभाओं मे ऐसी स्पीचें सुनने का मुझ को कई बार अवसर मिलचुका है और मैं शांति के साथ कोने मे बैठा बैठा बहुधा यह विचार करने लगा हूँ कि ऋषि-प्रणाली वस्तुत क्या वस्तु है और उसको श्रोता तथा वक्ता ने कहां तक समझा है। ऋषि दयानन्द ने इस सम्बन्ध मे अपने विचार केवल सत्यार्थ प्रकाश के तृतीय समुल्लास में ही दिये हैं। कुछ सकेत अन्यत्र भी हों परन्तु विशेष इसी स्थल पर हैं। मैंने इस विषयमें अपने मस्तिष्क को खुला रक्खा है। यहा मैं किस निष्कर्ष पर पहुचा हूँ यह नहीं लिखने का, केवल ऋषि दयानन्द के बचनों को ही उद्धृत किये देता हूँ। रेखाङ्कित चिह्न मेरे हैं। क्यों कि मैं चाहता हूँ कि पाठक इनकी ओर विशेष ध्यान दें —

(१) प्रथम पाणिनि मुनि कृत शिक्षा जो कि सूत्र रूप में है उसकी रीति·· सब अक्षरों का उच्चारण माता पिता सिखावें।

(२) तदनन्तर व्याकरण अर्थात् प्रथम अष्टाध्यायी के सूत्रों का पाठ ···फिर पदच्छेद फिर समास।

(३) एक वार इसी प्रकार अष्टाध्यायी पढ़ा के धातुपाठ अर्थ सहित और दश लकारों के रूप तथा प्रक्रिया सहित सूत्रों के उत्सर्ग अर्थात् सामान्यसूत्र ···पश्चात् अपवादसूत्र।

(४) धातु पाठ के पश्चात् उणादि गण के पढाने में सुबन्त का विषय अच्छे प्रकार पढ़ा के पुन दूसरी बार शङ्का, समाधान, वार्तिक कारिका परिभाषा की घटना पूर्वक, अष्टाध्यायी की द्वितीयानुवृत्ति पढ़ावे।

(५) तदनन्तर महाभाष्य पढावे।

(६) डेढ़ बर्ष में अष्टाध्यायी और डेढ वर्ष में महा भाष्य पढके तीन वर्ष मे पूर्ण वैयाकरण हो कर . . .. (३ वर्ष)

(७) व्याकरण को पढ़ के यास्कमुनिकृत निघण्टु और निरुक्त छ वा आठ महीने मे सार्थक पढें और पढावें। (८ मास)

(८) तदनन्तर पिङ्गलाचार्य कृत छन्दोग्रन्थ . चार महीने में। (४ मास)

(९) तत्पश्चात मनुस्मृति, बाल्मीकीय रामायण और महाभारत के उद्योगपर्वान्तर्गत विदुर नीति आदि अच्छे २ प्रकरण काव्य रीति से अर्थात पदच्छेद, पदार्थोक्ति, अन्वय, विशेष्य, विशेषण और भावर्थ .. .इन को वर्ष के भीतर पढलें। (१ वर्ष)

(१०) तदनन्तर पूर्व मीमासा, वैशेषिक, न्याय, योग, साख्य और वेदान्त अर्थात् जहां तक बनसके वहांतक ऋषिकृत व्याख्यासहित अथवा उत्तम विद्वानों की सरल व्याख्या युक्त छ शास्त्रों को पढ़ें पढ़ावें।

(११) परन्तु वेदान्त सूत्रों के पढ़ने के पूर्व ईश, केन, कठ, प्रश्न, मुण्डक, माण्डूक्य, ऐतरेय,

तैत्तिरीय, छान्दोग्य, और बृहदारण्यक इन दश उपनिषदों को पढ़ के छ शास्त्रों के भाष्य वृत्ति-सहित सूत्रों को दो वर्ष के भीतर पढावें।

(२ वर्ष)

(१२) पश्चात् छ वर्षों के भीतर चारों ब्राह्मण अर्थात् ऐतरेय, शतपथ, साम और गोपथ ब्राह्मणों के सहित चारों वेदों के स्वर, शब्द, अर्थ, सम्बन्ध तथा क्रिया सहित पढना योग्य है। (छ वर्ष)

(१३) आयुर्वेद अर्थात् जो चरक, सुश्रुत आदि ऋषि मुनि प्रणीत वैद्यक शास्त्र है उन को अर्थ क्रिया शस्त्र, छेदन भेदन, लेप, चिकित्सा, निदान, औषध, पथ्य, शरीर, देश, काल और वस्तु के गुण ज्ञान पूर्वक चार वर्ष के भीतर पढ़ें पढ़ावें।

(४ वर्ष)

(१४) तदनन्तर धनुर्वेद अर्थात् जो राज सम्बन्धी काम करना है इस के दो भेद एक निज राजपुरुष सम्बन्धी और दूसरा प्रजा सम्बन्धो होता है—इस राजविद्या को २ वर्ष में सीखकर। (२ वर्ष)

(१५) गान्धर्व वेद कि जिस को गान-विद्या कहते हैं उस में स्वर, राग, रागिणी, समय, ताल, ग्राम, तान, वादित्र, नृत्य, गीत आदि को यथावत सीखें। (वर्ष ?)

(१६) अर्थवेद कि जिस को शिल्पविद्या कहते हैं उसको पदार्थ, गुण, विज्ञान, क्रिया, कौशल-नानाविध पदार्थों का निर्माण पृथ्वी से लेके आकाश पर्यन्त की विद्या को यथावत सीखके

(वर्ष ?)

(१७) दो वर्ष मे ज्योतिष शास्त्र, सूर्य सिद्धान्त आदि जिस मे बीजगणित, अंक, भूगोल, खगोल और भूगर्भ विद्या है इसको यथावत् सीखें।

(२ वर्ष)

(१८) तत्पश्चात सब प्रकार की हस्तक्रिया, यन्त्र-कला, आदि को सीखे। (वर्ष ?)

(१९) जिस से बीस या इक्कीस वर्ष के भीतर समग्र विद्या उत्तम शिक्षा इत्यादि।

सं० १५, १६, १८ में समय छूटा हुआ प्रतीत होता है। शेष मिलकर इक्कीस वर्ष होते हैं। सन् १८७५ के सत्यार्थ प्रकाश मे भी लगभग इसी प्रकार का वर्णन है। कहीं कहीं कुछ विस्तार से दिया है। वहां समय कुछ अधिक है —

"इस प्रकार से २७॥ वा २८ वर्ष तक पढ लेगा।" सम्भव है कि 'तक' शब्द से आयु का बोध अभीष्ट हो। मैंने बीच बीच मे जो स्थल छोड़ दिये हैं उनमे कौमुदी आदि उन ग्रन्थों का भी उल्लेख है जिनको स्वामी जी ने निषिद्ध बताया है और उस के कारण भी दिये हैं कि प्रथम तो इन में बहुत सा जाल है दूसरे परिश्रम अधिक करना पडता है और फल न्यून मिलता है।

इस से इतना तो पता चल जाता है कि ऋषि दयानन्द क्या चाहते हैं। परन्तु यह तो मानना ही पड़ेगा कि वर्णन समास रूप से है, व्यास रूप से नहीं। समास भी इतना कि साधारण अध्यापक को आंख मूंद कर अनुसरण करने मे कठिनाइयां ही पड़ सकती हैं।

आजकल पाश्चात्य देशों मे कई सौ वर्ष से पाठनविधि पर बहुत कुछ छानबीन हुई है। शिशु मनोविज्ञान का सूक्ष्म से सूक्ष्म रीति से अध्ययन

किया गया है और क्रियात्मक प्रयोगों द्वारा नित्य नये अन्वेषण होते रहते हैं। छोटी से छोटी बात पर छानबीन की जाती है अर्थात् बालक कैसे बैठे ? कहा बैठे ? किस प्रकार पुस्तक को पकडे, वह पुस्तक आख से कितनी दूरी पर हो। भवन कैसा हो ? कितना प्रकाश आवे ? कितना न आवे ? किस ओर से आवे ? पुस्तक पर कितना प्रकाश पडे, आख पर कितना। साथ साथ कितने विषय पढ़ाये जायं ? कौन कौन विषय एक ही श्रेणी मे पढ़ाये जा सकते हैं ? कौन कौन विषय क्रम की अपेक्षा रखते है ? अक्षर किस अवस्था के लिये कितने बडे हों इत्यादि। यह बाते देखने मे तो छोटी प्रतीत होती है परन्तु बालकों की उपलब्धि, ज्ञान-शक्ति ज्ञान-राशि तथा बुद्धि-विकास के अतिरिक्त स्वास्थ्य पर बड़ा भारी प्रभाव डालती हैं। इसीलिये इनके ऊपर इतना समय, इतना धन और इतनी शक्ति का व्यय किया जा रहा है। ऋषि दयानन्द ने इनमे से अधिकाश के विषय मे प्रतिकूल या अनुकूल कुछ नहीं कहा। संभव है कि यदि वह इनमे से किसी पर लिखते या उनसे प्रश्न किया जाता तो इनमे से बहुत सी बातो से वह सहमत हो जाते। ऋषि दयानन्द लकीर के फकीर न थे, वह परीक्षण और प्रयोग पर विश्वास रखते थे। वह बालकों की सर्वतोमुखी उन्नति चाहते थे। इसलिये यह मानना कठिन है कि ऋषि दयानन्द ने अपने अनुयायियों को अपनी बुद्धि का प्रयोग करने के लिये कोई स्थान नहीं छोड़ा, या अध्यापकों को जो कुछ करना है उस सब का ऐसा विस्तृत उल्लेख कर दिया है कि आख मूद कर चलना ही ठीक है।

मेरे मन मे इस विषय मे बहुत से प्रश्न उठा करते हैं। कुछ को नीचे दिये देता हूँ —

(१) संस्कृत जैसी अप्रचलित या ईषत्प्रचलित भाषा के पढ़ाने और हिन्दी जैसी मातृ भाषा के पढाने की विधि मे क्या अन्तर होना चाहिये ?

(२) रटने की मात्रा किस अवस्था में कितनी होनी चाहिये जिनसे आगे को विद्योपार्जन मे कठिनाई न हो और बुद्धि का विकास भी पूर्णतया हो जाय ?

(३) कितने विषय वैकल्पिक हों और कितने आवश्यक। आवश्यक विषयों मे से किस किस का कितना कितना अंश किस अवस्था मे पढाया जाय ?

(४) देश की तात्कालिक अवस्था का पाठ-विधि के परिवर्तन मे कितना स्थान हो ?

(५) दर्शन, आयुर्वेद, अर्थवेद आदि प्राचीन आर्ष ग्रन्थ ज्यों के त्यों आरंभ कर दिये जाय या उनके पूर्व अन्य आरंभिक पुस्तकों को पढाना भी आवश्यक है ?

(६) साहित्य के ग्रन्थ (रामायण, महाभारत, मनुस्मृति आदि) को महाभाष्य के पूर्ण होने तक स्थगित करना चाहिये या यह पहले भी पढाये जा सकते है ?

(७) अष्टाध्यायी के पढाने का क्रम वही हो या वेदाग प्रकाश की भाति भिन्न २ हो ?

(८) लघु कौमुदी या सिद्धान्त कौमुदी का कौनसा अंश दूषित और निषिद्ध है। क्या उनमें

सूत्रों का क्रम दूषित है या अर्थ गलत है, या उदाहरण अनुचित हैं या विवेचना भ्रमात्मक है ?

(६) क्या यह सभव है कि कौमुदी के समान कोई ऐसी पाठ्य पुस्तक रची जा सके जिसमें कौमुदी के गुण तो हों और दोष न हो ? क्या इस प्रकार की पुस्तक की आवश्यकता भी है या नहीं ? यह भी प्रश्न है।

इस प्रकार के कई प्रश्न हैं जिनका उत्तर मै नही देना चाहता या यो कहिये कि नहीं दे सकता। परन्तु मैं यह अवश्य चाहता हूँ कि विचारशील शिक्षित प्रेमी इन बातो पर टडे दिल से विचार करें। यदि 'सार्वदेशिक' म यह मीमासा आरभ हो जाय तो अच्छा ही है। एक बात अवश्य ध्यान मे रहे। मीमासा युक्तियो तथा परीक्षाओ तक सीमित रहे, व्यक्तिगत आक्षेप या अभिप्रायो पर चोट न की जाय और न यह समझा जाय कि जो कोई किसी प्रणाली में ननु-नच करता है वह स्वामी दयानन्द या आर्य्य-समाज का शत्रु है। हम जितना खुले दिल से इन बातों पर विचार करेंगे उतना ही हमारा मार्ग साफ होगा और वाहर वाले भी उससे प्रभावित होगे। इस समय मुझे कई ऐसे सस्कृतज्ञ अध्यापकों का पता है जो भय के मारे अपना मुह नहीं खोलते। उनके विचार मन ही मन में चक्कर काटते रहते हैं और उसका परिणाम भी बुरा पडता है।

जापान की विभूति

ले०—
श्री पं० ईश्वरदत्त जी

[लेखक महोदय अपनी यात्रा तथा जापान सम्बन्धी अपने अनुभवों को एक लेखमाला के रूप में 'सार्वदेशिक' के पाठकों के सम्मुख रखने का विचार रखते हैं। यह लेख उसी माला का एक अंश है। इस से पूर्व एक अंश मार्च ३७ के 'सार्वदेशिक' में छप चुका है।]

जापान की राजधानी टोकियो में प्रातः ज्यों ही हमारी एक्सप्रेस ठहरी, मैं अपना सूटकेस उठा बाहर आया तो देखता क्या हूँ कि मेरा कुल सामान पहले ही किसी Goods train से आया हुआ मेरी प्रतीक्षा कर रहा है। पतले बारीक कागज की छोटी-सी चिट जो मेरे सामान की रसीद थी, दिखा कर सुन्दर पोशाक वाले कुली ने मुझे टैक्सी में ला बिठाया। स्टेशन के बाहर ही सामने गगन चिचुम्बी अट्टालिकाएँ, भव्य ऊंचे ऊँचे प्रासाद, पंक्तिबद्ध बड़ी बड़ी कोठिया और राजप्रासादके चारों ओर के सुन्दर बाग बगीचों में होकर मुझे जब टैक्सी ले जा रही थी मार्ग के रक्षक, सावधानी से नियम से आने-जाने के रास्ते दिखा रहे थे। फुट-पाथ पर अपूर्व भीड का सहज आना-जाना हो रहा था। शोर, धक्कम-धक्का और कोलाहल का काम न था। टैक्सी, ट्राम गाड़िया, अबाध गति से चल रही थीं। बच्चे, पुरुष, स्त्रिया सभी प्रसन्नवदन सुन्दर कीमोजों और खड़ाऊ पहने खट-खट चले जारहे थे। मैं यह सब देख कर मन्त्रमुग्ध सा रह गया।

जातीय-जीवन के ऐसे सुन्दर रूप जिन पर आज जापान को गर्व है किस तरह बना लिए गए? कैसे थोडे से समय में ही एशिया की नाक, जापान ने महाशक्ति का सम्पादन कर लिया है और 'एशियाई लोग कोरे आदर्शवादी हैं' यूरोप की इस भावना को असत्य प्रमाणित कर दिया है। १९वीं सदी के अन्तिम भाग ने एशिया की कुछ जातियों को संजीवनी शक्ति दी, वह उठीं और उन्हों ने यूरोपसे टक्कर ली। यूरोप की शूरता का सारा गर्व छिन्न भिन्न हो गया और उसने देखा कि एशिया एक मुर्दार चीज नहीं है।

मेरा यह स्वप्न उस समय टूटा जब कि टैक्सी वाला मेरे बताए स्थान पर ले गया। भूल से नम्बर मे गलती थी। वह स्थान जो मुझे चाहिए था, वह न मिला। झट से वह फिर पोलिस स्टेशन पर नकशा देखने और समझने गया और फिर टैक्सी दौडाने लगा। इस बार भी खोजने से वह स्थान न मिला। उसके शरीर और मस्तक से परेशानी की बूंदें झलक आईं। सिर्फ एकबार "सा कुमात्सु ने" बडी कठिनाई है, कहकर आगे फिर चल पड़ा। इस बार पूछते २ वह ठीक स्थान पर गया। मैं समझता था जरूर पैसे के लेने मे झगड़ा करेगा। अधिक की याचना स्पष्ट थी। उस के पैट्रोल और समय का मेरी असाव-

पं० ईश्वरदत्त जी 'विशारद'

इनैमल एक्सपर्ट



आप एक उत्साही और प्रतिभावान आर्य नवयुवक हैं।
अभी हाल में आप जापान से लौटे हैं और
आजकल देहली में अपने कार्य की आयो
जना कर रहे हैं। सार्वदेशिक में
आप समय समय पर लिखते
रहते हैं।

श्री बा० घनश्यामसिह जी गुप्त एम० एल० ए०

प्रधान—

सार्वदेशिक आर्य-प्रतिनिधि सभा तथा आर्य विवाह ऐक्ट के निर्माता



आप सी० पी० लेजिसलेटिव कौंसिल के अभी हाल मे स्पीकर (प्रधान) निर्वाचित हुए हैं।

धानी से दुरुपयोग हुआ था। परन्तु मेरे आश्चर्य की उस समय सीमा न रही, जब कि मेरे दिए पैसे प्रसन्नता से ले लिए और चलते समय झुक कर 'दोमो आई गातो गोजाई मासता' में आप का बड़ा उपकार मानता हूँ कह कर चल दिया।

कैसी छोटी-सी महत्ताकी बात उसकी रहीहोगी। जापान एक जीवित जाति का देश है। देश-प्रेम, विनम्रता, आज्ञाकारिता और अद्भुत सगठन जो जातीयता के प्रमुख चिन्ह हैं उनसे वे विभूषित हैं और गर्व अनुभव करते हैं। मेरे दो मास तो शहर के वार्ड्स, रास्ते, स्टेशन, समझने और भाषा याद करने, समझने और बोलने में निकल गए। प्रात भोजनादि से निवृत होकर टोकियो में निरुद्देश होकर उन की सजी दुकानें, ऐश्वर्य के जिन मे पृथ्वी के कुल पदार्थ सुलभ और मनोहारी भण्डार, बड़े २ स्टोर बाग-बगीचे जिन की रमणीयता और हरीतिमा की क्या बात कही जाए आख फाड़२ कर देखता और एक अनिर्वचनीय सुख अनुभव करता था। वहा दुकानों में सामान की वह वस्तुएं जो स्वावलम्बी और आत्म-विश्वासी आदमी के लिए आवश्यक हैं बड़े सुन्दर ढंग से सजी रखी रहती हैं। नन्हें बच्चों के लिए उन में निकम्मे खिलौने न रखकर ऐसा सामान रखा जाता है जिन के साथ खेल कर वह सच्चे सिपाही बनें और देश को उन्नत कर सकें।

कोई भी दुकान ऐसी नहीं होगी, जहा पर बच्चों के खिलौनों में तलवारें, दूरबीनें, कलाई की घड़िया और अन्य युद्धक्षेत्र मे काम आने वाले सिपाही के साज न हों। भिन्न भिन्न प्रकार की बन्दूकें, पिस्तौल और शत्रु पर विजय पाने के अनेक सामान विशेष रूप से रखे जाते हैं। बच्चों का सब से प्रिय खिलौना वहा पर एक छोटी-सी फौजी फौलाद से ढकी हुई स्वरचित मोटर कार है। जिस पर हवाई बन्दूक इस ढंग से लगी हुई होती है कि उसका मुख शत्रु की ओर स्वेच्छानुसार किया जा सकता है।

बचपन में ऐसी ही शिक्षा का यह परिणाम है कि जापान का प्रत्येक बच्चा सिपाही है। संसार में अन्यत्र कहीं भी आपको ६, ७, वर्ष के नन्हें बालक ऐसे नहीं मिलेंगे जो फौजी वर्दी धारण करके प्रसन्न होते हों और रण भेरी के गाने हर समय गुन-गुनाते हों। वहा गलियों में बच्चे अश्लील गन्दे गान नहीं गाते फिरते बल्कि उनका केवल एक यही स्वर होता है "सब से ऊचा झण्डा रहे हमारा"। वहा जातीयता का बीज बचपन मे ही बोया जाता है। परन्तु भावी भारतीय जाति के लिए भारत क्या कर रहा है?

किसी भी देश के नवयुवक उस देश का मेरु दण्ड है। नवयुवकों के आधार पर राष्ट्र जीता है। जिस देश के नवयुवक अपने राष्ट्रीय उत्तरदायित्व को ठीक तौर से समझ लेते हैं उस देश के भाग्य खुल जाते हैं। किसी भी देश के नवयुवकों के जीवन का उद्देश्य जिस मे कुछ भी राष्ट्रीयता शेष रह गई है, केवल आजीविका ही प्राप्त करना नहीं है। वे ज्ञान प्राप्त करने के लिए आजीविका के साधन जुटाते हैं। उनके लिए सब से बड़ा उल्लास है, सघर्ष। मृत्यु एक जीवित

जाति के लिए साधारण सी बात है। जब हम जापान के नवयुवकों को मृत्यु के प्राङ्गण उछलते, हँसते और ज्ञान-विज्ञान की बलि वेदी पर प्राण देते देखते हैं तो हमारे हृदय में ऐसी भावना उत्पन्न होती है कि हमारे देश के नवयुवक कब ऐसा रूप धारण करेंगे।

जब तक हमारे देश के नवयुवक मृत्यु से मैत्री नहीं कर लेते और मृत्यु को नहीं वर लेते तब तक वह मृत्यु से निर्भय नहीं हो सकते। हमें मृत्यु से मैत्री करनी चाहिए।

जापानी आत्म हत्या को पाप नहीं समझते। उनका सिद्धान्त है कि दु खी जीवन की अपेक्षा मर जाना कहीं अच्छा है। इसी कारण जापान मे आत्म घात बहुत होते हैं। उन में एक विशेषता साथ में यह रहती है कि ऐसे आत्म-घात के कारण प्राय देश-सेवा और कर्तव्य-पालन होते हैं। बहुत से सिपाही अथवा अधिकारी अपने कर्तव्य पालन में चूक जाने पर आत्म-घात कर लेते हैं और बहुत से इसलिए कि विदेशों से लौट कर वह जापानी भाषा सीखने मे कच्चे रह जाते हैं।

एक बार जापान के महाराजा एक विद्यालय का निरीक्षण करने जा रहे थे। पुलिस अधिकारी की भूल से महाराज की सवारी निश्चित मार्ग छोड़कर अन्य मार्ग से चली गई, और इस प्रकार नियत समय से आध घण्टा पूर्व विद्यालय में पहुँच भी गई।

इस भूल के कारण एक प्रान्तीय गवर्नर और अनेक उच्च पदाधिकारियों ने अपने आप को दण्ड देने के लिए स्वत त्याग पत्र देदिए और सवारी का सचालन करने वाला पुलिस अधिकारी अपनी भूल पर बड़ा लज्जित हुआ। जापानी आदेश के अनुसार जब उसे और कोई उपाय न सूझा तो उसने अपनी स्त्री और बच्चे को अन्यत्र भेज कर स्वय "हाराकीरी" पेट फाड़ लिया।

हमारे नेताओं मे से जो नित्य दल बनाते हैं, कितने ऐसे हैं जिनमें उत्तरदायित्व की ऐसा भावना है?

हमारे यहा आए दिन तागा, ट्राम और मोटर वालों की लापरवाही से पटरी पर चलने वाली अनगिनत जानें नष्ट होती हैं और प्राय आहत को छोड़कर ट्राम, मोटर वाले अपनी गाड़ी बड़े वेग से निकाल ले जाते हैं। परन्तु जापानी ट्राम कम्पनी के नौकर किसी भी आहत के लिये अपना रक्त देकर उसकी जान बचाने के लिए तैयार रहते हैं। एक दिन तीसरे पहर एक ट्राम गाड़ी चौरस्ते से जा रही थी कि एक नन्हा सा पाच वर्षीय बालक भागता हुआ गाड़ी की लाइन पर आ गया। गाड़ी चलाने वाला बहुतेरा चिल्लाया परन्तु बालक टकरा ही गया और उसकी टाग कट गई। गाड़ी वाला तुरन्त ही बालक को समीप के हस्पताल में ले गया और अपने शरीर में से उसकी रक्षा हित रक्त निकलवा कर बच्चे को दिया! बच्चा बच गया।

परन्तु ऐसी दशा मे भारत में क्या होता है? इसमें दोष उनका नहीं! उन विचारों को उत्तरदायित्व की शिक्षा ही कब दी जाती है। वहा वाले तो इतना ही जानते हैं कि ट्राम्वे क० का साहब

पुलिस मे अपने विशेष मेल-जोल के प्रभाव से छुड़ावेगा।

जापान में चोरी और डाकेजनी बहुत ही कम सुनी गई है। वहा के चोर और डाकू भी आत्मा रखते हैं और सिद्धान्त के पक्के होते हैं। एक बार एक नवयुवक "मैगीरू" थाने में सबेरे-सबेरे आया और प्रार्थना की कि वह चोरी के अभियोग में बन्दी कर लिया जाए। उसने बतलाया कि चोरी करते ही उसे ध्यान आया कि तीन वर्ष पूर्व वह "मैगीरू" में ही चोरी करने के अभियोग में पकड़ा गया था और यह वचन देने पर छोड़ दिया गया था कि यदि फिर कभी ऐसा काम करे तो उसकी सूचना "मैगीरू" थाने में दे। पुलिस ने इस बात की जाच की और सत्य पाया। यह है जापान के कुकर्मी का आदर्श।

परन्तु भारत मे न्याय और धर्म के ठेकेदार भी कदाचित् इस जन्म मे इस आदर्श तक नहीं पहु च पाते। वहा अनेक बार तो अभियुक्त स्वयं ही अपने पूर्व के दुष्कर्मों की गाथा वर्णन कर देते हैं और विशेष दण्ड पाने के लिए आग्रह करते हैं।

भारत मे प्राय राजनैतिक कैदियों को कड़ा दण्ड दिया जाता है और न्याय सरकार की आज्ञा पर चलता है। परन्तु जापान के जज ऐसा नहीं करते। वह भगवान् की आज्ञा मानते हैं।

वर्तमान सरकारी ढग को बदलने के विचार से हत्याएं करने के अभियोग में एक खूनी भ्रातृ-मण्डल के १४ सभासदों की जाच हो रही थी। जज महाशय नित्य मन्दिर मे जाकर भगवान से प्रार्थना करते थे। "तू न्याय करने की सामर्थ दे"।

हे भगवान भारत में कब ऐसा होगा?

——

आर्य विवाह एक्ट

लेखक—श्री०बा० घनश्याम सिंह जी
एम०एल०ए०, प्रधान सार्वदेशिक सभा

उद्देश

आर्य विवाह एक्ट का उद्देश अन्तरजातीय और शुद्ध किये हुए पुरुष और स्त्री के बीच की शादी को जायज़ करार देने का है।

वर्ण और जाति

हिन्दू धर्म शास्त्रों मे सवर्ण विवाह जायज़ माना गया है। और कुछ हद तक अनुलोम विवाह भी विहित है। परन्तु प्रतिलोम विवाह का निषेध है। धर्म शास्त्रों में इस सम्बन्ध में जो शब्द प्रयोग हुआ है वह "वर्ण" है न कि "जाति"। "वर्ण" शब्द के अर्थ के बारे मे आर्य समाज और कट्टर सनातनी भाइयों के बीच मतभेद है। आर्य समाज गुण, कर्म और स्वभाव से "वर्ण" मानता है। और हमारे कट्टर सनातनी भाई जन्म से ही "वर्ण" मानते हैं। इनके लिये "जाति" और "वर्ण" पर्य्यायवाची हैं। इसलिये इनके मत के अनुसार एक ही जाति के बीच की शादी जायज़ है और दूसरी नहीं। वर्तमान अंग्रेजी अदालतों में भी यही बात मानी गई है। इसका कारण यह है कि शुरू शुरू मे जब अंग्रेजी अदालतें स्थापित हुई तब उनके सामने हिन्दुओं और मुसलमानों के आपस मे के ऐसे मुकदमे जो कि "धर्मशास्त्र" या "शरीयत" से सम्बन्ध रखते थे, जब आया करते थे तब वे हिन्दू पंडित और मुस्लिम मौलवियों से सहायता लिया करते थे। ऐसे प्रश्न उन पंडितों और मौलवियों के सुपुर्द किये जाते थे और उनका दिया हुआ फ़ैसला मान्य होता था। अदालते उन पंडितों की राय के अनुसार ही फैसला दिया करती थीं। यह स्वाभाविक था कि उस समय की प्रचलित प्रथा के अनुसार ही तब के पंडित और मौलवी अपनी राय देते रहे। परिणाम यह हुआ कि अदालतों में भी "वर्ण" का अर्थ "जाति" होने लगा और अपने जाति के बीच का ही विवाह जायज़ माना जाने लगा। वही परम्परा अब तक अदालतों में जारी रही।

महर्षि का सत्यार्थ

इसके विरुद्ध सबसे पहिली आवाज महर्षि स्वामी दयानन्द ने उठाई। यद्यपि यह ठीक है कि देश मे उस समय भी कुछ ऐसे नेता थे जो अन्तरजातीय विवाह को बुरा नहीं मानते थे परन्तु उनमें और महर्षि दयानन्द में एक बहुत बड़ा अन्तर था। वे लोग यह मानते थे कि धर्मशास्त्रों में अन्तरजातीय विवाह का निषेध है और वे उनकी आज्ञाओं का उल्लघंन करने को अपने अनुयायियों को सिखाते थे। पवित्र धर्मशास्त्रों के विरुद्ध उनकी बगावत थी। स्वामी जी धर्म शास्त्रों के विरुद्ध बागी नहीं बल्कि उनके

कट्टर भक्त थे। उनका कहना था कि पवित्र धर्म-शास्त्रों मे कोई त्रुटि नहीं। त्रुटि अर्थ करने वालो की है। "वर्ण" शब्द को "जाति" का पर्यायवाची कहना अनर्थ करना है और इसके विरुद्ध ऐलानिया तौर से सबसे पहिली आवाज उन्होंने ही उठाई।

आर्य समाज मे अन्तरजातीय विवाह

महर्षि के इस अर्थ का आर्य समाज ने अनुकरण किया और आर्य समाज में कई ऐसे विवाह हुए जो जात पात के बन्धनों को तोड़ने वाले थे। कुछ काल पूर्व सार्वदेशिक सभा के दफ्तर मे जो रिपोर्ट आई उनसे पता चलता है कि लगभग ५०० ऐसी शादियां आर्य समाज मे हुई हैं।

आर्य समाज का महत्वपूर्ण प्रश्न

इसलिये यह प्रश्न आर्य समाज के लिये एक महत्वपूर्ण प्रश्न हो गया जिसका उपाय करना उसके लिये आवश्यक हो गया। अदालतो मे इन विवाहो के सर्वथा जायज होने में कोई भी शक बाकी न रह जावे इसके लिये उपाय करना जरूरी हो गया।

मथुरा के शताब्दि के अवसर पर यह प्रश्न उठाया गया और तब से लगातार प्रयत्न जारी रहा। श्रीमती सार्वदेशिक आर्यप्रतिनिधि सभा ने इस सर्वव्यापी प्रश्न का अपने हाथ मे लिया और समय समय पर असेम्बली के सदस्य द्वारा कानून बनाने की चेष्टा करती रही। अन्त में बहुत परिश्रम और चिन्ताओं के बाद ता० १४ अप्रेल सन् १९३७ को गवर्नर जनरल साहब की स्वीकृति मिलने पर 'आर्य समाज विवाह एक्ट" पूर्ण रूप से कानून हो गया।

आर्य विवाह एक्ट की धाराएं

आर्य विवाह एक्ट निम्न प्रकार है —

छोटा नाम और विस्तार

१-(क) यह कानून "आर्य विवाह जायज बनाने वाला एक्ट सन १९३७" कहलायेगा।

(ख) यह (एक्ट) तमाम ब्रिटिश हिन्दुस्तान मे जिसमें ब्रिटिश बलूचिस्तान और सथाल परगने भी शामिल हैं, लागू होगा और हिन्दुस्तान के अन्य भागों मे सम्राट की समस्त प्रजा को और ब्रिटिश हिन्दुस्तान के बाहर और उस पार की समस्त हिन्दुस्तानी प्रजा को भी लागू होगा।

आर्यसमाजियों का विवाह नाजायज नहीं होगा

२–बावजूद हिन्दू रीति या रिवाज के किसी विरुद्ध विधान के (हिन्दू कानून या रीति रिवाज में कोई विधान इसके विरुद्ध रहते हुए भी) विवाह के समय आर्य समाजी कहने वाले व्यक्तियो के बीच का कोई भी विवाह चाहे वह विवाह सम्बन्ध इस एक्ट के लागू होने के पूर्व हुआ हो या तत्पश्चात् हुआ हो, केवल इसी बात के कारण कि वे लोग किसी समय हिंदू समाज के भिन्न भिन्न जाति या भिन्न भिन्न उपजाति के थे या कि उनमे से कोई एक या दोनो ही विवाह के पूर्व किसी समय हिंदू धर्म के सिवाय किसी

अन्य धर्म के थे नाजायज नहीं होगा या कभी भी नाजायज था (रहा हो) ऐसा नहीं माना जावेगा।

एक्ट का विस्तार

यद्यपि यह एक्ट देखने मे बहुत छोटा है तथापि इसका विस्तार बहुत है जिसका दिग्दर्शन मात्र यहाँ कराया जा सकता है।

कहाँ कहाँ लागू होता है

यह एक्ट सारे ब्रिटिश हिन्दुस्तान मे लागू तो है ही इसके अलावा देशी रियासतों में तथा विदेश मे भी बृटिश हिन्दुस्तानी प्रजा को लागू है।

किसको लागू है

यह एक्ट सिर्फ आर्य समाजियों को ही लागू है दूसरों को नही। उन विवाहों को लागू है जो आर्य समाजी पुरुष और आर्य समाजी स्त्री के बीच में हुई हों या आइन्दा होवें। विवाह के पहिले स्त्री या पुरुष किसी भी जाति या धर्म के क्यों न रहे हों परन्तु यदि विवाह के समय पुरुष और स्त्री दोनों आर्य समाजी हों तो उस विवाह को यह एक्ट लागू है।

कब से लागू है

कानून ता० १४ अप्रेल सन १९३७ को मुकम्मिल हुआ। परन्तु यह कानून आर्यों के बीच के सब विवाहों को जायज करता है चाहे विवाह कभी भी हुए हों या होवें। आगे जो विवाह हो चुके हैं वे सब और आइन्दा जो होवे वे सब भी इस कानून की परिधि के भीतर आते हैं। इस प्रकार के लगभग ५०० विवाह जो आर्य समाज में हो चुके हैं उन सब के कानून की नजर में जायज होने मे कोई शक नहीं रह गया। याद रहे कि यह बात भी नहीं है कि ये सब विवाह ता० १४।७।१९३७ को ही जायज हुए और इसके पहिले नही। विवाह के समय से ही जायज हैं।

आर्य समाजी कौन

इस कानून की मंशा में आर्य समाजी कौन है। "आर्यसमाजी" का किसी ऐसी परिभाषा के भीतर जकड़ना जो कि सब आर्यसमाजियों का ठीक ठीक बोध कराते हुए भी अदालत मे निर्विवाद सिद्ध हो उतना ही कठिन है जितना कि हिन्दू, मुसलमान या अन्य धर्मावलम्बियों का है। व्यवहार मे तो जिस प्रकार मुसलमान या ईसाई को बताना कठिन नहीं उसी प्रकार एक आर्य समाजी को पहिचानना कठिन नही। वास्तव मे तो जो अपने को मुसलमान कहे वह मुसलमान, जो अपने को ईसाई कहे वह ईसाई, इसी प्रकार जो अपने को आर्य समाजी कहे वह आर्य समाजी। आर्य समाज की प्रथा के अनुसार जिसको आर्य समाजी होने में कोई शुद्धि आदि संस्कार की आवश्यकता नही, वह तो कहने मात्र से ही आर्य होता है और जिसके लिये शुद्ध करने की प्रथा है वह शुद्ध होते ही आर्य होता है और आर्य होते ही इस कानून की परिधि में आ जाता है।

—०—

गुरुकुल और नव-शासन-विधान

लेखक—
राजवैद्य श्री सुधन्वा जी न्यू दिल्ली

—※—

आर्य समाज ने अपने जन्मकाल से ही भारत देश के राजनैतिक सामाजिक एव शिक्षा सुधार सम्बन्धी क्षेत्रों मे जो अनुपम राष्ट्र सेवा कर दिखाई है वह किसी से छिपी नही। यह एक मानी हुई बात है कि इस देश के राजनैतिक पहलू को वर्त्तमान दशा तक उन्नत करने में आर्य समाज की वैयक्तिक एव सामूहिक रुप मे की गई कुरबानी का एक बडा हाथ है। महात्मा गाधी जी के प्रगतिशील युगका काग्रेस के जीवन मे जबसे उदय होता है तबसे उसका समूचा प्रोग्राम याने सत्याग्रह आन्दोलन-खिलाफत-विदेशी वस्तु बहिष्कार-अछूत-उद्धार-हिन्दी राष्ट्रभाषा प्रचार एवं हरिजन तथा ग्रामोद्धार तक जो जो काग्रेस के कार्य हुए हैं उन मे आर्य समाज वा उसके सभ्यों ने पूरा पूरा साथ दिया है और बहुत से कार्य तो काग्रेस ने आर्य समाज के समूचे ही अपना लिए हैं। इसी कारण से लोग काग्रेस को एक समाज सुधारक सस्था कहने लग पडे हैं। साराश यह कि ऋषि दयानन्द द्वारा स्थापित आर्य-समाज की कार्य पद्धति और काग्रेस की गाधी युग वाली पद्धति में बहुत समानता एवं एक रूपता बनी है। शायद यही बड़ा आकर्षण था जिसने आर्य समाज के कर्मवीर नेता स्वर्गीय स्वामी श्रद्धानन्द जी को भी उनके जीवनके अन्तिम वर्षो में काग्रेस के कार्य की तरफ खीचा और स्वामी जी एक राष्ट्रीय नेता कहे जाने लगे।

पूज्य स्वामी जी ने काग्रेस और आर्य समाज के कार्यों की इस अभेद भावना का पूरा २ भान किया और उसमें पूरी तत्परता से सफलता लाभ की। कर्मवीर नेता सदा मौके से लाभ उठाते हैं। उनका अपने निश्चित प्रोग्राम को सफल बनाने के लिए लोक-सग्रह करने का अजीब ढंग हुआ करता है। वे एक खास रूढि के साथ चिपके नही रहते। श्री श्रद्धानन्द जी महाराज का जीवन हम आर्यों के लिए इस सिद्धात का ज्वलत उदाहरण है। उन्होंने हिन्दी के माध्यम द्वारा ऊची से ऊँची शिक्षा साधन रूप गुरुकुल व कन्या शिक्षणालय खोलकर देश के सन्मुख एक अनूठा सफल कार्य कर दिखाया। उनके इन्हीं शिक्षालयों की नकल पीछे से गाधी युग में काग्रेस ने भी स्थान स्थान पर राष्ट्रीय विद्यापीठ खोलकर की। यह क्या आर्यसमाज का काग्रेस को पथ प्रदर्शन न था? आर्यसमाज के नेताओं ने देश के अनेक क्षेत्रों में प्रतिकूल अवस्थाओं में राष्ट्र-सुधार के कामों मे कर्णधार का काम किया है। राजा तथा प्रजा पक्ष की सहायता के अभाव मे भी इन महारथियों ने देश के सामने ग्रामोद्धार, शिक्षा प्रचार के अनेक सामयिक उपकारी कार्य कर दिखाए हैं।

आज जबकि हमारे देश मे नव शासन-विधान प्रजा पक्ष के हाथ सौंपा जारहा है, आर्य-समाज के ही नए पुराने कार्यों की चर्चा हो रही है—नव शासन-विधान के कर्णधार नेताओं का ध्यान फिर आर्य समाज की तरफ हिन्दी माध्यम द्वारा राष्ट्रीय तथा अन्यान्य सामयिक समस्याओं के सुलझाने के लिए लगा हुवा है। वर्त्तमान अग्रेजी माध्यम द्वारा शिक्षा देने वाली विलायती शिक्षा-पद्धति की इस देश के लिए प्रतिकूलता एवँ निरसा-रता का भान नए काग्रेसी नेताओं को पूरा २ हो गया है। ऐसी विषम स्थिति में क्या आर्य समाज के गुरुकुल शिक्षालय वा उसके स्नातकों को देश की इस समस्या को हल करने के लिए अग्रसर नहीं होना चाहिये ? मेरे ख्याल में देश के छ काग्रेसी सूबों में जहा हिन्दी भाषी प्रजाजन का बहुमत है, प्रारम्भिक शिक्षा प्रचार हिन्दी भाषा-माध्यम द्वारा गुरुकुल शिक्षालयों के समान कर देना चाहिये। हिन्दी माध्यम को सर्वत्र यूनीव-र्सिटियों मे इंग्लिश माध्यमसे बदल देना चाहिये। कालेजों की सख्या कम करके प्रारम्भिक शिक्षालयों की संख्या बढ़ानी चाहिये।

यूनीवर्सिटियों मे हिन्दी माध्यम द्वारा पढाने के लिए उपयुक्त विषयों के प्रोफेसर गुरुकुल के योग्य स्नातकों को भरती करना चाहिये। आर्य समाजके अधिकारियों को चाहिये कि वे इन काग्रेसी सूबों के प्रधान सचिवों से मिलकर अपने इस सफल परीक्षणके अनुभव पर उन्हें मूल्यवान सलाह देते हुए उनसे उक्त कार्य के लिए अनुरोध करें। हो सके तो गुरुकुल यूनीवर्सिटी को अधिक से अधिक लोकोपयोगी बनाने के लिए उपयुक्त राजा-श्रय लेवें। यह एक सुवर्ण अवसर है जोकि गुरुकुल शिक्षालयों के सफल जीवन का नव प्रभात है। देश के सब प्रान्तों की आर्य प्रतिनिधि सभाओं को शीघ्र मिल बैठकर इस मौके से लाभ उठाना चाहिये और नवशासन में हिन्दी भाषा के माध्यम द्वारा सब तरह की शिक्षा के कार्य को अपने हाथ मे लेना चाहिये। पजाब तथा यु० पी० आर्य प्रतिनिधियों से मेरा विशेष रूपसे यह अनुरोध है कि वे अपने गुरुकुलों के शिक्षापटलों के कार्य कर्ताओं का एक डेपूटेशन काग्रेस के नए मिनिस्टरों से मिले और राष्ट्रीय शिक्षा के कार्य को अपने सिपुर्द ले लेवें तथा गुरुकुलों के स्नातकों द्वारा देश की भावी शिक्षा पद्धति को सुचारु रूपसे चलावे।

हमारे देश मे सन् १६३१ की जन गणना के अनुसार १०० मे सिर्फ ८ आदमी अक्षर बोध का ज्ञान रखते हैं। देश की ऐसी निराशा जनक शिक्षा की दशा का ध्यान करते हुये इस कार्य की गम्भी-रता और भी ज्यादा हो जाती है।

क्या आर्य सार्वदेशिक सभा दिल्ली के अधि-कारी वर्ग मेरे इन विचारों पर कुछ गौर करेंगे ?

शंका-समाधान

—※—

भारत समाज अदयार (मद्रास) और हिन्दू समाज राज महेन्द्री ने हिन्दू धर्म पर एक प्रश्नावली तय्यार करके हिन्दू और आर्य विद्वानों तथा नेताओं की सेवा में उनकी सम्मति जानने के लिये भेजी थी, इस उद्देश्य से कि हिन्दू धर्म का बदलते हुए ज़माने के अनुकूल एक सुनिश्चित रूप निर्धारित करने के कार्य में जिसकी वर्तमान में मुख्यतया हिन्दुओं के उन्नत वर्गों में आवश्यकता अनुभव की जा रही है, उनका उपयोग किया जासके।

उस प्रश्नावली के सम्बन्ध में जो उत्तर आर्य समाज के प्रसिद्ध विद्वान श्री० पं० गंगा प्रसाद जी उपाध्याय की ओर से भेजे गए हैं उन्हें हम अपने पाठकों के लाभार्थ क्रमश यहां देते हैं—

1. Scriptures

Questions —

1 What works, if any, should be fixed as Scriptures binding on all Hindus ?

2 In the case of Hindus not knowing Sanskrit, should the above Scriptures be translated into the vernaculars for their use ?

3 What do you consider are the Basic Truths of Hinduism ?

(*a*) The One Existence, (*b*) The Many, (*c*) Reincarnation, (*d*) Karma, (*e*) Yajnas, (*f*) Visible and Invisible Worlds. (*g*) Existence of Devas and Rishis. These and what else ?

Answers :—

1. The Vedas, the original text, are the only scriptures of the supreme authority. For the social unity, Manusmriti can be formed as a workable basic unit.

2 The translations of the scriptures into vernaculars are very necessary, but the text should always follow along with them, as it is not always possible to convey the right idea through translations.

3. The basic truths of the Hinduism as such are difficult to single out. As far we are concerned, we believe in the eternal existences (independent) of God, Souls, and Prakriti, (the trinity or the three eternals) souls under going re-incarnations and transmigrations, through the doctrine of Karma, attaining Mukti finally, Panchamahayajnas, and Shodasha Samskaras, the invisible and visible worlds with respect to state and condition, not separated by space or time; Devas and Rishis are humans with special enlightenments and not

species by themselves The Vernashrama Dharma is a basic truth of the Hinduism.

धर्म ग्रन्थ

प्रश्न

(१) कौन से धर्म-शास्त्र हिन्दुओं के लिए माननीय ठहराए जाने चाहिएँ ?

(२) जो हिन्दू संस्कृत नहीं जानते हैं क्या उनके उपयोगके लिए उपयुक्त धर्म शास्त्रोंका लोक-भाषाओं में अनुवाद होना चाहिए ?

(३) क्या आपकी सम्मति में हिन्दू धर्म की आधारभूत सच्चाइया निम्न हैं या अन्य कोई हैं ?

(१) एकेश्वरवाद (२) अनेकेश्वरवाद (३) पुनर्जन्म (४) यज्ञ (५) दृश्य और अदृश्यमान जगत (६) देवों और ऋषियों की सत्ता।

उत्तर

(१) आदि ज्ञान की पुस्तक केवल वेद ही सबसे ज्यादा प्रामाणिक धर्म-ग्रन्थ है। सामाजिक एकता के लिए मनुस्मृति व्यावहारिक आधार के रूप मे निश्चित की जा सकती है।

(२) धर्म ग्रन्थों का लोक भाषाओं में अनुवाद जरूरी है परन्तु अनुवाद के साथ मूल भी सदैव होना चाहिए क्योंकि अनुवादों के द्वारा ठीक २ भाव का व्यक्त होना सदैव सभव नही होता है।

(३) वर्तमान हिन्दू धर्म की आधारभूत सच्चाइयों का बतलाया जाना कठिन है। जहा तक हमारा सम्बन्ध है हम ईश्वर, जीव और प्रकृति की नित्यता में ,कर्मानुसार जीवों के आवागमन में और अन्त में मोक्ष प्राप्ति मे, ५चमहायज्ञो मे, सोलह संस्कारों में, देश या कालसे अबाधित दशा और अवस्था के रूपक दृश्यमान और अदृश्यमान लोकों में, विश्वास रखते हैं। देव और ऋषि विशिष्ट मनुष्य होते हैं। मनुष्यों से भिन्न अपनी उनकी कोई जाति नहीं होती है। वर्णाश्रम धर्म हिन्दू धर्म की एक आधार-भूत सच्चाई है।

श्रीमती हैरियट ऐलीज़बेथ स्टो

लेखक—
श्री बनारसीदास चतुर्वेदी

As long as the baby sleeps with me nights I cannot do anything, but I will do it at last. I will do that thing if I live"

पाँच बच्चों की मा ने जब उसके छठवाँ बच्चा हुआ था, तब अपनी भाभी को एक पत्र में उपर्युक्त वाक्य लिखा था—"भाभी, जब तक बच्चा रातको मेरे पास सोता है, तब तक मैं कोई काम नहीं कर सकती ; पर मैं करूँगी ज़रूर। अगर ज़िन्दा रही, तो दासत्व प्रथाके ख़िलाफ़ ज़रूर लिखूँगी ।"

अमेरिका में उन दिनों गुलामी की प्रथा ज़ोरों पर थी। बेचारे नीग्रो लोगोंको नरकतुल्य यातनाएँ सहनी पड़ती थीं। जानवरों की तरह उनकी ख़रीद और बिक्री की जाती थी। मा बच्चों से अलग की जाती थी, पति पत्नीसे, पिता पुत्र पुत्रियों से। गुलामों की इस दुर्दशा को देखकर श्रीमती हैरियट एलीज़बेथ स्टो का दिल पिघल गया, और उन्हों ने दृढ़ प्रतिज्ञा करली कि इस दासत्व प्रथाके विरुद्ध अवश्य लिखूँगी।

एक बार उन्हों ने लिखा था—"अगर मेरे समुद्र में डूबने के साथ साथ गुलामीकी प्रथाके तमाम पाप और अत्याचार भी डूब जायँ, तो मैं समुद्र में डूब कर प्राण देनेको भी तैयार हो जाऊँगी।"

रविवार का दिन था। मिसेज़ स्टो गिरजाघर गई हुई थीं और वहाँ धर्मोपदेश सुन रही थीं कि एक साथ उनके मनमें पुस्तक प्रारम्भ करदेने की प्रेरणा उत्पन्न हुई, और उन्हों ने पहला अध्याय वहीं पर बैठे बैठे लिख डाला। फिर उन्होंने वह अध्याय अपने बच्चों को सुनाया। सुनकर बच्चों की आँखों से आँसू टपाटप टपकने लगे! इतने में मिसेज़ स्टो के पतिदेव भी आ गये। बच्चों को रोते हुए देखकर वे आश्चर्यचकित रह गये। समझ में नहीं आया कि माजरा क्या है। तब मिसेज स्टोने वह अध्याय पतिको भी सुनाया, और वे भी रोने लगे! इस प्रकार प्रारम्भ हुआ उस महत्व-पूर्ण ग्रन्थका, जिस ने आगे चलकर संसार में अक्षय कीर्ति प्राप्त की, जिसका अनुवाद शीघ्र ही तेईस भाषाओं में हो गया और जिसकी लाखों ही कापियाँ शीघ्र ही जनताके हाथों तक पहुँच गईं। इस पुस्तकका नाम है 'Uncle Tom's Cabin' अर्थात्—'टाम काका की कुटिया'। इस पुस्तकने हजारों-लाखों ही आदमियों को रुलाया और हजारों ही आदमियों को गुलामी की प्रथाका घोर विरोधी बना दिया। औरतें बर्तन साफ करते समय आपसमें बातचीत करतीं—'बहन तुमने 'टाम काकाकी कुटिया' पढ़ी है? बड़ी हृदयवेधक है!' मज़दूर बोझा ढोते समय कहते—"बड़ी भयंकर पुस्तक है! पढ़कर तबीयत दहल जाती है।" क्या सड़क पर, क्या बाज़ारों में और क्या होटलों में, सर्वत्र इसी की चर्चा थी। इस किताब ने लोगों के हृदय में आग सी लगा दी। वे दक्खिनी रियासतों से, जहाँ यह गुलामी की प्रथा प्रचलित थी, घोर घृणा करने लगे। दरअसल इस एक पुस्तकने गुलामी-प्रथा के उच्छेद के लिए जो कार्य किया, वह किसी पुस्तक ने अभी तक नहीं किया था। उत्तरी और दक्खिनी रियासतों में इसने युद्ध करा

दिया और गुलामी-प्रथाको जड़-मूल से नष्ट ही करा दिया। सन् १८६३ में जब मिसेज़ स्टो अमेरीका के पार्लमेंट भवन White House में गईं और उनका परिचय प्रेसिडेण्ट लिंकनसे कराया गया, तो लिंकनने, जो क़दके काफ़ी ऊँचे थे, मिसेज़ स्टोसे हाथ मिलाते हुए कहा— "Is this the little woman who brought on so great a war?"—"क्या इसी छोटी-सी महिलाने वह महान युद्ध करा दिया!"

आशा है, इन मिसेज़ स्टो का संक्षिप्त परिचय 'विशाल भारत' के पाठक-पाठिकाओं के लिए उपदेश-प्रद होगा। हैरियट एलिज़बेथ का, जिनका नाम आगे चलकर स्टो हुआ था, जन्म २४ जून सन् १८११ को संयुक्त राज्य अमेरिका के लिचफील्ड नामक स्थान में हुआ था। वे अपने माता-पिताकी सातवीं सन्तान थीं। हैरियटको अधिक दिनों तक मातृस्नेह प्राप्त नहीं हुआ। जब ये कुल चार वर्ष की ही थीं, इनकी पूज्य माता का स्वर्गवास हो गया। इसलिए इनके लालन पालन का भार पड़ा इनकी बड़ी बहन कैथेराइन पर, जो उस समय पन्द्रह वर्षकी थीं। कैथेराइन सुशिक्षित थीं, और उन्होंने एक स्कूल भी क़ायम कर रखा था। हैरियटको उन्होंने अपने स्कूल से ही पढ़ाया और आगे चलकर इसी स्कूल में ये छोटी बहन मास्टरनी भी बन गईं। सन् १८३२ में हैरियट के पिताजी एक धार्मिक विद्यालय के प्रधान बनकर सिनसिनाटी नामक नगर को गये और उनके साथ से दोनों बहनें भी गईं। बड़ी बहनका विचार एक कन्या-महाविद्यालय क़ायम करने का था, और हैरियट अपनी बहनकी सहायक के रूप में वहाँ गई थी। विद्यालयके साहित्यिक जीवन में हैरियट ख़ूब भाग लेती थी। स्थानीय पत्र-पत्रिकाओं में छोटे-छोटे लेख भी लिखती थी। दो-चार कहानियाँ और स्केच भी उसने लिखे थे, और अपनी जीजी की मदद से उसने भूगोल की एक किताब भी बना डाली थी। पिताजी के धार्मिक विद्यालय में एक अध्यापक थे, जिनका नाम था कैल्विन ऐलिस स्टो। ६ जनवरी सन् १८३६ को हैरियट का विवाह मि० स्टोके साथ हुआ और तबसे वे श्रीमती स्टोके नाम से प्रख्यात हुईं। दुर्भाग्यवश मिस्टर स्टोका स्वास्थ्य ख़राब रहा करता था और आमदनी भी उनकी थोड़ी ही थी। मिसेज़ स्टोको बहुत चिन्ताग्रस्त रहना पड़ता था और कभी २ खाने-पीने का भी कष्ट हो जाता था, इसलिए पतिव्रता मिसेज स्टो को लेख लिखकर कुछ कमाना पड़ता था। इस प्रकार अपने पति की आर्थिक सहायता भी वे करती थीं। सन् १८४३ में 'मे फ्लावर' नाम से उनकी कहानियों और स्केचों का संग्रह प्रकाशित हुआ। सन् १८५२ में उनकी अमर पुस्तक 'टाम काकाकी कुटिया' छपकर जनता के सम्मुख आई। किन किन कठिनाइयों में मिसेज़ स्टो को अपना साहित्यिक कार्य करना पड़ता था, इसका अन्दाज़ा निम्न लिखित बातों से लग सकता है।

उन्हें घर-गृहस्थी का सारा काम—बर्तन साफ करना, कपड़े धोना, कपड़े सीना, भोजन बनाना, सामान ठीक-ठिकाने रखना इत्यादि—ख़ुद ही करना पड़ता था। ख़ुद ही वह किवाड़ों पर रंग करती थीं, तकिये, गिलाफ, रजाई सीती थीं, और तो और पतिके सूटों की भी सिलाई वे ख़ुद ही कर लेती थीं। एक बार वे अपने लिए कोई कपड़ा काट रही थीं कि उनकी एक पड़ोसिनने कहा—"कोई नमूना भी तुम्हारे सामने है कि यों ही कपड़ा काटती जाती हो?" मिसेज स्टोने

उत्तर दिया—"बहन, मेरा ख़याल है कि अपनी शकल तो मैं जानती ही हूँ।" पतिदेव हेब्रू, ग्रीक, लेटिन तथा अरबी के ग्रन्थ पढ़ा करते थे और विद्यालय में बाइबिल पढ़ाया करते थे। अपनी पत्नी से प्रसन्न होकर एक बार उन्होंने कहा था—"तुम्हारी जैसी स्त्री दुनियामें थोड़े ही मिल सकती है। भला, कौन औरत ऐसी होगी, जो इतनी परिश्रमशील हो और इतनी किफ़ायतशार, जिसकी भाषणशक्ति इतनी प्रबल हो, पर जो कभी डाट फटकार न बतलावे, जिसमे इतना माधुर्य हो और साथ ही साथ इतनी दृढ़ता।"

इसका उत्तर मिसेज़ स्टोने बड़ी मधुरतापूर्वक दिया था—"If you were not already my dearly loved husband, I should certainly fall in love with you"—'अगर तुम पहले से ही मेरे प्रिय पति न होते, तो ज़रूर ही तुम्हारे गुणो पर मुग्ध होकर मैं तुम्हारे प्रेम मे फँस गई होती।'

मिसेज़ स्टो में मातृत्व काफ़ी था। बच्चों की सेवा-शुश्रूषा करते हुए अपने जीवन को खपा देने मे वे अपना गौरव मानती थीं। स्कूल के दिनोंकी अपनी एक सहेली को उन्होने चिट्ठीमे लिखा था—"बहन, मुझे तो अपने छः बच्चों की देखभाल और उनका पालन-पोषण करनेमें बड़ा आनन्द आता है। इच्छा होती है कि इसी प्रिय कार्यको करते करते बूढ़ी हो जाऊँ, अपना जीवन बिता दूँ। मैं चाहती हूँ कि कभी तुम यहा आकर इन बच्चों के बीचमें मुझे देखो। मेरी सारी चिन्ताओं और विचारों का वे केन्द्र हैं, और यदि वे कहीं दूसरी जगह चले जायें, तो मेरे जीवनके लिए रह ही क्या जाय? ये बच्चे ही मेरे कार्यक्षेत्र है और डरती काँपती हुई इन्हींको मैं सेवा किया करती हूँ।"

सन् १८४२ मे सिनसिनाती नगर में हैज़ेका प्रकोप हुआ और एक दिनमे ही १४० आदमियों की मृत्यु हो गई, जिनमे एक बच्चा मिसेज़ स्टो का भी था। पतिदेव स्वास्थ्य-सुधारके लिए दूर गये हुए थे, और वे बेचारी अकेली ही बच्चोंकी देख भाल कर रही थीं। प्रेमी माता के दु खका अनुमान ही किया जा सकता है। जिन दिनों मिसेज़ स्टो पुत्र शोक के वज्राघात से पीड़ित थीं और जिन दिनों उनकी गोदका बच्चा दूध पीता था, उन्हीं दिनो मातृ हृदय की असीम करुणा से प्रेरित होकर उन्होंने इस अमर पुस्तककी रचना की थी। पुस्तक के फार्म जब छप-छपके आते थे, तो वे उन्हे अपने पति और बच्चों को सुनाती थीं। सब बैठकर एक साथ पवित्र आँसू बहाते थे। कोई आश्चर्य की बात नहीं कि 'टाम काकाकी कुटिया' ने आगे चलकर असंख्य पाठक-पाठिकाओंको रुलाया। पुस्तककी सफलताका अन्दाज़ इसीसे लगाया जा सकता है कि पुस्तकके छपते ही उसकी तीन लाख प्रतियाँ एक साथ बिक गईं। आठ प्रेस इसी अकेली पुस्तक के छापने में लगे हुए थे। अमेरिकाके प्रसिद्ध प्रसिद्ध लेखकों और कवियोंने मिसेज स्टो के पास बधाई की चिट्ठियाँ भेजीं। इङ्गलैण्ड के सुप्रसिद्ध लेखक डिकिन्स, मेकाले किंग्सले, लार्ड कार्लाइल लाइसिल इत्यादि ने उनका अभिनन्दन किया। इङ्गलैण्ड में पुस्तक इतनी लोकप्रिय हुई कि एक सालमे इसकी डेढ़ लाख प्रतियाँ बिक गईं। पेरिस मे इसके आधार पर एक ड्रामा लिखा गया और खेला गया। यह आठ अङ्कोंमे समाप्त हुआ था और जनता इसे रात के डेढ बजे तक देखती रही और रोती रही। फ्रेंच, जर्मन, रशियन, जापानी, चीनी, हिन्दी इत्यादि भाषाओं में इसके अनुवाद हुए।

पुस्तकके प्रकाशित होनेके चार महीने बाद मिसेज स्टो को १०हज़ार डालर या (३०हज़ार रुपये) का एक चेक मिला और तब उन्होंने अपनेपतिको लेकर पहली बार यूरोप-यात्रा की। यूरोप से लौटकर उन्होंने एक दूसरी पुस्तक लिखी—'A Key to Uncle Tom's Cabin'—'टाम काकाकी कुटिया की कुञ्जी'। इस ग्रन्थ मे उन्होंने अकाट्य प्रमाणों द्वारा अपनी कहानी की सत्यता सिद्ध की थी। मिसेज़ स्टो ने और भी कई ग्रन्थ लिखे, जिनमे मुख्यके नाम ये हैं—

(1) Dread, a Tale of the Dismal Swamp (2) The Minister's Wooing

उन्होंने धार्मिक कविताओंका एक संग्रह भी प्रकाशित किया। इसके अतिरिक्त वे 'अटलांटिक मथली,' 'इण्डिपेण्डेण्ट,' 'क्रिश्चियन यूनियन' इत्यादि पत्रोंमें लेख भी लिखा करती थीं। उनके भाई इन पत्रों में सहायक सम्पादक या सम्पादकका कार्य करते थे, और इन दोनों भाई बहनों की साहित्य सेवा वास्तव में आदर्श थी। सन् १८६३ में पतिदेवने अपने अध्यापकी के कार्य से छुट्टी ले ली। मिसेज़ स्टोका एक पुत्र कैपटन फ्रेडरिक बीचर स्टो युद्धमें वीरतापूर्वक लड़ा था और बहुत घायल होगया था। प्रेमी माताने अपने पुत्रके स्वास्थ्य लाभ के लिए फ्लोरिडा में एक कोठी खरीदी और वहाँ उसके साथ रही। सन् १८८६ में मिसेज़ स्टो के पतिका देहान्त हो गया। इसके बाद दस वर्ष तक और वे जीवित रहीं, पर अब इस सती-साध्वी विधवाका जीवन सर्वथा एकान्तमय था। पहली जुलाई सन् १८१६ को ८५ वर्षकी उम्र में स्वर्ग सिधारी। अण्डोवर नामक स्थानमें पतिकी समाधि के पास ही उनकी समाधि बनी हुई है।

वह दिन हमें अच्छी तरह याद है, जब रेलमे बैठे बैठे हमने 'टाम काकाकी कुटिया' पढ़ी थी और पुस्तकसे मुँह ढककर आंसू बहाये थे, जिससे साथ के यात्री रोने का कारण न पूछ बैठें। यदि जीवन मे कभी अमेरिका-यात्रा का अवसर मिला, तो दो स्थानोंकी तीर्थ-यात्रा हम अवश्य करना चाहते हैं, एक तो एमर्सनकी समाधि और दूसरे इस आदर्श दम्पति मिस्टर और मिसेज़ स्टो की समाधि।

वह सौभाग्यपूर्ण दिन कब आवेगा, जब हमारी मातृभाषामें भी श्रीमती हैरियट एलिज़बेथ स्टो जैसी लेखिकाएँ उत्पन्न होंगी।　　　　(विशालभारत)

विविध पत्र पत्रिकाएँ

एक मस्जिद

उपर्युक्त शीर्षक मे श्री चन्द्रगुप्त वेदालङ्कार 'गुरुकुल' में लिखते हैं —

पिछले दिनो मैं निजाम हैदराबाद में था। घूमता-घामता एक दिन सिकन्दराबाद जा पहुंचा। मेरे साथ मेरे एक मित्र थे। वे मुझे सीधे स्टेशन की ओर ले गये और कहने लगे कि आज मैं आपको एक ऐसी वस्तु दिखाऊंगा जैसी सम्भवतः आपने अभी तक नही देखी होगी। मैं चकित था कि भला यहा ऐसी कौनसी वस्तु है जो अपनी विशेषता मे इतनी निराली है कि सारे भारत मे भी उसकी समानता का कोई दूसरी वस्तु न मिलेगी। जब स्टेशन कुछ ही दूर रह गया तो उन्होने एक दम उगली से इशारा किया और कहा वह देखिये। सचमुच उस दिन जो दृश्य मैने देखा वैसा मैं कहीं नहीं देख सका था। वह दृश्य मेरी आंखो मे बस गया है। उसे मैं भुलाये भी नहीं भूल सकता हूँ।

सायंकाल का समय था। अन्धकार की छायें संसार को कुछ कुछ काला बना रही थीं। बाजारों की बिजलियां जल चुकी थीं। मेरे सामने कुछ ही दूर एक मकान था जिसके बीच की पतली दीवार जो सम्भवत एक ईंट की थी उसे दो भागों में बांट रही थी। दीवार के इस ओर एक देवालय था। उसमें घण्टों की टन टन के साथ आरती उतारी जा रही थी। इसी के दूसरी ओर बीस तीस मोमीन शान्ति के साथ नमाज़ पढ रहे थे। मदिर का पुजारी मस्त हुआ घण्टा ध्वनि के साथ गा रहा था। दूसरी ओर उठते, बैठते, हाथ फैलाते तथा झुकते हुए एक साथ बीस व्यक्ति पूजा कर रहे थे। सामने खड़े दर्शक को ऐसा मालूम पड़ता था मानो वाद्यों के साथ मूक नृत्य हो रहा हो। इस दृश्य को मैं बहुत देर तक देखता रहा। पूजा पाठ समाप्त होने पर मेरे मित्र मुझे नगर मे ले गये। उस स्थान से लगभग पौन मील चल कर वे एक दम रुक गये और कहने लगे— वह भी आपने देखा था और इसे भी देखिये। मैंने देखा कि मैं एक और छोटी सी मस्जिद के सामने खड़ा हूँ। मुझे बताया गया कि तीन वर्ष पूर्व इसी स्थान से जब हिन्दुओं की सवारी बाजा बजाती हुई गुज़र रही थी और मुसलमान बाजा बन्द करने का हठ कर रहे थे तब किसी प्रकार भी समझौता न हो सकने के कारण यहीं से दोनो जातियो मे भयंकर रक्तपात का प्रारम्भ हुआ था। मैं सोचने लगा-एक वह स्थान था जहा आरती के घण्टे नमाज़ मे बाधा न होकर भारत में एक साथ रहने वाली दो जातियों के पारस्परिक सौहार्द का कीर्तन कर रहे थे और एक स्थान यह भी है जहां सड़क पर सर्राटे से गुजरती हुई मोटरों के भोंपू, फेरी वालों की बहरा करने वाली ज़ोर की आवाज़ें, रेडियो तथा ग्रामोफोन की तीखी आवाज़ें तो नमाजियों का ध्यान भङ्ग नहीं कर सकतीं, परन्तु अपने सहवासियों द्वारा वर्ष में एक बार आनन्दोल्लास में बजाये हुए बाजो की मधुर ध्वनि

परमेश्वर की पूजा में मस्त हुए भक्तों का ध्यान सहसा ही तोड़ देती हैं। पोन मील में ही मनोवृत्ति में इतना भेद कैसे आ गया? क्या वहां के रहने वाले देवता हैं और वहां के परस्पर रुधिर के प्यासे जानी दुश्मन? क्या उनका मन नहीं जो घण्टे को आवाज़ से भी विचलित नहीं होता या उन्हें कोई सिद्धि प्राप्त है कि उन पर उन घण्टों का कोई प्रभाव ही नहीं पड़ता? अथवा यहां के निवासियों का मन ही इतना चञ्चल है कि वह किसी वस्तु पर टिक ही नहीं सकता या इन्हें तो पारस्परिक शान्ति ही पीड़ा देती है?

मुझे स्मरण आया कि इन्हीं के भाई पूना के सोन्यामारुति मन्दिर में तीन इञ्च व्यास की घण्टी भी न बजने देते थे जबकि कलकत्ता और दिल्ली की मुख्य मस्जिदें उन स्थानों पर हैं जहां दिन रात ट्राम मोटर, सिनेमाघर तथा बाज़ार का शोर कानों के पर्दे फाड़े डालता है। इन्हीं के भाई बम्बई में मारुति-मन्दिर का सभामण्डप न बनने देने पर उतारू थे जबकि हैदराबाद निज़ाम के प्रसिद्ध 'चार मीनार' इमारत के दो मीनारों में आमने सामने १२ गज़ की ही दूरी पर एक में देवी का मन्दिर तथा दूसरे में मस्जिद प्राचीन काल से अब तक विद्यमान है। यही लोग रेवाड़ी और पानीपत में मस्जिद के सामने बाजा नहीं बजने देते जबकि बनारस की प्रसिद्ध ऐतिहासिक मस्जिद श्री विश्वनाथ मन्दिर के बगल में ही खड़ी है और वहां २४ घण्टे दिन रात कर नगाड़े पीटने पर भी नमाज़ पढ़ने वालों का ध्यान नहीं टूटता। यही लोग आगरे में रामलीला के जलूस का समाचार सुनकर सैकड़ों की संख्या में लाठियां लेकर परमात्मा की पूजा के लिये मस्जिद में आ सकते हैं जबकि दसों वर्षों तक उस मस्जिद में एक भी व्यक्ति नमाज़ पढ़ने न गया हो और उन में से अधिकांश को उस मस्जिद की सत्ता भी उस दिन पहली बार ही पता चली हो। उत्तरीय भारत के कई नगरों में हिन्दुओं की रामलीला तथा आर्यसमाजियों के नगर कीर्तन इन्हीं लोगों की आपत्तियों के कारण बन्द हैं। जबकि उन्हीं मस्जिदों के सामने से शादी और नेताओं के जलूस ढोल पीटते हुए चले आते हैं और किसी की पूजा में हर्ज नहीं होता।

यही मस्जिद और बाजे की समस्या आज उत्तरीय भारत की प्रधान और पेचीदा समस्या बनी हुई है। इसी को दोनों जातियों ने अपने जीवन मरण का प्रश्न बना रक्खा है। पंजाब सरकार ने हाल ही में इस समस्या का पूर्ण निवारण करने का निश्चय किया है। इसलिये उसने दोनों जातियों के नेताओं से मिल कर निर्णय करने का निश्चय कर लिया है। यदि पंजाब से लोक नेता सचमुच ही इस प्रश्न का पूर्णरूप से निराकरण करना चाहते हैं तो उन्हें कुछ क्षण के लिये अपना ध्यान उस मस्जिद की ओर ले जाना चाहिये। फिर वह दिन दूर नहीं जब देर या सुबेर में पंजाब में भी गांव गांव में वही दृश्य दिखाई देगा।

महात्मा जी का महत्व पूर्ण वक्तव्य

महात्मा गांधी ने 'हरिजन' में 'कांग्रेस मन्त्री मण्डल' शीर्षक एक लेख में मन्त्रियों के कर्त्तव्यों तथा उनके व्यक्तिगत आचरण की मर्य्यादाओं पर बहुत उत्तम प्रकाश डाला है। वे लिखते हैं—

शराब की आमदनी से शिक्षा का ख़र्च चलाने के बजाय शिक्षा को स्वावलम्बी बनाकर मन्त्रिमण्डल तत्काल मद्य-निषेध को अमल में ला सकते हैं। यह एक चौंका देने वाली बात मालूम पड़ेगी, लेकिन मैं तो इसे सर्वथा व्यावहारिक और बिलकुल उचित समझता हूँ। इसी तरह जेलों को सुधार-गृहों और कारख़ानों का रूप दिया जा सकता है। उस हालत में बजाय ख़र्चीले और ताज़ीरी महकमों के वे स्वावलम्बी और शिक्षणात्मक हो जायंगे। इर्विन गांधी पैक्ट के अनुसार, जिसकी कि सिर्फ़ नमक वाली धारा अब भी क़ायम हैं, गरीबों के लिए नमक मुफ्त मिलना चाहिये। लेकिन ऐसा है नहीं। अब कम से-कम कांग्रेसी प्रांतों में तो यह हो ही सकता है। इसी तरह जो भी कपड़ा ख़रीदा जाय वह खादी का ही होना चाहिए। शहरों के बजाय गावों और किसानों की तरफ़ अब ज्यादा ध्यान दिया जाना चाहिए। ये तो इधर उधर के कुछ उदाहरण भर हुए। ये सब बातें पूरी तरह क़ानून-सम्मत हैं, मगर इनमें किसी एक के लिए भी कभी प्रयत्न तक नहीं किया गया, क्योंकि भूमण्डल पर हमारा ही राष्ट्र सबसे ग़रीब है जिसमें कि लाखों लोग अध-भूखे रहते हैं। उसके प्रतिनिधि ऐसे ढंग और तौर-तरीकों से रहने का साहस नहीं कर सकते जो उनके निर्वाचकों के रहन-सहन और तौर-तरीकों से मेल न खाते हों।

कांग्रेसी मन्त्री अगर सादगी व किफ़ायत शारी की उस विरासत को क़ायम रक्खें जो १९२० से उन्हें मिली है, तो वे हज़ारों रुपये की बचत और लोगों में आशा का संचार करेंगे और शायद हुक्कामों के रुख़ को भी बदल दें।

वह सीधा-सादा काम तो वह प्रदर्शित करने की भूमिका रूप होना चाहिए कि नया विधान जनता की इच्छा-पूर्ति करनेके लिए बिलकुल नाकाफ़ी है और उस का अन्त करनेके लिए हम दृढ़ता के साथ तुले हुए हैं।

मुझे इस बात की बड़ी आशा है कि छः प्रान्तों के (जहां कि कांग्रेस का बहुमत है) मन्त्री उनकी ऐसी व्यवस्था करेंगे जिससे ऐसा कोई सन्देह न रहे। अपने मुसलमान साथियों को वे बता देंगे कि हिन्दू, मुसलमान, ईसाई या सिक्ख अथवा पारसी के बीच कोई भेदभाव नहीं है। न सवर्ण और अवर्ण जाति के हिन्दुओं में ही वे कोई भेदभाव मानेंगे। वे तो अपने हरएक कार्य से यही जाहिर करेंगे कि उनके लिए सब एक ही भारतमाता की सन्तान हैं, न कोई ऊंचा है, न कोई नीचा। ग़रीबी और आबोहवा बिना किसी भेदभाव के सबके लिए समान है और मुख्य समस्याएँ भी सबकी एक सी ही हैं। अगर अंग्रेज़ या अंग्रेज़ियत मे पले हुए हिन्दुस्तानी और कुछ नहीं तो भारतीयता को कांग्रेस के दृष्टिकोण से देख सकें तो समझना चाहिये कि कांग्रेस ने लड़ाई जीत ली।

पद-ग्रहण इसलिए नहीं किया जा रहा है कि किसी-न किसी तरह नये विधान पर अमल किया जाय। यह तो कांग्रेस का अपना मुकम्मिल ध्येय सिद्ध करने की दिशा में एक ऐसा गम्भीर प्रयत्नमात्र है, जिसमें एक ओर तो खूनी क्रांति यानी रक्तपात को बचाया जाय और दूसरी ओर सामूहिक सविनय अवज्ञा को ऐसे पैमाने पर करने से रोका जाय जिस पर कि अभी तक प्रयत्न नहीं किया गया है। ईश्वर! हमारे इस प्रयत्न को आशीर्वाद दे।

आर्य समाज की जून-जुलाई मास की प्रगति

यू० पी०

श्री० सम्पादक जी, नमस्ते !

आपको ज्ञात ही है यह प्रान्त देश के उन छः प्रान्तों में से है जहां कांग्रेस शासनारूढ़ हुई है। प्रान्त की जनता जैसा कि स्वाभाविक है, शासन में इस नए-परिवर्तन से अपने आर्थिक, सामाजिक और शिक्षा सम्बन्धी उत्थान की बड़ी २ आशाएँ लगा रही है। आर्य्यसमाज को भी अपने आदर्शों के प्रसार के लिए बड़ी २ आशाएँ हैं। हम इस परिवर्तन का हार्दिक स्वागत करते हुए, प्रभु से प्रार्थना करते हैं कि ये आशाएँ पूर्ण हों और प्रान्तमें एक सुन्दर युग का उदय हो।

सभा का स्वर्ण जयन्ती सम्बन्धी कार्य्य वेग के साथ हो रहा है। धन-संग्रह का कार्य्य हो रहा है। स्वागत कारिणी का निर्वाचन होने वाला है—सुनते हैं १०० के लगभग सदस्य मेम्बर बने हैं। यह संख्या कम है इसलिए इसको बढ़ाने की कोशिश की जा रही है।

लखनऊ में सभा का कार्य्यालय भवन बनाए जाने की योजना बन रही है। संयोजकों का यत्न है कि यह भवन-निर्माण-कला इत्यादि की दृष्टि से बहुत बढ़िया बने। हम भी यही चाहते हैं यह सभा के महत्त्व का बोधक ही होगा। यदि इस कार्य्यालय भवन को किराए पर चढ़ाए जाने योग्य इमारतें इसके साथ बनवाकर विस्तृत कर दिया जाय तो वह सभा की आय का लखनऊ जैसे शहर में निश्चित और अच्छा साधन होगा। प्रसन्नता है प० देवीदत्त जी टेम्प्रेन्स प्रीचर ने कार्य्यालय भवन के लिए २८००) रु० सभा को दान किया है। उनके पास २८००) रु० के अलावा कुछ और होता तो निश्चय ही वह भी वे दान कर देते क्योंकि उन्होंने सभा को अपना सर्वस्व अर्पण करदिया है—सभा के स्वर्ण जयन्ती इतिहास के लिखने का कार्य्य शुरू होने वाला है। सामग्री उपलब्ध की जा रही है। इस सम्बन्ध में लोगों के कई सजैशन हैं। मुख्य सजैशन यह है कि इतिहास ऐसा होना चाहिये जिसमें व्यक्तियों और समाज की सफलताओं (Achievements) को उचित अनुपात और स्थान प्राप्त हो। मतलब यह है कि जो व्यक्ति या जो कार्य्य इतिहास मे जितने और जिस स्थान का मुस्तहक हो उसे वहीं दिया जाना चाहिए और अवश्य दिया जाना चाहिए। ऐसे व्यक्तियों और ऐसे कार्य्यों को स्थान नहीं दिया जाना चाहिए जो उसके अधिकारी न हों। उसी दशा में वह कोई चीज बनेगी और इतिहास कहलायेगी, और ग़ैर आर्य्यसमाजियों के हाथों में रखने योग्य चीज़ होगी।

आपको विदित ही है प्रान्तिक सभा की योजना के अनुसार, श्रीयुत् नित्य गोपाल जी एम०ए० भट्टाचार्य प्रान्त के शिक्षा-केन्द्रों में प्रचार कार्य्य करेंगे। सुनते हैं १५ जुलाई से वे अपने मिशन पर निकलेंगे। हमारी सम्मति में उनकी प्रचार शैली केवल लेक्चरबाज़ी नहीं वरन् विद्यार्थी समुदाय में घनिष्ठ सम्पर्क में रहकर अपने आदेश, उपदेश और आचरण से उनमें वैदिक धर्म की महत्ता स्थापित करनी चाहिए, तब ही भट्टाचार्य जी अपने कार्य्य में सफल होंगे परन्तु उन्हें अपने ऊपर बहुत कड़ा नियन्त्रण

रखना होगा। हम इस सम्बन्ध में अधिक कहने-लिखने की ज़रूरत नहीं समझते हैं। वे स्वयं इस सम्बन्ध में अपना कर्तव्य जानते होंगे।

पंजाब

श्री० स्वर्गीय प० चमूपति जी के परिवार की सहायतार्थ पंजाब के आर्य्य भाई ५०००) एकत्र करने का यत्न कर रहे हैं, गत मास मैंने इस समाचार की चर्चा की थी। प्रसन्नता है वह रकम एकत्रित हो गई है। पंजाब के आर्य्य भाइयों में विशेषत प० चमूपति जी के परिवार के लिए इस रक़म का इकट्ठा हो जाना मामूली बात थी। इससे अधिक भी यदि यह रक़म होती तो उसको भी वे पूरा कर देते, परन्तु यह ज़रूर था कि संग्रह में कुछ समय लगता। परन्तु यह रक़म जिस तेज़ी से इकट्ठी हुई है वह आश्चर्य में डाल देने वाली है और असाधारण बात है। शुभ काम में देर नहीं होनी चाहिए, पंजाबके आर्य्य भाइयों ने यह बात अपनी इस बात से पूर्णतया चरितार्थ करदी है। धन सग्रहकरने तथा शीघ्र संग्रह करने के लिए निश्चय ही बधाई के पात्र हैं।

क्वेटा में आर्य्य समाज का कार्य्य नियमपूर्वक शुरू हो गया है तथा नया समाज बन गया है।

समाचार मिला है कि आर्य्य प्रतिनिधि सभा पंजाब के प्रचारक श्री० पं० शान्ति प्रकाश जी पर १५३ धारा के अधीन मुक़दमा चलाया गया है। मुक़दमे का आधार उनका कोई भाषण है जो उन्होंने आर्य्य-युवक समाज क़ादियां में दिया बतलाते हैं। मुक़दमा गुरुदासपुर में चलेगा। इस समय वे ज़मानत पर छूटे हुए हैं। मुकदमे की पैरवी की पूरी २ तैयारी की जा रही है।

बंगाल आसाम

श्री सम्पादक जी नमस्ते !

आसाम बंगाल प्रतिनिधि सभा के मन्त्री श्री बा० हरि गोविन्द जी गुप्त द्वारा माथ का समाचार मिला है। कृपया छाप देवें।

कलकत्ता आर्य्य प्रतिनिधि सभा के उपदेशक श्रीयुत पण्डित भुवन मोहनदेव जी शर्मा मैमनसिंह ज़िला और आसाम प्रान्त के ग्राम ग्राम में घूम कर छ महीना तक वैदिक धर्म का प्रचार करके ता० १५ जुलाई को वापिस कलकत्ता आगये।

उक्त पण्डित जी के साथ स्थानीय उपदेशक पण्डित सुरेशचन्द्र आर्य्य, पं० निवारणचन्द्र आर्य्य और भजनोपदेशक श्रीनिधिराम आर्य्य और श्री अश्वनीकुमार आर्य्य ने साथ २ घूमकर प्रचार कार्य्य किया। उपरोक्त पण्डित मण्डली ने मैमनसिंह ज़िला और आसाम प्रान्त के देहातों मे ३६ बड़ी २ सभायें कीं। कई सभाओं में पौराणिक पण्डितों से शास्त्रार्थ भी किया। मैमनसिंह ज़िला मे ५११ और आसाम प्रान्त मे ४८४ व्यक्तियों को वैदिक संस्कार विधिद्वारा यज्ञोपवीत संस्कार कराके आर्य समाज के सदस्य बनाया। और ५ हिन्दू जो कि हिन्दू धर्म छोड़कर ईसाई हो गये थे उनकी शुद्धि करके वैदिक धर्म में दीक्षित किया।

एक अन्तर्जातीय विवाह, उन्नीस विधवा विवाह और १३ कुमारी कन्याओं के वैदिक रीति से विवाह संस्कार कराये।

पण्डितजीके प्रयत्नसे बहादुराबाद ग्राममें एक सह भोज हुआ जिसमें लगभग ४०० हिन्दुओंने जो सभी वर्णोंके थे, एक साथ बैठकर जातपांत छूत छात का विचार

त्यागकर भोजन किया। सभी एक पंक्ति में बैठ थे और प्रेम में विभोर होकर परस्पर एक दूसरे के गले मिलकर आनन्दयुक्त हो रहे थे। उक्त पण्डित जी के प्रचार से प्रभावित होकर जनता ने करुवाग्राम में श्रीदयानन्द विद्यालय और माजली ग्राम म आर्य्य विद्यालय और आसाम प्रान्त के बाला ग्राम म शकर नाथ विद्यालय स्थापित किया। आगामी फरवरी मास मे बङ्गाल आसाम की वृहत् आर्य्यकानफ्रेंस टेंगाराममें होग। उसकी तैयारी में लोग अभी से लगे हुए हैं।

श्री सम्पादक जी नमस्ते !

कुछ आर्य्य सज्जनों के प्रयत्न से बयाना (भरतपुर) में वैर की एक लीलावती बाल विधवा ब्राह्मणी का पुनर्विवाह, जो कि ६ वर्ष की आयु में हा विधवा हो गई थी और जिसकी आयु अब १८ वर्ष की थी, एक मेरठ के ब्राह्मण के साथ हुआ। बरात मे बड २ प्रतिष्ठित सज्जन ब्राह्मण, वैश्य सम्मिलित हुय। कन्यापक्ष की ओर से भा बहुत से ब्राह्मण वैश्य नवयुवकों न बरात का स्वागत किया और विवाह मे सहयोग दिया। सभा सज्जन धन्यवाद के पात्र है।

भरतपुर के प्रतिष्ठित ला० गुलाबसिंह जी ठकेदार तथा म्यूनीसिपल कमिश्नर का पुनर्विवाह मथुरा के ला० कुन्दनलाल जी की सुपुत्री के साथ हुआ। लड़की कई वर्ष हुए विधवा हो गई थी। इस विवाह मे विशेषता यह थी कि वर बीसा अग्रवाल और लड़की कदीमी अग्रवाल है। ला० गुलाबसिंह को बीसियों कन्यायें बीसा अग्रवाल वालों की मिल रही रहीं थीं, परन्तु उन्होने बालविधवा से ही शादी स्वीकार की सो भी उसकी रूढ़ि के अतिबन्धन को तोड़कर, इसके लिए वर वधू विशेष धन्यवाद के पात्र हैं। विवाह मे भरतपुर आदि के बहुत से प्रतिष्ठित ब्राह्मण वैश्य सज्जनो न भाग लिया और बरात म गये। वैदिक रीति से विवाह सम्पन्न हुआ। कोई पुरानी रूढि नहीं हुई, ५१) सस्थाओ को दान दिया।

बिछुड़ों का मिलाप तथा रक्षा कार्य्य

—अलीगढ आर्य्य समाज मे बुद्धा जाटव की सपरिवार शुद्धि हुई। ये लोग भूल से मुसलमान हो गए थे।

—आर्य्य समाज अपल कुचलाई (सीतापुर) द्वारा ५ व्यक्तियो की शुद्धि हुई। ये लोग कुछ दिनो से मुसलमान हो गए थे।

—६ जुलाई १६३७ को आर्य समाज गुना (ग्वालियर) म म० कुँवरलाल जी और उनकी धर्म पत्नी रूपाबाई की शुद्धि की गई। ये लोग भार्गव ब्राह्मण हैं। २० साल से धर्मच्युत थे।

—गत २ जुलाई को जालौन म मिस नैनसी कुमारी को शुद्ध करके हिन्दू धम मे मिला लिया गया। यह सस्कार बड़े समारोह के साथ हुआ।

—११ जुलाई को आर्य समाज धनबाद मे बा० राम सुदर लाल के प्रयत्न से एक युवक को शुद्ध किया गया। यह कुछ समय पहल ईसाई हो गया था।

शुद्ध हवन सामग्री

धोखे से बचने के लिये आर्यों

को

बिना वी० पी० भेजते हैं

पहले ।) पोस्ट खर्च भेज कर ऽ॥ नमूना मुफ्त मँगा ले
अगर नमूना जैसी सामग्री हो तो मूल्य भेजदे

अन्यथा

कूड़े मे फेक दें ।

फिर मूल्य भेजने की आवश्यकता नहीं ।

क्या इससे भी बढ़कर कोई सच्चाई की कसौटी हो सकती है

भाव ॥) सेर. ८०) भर का सेर।

थोक ग्राहक को २५) रुपये प्रति सैकड़ा कमीशन।

मार्ग-व्यय ग्राहक के जिम्मे ।

पता —

रामेश्वरदयालु आर्य पो० अमोली (फतेहपुर) यू० पी०

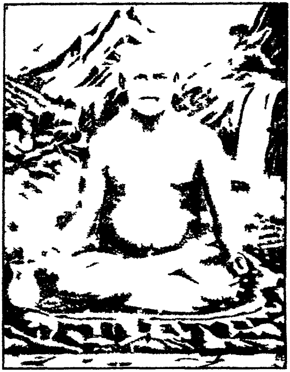
पं० रघुनाथ प्रसाद पाठक—पब्लिशर के लिय 'चन्द्र प्रिंटिंग प्रेस' [illegible],
में प्रकाशित ।

सितम्बर १९३७ Reg No L 2121

ॐ

ऋग्वेद यजुर्वेद

सार्वदेशिक



सम्पादक—प्रो० सुधाकर एम० ए०

उ० सम्पादक—श्री रघुनाथ प्रसाद पाठक

वार्षिक मू० ३) एक प्रति का ।=) विदेश से ९ शिलिंग

अथर्ववेद सामवेद

विषय-सूची

नम्र निवेदन

[ले० ला० बोसाराम रिटायर्ड स्टोरकीपर N, W R आनरेरी सैक्रेटरी]

पञ्जाब की राजधानी लाहौर मे रावीरोड पर केन्द्रीय अनाथालय है जिसका प्रबन्ध एक सभा के आधीन है, जिसके प्रधान श्री पूज्य स्वामी स्वतन्त्रानन्द जी महाराज उपप्रधान सा० आर्य प्रतिनिधि सभा देहली हैं। उपप्रधान श्री पण्डित विश्वम्भर नाथ जी भूतपूर्व गवर्नर गुरु० कांगड़ी, श्री पण्डित ठाकुर दत्त जी वैद्यशास्त्री मुल्तानी तथा डा० गणेशीलाल जो M, B B S हैं। इस अनाथालय को खुले हुये बीस वर्ष के लगभग होचुके हैं। इसकी सहायता केवल लाहौर निवासी ही नहीं करते, प्रत्युत सब प्रान्तों में रहने वाले हिंदू आर्या भाई भी करते हैं। यही कारण है कि यह अनाथालय भारत के दूसरे प्रान्तों में भी सर्वप्रिय हो रहा है और दिन प्रतिदिन उन्नति कर रहा है। यहा तक कि अब सरकार भी जो चोरी किये हुये लडके लड़किया उनको मिलते हैं अब तक उनके वारिसों का पता नहीं मिलता, तब तक उनको इस अनाथालय में रखती है। इस के अतिरिक्त ऐसे नवजात बालक वा बालिकायें भी आने लग गई हैं जिनकी माताए मर जाती हैं या वह उनको कई गुप्त कारणों से रखना नहीं चाहतीं और इनके लिये एक Trained नर्स भी रखी हुई है। इस तरह से अनाथालयमें बच्चों की सख्या बढ़गई है। इस समय तक तो निवास स्थान पर्याप्त था परन्तु सख्या बढ़ जाने से कन्याओं के लिये स्थान काफी नहीं है। इस लिये प्रबन्धक सभा ने निश्चय किया है कि नवीन कमरे बनवाये जायें, जिस से कन्याओं के स्थान का कष्ट मिट जाय। इनके बनाने के लिय धन की अपील की जावे। इसलिये मै दानी सज्जनों की सेवा मे विनीत भाव से प्रार्थना करता हूँ के वे इस शुभ कार्य में सभा की सहायता करें ताकि अनाथ और निस्सहाय बच्चों को प्रवेश करने में बाधा न पड़े। यदि हम ऐसा न करसके तो वे बालक जिनको हम स्थान न दे सकेंगे अन्य मतवालों के जाल में फस कर हमेशा के लिये धर्म से पतित हो जावेंगे और उसका पाप आर्य जाति को लगेगा। जो महानुभाव एक सौ से अधिक रुपया देंगे, उनके नामों के पत्थर उन कमरों की दीवारों पर लगवा दिये जायेंगे। इस समय इस कार्य के लिये पाच सहस्र धन की शीघ्र आवश्यकता है जो दानी सज्जनों को पूरी करनी चाहिये। इस अनाथालयके आधीन म्यूनिसिपैलटी तथा गवर्नमैट से मजूर एक प्राइमरी इण्डस्ट्रीयल मिडिल स्कूल है। जिसमें अनाथालय के तथा बाहर के लड़के पढ़ते हैं। एक दर्जी क्लास है जिसमें लड़के और लडकियों को सीने का कार्य सिखलाया जाता है तथा बाहर के लड़के इस मे काम सीख सकते हैं। आजकल ५० लड़के और ४२ लड़किया सीख रही हैं। बीस के लगभग लड़के यहा से काम सीख कर अपना निर्वाह भली प्रकार कर रहे हैं। अनाथालय मे इस समय ११६ लड़के और ६५ लड़किया हैं जिनके निवास, भोजन, पढ़ाई आदि का प्रबन्ध अनाथालय की तरफ से किया जाता है। इस काम के लिये भी सहायता की आवश्यकता है। दानी तथा परोपकार प्रिय महानुभावों से प्रार्थना है कि वे इस ओर भी दया करें और जिस प्रकार की भी सहायता दे सकें, दे कर पुण्य के भागी बनें अर्थात् आटा, दाल, चावल घी आदि खाद्य पदार्थ और पहनने के लिये वस्त्र देकर कृतार्थ करें। यह संस्था पूर्व भी आप जैसे दानियोंकेदान से चल रही है, अब भी आपसे आशा की जाती है कि अवश्य सहायता देकर अनाथों का आशीर्वाद लेंगे और पुण्य के भागी बनेंगे।

ओ३म्

सार्वदेशिक

* सार्वदेशिक-आर्य-प्रतिनिधि सभा देहली का मासिक मुख पत्र *

वर्ष ११ | भाद्र-पद १९९४ | सितम्बर १९३७ ई०] [दयानन्दाब्द ११३ | अङ्क ७

❀ वेद की शिक्षाएँ ❀

युञ्जते मन उत युञ्जते धियो विप्रा विप्रस्य बृहतो विपश्चितः ।
विहोत्रा दधे वयुना विदेक इन्मही देवस्य परिष्टुतिः ॥

—यजुर्वेद ।

भषार्थ—बुद्धिमान्, महान्, ज्ञानी तथा योगी पुरुष उस अद्वितीय जगत्कर्ता ज्ञानी ईश्वर की ही श्रेष्ठ स्तुति मन और बुद्धि द्वारा अच्छे प्रकार किया करें ।

सम्पादकीय—

झोंपड़ों में प्रचार

इस समय आर्य्यसमाज के क्षेत्र मे प्रचार-प्रगति को मन्द पड़ते देखकर बहुत से आर्य्य भाई चिन्तित हो रहे है। उनकी यह चिन्ता सार्थक है। जिस आर्य्यसमाज ने विश्वभर को वेद का सन्देश पुनः सुनाना था तथा संसार भर को वैदिक संस्कृति के प्रभाव मे लाना था, यदि वह इतनी जल्दी अपने लक्ष्य के प्रति उपराम हो जाये तो इससे बढ़कर दूसरी शोचनीय बात क्या हो सकती है ' श्री० पं० इन्द्र विद्यावाचस्पति जी ने अभी हाल ही में एक प्रचार-योजना आर्य्य जगत के सामने रक्खी है, जिसके प्रति आर्य समाचार पत्रो तथा आर्य्य समाजों का ध्यान आकृष्ट हो रहा है। इस प्रचार योजना का सार यह है कि भारतवर्ष की आगामी मनुष्य-गणना के अवसर तक इस देश में आर्य्यसमाजों की संख्या तीन गुणा तथा आर्य्यो की संख्या दस गुणा अधिक हो जानी चाहिये।

इस महत्वाकांक्षा को सामने रखकर प्रत्येक आर्य्यसमाजी का हृदय गद्‌गद् हो जाता है। परन्तु आकांक्षामात्र से कुछ नहीं बनता। जब तक आकांक्षाओं की कठोर परिश्रम तथा अनवरत त्याग द्वारा पूर्त्ति न की जाये तब तक मनोरथ सिद्ध नहीं हो सकते। ऐसी दशा में उपरोक्त महत्वाकांक्षा की पूर्त्ति के लिये अभी से हमें जुट जाना चाहिये। आर्य्यसमाजों की संख्या तीन गुणा कर देना तथा आर्यो की संख्या दसगुणा कर देना सहल कार्य्य नहीं। प्रान्तिक प्रतिनिधि सभाओ को अपना प्रचार-प्रोग्राम निश्चित कर लेना चाहिये। परन्तु सफलता तभी हो सकेगी जबकि हमारे प्रचारक शहरों की ओर से हटकर ग्रामों की ओर अपने प्रचारकार्य्य को बढ़ायेंगे। यह बात सभी लोग जानते है कि अधिकांश भारतीय जनता गावों मे रहती है। उसी जनता की ओर हमारे प्रचारकों को आकृष्ट होना चाहिये। ग्राम निवासियों मे धर्म्म प्रचार का कार्य्य बहुत सहल होजाता है जब हम सेवा के नाते उनके अन्दर जाकर बसने लग जाते है और उनके सुख दुःख में शरीक होने लगते है। जब हम ग्रामवासी बनकर ग्रामवासियों की तरह जीवन बिताने लगें तो इसका प्रभाव ग्रामीणों पर बहुत गहरा पड़ता है।

ग्रामों मे प्रचार कार्य्य करने के लिये हमे शीघ्र अति शीघ्र प्रचारकों का एक सघ तैयार करना होगा। ऐसे प्रचारकों के लिये अधिक विद्या और ऊँची शिक्षा की आवश्यकता नहीं। केवल हृदय रखने वाले, साधारण बुद्धि के व्यक्ति भी इस कार्य्य को भली भांति सम्पादन कर सकते हैं। ग्रामीण लोगों को साक्षरता और सफाई की सबसे बड़ी आवश्यकता है। बीमारियों से बचने की विशेष विधियां उन्हें बतानी होगी, उनके रोगी हो जाने पर उचित चिकित्सा की व्यवस्था भी करनी होगी। रात्रि के समय जब गांव वालो को अवकाश मिले तो उन्हें बोलचाल की भाषा में देश विदेश के

समाचार सुनाने होंगे। उन्हें रहन सहन के साधारण कायदे कानून भी बतलाने होंगे। उनके अन्दर से मिथ्या विचारों तथा अन्ध विश्वासों को दूर करने के लिये साधारण तौर पर मैजिक लैन्टर्न द्वारा व्याख्यानों का प्रबन्ध भी करना होगा। इन सब बातों के साथ साथ उन्हें साधारण धर्म्मशिक्षा, संस्कारों का ज्ञान तथा धर्म्ममन्दिरों में सम्मिलित सन्ध्या, प्रार्थना, भजनोपासना इत्यादि की शिक्षा भी देना होगी।

इस समय हम देख रहे हैं कि कांग्रेस और सरकार दोनों का ध्यान ग्रामीण जनता की ओर आकर्षित हो रहा है। यह दोनों शक्तियां भी हमारे धर्म प्रचारकों के लिये सहायक सिद्ध होंगी। परन्तु हमें — ग्रामीण प्रचारकों को — कटिबद्ध हो जाना चाहिये। हमारी प्रान्तिक सभाओं को अपने अपने केन्द्र स्थानों पर एक एक शिक्षणालय (Training School) तुरन्त खोल लेना चाहिये। इन स्कूलों में कम से कम एक एक सौ प्रचारक तैय्यार करना चाहिये। यदि यह प्रचारक स्वयं ग्रामीण हों तो बहुत ही अच्छा होगा। उस अवस्था में यह लोग ग्रामीण लोगों की प्रत्यक आवश्यकता को स्वयं अनुभव कर सकेंगे। केवल छः मास की शिक्षा देकर इन प्रचारकों को गांव, गांव बिठा देना चाहिये, और उन्हें यह ताकीद कर देनी चाहिये कि वह ग्रामवासियों के समान अपना रहन सहन बना कर उन में प्रचार कार्य्य शुरू करदें। थोड़े ही समय में यह परिणाम सिद्ध होगा कि ग्रामनिवासी अपने आप को आर्य्य कहकर पुकारेंगे और आर्य्यशब्द से उन्हें विशेष स्नेह पैदा हो जायेगा। ऐसी दशा में दश गुणा तो क्या पचास गुणा भी यदि आर्य्यों की संख्या बढ जाये तो कोई आश्चर्य्य की बात न होगी।।

कांग्रेस नैतिक बल से शासन करेगी

'हरिजन' में लिखते हुए महात्मा गांधी लिखते हैं—

"फिर केवल यही काफ़ी नहीं होगा कि मन्त्रीगण सादगी से रहें और केवल खुद ही खूब काम करते रहें। उन्हें यह भी ध्यान रखना होगा कि उनके मातहत के महकमे भी ठीक उसी तरह काम कर रहे हैं जैसा कि वे चाहते हैं। उदाहरण के लिए अब जनता को न्याय जल्दी और कम खर्च में मिल जाना चाहिए। आज तो वह अमीरों की विलास वस्तु और जुए का खेल है। पुलिस का भय मिट जाए और अब वह जनता का मित्र बन जाय। शिक्षा में भी ऐसी क्रान्ति हो कि वह साम्राज्यवादी लूट खोरों की ज़रूरतों की नहीं बल्कि गरीब ग्राम वासियों की ज़रूरतों की पूर्ति करने लगे।

अगर मन्त्रियों के बस की बात होगी तो अब शीघ्र ही वे सब कैदी छोड़ दिये जायेंगे जिन्हें राजनैतिक अपराधों के कारण —चाहे वे हिंसात्मक अपराध भी हों—क़ैद कर लिया गया था। यह एक गम्भीर तापूर्वक ख्याल करने की बात है। क्या इसके मानी यह है कि अब सब को हिंसा करनेकी छूट मिल गई? हरगिज नहीं। कांग्रेस के अहिंसात्मक उद्देश्य के यह बिलकुल खिलाफ़ होगा। व्यक्तियों की हिंसा से इस

सरकार को, जिसे कि काँग्रेस उलटना चाहती है, जितनी घृणा है उससे कहीं अधिक घृणा खुद काँग्रेस को है। काँग्रेस इस हिंसा का प्रतिकार सत्ता अर्थात् सुसंगठित हिंसा द्वारा नहीं बल्कि अहिंसा द्वारा करेगी। वह गुमराहों को मैत्रीभावपूर्वक समझा बुझा कर और हर प्रकार की हिंसा के खिलाफ़ ज़ोरदार और विचारपूर्ण लोकमत तैयार करके उसे दूर करेगी। दूसरे शब्दों में, काँग्रेस सेनाबल पर भरोसा रखने वाली पुलिस की सहायता से नहीं बल्कि जनता की सदिच्छा पर आधार रखनेवाले अपने नैतिक बल से शासन करेगी। वह आज जो शासन करने जा रही है उसका आधार अस्त्रास्त्रों से सुसज्जित किसी महान् सत्ता की दी हुई शक्ति नहीं, बल्कि उस जनता की सेवा है जिसका कि वह अपने हर कार्य में प्रतिनिधित्व करना चाहती है।

तमाम प्रकार के साहित्य पर लगाई गई बन्दी भी उठाई जा रही है। मेरा ख्याल है, इस साहित्य में कुछ ऐसी भी पुस्तकें होंगी जिनमें हिंसा, अश्लीलता तथा जातीय विद्वेष का प्रचार भी होगा। काँग्रेस राज्य के मानी हिंसा, अश्लीलता और जातीय विद्वेष फैलाने की आज़ादी नहीं है। कांग्रेस को विश्वास है कि आपत्तिजनक साहित्य के प्रचार करने में भी सुशिक्षित नागरिक उसका पूरा साथ देंगे। मन्त्री भी अगर देखें कि उनके प्रान्तों में हिंसा, जातीय विद्वेष या अश्लीलता बढ़ रही है तो ताज़ीरात हिन्द या ऐसे ही तमाम उपायों का अवलम्बन करने से पहले वे यह आशा करें और चाहें कि कांग्रेस कमेटियां उनकी तत्काल और पूरी सहायता करेंगी। ठेठ कार्यसमिति से भी सहायता मांगें। सचमुच काँग्रेस की विजय का नाम तो यही है कि वह किस हद तक पुलिस और सेना को बेकार साबित कर देती है। और अगर वह यह नहीं कर सकी, ऐसे प्रसंग आ ही जायँ कि जब पुलिस और सेना की सहायता लेना अनिवार्य हो जाय तो कहना होगा कि वह बुरी तरह असफल हुई। इस मौजूदा विधान को तोड़ने का सब से उत्तम तरीका यही है कि काँग्रेस सेना से किसी भी प्रकार की सहायता न ले और यह सिद्ध करके दिखा दे कि वह अच्छी तरह शासन कर सकती है। पुलिस से भी, जिसका कि मैत्रीभावसूचक कोई नया नाम-करण किया जा सकता है—वह कम-से कम सहायता ले।

फ्रेंच भारत में शारदा ऐक्ट

शारदा ऐक्ट से बचने के लिए बहुत से ब्रिटिश भारत के लोग फ्रांसीसी हिन्दुस्तान तथा उन देशी रियासतों में जहाँ बाल विवाह निषेधक कानून नहीं है जाकर अपने लड़के लड़कियों की शादी कर आया करते थे। अब फ्रांस की सरकार ने शायद प्रेरणा किए जाने पर अपने इलाके में एक कानून के द्वारा १६ वर्ष से कम आयु के लड़के और १४ वर्ष से कम उम्र की लड़की की शादी निषिद्ध करार देकर शारदा ऐक्ट के प्रचलन में एक बड़ी बाधा का निवारण कर दिया है। क्या ही अच्छा हो रियासतें भी इस बाधा का निवारण कर देवें। बाल विवाह की बुराइयाँ तथा इस प्रकार के कानूनों की आवश्यकता उनके सम्मुख रखने की कोई विशेष ज़रूरत नहीं है।

काशीप्रसाद जायसवाल

श्री० डा० काशीप्रसाद जी जायसवाल की मृत्यु

से हमारे बीच में से एक बड़ा विद्वान, एक प्रसिद्ध इतिहासकार, एक बड़ा कानून तथा पुरातत्व विद्या विशारद उठ गया है। प्राचीन भारतीय इतिहास पर प्रकाश डालने की दिशा में उनका योग बहुमूल्य रहा है। उन्होंने कलकत्ता मे मनु और याज्ञवल्क्य पर एक बहुत उत्तम व्याख्यान माला दी थी—हिन्दू मानव-शास्त्र का उन्हे बहुत विस्तृत और गहरा बोध था। विदेशी पंडित और भारतवर्ष पर लिखने और बोलने वाले विदेशी विशेषज्ञ भी उनके पुरातत्व और ऐतिहासिक ज्ञान तथा हिन्दू राजनीतिज्ञता का लोहा मानते थे। उनकी प्रसिद्ध पुस्तक 'हिन्दू पालिटी' मे प्राचीन भारत की विविध राजनीतिक संस्थाओ तथा शासन प्रणालियो पर बहुत ही उत्तम प्रकाश मिलता है। मोटे रुप मे यह कहा जा सकता है कि प्राचीन भारत, शासन की मुख्य प्रणालियों से परिचित था, और अपने इतिहास के किसी न किसी समय मे और अपनी सीमाओ के भीतर किसी न किसी प्रदेश मे उसने उन्हे क्रिया मे परिणत किया था। उन्होंने अपना इस इतिहास की समस्त सामग्री भारतीय साहित्य से ही ली है। उन्होंने यूरोपीय ऐतिहासिकों का अनुसरण नही किया है और विदेशियो के इस आक्षेप का खडन किया है कि प्राचीन भारतवासी लोकतन्त्र व्यवस्थासे अनभिज्ञ थे। विहार और उडीसा की रिसर्च सोसाइटी और उसके पत्र को वतमान रुप मे लाने का कार्य्य डाक्टर महोदय का ही कार्य्य था।

उनके अनुसंधानो और ऐतिहासिक ग्रन्थों मे प्राचीन भारतीय इतिहास के अन्धकारमय युगो पर प्रकाश डाला है। श्रीयुत भिक्षु राहुल सांस्कृतायन की तिब्बत की अनुसधान यात्राओं मे स्वर्गीय डाक्टर जी का बडा हाथ था। सास्कृतायन जी तिब्बत से जो असख्य हस्त लेख और दूसरी सामग्री अपने साथ लाए है वे सम्पादन, प्रकाशन और बाद का व्याख्याओ और प्रयोग की प्रतक्षा कर रहा है। यह बडे दुख की बात है कि इस महत्वपूर्ण कार्य्य मे योग देने तथा इसे शीघ्र सम्पादित करने के लिये आज जायसवाल जी हमारे मध्य मे नही है।

डाक्टर महोदय मे भारतीय इतिहास के विभिन्न क्षेत्रो के नवयुवक विद्यार्थियो के कार्य्य की महत्ता को समझने की क्षमता थी और उनसे उन्हे प्रोत्साहन भी मिलता था। ऐसे महान विद्वान और इतिहास कार की मृत्यु वस्तुत अन्तर्राष्ट्रीय क्षति है जिस पर जितना दुख प्रकाशित किया जाय उतना ही कम है।

डाक्टर महोदय का जन्म सयुक्तप्रान्त में मिर्ज़ापुर जिले मे हुआ था। उनका स्कूलीय शिक्षा मिर्ज़ापुर में तथा कालेज की शिक्षा आक्सफोर्ड (लन्डन) म हुई थी। बैरिस्टरी पास करके उन्होंने पटना मे प्रैक्टिस शुरू की जो सफलतापूर्वक चली। आप अपने पीछ विधवा पत्नी, पॉच पुत्र और तीन पुत्रियों छोड गए है। आपके एक पुत्र सिंगापुर में बैरिस्टरी करते हैं एक पुत्री एम ए, और बैरिस्टरी पास कर चुकी है। मृत्यु के समय आपकी अवस्था ६२ वर्ष का था।

परमात्मा दिवगत आत्मा को शान्ति और शोक-संतप्त परिवार को धैर्य प्रदान करें, यही प्रार्थना है।

वैतनिक और अवैतनिक सेवक

पिछले कुछ समय से पजाब के आर्य्य जगत मे यह विवाद छिडा हुआ है कि आर्य्य समाज के प्रबन्ध मे वैतनिकों— उपदेशको—का हाथ रहे वा नही। एक

सम्मति यह है कि उपदेशकों का प्रबन्ध में हाथ नहीं होना चाहिए। इस का एक कारण यह बतलाया जाता है कि उपदेशक का पद ऊंचा है उन्हें प्रबन्ध की झंझट में पड़कर विविध संघर्षों और मानवी कमज़ोरियों के प्रभाव में आकर जो प्राय प्रबन्ध के साथ जुड़े होते हैं, उपदेशक पद की मर्य्यादा को नीचा नहीं करने देना चाहिए। दूसरा कारण यह बतलाया जाता है कि उपदेशक लोग व्यक्ति विशेषों के कन्वेसिंग एजेन्ट बनकर उनके मन्त्री या प्रधान इत्यादि बनाए जानेके लिए समाजोंमें प्रचारके स्थान में कन्वेसिंग का कार्य्य करते हैं। यह प्रबन्धकी दृढ़ता तथा सुचारुता के लिए अवांछनीय हैं इससे समाजों में कलह वा अनुचित संघर्षण होता है। इसलिए उनका हाथ प्रबन्ध में नहीं होना चाहिए। इस सम्बन्ध में हम सम्प्रति विस्तार में न जाकर केवल एक दो बातें कह देना चाहते हैं। एक तो यह कि वैतनिक और अवैतनिक दोनों ही समाज के सेवक हैं। सेवा कार्य्य ही उनका एक मात्र काम है। इस सेवा कार्य्य में वे एक दूसरे के सम्पर्क में आते हैं। कोई व्यवस्था या प्रबन्ध करता है और कोई उस व्यवस्था के आधीन काम करता है—या यों कहिए किसी को प्रबन्ध में प्रभुता मिलती है और किसी को प्रचार मे। दोनों के सम्बन्ध समाज सेवक के होने चाहिएँ, शासक या गुलाम के नहीं। आपस में दोनों प्रकार के सेवकों का व्यवहार आदर, प्रेम और सहानुभूति का होना चाहिए और समाज सेवा मुख्य लक्ष्य होना चाहिए। व्यवस्थापकों को प्रचार सेवकों का आदर करना तथा उनका ध्यान रखना चाहिए और प्रचार सेवकों को व्यवस्था का मान करना और अनुशासन में रहना चाहिए तब ही लक्ष्यकी सिद्धि होती है उन्हें भी आदर, प्रेम, नम्रता और सहानुभूति का परिचय देते रहना चाहिए। वेतन या गुजारा लेने वाला इसलिए घृणा का पात्र या गुलाम नहीं समझा जाना चाहिए कि वह पैसे लेता है। अवैतनिक इसलिए प्रभु नहीं समझा जाना चाहिए कि वह पैसा नहीं लेता है। समाज का कोई सेवक कितना उपयोगी है, केवल इसी आधार पर वह मान सम्मान का अधिकारी है। आर्य समाज धार्मिक समाज है। उसकी रीति नीति तथा प्रबन्ध धार्मिक तत्वों पर आश्रित रहने में ही उसकी उपयोगिता है और उसका सौन्दर्य है। नौकरशाही की रीतिनीति छल-फरेब और कूटनीतिसे उसको ऊपर रहना चाहिए। यदि दुर्भाग्य से कहीं हमारे यहाँ यह प्रविष्ट हो गई हो—और दुख है प्रविष्ट हुई हुई सी है—तो उसका जितनी जल्दी अन्त हो जाय उतना ही अच्छा है। हमारे प्रबन्ध और प्रचार में धार्मिकता, सत्य न्याय और सदाचार सर्वोपरि रहने चाहिए। इस प्रकार के विवादों पर जब हम विचार करते हैं तो हमें इनके मूल में हमारी एक बड़ी भारी त्रुटि देख पड़ती है और वह हमारे पास किसी निश्चित प्रोग्राम का न होना है। खाली रहने पर ही हमें ऐसे विवादों की सूझती है और हम उनमें प्रवृत्त होते हैं। हाथ भरे से हम उनकी सोच भी नहीं सकते। इस त्रुटि के दूर होने से हमारा विश्वास है इस प्रकार के अवांछनीय विवाद नहीं रहेंगे, यदि रहेंगे तो वे आसानी से दब सकने हैं। यह त्रुटि शीघ्र से शीघ्र दूर होनी चाहिए।

सत्यार्थ प्रकाश लेखमाला—

यज्ञोपवीत

[ले०—श्री स्वामी स्वतन्त्रानन्द जी महाराज]

सत्यार्थ प्रकाश मे से तीन स्थानो से उपवीत का वर्णन लिखता हूँ। यथा—

(१) नवें वर्ष के आरंभ मे द्विज अपने सतानो का उपनयन करके आचाय कुल मे अर्थात् जहां पूर्ण विद्वान और पूर्ण विदुषी स्त्री शिक्षा और विद्या दान करने वाली हो वहां लडके और लड़कियो को भेज दें और शूद्रादि वर्ण उपनयन किये बिना विद्याभ्यास के लिये गुरुकुल मे भेज दें। —समुल्लास २।

(२) प्रथम लड़को का यज्ञोपवीत घर मे हो और दूसरा पाठशाला मे आचार्य कुल मे हो। —समुल्लास ३।

(३) और जो विद्या का चिन्ह यज्ञोपवीत और शिखा को छोड़ मुसलमान, ईसाइयो के सदृश बन बैठना व्यर्थ है। —समुल्लास ११ (ब्रह्म समाज प्रकरण)।

अन्य स्थलो पर भी यज्ञोपवीत का उल्लेख है। परन्तु महर्षि ने यह कही नही लिखा है कि यज्ञोपवीत कितना लम्बा होता है, कितने ततु का होता है, किस भांति पहनना चाहिये इत्यादि।

इस लेख मे इन सब बातो पर सप्रमाण लिखूँगा ताकि पाठक विचार करके निश्चय कर सकें कि क्या करना चाहिये। इस विषय मे निम्न बातें हैं जिनमे यज्ञोपवीत का बनाना, पहनना, लम्बाई आदि का उल्लेख है।

(१) यज्ञोपवीत कहाँ बनाया जाय।

देवागारेऽथवा गोष्ठे नद्यां वान्यत्र शुचौ।
सावित्र्या त्रिवृतं कुर्यान्नवसूत्र तु तद्भवेत्॥
—देवल।

अर्थ—मंदिर, गौशाला, नदी तट, अथवा अन्य पवित्र देश मे गायत्री का पाठ करता हुआ नव तंतु का तीनलड़ा यज्ञोपवीत बनावे।

(२) कितना लम्बा यज्ञोपवीत होता है।

(क) ग्रामान्निष्क्रम्य संख्याय षण्ण
वत्यंगुलीषुतत्।
तावत् त्रिगुणित सूत्रं॥ —देवल।

अर्थ—ग्राम से बाहर जाकर ९६ अंगुल लम्बा तिलडा बनाले।

(ख) शुचौ देशे शुचि सूत्रं सहतांगुलिमूलके।
आवर्त्य षण्णवत्या तत्त्रिगुणं कर्त्यं यत्नतः
•• •••तन्नवतन्तु कार्यम्।
—पारिजात देवल।

अर्थ—शुद्ध देश मे शुद्ध सूत्र का मिली हुई अंगुलि के मूल से नाप कर ९६ अगुल लम्बा लेकर तीन लड़ी का बनावे। यज्ञोपवीत के नव तन्तु हो।

आजकल तो यज्ञोपवीत विदेश से बने

बनाये जाते हैं। वह किस किस भांति बनते हैं इसका ज्ञान उन ही को होगा। शुद्ध देश मे बनते है या अशुद्ध देश मे। ९६ अगुल लम्बाई किसकी अगुली से मापते हैं यह बनाने वाले ही जानते हैं।

(३ यज्ञोपवीत किस प्रकार और कितने तन्तु का होता है ?

(क) त्रिवृदूर्ध्व वृतं कार्यं तनु त्रयमधोवृतम्।
त्रिवृत चोपवीतंस्यात्तस्यैको ग्रंथिरिष्यते॥
—धर्म प्रदीप, छन्दोग परशिष्ट

तीन तन्तु मिला कर ऊपर को बट दे फिर नीचे को देकर तीनलड़ा यज्ञोपवीत बनाकर एक ग्र थी डाल कर बनावे।

(ख) यज्ञोपवीत कुर्वीत सूत्रेण नव तांतवम्।
देवतास्तत्र वक्ष्यामि आनुपूर्व्येण या स्मृताः॥
४८।

ओकार प्रथमस्तंतु द्वितीयश्चाग्नि दैवत।
तृतीयो नाग देवत्यश्चतुर्थः सोम देवतः॥ ४९
पंचम पितृदैवत्यः षष्ठश्चैव प्रजापतिः।
सप्तमो वासु दैवत्योऽष्टमो यम दैवतः॥५०
नवम. सर्व दैवत्य इत्येते नव ततवः।
द्विगुणं त्रिगुणं वापि एक ग्रन्थीकृत विदु॥५१
—गो० गृह संग्रह

यज्ञोपवीत सूत्र नव तन्तु का बनावे। क्रम से नव तन्तुओ के यह देवता हैं--ओम्, अग्नि, नाग, सोम, पितर, प्रजापति, वासुदेव, यम और सर्वदेव।

यज्ञोपवीत द्विगुणा वा त्रिगुणा करके बनावे। यह नई बात है कि उपवीत द्विगुण भी होता है। टीकाकार ने लिखा है यदि त्रिगुण न हो सके तो द्विगुण करले। उसका पाठ यह है--

त्रिगुणत्वासभवे द्विगुणत्व बोधत्वम्।

सस्कार मार्तण्ड मे नव ततुओ के देवताओ मे कुछ भेद है। उसमे प्रजापति के स्थान पर ब्राह्म लिखा है जो पर्याय माना जा सकता है। वासुदेव की जगह 'वायु' और यम के स्थान पर सविता लिखा है। इससे प्रतीत होता है यज्ञोपवीत मे एक ग्रंथी और तीन तन्तु होते है। उन तीन मे प्रत्येक मे पुन. तीन २ होते है। इस प्रकार नव तन्तु का यज्ञोपवीत होना है। प्रथम वट ऊपर को देते है पुन नीचे को देते है। ऊपर के वट के समय भी धागा तिलड़ा होता है और नीचे को देते समय भी तीन तन्तु मिलाकर ऐसा करते हे। इससे सब नव तन्तु हो जाते है और वे साधारण देखने मे तीन होते है। पजाब में इसको एक अग्र भी कहते हैं।

पूर्व मै लिख चुका हू कि यज्ञोपवीत ९६ अगुल का होता है और अगुली मूल से मापना चाहिये, परन्तु इसका माप और ढंग पर भी लिखा मिलता है। उसमे यह लेख है पहने हुए उपवीन को शरीर पर कहां रहना चाहिये।

(४) यज्ञोपवीत शरीर मे कहा तक हो

पृष्ठवंशेच नाभ्यांच धृतं यद्विन्दते कटिम्।
तद्धार्यमुपवीतस्यान्नातिलंब न चोन्छितम्। कात्यायन

अर्थ.—पृष्ठ और नाभी को स्पर्श करता हुआ जो कटिपर्यंत हो ऐसा यज्ञोपवीत धारण किया जाय न अधिक लबा हो और न अति छोटा हो।

(ख) नाभेरूर्ध्वमनायुष्यमधो नाभेस्तप: क्षय ।

तस्मन्नाभिसमं कुर्यादुपवीत विचक्षणः। वासिष्ठ

नाभी के ऊपर ही रहे तो आयु नाशक है । और नाभी के नीचे तप का नाश करता है । इस लिये बुद्धिमान् नाभी पर्यंत ही धारण करे । जो उपवीत ९६ अगुल लम्बा होता है वह कटि के नीचे पहुच जाता है और कात्यायन कटि पर्यंत मानते हे । इन दोनो को शौच क्रिया के समय कान पर लगाना पड़ता है । और वसिष्ठ की रीति से यज्ञोपवीत नाभि तक ही होता है । इसको कानपर लगाने की आवश्यकता नही है । आर्य समाज मे मैने दोनो प्रकार के देखे है और महर्षि ने यज्ञोपवीत की लम्बाई का कही उल्लेख नही किया है । इस लिये इस विषय मे आर्य समाजियो को स्वय निश्चय करना होगा कि कौनसा पक्ष स्वीकार किया जाय । मेरी सम्मति मे नाभि पर्यंत मानना सुविधाकारक है और गोभिल गृह संग्रह २, ५४ मे यह पाठ लिखा है ।

स्तनादूर्ध्वमधो नाभे र्न कर्तव्य कथचन ।

स्तनादूर्ध्वे श्रियं हति नाभ्यधस्तात्तप: क्षय ।

किसी समय स्तन से ऊपर और नाभि के नीचे उपवीत न पहने । प्रथम से श्री का नाश और दूसरे से तप क्षय होता है । इसमे वसिष्ठ से इतना ही भेद है कि यह नाभि से ऊर्ध्व स्तन तक तो मानता है स्तन से ऊपर का निषेध करता है और वसिष्ठ नाभि से ऊपर नही मानता है ।

(५) कितने यज्ञोपवीत धारण किये जॉय ।

(क) उपवीतं वटोरेकं द्वेतथेतरयो स्मृते ।

एकमेव यतिनां स्यादिति शास्त्रस्य निश्चय:॥ देवल

ब्रह्मचारी एक, गृहस्थी, वानप्रस्थी दो और यति एक यज्ञोपवीत पहने । यह शास्त्रका निश्चय है ।

(ख) यज्ञोपवीते द्वे धार्ये श्रौत स्मार्तेषु कर्मसु ।

त्रितीये चोत्तरीयार्थं वस्त्रालाभे तदिष्यते ॥ हेमाद्रौ

श्रौत स्मार्त कर्म मे दो उपवीत पहने जायं और तीसरा वस्त्राभाव मे पहना जाता है ।

उपरि लिखित पाठ में दो बाते नवीन हैं । एक तीसरा उपवीत वस्त्र न होने पर पहना जाय और दूसरी यति एक उपवीत पहने । इस समय वैष्णव साधु उपवीत पहनते है परन्तु वस्त्राभाव में भी कही पहना जाता है मुझे इसका पता नही है । सनातन धर्म को मानने वाले शैव और आय सन्यासी साधु उपवीत नही पहनते है इसलिये यती का पहनना वैष्णवों को देख कर लिखा प्रतीत होता है । गृहस्थी और वानप्रस्थी दो पहने इसमें दो पहनने का कोई कारण नही दिया है । प्रतीत होता है जबसे स्त्रियो को पहनने का निषेध माना गया उसी समय पुरुषो को दो का विधान भी माना गया क्योकि ब्रह्मचारी अविवाहित होता है और यति को स्त्री त्याग का विधान है । उनको एक मानकर गृहस्थी स्त्री वाला ही होता है और वानप्रस्थी के साथ भी रह सकती है । उनको दो लिख दिये । आर्य समाजमे स्त्रिए भी पुरुषवत् ही पहनती है । इसलिये एक ही पहनना चाहिये । एक स्थान पर तो अनेक पहनने की बात भी लिखी है ।

त्रीणि चत्वारि पचाष्ट गृहिणः स्युर्दशापिवा ।

कश्यप,

तीन, चार, पाच आठ, दश भी पहनलो।
यह विचित्र व्यवस्था है और सर्वथा त्याज्य है।

स्नातकानां द्वितोय स्याद् तर्वासस्तथेतरमिति।
स्नातक दो पहने। एक वस्त्रके अंदर, दूसरा बाहर। यह भी त्याज्य है। अंदर पहने वा बाहर पहनना एक ही चाहिये।

(६) किस भांति पहना जाय

उद्धृते दक्षिणे पाणावुपवीत्युच्यते द्विजः।
सव्ये प्राचीनआवीती निवीती कठ सज्जने।

दक्षिण हाथ के नीचे उपवीत, बाई ओर प्राचीनावीति और गले मे सीधा निवीत होता है।

बाई ओर विशिष्टावस्था मे पहना जाता है। दाई ओर और सीधा गले मे। इस समय कई आर्य पहनते हैं। प्रतीत होता है स्तन से ऊपर न हो यह सीधा पहनने वालो के लिये ही है।

(७) यज्ञोपवीत सदा पहने वा कर्म करने के समय मे ही पहने।

सदोपवीतिना भाव्यं सदा बद्धशिखेन च।
विशिखो व्यपवीतश्च यत्करोति न तत्कृतम्॥

—भृगु।

सदा उपवीत रखे और सदा शिखा बांध कर रहे।

इससे प्रतीत होता है कि उपवीत सदा पहनना चाहिये और उत्तरार्ध मे विशिख और व्युपवीत को कर्म फल का निषेध किया गया है जिससे प्रतीत होता है कर्म समय तो अवश्य ही पहनना चाहिये।

इस सारे लेख का संक्षेप रूप से भाव यह है—

यज्ञोपवीत सदा पहनना चाहिये। यज्ञोपवीत नौ धागो का होता है। प्रथम धागा बनाकर उसकी तीन लड़ी बनाकर एक बना ले फिर तीन लड़िएँ बनाकर गांठ लगावें। यज्ञोपवीत नाभि तक लम्बा हो। ब्रह्मचारी गृहस्थ, वानप्रस्थ प्रत्येक एक यज्ञोपवीत पहने। जिस भांति पुरुष पहनते है इसी प्रकार स्त्रियां भी यज्ञोपवीत धारण करें। यदि किसी विशेष कारणवश प्रथम न हो तो कर्म करते समय यज्ञोपवीत अवश्य पहना जाय। यज्ञोपवीत शुद्ध स्थान मे शुद्ध सूत्र का बनाना चाहिये।

———

ऋषि दयानन्द और पाठन प्रणाली

लेखक—प्रo स्नातक
धर्मदेव विद्यावाचस्पति बङ्गलौर।

'सार्वदेशिक" के अगस्त मास के अङ्क में आर्य समाज के सुयोग्य और सुप्रसिद्ध विद्वान् श्री प० गङ्गा प्रसाद जी उपाध्याय M A ने उपर्युक्त शीर्षक से एक लेख लिख कर अन्यों को अपने विचार निस्सङ्कोच प्रकट करने के लिये आमन्त्रित किया है। श्रीयुत सम्पादक 'सार्वदेशिक' जी ने मुझे प्रेरित किया है कि मैं भी इस अत्यावश्यक किन्तु विवादास्पद विषय में अपने विचार आर्य जनता के सन्मुख रक्खूं। अपने विचार कुछ स्पष्ट रूप में प्रकट करने से पूर्व मैं श्रीयुत मान्य उपाध्याय जी के इस वाक्य की ओर पाठक महोदयों का ध्यान विशेष रूप से आकर्षित करना चाहता हूं कि "मीमांसा युक्तियों और परीक्षाओं तक सीमित रहे व्यक्तिगत आक्षेप या अभिप्रायों पर चोट न की जाए और न यह समझा जाए कि जो कोई किसी प्रणाली में नुनुनच करता है वह स्वामी दयानन्द या आर्य समाज का शत्रु है।"

ऋषि दयानन्द सरस्वती के व्यक्तित्व और कार्य के लिये जो श्रद्धा मेरे मन में है उस के प्रकट करने की इस लेख में कोई आवश्यकता नहीं। अन्य क्षेत्रों की तरह ऋषि दयानन्द ने शिक्षा क्षेत्र में भी मौलिक अत्यन्त उत्तम विचार 'सत्यार्थ प्रकाश' आदि द्वारा जनता के सामने रख कर एक नई क्रान्ति और जागृति उत्पन्न कर दी। उस समय के शिक्षितों की दासता-पूर्ण मनोवृत्ति को परिवर्तित करने और ब्रह्मचर्य सदाचार, सादगी तपस्या आदि के प्राचीन आदर्शों की ओर जनता का प्रेम उत्पन्न करने में उनको पर्याप्त सफलता हुई ऐसा कहने में कोई अत्युक्ति नहीं। इस समय के प्रायः सब बड़े २ विचारक और नेता गुरुकुल शिक्षा प्रणाली के मौलिक सिद्धान्तों की उच्चता को स्वीकार कर उन्हें यथाशक्ति अपनाने में तत्पर दिखाई देते हैं। जिन वेदादि शास्त्रों को 'गडरियों के गीत' कहा जाता था और जिस संस्कृतभाषा को 'मृत भाषा' कहा जाता था आज उनके गौरव को प्रायः सब निष्पक्ष पाश्चात्य धुरन्धर विद्वान् भी मुक्त कण्ठ से स्वीकार कर रहे हैं। "सब को तुल्य वस्त्र खान पान, आसन दिये जाएँ चाहे वह राजकुमार वा राजकुमारी हो, चाहे दरिद्र की सन्तान हो। सब को तपस्वी होना चाहिये। "(स० प्र० ३य स०)"

'इसमें राजनियम वा जातिनियम होना चाहिये कि पांचवें अथवा आठवें वर्ष से आगे कोई अपने लड़के और लडकियों को घर में न रख सके। पाठशाला में अवश्य भेज देवें, जो न भेजे वह दण्डनीय हो।" (स० प्र० पृ० ३६)

इत्यादि वाक्यों द्वारा दूरदर्शी ऋषि दयानन्द ने साम्यवाद के शिक्षा विषयक मौलिक तत्व और

अनिवार्य शिक्षा के सिद्धान्त का कितनी उत्तमता से प्रतिपादन किया है ? वस्तुतः शिक्षा के उद्देश्य "जिससे विद्या,सभ्यता, धर्मात्मता, जितेन्द्रियतादि की बढ़ती होवे और अविद्यादि दोष छूट उस को 'शिक्षा' कहते है" स्वमन्तव्य २२स०प्र०स्वम॰तव्या मन्तव्य प्रकाश पृ० ६७७) तथा आदर्श के विषय मे ऋषि दयानन्द का लेख प्रामाणिक कहा जा सकता है जिस को प्राय. सभी पौरस्य तथा पाश्चात्य शिक्षा वैज्ञानिक स्वीकार करते चले जा रहे है।

अब प्रश्न पाठन प्रणाली के सम्बन्ध मे विस्तार (Detuls) का रह जाता है जिस मे परीक्षणो और अनुभवो के लिये सदा गुञ्जायश रहती है और रहनी उचित ही है। मेरे विचार मे ऋषि दयानन्द का यह कभी अभिप्राय न था कि उन के इस विषयक लेख के एक २ अक्षर को बिना ननु नच के वेद की तरह प्रमाण माना जाए और उस म स्वतन्त्र विचार तथा परीक्षण सिद्ध अनुभव लेने के लिय कोई अवकाश न रक्खा जाए। ऋषि दयानन्द के ही ग्रन्था मे इस पाठन प्रणाली तथा विद्याभ्यास के लिये समय इत्यादि के सम्बन्ध म जो भेद पाये जाते है उन पर ध्यान देने से मेरे उपर्युक्त विचार का स्पष्ट पुष्टि होती ह। श्रीयुत मान्य उपाध्याय जी ने सत्यार्थ प्रकाश के ३य समुल्लास मे इस विषयक कुछ आवश्यक उद्धरण दिये है जिन के अनुसार उन्हो ने लिखा है कि गान्धर्व वेद और अर्थ वेद को छोड़ कर जिन का अध्ययन काल सत्यार्थ प्रकाश मे छूट गया प्रतीत होता है शेष विषयो के अध्ययन मे २१ वर्ष लगते है। सन् १८७५ के सत्यार्थ प्रकाश से भी एक वाक्य "इस प्रकार से २७॥ वा २८ वर्ष तक पढ़ लेगा" उद्धृत करते हुए उन्होने अपना यह विचार प्रकट किया है कि सम्भव है कि 'तक' शब्द से आयु का बोध अभीष्ट हो।

इस लेख को लिखते हुए सन् १८७५ का सत्यार्थ प्रकाश मेरे पास विद्यमान नही है इस लिये उस के पाठ क्रम और अध्ययन काल के विषय मे मै कुछ नही कह सकता पर मुझे आश्चर्य है कि श्रीयुत उपाध्याय जी ने 'संस्कार विधि के वेदारम्भ प्रकरण मे दिये पाठ क्रम वा कालादि का इस प्रसङ्ग मे तुलना के लिये क्यो उल्लेख नही किया ! संभवत. वह प्रकरण उनकी स्मृति मे उपर्युक्त लेख लिखते हुए न आया हो परन्तु मेरे विचार मे वह भी विशेष विचारणीय है। सत्यार्थ प्रकाश मे जिन दो विषयो "गान्धर्व वेद और "अर्थ वेद" का अध्ययन काल छूट गया प्रतीत होता है संस्कार विधि के अनुसार उनका समय क्रमश. ३ वर्ष और ६ वर्ष है। इस प्रकार सत्यार्थ प्रकाश के ३य समुल्लास मे दिये पाठक्रम को पूर्ण करने म २१+३+६=३० वर्ष लगेंगे अर्थात् यदि कोई बालक ८ वर्ष की आयु मे गुरुकुल मे प्रविष्ट हुआ और उस इस सम्पूर्ण पाठ क्रम के अनुसार शिक्षा दी गई तो वह लगभग ३८ वर्ष की आयु में स्नातक बनेगा।

इसके साथ संस्कार विधि के वेदारम्भ प्रकरण मे दिये गये पाठक्रम की तुलना करने पर निम्नलिखित अन्तर स्पष्ट दृष्टिगोचर होते

है । पाठको को इस अन्तर का स्पष्ट भान हो जाय इसके लिये विषयो तथा वर्षो की तालिका सत्यार्थ प्रकाश और संस्कार विधि के अनुसार पृथक्२ देता हूँ।

पाठ्य विषय	सत्यार्थ प्रकाश के अनुसार अध्ययन काल	सस्कार विधि के अनुसार अध्ययन काल वा क्रम
व्याकरण शास्त्र	३ वर्ष	४ वर्ष
निघण्टनिरुक्त	८ मास	१½ वर्ष
छन्द शास्त्र तथा श्लोक रचना	४ मास	६ मास
मनुस्मृति विदुरनीति, रामायण के भाग आदि	१ वर्ष	१ वर्ष
गणित विद्या	२ वर्ष	१ वर्ष
निघण्टु म ज्योतिष तक वद भ	•	४ वर्ष
दर्शन शास्त्र तथा १० उपनिषद्	२ वर्ष	२ वर्ष
चारो वेद ब्राह्मण सहित	६ वर्ष	१ वर्ष
आयुर्वेद	४ वर्ष	३ वर्ष
धनुर्वेद	२ वर्ष	३ वर्ष
गान्धर्व वेद	समय नही दिया	३ वर्ष
अर्थ वेद विमान		
तार विद्यादि		६ वर्ष
	२१ वर्ष (पिछले २ विषयो को छोडकर)	३८ वर्ष

इस प्रकार निष्पक्ष विचारशील पाठक देखेंगे कि संस्कार विधि के पाठक्रमानुसार ३८ वर्ष की आयु मे नही बल्कि ३८ वर्ष तक अध्ययन के पश्चात् कोई स्नातक बन सकता है अर्थात् यदि ८ वर्ष की आयु मे कोई बालक प्रविष्ट हो तो लगभग ४६ वर्ष की आयु मे वह गुरुकुल का स्नातक बन सकेगा । इन दो पाठक्रमो मे अध्ययन काल के अन्तर के अतिरिक्त एक बड़ा अन्तर यह हे कि जहा सत्यार्थ प्रकाश म गणित विद्या या ज्योतिष विद्या को सब से अन्त मे रखा है वहा सस्कार विधि मे मनुस्मृति विदुरनीति आदि के पढने के पश्चात् उसके अध्ययन का विधान है ।

जो लोग ऋषि दयानन्द द्वारा प्रतिपादित पाठ्यक्रम का अक्षरशः अनुसरण करना चाहते है उन्हे ऐसे गुरुकुलो की स्थापना करनी होगी जिनमे २९ और ३८ वर्षों तक अध्ययन की व्यवस्था हो । यह ठीक है कि प्रत्येक मनुष्य को सारा जीवन ही विद्यार्थी बने रहना चाहिये किन्तु प्रश्न यह है कि देश की वर्तमान सामाजिक तथा आर्थिक परिस्थिति म ३८ अथवा ४६ वर्षो तक अपने पुत्रो का अध्ययनार्थ गुरुकुलों म छोड़ने को कौन माता पिता तय्यार है तथा यह समाज तथा देश की वर्तमान अवस्था मे कहा तक व्यवहार्य हो सकती है ? यह बात भी सत्यार्थ प्रकाश तथा संस्कार विधि के पढने से स्पष्ट है कि ऋषि दयानन्द ने "तस्य यानि चतुर्विंशाति वर्षाणि तत्प्रातः सवनम्" इत्यादि वाक्यो के आधार पर कनिष्ठ ब्रह्मचर्य २४ वर्ष का माना है जिसे वसु ब्रह्मचर्य कहा जाता है। रुद्र ब्रह्मचर्य ३६ से ४४ वर्षों का और आदित्य ब्रह्मचर्य ४८ वर्षो का माना है । किन्तु आश्चर्य की बात यह है कि उनके ग्रन्थो मे ऐसी पाठविधि का

प्रतिपादन नहीं जो वसु ब्रह्मचारियों के लिये उपयोगी हो। यह बात तो सब स्वीकार करेंगे कि वर्तमान समय में रुद्र तथा आदित्य ब्रह्मचर्य का पालन कर सकने वालों की सख्या वसु ब्रह्मचारियों की अपेक्षा बहुत कम होगी। मैं तो इस सारे विषय पर गम्भीरतापूर्वक विचार करने पर इस परिणाम पर पहुँचा हू कि ऋषि दयानन्द ने जीवनोपयोगी पाठ्य विषयों की एक सूची हमारे सन्मुख रख दी है जिनमें से अपनी शक्ति, योग्यता, परिस्थिति तथा समय के अनुसार जितनों का कोई अध्ययन कर सके उसे लाभ ही होगा पर उनके इस विषयक लेख को अक्षरश माना जाए और उसमें समय, देश और समाज की परिस्थिति तथा विद्यार्थियों की योग्यता, प्रवृत्ति आदि के अनुसार कोई परिवर्तन न किया जाय ऐसा उनका अभिप्राय नहीं था, अन्यथा उनके अपने ही ग्रंथों में इस विषयक कोई अन्तर न होना चाहिये था। जब वर्तमान परिस्थिति में केवल नियमित विद्याध्ययनार्थ २९ अथवा ३८ वर्ष समय लगाना लगवाना विद्यार्थियों और उनके सरक्षकों के लिये सभव नहीं है तो ऋषि दयानन्द द्वारा प्रतिपादित आदर्श उद्देश्य तथा प्रणाली को ध्यान में रखते हुए उसमें आवश्यकतानुसार परिवर्तन करना अनुचित नहीं कहा जा सकता। जैसे कि मैं पहले लिख चुका हूँ मुख्य बात शिक्षा के मूल भूत तत्वों के अनुसरण करने की है। पाठन प्रणाली व पाठक्रम में तो परीक्षण तथा अनुभव के अनुसार परिवर्तन की गुञ्जायश रहनी ही चाहिये इसमें कट्टरपन से काम नहीं चल सकता। उदाहरणार्थ ऋषि दयानन्द ने व्याकरण शास्त्र को सबसे प्रथम पढ़ाने का विधान किया है और उनके लेखानुसार ३ या ४ वर्ष में कोई भी बालक पूर्ण वैयाकरण बन सकता है। अर्थात् यदि कोई बालक ८ वर्ष की आयु में गुरुकुल में प्रविष्ट हो तो ११ या १२ वर्ष की आयु तक वह व्याकरण का पूर्ण पण्डित बन सकता है। मैं इस सभावना से इन्कार नहीं करता कि ऋषि दयानन्द निर्दिष्ट क्रम से व्याकरण की शिक्षा दी जाय तो ३, ४ वर्षों में कोई पूर्ण वैयाकरण बन सकता है। किन्तु प्रश्न यह है कि एक ८ वर्ष या इससे भी कम आयु के बालक पर व्याकरण जैसे शुष्क समझे जाने वाले विषय का निरन्तर दबाव डालना (यदि ऋषि के लेख का यह अर्थ समझा जाय कि प्रारम्भ में केवल व्याकरण ही पढाना है अथवा एक समय में एक ही विषय पढ़ाना है—यद्यपि मुझे इस अर्थ के ठीक होने में अत्यन्त सन्देह है) कहा तक उसके उचित मानसिक वा बौद्धिक विकास की दृष्टि से ठीक कहा जा सकता है? क्या यह अधिक अच्छा न होगा कि संस्कृत साहित्य गणित इतिहास भूगोलादि के साथ २ व्याकरण को भी पढ़ाया जाय जिससे उसका अधिक दबाव प्रतीत न हो। मैं जब गुरुकुल मुलतान में प्रविष्ट हुआ था (सन् १९०९ में) तो गुरुकुल काङ्गडी में उस समय प्रचलित पाठविधि के अनुसार २ वर्षों में ही हमें सारी अष्टाध्यायी याद करा दी

गई थी किन्तु पीछे यह अनुभव किया गया कि विद्यार्थियो पर अधिक दबाव न पड़े इसके लिये अच्छा है कि २ के स्थान पर ५ वर्षो में अष्टाध्यायी का मूल पाठ कराया जाए। वर्तमान बालको की मानसिक योग्यता या बुद्धि विकास को दृष्टि मे रखते हुए यह आशा करना कि एक १० वर्ष का विद्यार्थी महाभाष्य जैसे कठिन ग्रन्थ को समझ सकेगा असमत्र साही प्रतीत होता है। शायद उस अवस्था मे सभव होता होगा जबकि पूर्ण ब्रह्मचर्य और विद्या की समाप्ति पर अत्यन्त बुद्धिमान् युवक और मेधाविनी युवती गृहस्थाश्रम में प्रवेश करते हो और स्वाभाविकतया उनकी सन्तान भी मेधासम्पन्न हो। एक ११ वर्ष के बालक मे निरुक्त समझने की पूर्ण योग्यता हो यह भी आज कल की दृष्टि से अत्यन्त कठिन प्रतीत होता है यद्यपि मेधावियो के लिये यह असम्भव नही कहा जा सकता। श्री शङ्कराचार्य जी के विषय मे कहा जाता है कि ७ वर्ष की आयु मे ही उन्हो ने सब शास्त्रो का अध्ययन कर लिया था। किन्तु यहा हम सामान्य विद्यार्थियो का विचार कर रहे है न कि अपवाद स्वरूप अद्भुत मधावियो का। लग भग १३ वर्ष की आयु के बालक के लिये पूर्व मीमांसादि कठिन शास्त्रो को समझना भी आज कल की दृष्टि से असम्भव प्राय है। इस लिये वर्तमान परिस्थिति, बालको की योग्यता प्रवृत्ति, अध्ययन का समय, व्यावहारिक आवश्यकताए इत्यादि सब बातो को दृष्टि मे रखते हुए ही पाठविधि का निर्माण करना उत्तम है न कि लकीर के फकीर बन कर कार्य करना। यह अच्छा होता यदि श्रीयुत मान्य उपाध्याय जी अपने विचारो को स्पष्टरूप मे विचारशील जनता के सन्मुख रखते और अपने उठाए प्रश्नो का स्वयम् उत्तर देते। यह मानना तो कठिन है कि उन जैसे अत्युत्तम गम्भीर विचारक तथा शिक्षा वैज्ञानिक अपने अनुभव के आधार पर उन प्रश्नो का उत्तर नही देसकते (जैसे कि निरभिमानिता सूचक सङ्कोच वश उन्हो ने लिखा है)। इस से अन्यो को भी निस्सङ्कोच अपने वास्तविक विचार प्रगट करने का अच्छा अवसर होता और विचार विनिमय के पश्चात् विद्वन्मडली किसी परिणाम पर पहुचने में शीघ्र समर्थ हो सकती तथापि एक विचार दिशा का उन्हो ने निर्देश कर दिया है जो निस्सन्देह उपयोगिनी है। उन्हो ने जो प्रश्न अपने लेख के अन्त मे उठाये है उन मे से प्रत्येक का विस्तृत उत्तर देने मे लेख का विस्तार हो जाएगा और उन में से कइयो पर मैने पूर्ण विचार—अभी तक नही किया अत. कुछ पर स क्षिप्त टिप्पणी अपनी वैयत्तिक सम्मति के रूप मे यहा देना ही पर्याप्त समझता हू शेष उपर्युक्त लेख से बुद्धिमान् समझ सकते है।।

(१) स स्कृत जैसी अप्रचलित वा ईषत् प्रचलित भाषा और मातृ भाषा हिन्दी के पढाने की विधि मे अन्तर होना आवश्यक है। यत्न यह करना चाहिये कि हिन्दी की तरह स स्कृत का भी वायुमण्डल तय्यार किया जाए अर्थात् कम से कम दिन के कुछ घण्टे (विशेषत प्रात कालके समय) विद्यार्थी स स्कृत मे ही स भाषण

करें, संस्कृतोत्साहिनी इत्यादि सभाओं द्वारा उन्हे संस्कृत मे धार्मिक सामाजिक विषयों पर वाद विवाद का अभ्यास कराया जाए। व्याकरण पर अत्यधिक बल देने का यह परिणाम आज कल के विद्यार्थियों पर देखा जाता है कि उन्हें संस्कृत से अरुचि होने लगती हैं। और वह इसे "हौवा" सा समझने लगते है। दक्षिण भारत में स्व० आप्टे की संस्कृत पुस्तकों के अध्ययन से जिनमे व्याकरण की अधिकता है विद्यार्थी प्राय घबराते और संस्कृत को पर्यायविषय के तौर पर लेना नापसन्द करते हैं। संस्कृत साहित्य के साथ व्याकरण के आवश्यक नियमो की व्याख्या करने से वह अरुचि उत्पन्न नहीं होती और उपयोगी बोध भी हो जाता है। संभाषण के अभ्यास के बिना केवल व्याकरण वा संस्कृत पुस्तकों से बहुत कम लाभ होता है। दूसरे शब्दों में वा आज कल की भाषा में संस्कृत के पढ़ाने में यथासंभव Direct Method का प्रयोग करना चाहिये ताकि संस्कृत भी कुछ अभ्यास के पश्चात् मातृ भाषा के समान हो जाए। मुलतान गुरुकुल में मैंने अपने आचार्यत्व में सन् १९२६ में इस प्रकार के संस्कृतमय वायुमण्डल को उत्पन्न करने का प्रयत्न किया था जिस का परिणाम संस्कृत में रुचि और योग्यता की दृष्टि से बहुत अच्छा हुआ था।

(२) स्मृति शक्ति को बढ़ाने के लिये प्रयत्न करना और उसके लिये अवसर देना बाल्यावस्था मे कुछ अंश तक उचित ही है किन्तु वह इतनी मात्रा तक न हो कि विषय को समझे बिना विद्यार्थी केवल रट कर पास होना पर्याप्त समझे अन्यथा बुद्धि के विकास में बाधा पड़ेगी। अष्टाध्यायी, निघण्टु तथा उत्तम नीति वचनों का स्मरण आगे अध्ययन के लिये काफी सहायक हो सकता है।

(३) ऋषि दयानन्द के लेख से यह स्पष्ट नहीं कि वे सभी विषयो को (जिनमें से निस्सन्देह उपयोगी सभी है) आवश्यक वा अनिवार्य रूपसे पढ़ाना चाहते थे या विद्यार्थियों की भिन्न भिन्न प्रवृत्तियो को देख कर कुछ को वैकल्पिक रखना पर्याप्त समझते थे। सब विद्यार्थियो की सब विषयो मे समान रुचि होना असभव सा है इस लिये मेरे विचार मे व्याकरण का इतना ज्ञान जिस से शुद्ध संस्कृत बोलने और लिखने का अभ्यास हो सके, संस्कृत साहित्य, चारो वेदों के सङ्कलित अंश, ६० उपनिषदें, दर्शन शास्त्रोंके मुख्य सिद्धान्त हिन्दी गणित का सामान्य ज्ञान जितना व्यावहारिक दृष्टि से उपयोगी हो (जो अष्टम श्रेणी तक पर्याप्त है) विज्ञान (१० म तक) इतिहास भूगोल (भारत का विस्तृत— अन्य देशों पर साधारण व्याख्यान) इतने विषय १० म श्रेणी तक आवश्यक रूप में पढ़ाये जाएँ आगे महाविद्यालय में वैदिक साहित्य, दर्शन शास्त्रों का सामान्य परिचय, संस्कृत के उत्तम ग्रन्थ इतने आवश्यक रूप मे पढ़ाते हुए अन्य विषय—विज्ञान पाश्चात्य दर्शन, गणित, इतिहास अर्थ शास्त्र, कृषि विद्या, आयुर्वेद (विशेष अध्ययन वैकल्पिक हों, इस विषय पर व्याख्यानों के द्वारा सामान्य ज्ञान सब को दिया जाए) गान्धर्व वेद वा सङ्गीत,

अर्थवेद वा शिल्पविद्या, धनुर्वेद वा राजनीति विद्या (सामान्य ज्ञान सब को कराया जाय व्याख्यानादि द्वारा किन्तु विशेष रुचि रखने वालो को वैकल्पिक विषय रख कर विशेष अध्ययन कराया जाय) इनके साथ धर्म का तुलनात्मक अनुशीलन ये पर्यायविषय रूप मे पढाये जाऍ। इस प्रकार किसी के मस्तिष्क पर अनुचित दबाव न पड़ेगा और अपनी रुचि वा प्रवृत्ति के अनुसार विद्यार्थी उचित विषयो का चुनाव करके उन मे अच्छी उन्नति कर सकेगा। इतना अध्ययन १४ वर्ष के काल मे किया जा सकता है, यह अनुभव सिद्ध बात है। यह बात ठीक हैं कि आदर्श ज्ञान की दृष्टि से इतना ज्ञान अपर्याप्त होगा किन्तु सब की सब विषयो म रुचि होना भी तो सभव नही और बिना रुचि के किसी को पढाने से क्या लाभ हो सकता है ?

इस विषय मे एक बात और विचारणीय है। ऋषिदयानन्द अपनी पाठ विधि मे अग्रेजी तथा अग्रजी के विज्ञान मनोविज्ञानादि विषयक ग्रन्थो को कहॉ तक स्थान देना चाहते थे यह बात उनके लेख से स्पष्ट नही तो भी यह कहना मेरे विचार में सर्वथा अशुद्ध होगा कि वे अग्र जी वा अग्रेजी में विज्ञानादि के सर्वथा विरोधी थे। उनके वेद भाष्य आदि देखने से स्पष्ट प्रतीत होता है कि वे विज्ञान (science) से प्रेम रखने वाले थे। अनेक वैज्ञानिक आविष्कारो का उन्होने ज्ञान प्राप्त किया था। साथ ही सत्यार्थ प्रकाश २ य समु में उन्होने लिखा है "जब पांच वर्ष के लड़का लड़की हो तब देवनागरी अक्षरो का अभ्यास करावे। अन्य देशीय भाषाओंके अक्षरों का भी"। (पृ० ७७)–यद्यपि आगे पाठविधि में ऋषि ने अंग्रेजी के विज्ञान अथवा अन्य ग्रन्थो के पढने का कोई स्पष्ट निर्देश नही किया तथापि यह नही माना जा सकता कि वे केवल अग्रेजी आदि भाषाओ के अक्षर सीखने के ही पक्ष मे थे। कुछ भी हो, वर्तमान परिस्थिति को ध्यान में रखते हुए और ज्ञानवृद्धि की दृष्टि से भी सब विषयो का तुलनात्मक अनुशीलन Compuative study) ही इन दिनो अधिक उपयोगी हो सकता है और इसलिए पाठ विधि मे अग्रेजी को उचित स्थान मिलना ही चाहिये, इस की व्यावहारिक उपयोगिता को ध्यान में रखते हुए ५म या षष्ठ श्रेणी से इसे भी आवश्यक रूप मे कमस कम वैकल्पिक रूप में पढाना ही अच्छा है अन्यथा अनेक कठिनाइया उठानी पड़ेंगी और विद्यार्थी अपने ज्ञान से शिक्षित जनता को अधिक लाभ भी न पहुँचा सकेंगे।

(४) इस विषय पर कि "देश को तात्कालिक अवस्था का पाठविधि के परिवर्तन में कितना स्थान हो।" मै ऊपर कुछ प्रकाश डाल चुका हूँ। इसे भी ध्यान मे रखते हुए पाठ विधि का निर्माण होना चाहिए।

(५) दर्शन, आयुर्वेद अथवेद, आदि प्राचीन ग्रन्थ ज्यो के त्यो शुरू कर दिये जाए यह आवश्यक नही यदि उन विषयो का सामान्य ज्ञान देने के लिए आरम्भिक पुस्तको की सहायता ली जाय तो उन्हे समझना अधिक सुगम हो जायगा।

(६) साहित्य के ग्रन्थो (रामायण–महाभारत –मनुस्मृति आदि) का अध्ययन महाभाष्य के पूर्ण होने तक स्थगित रखने की आवश्यकता नही। उन्हे व्याकरण के साथ २ पढ़ाया जाना ही अधिक उपयोगी होगा।

शेष प्रश्नो का उत्तर मेरी अपेक्षा कोई व्याकरण शास्त्र के पढ़ानेमें अधिक अनुभव रखने वाले महानुभाव अधिक अच्छी तरह दे सकेंगे इसलिये उनका उत्तर मै उन्ही के लिये छोड़ देता हू।

आशा है विचार शील महानुभाव इस लेख पर निष्पक्ष होकर वर्तमान परिस्थिति बालकों की सामान्य योग्यता, प्रवृत्ति आदि को ध्यान में रखते हुए विचार करेंगे। एक सत्यप्रेमी के रूप में मैं इन विचारो में उचित परिवर्तन करने के लिए सदा उद्यत हूं यदि कोई महानुभाव मुझे इन विचारो की अशुद्धता का विश्वास दिला दें।

"आर्यसंस्कृति और स्त्रियां"

श्रीमती स्नातिका सुशीला देवी
विद्यालकृता-सोनगढ महाविद्यालय
काठियावाड़

"भारतवर्ष का धर्म उसके पुत्रोसे नही अपितु पुत्रियो के प्रताप से ही स्थिर है । भारतीय देवियो ने यदि अपना धर्म छोड दिया होता तो देश कब का नष्ट हो चुका होता ।" (महर्षि दयानन्द)

पुरुष और प्रकृति, ब्रह्म और माया, नर और नारी ये युगल हैं—ब्रह्माण्ड के सृजनहार । प्रखर, तेजस्वी, मूर्धा समान, प्रकाशमान और द्युलोक के दिनमणि के समान पुरुष है, तथा शीतोष्ण एव सुख-दु:खो के द्वन्द्वो मे अचल रहकर चन्द्र की चन्द्रिका की भाति उरोदधि को उछालती हुई, छलकाती हुई, सर्वसहा, पृथिवी की तरह विशाल हृदया और क्षमाशीला है स्त्री ।' द्यौरहपृथिवी त्वम् ।" (अथर्व) पुरुष प्राण है तो स्त्री वाणी है"अमोऽहमस्मि सा त्वम् (अथर्व) पुरुष सूर्य है तो नारी है चन्द्रमा, पुरुष साम है तो नारी ऋचा है। "सामाहमस्मि ऋक् त्वम्' (अथर्व) पुरुष गान है तो नारी उसका ध्रुवपद है । इस प्रकार ये दोनो दूसरे के पूरक है, अन्योन्य आश्रित है और एक एक दूसरे के साथ सम्बद्ध है Each completes the other

इन सब प्राकृतिक गुणोके होते हुए भी अपने अपने क्षेत्रों मे दोनो शक्तियो का महान् और स्वर्गीय महत्व होते हुए भी समय समय पर स्त्री पुरुष सम्बन्धी भावनाओं मे बडे ही विचित्र और असह्य परिवर्तन होते गये हैं । समाज का दृष्टिकोण बदल सा गया, असाधारण भाव साधारण हो गये, आध्यात्मिकता का माप उत्तरोत्तर अवनत होता गया । राष्ट्र के पतनके साथ ही इतिहास का पतन भी प्रारम्भ हो गया । स्त्रीके दैवी अधिकार छीन लिये गये । स्त्री की कोमलता पुरुषके उच्छृं-खल होने का साधन बन गई । मध्ययुग के कठोर इतिहास के पृष्ठ पलटते हुए तो रोंगटे खडे हो जाते है । मनुस्मृतिके पवित्र भावमय निम्न श्लोक का विपरीत अर्थ करके महान् अनर्थ किये गये । श्लोक कितना सुन्दर और भावमय है देखिये—

पिता रक्षति कौमारे, भर्ता रक्षति यौवने
रक्षन्ति स्थविरे पुत्रा न स्त्री स्वातन्त्र्यमर्हति

अर्थात् कुमार अवस्था मे कन्या पितासे रक्षित होती है, यौवनावस्था मे या विवाहित होकर पति से, वृद्धावस्था म पुत्र रक्षा करते है । स्त्री कभी अलग अकेली स्वतन्त्र अरक्षित होकर न रहे ।

इस श्लोक से स्त्री की कोमलता का तथा उसके मूल्य का आभास होता है । मूल्यवान् वस्तु को ही खूब सुरक्षित गोप्य रखना पडता है । परन्तु बडे २ विद्वानो ने इसके वास्तविक अर्थ को न समझकर उसकी पवित्रताका अपमान किया। उसके मूल्य को पैरो से ठुकराया, उसको अविश्वसनीय समझा, उसकी स्वतन्त्रता छीन ली, उसे पुरुषो के बराबर अधिकारो के उपयुक्त न समझा, उसके आत्मिक व मानसिक विकास के विशाल द्वार पर ताला

ठोक दिया। उपनयन संस्कार से वञ्चित रख कर सदाके लिए अविद्या के अन्धकूप में धकेल दिया। "स्त्रीशूद्रौ नाधीयता मितिश्रुतिः" की मनगढन्त रचना करके वेदों के नाम से भी भ्रम उत्पन्न करने लगे। बौद्धकालीन स्थिति तो बड़ी दर्दनाक थी, बौद्ध-सघ में स्त्री जैसो पवित्र व्यक्ति को दाखिल करने की मनाही थी, बुद्ध भगवान् ने अपने ही श्रीमुख से आनन्द से जा शब्द कहे थे उससे उस समय के बड़े से बड़े विद्वानो के अन्त प्रदेशों में देवियों के प्रति कितना सन्मानका भाव था, इसका भलीभाति अनुमान हो सकेगा। भगवान् कहते हैं और बिल्कुल स्पष्ट कहते हैं कि—

"हे आनन्द! यदि तथागत द्वारा प्रतिपादित धर्म विषय में स्त्रिया प्रव्रज्या न पाती तो यह धर्म चिरस्थायी होता, सद्धर्म सहस्र वर्ष तक ठहरता। लेकिन क्याकि आनन्द! स्त्रिया भिक्षुणी हुई अत अब यह धर्म चिरस्थायी न होगा, सद्धर्म ५००वर्षों तक ही ठहरेगा।"

औरों की तो बात जाने दीजिये। सर्वप्रथम उनकी माता महाप्रजापति गोतमी ने सघ मे प्रविष्ट होनेके लिये तीन बार आज्ञा मागी परन्तु तीनों बार उन्हें निराश होना पड़ा। बहुत कुछ अनुनय-विनय के उपरान्त जब कृपा की तो उनके लिए भिक्षुओं की अपेक्षा कहीं अधिक कड़े नियम निर्माण किये गये। उनमे से एक यह भी था कि चाहे कोई भिक्षुणी देवी कितनी ही वयोवृद्ध क्यों न हो, चाहे सौ वर्षों की आयु वाली भी हो तो भी उसे उसी दिन के नवदीक्षित भिक्षु के लिये सन्मान सूचक अभ्युत्थान, अभिवादन आदि शिष्टाचार प्रदर्शित करने पड़ेगे इतने पर भी लाखों भिक्षु पुरुषों मे भिक्षुणियों किंवा स्त्रियोंकी सख्या अधिक से अधिक ५०० ही थी। बौद्ध साहित्य के अन्तर-नुशीलन से यह भी विदित होता है कि उस समय एक-पत्नी व्रत का आदर्श लुप्त हो चुका था। बड़े २ राजाधिराज बहुविवाह करते थे। राजा बिम्बसार की १६००० रानियों का जातक ग्रन्थों में वर्णन आता है।

यह तो हुआ मध्ययुग के पूर्वार्ध के या बौद्ध-कालीन इतिहास के कुछ थोड़े पृष्ठों का दिग्दर्शन। यदि उत्तरार्ध के पन्ने पलटाए जॉय तो हृदय क्रान्ति की ज्वाला से जल उठता है और उबल उठता है। स्त्रियों पर समाज के अत्याचार और अन्यायों ने इस समय के इतिहास को इतना कलुषित कर दिया है कि इतिहास के पन्ने समाज की स्वेछाचारिता की कालिमा से सदा काले ही रहेंगे। इस समय भारतीय रमणी को मनुष्य की कोटि में नही गिना जाता था। पशु वर्ग म भी उसका स्थान सुरक्षित था या नही इसमें भी सन्देह रहता है। जहा समाज मे उसकी कोई स्थिति न थी वहा परिवार में भी गिनती न थी। उसका स्वतत्र व्यक्तित्व ही नष्ट हो गया था। शकराचार्य जैसे प्रगाढ़ पण्डित ने भी निस्सकोच हो कह दिया। "प्रश्न— द्वारं किमेकं नरकस्य? उत्तर—नारी" नरक का द्वार यदि देखना है तो नारीको देखलो। कितना रोमाञ्चकारी पतन था? और तो और तुलसीदास जी जैसे भक्त सन्त भी कितना स्पष्ट कहते हैं—

"ढोर गँवार शूद्र पशु नारी ये सब ताड़न के अधिकारी" स्त्रियों ने विश्व मे केवल मात्र मार खाने के लिये ठोकरें खाने के लिये लाते खाने के लिये तथा गालिया सुनने के लिये ही शायद जन्म धारण किया था। मानवजन्म धारण करते हुए भी स्त्रियां पशुओ से अधिक पतित मानी गई थी। वे पैर की जूती के समान समझी जाती थी। जिस प्रकार पैर की जूती जीर्ण-शीर्ण हो जाने पर या पुरानो हो जाने पर बदल दी जाती है इसी प्रकार स्त्री को भी बदला जाता था। साराश यह कि दुनिया का कूडा ककंट स्त्री को समझा जाता था।

हिन्दू रमणी का जीवन तो देख लिया। अब आइय सेमेटिक धर्म मे स्त्री का कैसा स्थान है उसे देखे। इस मत ने भी देवियो क विषय मे बडी विचित्र मान्यता रक्खी है। यहूदियों की मान्य पुस्तक बाइबल के पुराने अहदनामे मे लिखा है कि खुदा ने मिट्टी से गाय, भैंस, भड, बकरी आदि को बना दिया परन्तु उसमे रूह नही फूंकी। इसी प्रकार स्त्री को भी बनाया किन्तु उसमे भा रूह नही फूॅकी अर्थात् आत्मा नही डाली। उसे जडवत बनाया। अन्तत आदम को बनाकर उसमे रूह फूकी। इसोलिये पक्के ईसाई मुसाई और मुहम्मदी पशुओ और स्त्रियो को समान मानते है। दोनो को अनात्मा या जड़ मानते हैं। स्त्री की उत्पत्ति ही कितनी विषम मानते है? मुसलमान लोगो का सिद्धान्त है कि दो स्त्रियो की गवाही एक पुरुष के बराबर है। अर्थात् दो स्त्रियों के बराबर एक पुरुष की बुद्धि होती है। स्त्रिया अविश्वसनीय तथा बुद्धिहीन होती है। चीन के एक धुरन्धर सुधारक कन्फ्यूशस का कथन है कि "स्त्रियो का उचित स्थान घरही है। उसे घरके सिवा अन्य कही बाहर नही जाना चाहिये। उनसे अधिक परिचय भी नही बढ़ाना चाहिये। पारसी धर्म तो उसे पदपदका गुलाम बनाना चाहता है। वह कहता है कि प्रात उठकर एक एक काम के लिये स्त्री को चाहिये कि दश दश बार अपने पति को पूछे। अपनी स्वतन्त्र इच्छा से कुछ न करे। कहने का अभिप्राय यही हुआ कि एक समय पारसी रमणी सैमेटिक नारी तथा हिन्दु-देवी सब की लगभग समान ही स्थिति थी। सभी समाजो ने स्त्रियो का यथाशक्ति अपमान किया, पददलित करने में कोई कसर न रक्खी।

परन्तु 'अति' का सदा विनाश हो जाता है। जब कोई कुप्रथा या दुश्चरण अपनी पराकाष्ठा पर पहुॅच जाता है, जब किसी भी प्रकार का पतन सीमातीत हो जाता है, हद लाघ जाता है तब उसमे प्रतिक्रिया की भावना जागृत होती है, प्रतिकार या बदला भयङ्कर स्वरूप धारण करता है। जब पापका घडा छलाछल भर जाता है तब आखिरकार वह स्वयमेव फूट पड़ता है। एक रबर जैसी निश्चेतन वस्तु भी यदि उसकी सीमा से अधिक खींची जाती है तो वह भी टूट पड़ती है। तो यह तो समाज है, विश्व का एक प्रधान अङ्ग है, ससृति का आदि स्रोत है। उसकी सीमातीत अधोगति का भी उचित परिणाम निकलना ही था। ईश्वरीय नियमानुसार इस "अति' के अनन्तर प्रतिक्रिया की भावना उद्‌बुद्ध हुई। सत्य ने अपना शिव और सुन्दर स्वरूप धारण किया और प्रका-

शित हो उठा।

वह समय भी आया जब स्त्रियां अपने अधिकारों को समझने लगीं, उन्हें भी आत्म-ज्ञान होने लगा। पाश्चात्य देशों में तो स्त्रियों के अधिकारों के लिए एक प्रबल आन्दोलन १७६२ में मेरी वोल्स्टन ने प्रारम्भ किया (सब से पहले इङ्गलैंड में) और इसके लगभग ५० वर्षों के अनन्तर जेम्स स्टूअर्ट मिल ने स्त्रियों के व्यक्तित्व पर जोर शोर से अपनी कलम चलाई और इस आन्दोलन को दार्शनिक सहारा दिया। इस समय पश्चिम की बहिनें अधिकांश अपने अधिकारों में सफल होगई हैं, उन्हें नागरिकता के अधिकार मिल गये हैं और वे वोट भी दे सकती हैं। टर्की तथा अफगानिस्तान जैसे देशों में भी देवियों ने बुर्के उतार फेंके हैं, और वे अपने अधिकारों की, अपने व्यक्तित्व की, एवं अपने स्त्रियोचित आदर्शों के विचार करने लगी हैं। आज हमारे देश में भी देवियों ने कांग्रेस में अपने स्थान की भली भांति पूर्ति की है, आज तो जिधर ही दृष्टिपात करें उधर ही स्त्रियों के समानाधिकार, स्वतन्त्रता आदि की खूब चर्चा सुनाई दे रही है, यह आन्दोलन या स्त्रियों को महत्ता देने का विचार कोई आज का नई है। वैदिक साहित्य में स्त्रियों के माहात्म्य के विषय में अनेक वर्णन आते हैं। परन्तु इस युग में देवियां को पददलन से बचाने के सर्व प्रथम विचारक महर्षि श्री स्वामी दयानन्द जी थे। उन्होंने स्त्रियों की गिरती हुई दशा को सम्भाल लिया, वे ही उनकी डूबती हुई नैया के कर्णधार बने। वेही उनका वास्तविक स्वरूप और महत्ता पहचान सके, उन्हों ने मार्ग खोल दिया, ईश्वरीय आदेश सुनाकर मृतप्राय स्त्री जाति को पुनर्जीवित किया। मातृशक्ति की वन्दना करने वाले वे ही एक सच्चे मातृ-भक्त निकले। एक पांच वर्ष की बाला के सामने भी श्रद्धा और भक्ति से वे अपना मस्तक नवा देते थे। क्योंकि भविष्य में उसने माता बनना है, पुरुषको जन्म देना है। उस विश्व-निर्मात्री शक्तिकी दुर्दशा उनके नेत्रोंको सदा सजल रखती थी और उनके अन्तरमें एक तमन्ना पैदा हो गई थी स्त्री जाति में उत्थान की—पददलित जाति की उन्नति के श्रीगणेश करने की। उनके विचारों का स्रोत वेद है, इस लेख में हम अति संक्षेप से वेदों में स्त्रियों के सम्बन्ध में कैसे कैसे विचार हैं उनका दो शब्दोंमें वर्णन करनेका प्रयत्न करते हैं।

अब हम मध्ययुग में आर्य रमणियां, सैमैटिक मतावलम्बी देवियां, मुस्लिम तथा पारसी स्त्रियों के लिये उनके मतान में जो भाव थे और उन्हीं के विरुद्ध या उसी सम्बन्ध में हमारे वेदों में क्या विचार आते हैं उन्हें देखने का यत्न करेंगे। सैमेटिक मत कहता है स्त्रियों में आत्मा नहीं वे जड़वत् है, परन्तु क्या पुरुषों की भांति स्त्रियां अनुभव नहीं करतीं ? तर्कना नहीं करती ? विचार नहीं करती ? क्या ये सब आत्मा के विषय नहीं ? आत्मिक बल के बिना वह माता बन ही नहीं सकती, आत्मन्वती हुये बिना वह आत्मा वाले पुरुषों को उत्पन्न कर ही नहीं सकती। यदि स्त्री आत्म हीन है तो उसकी सन्तति में आत्मा कहां से आ सकती है ? तो फिर पुरुष भी आत्म-हीन ही होंगे। परन्तु हम इन तर्कों में नहीं पड़ना,

अथर्ववेद का एक मन्त्र इस विषय में क्या ही सुदर ध्वनि करता है—

"आत्मन्वत्युर्वरा नारीयमागन् तस्या नरो वपत बीजमस्याम्"

अर्थात् (आत्मन्वती) आत्मिक बल से युक्त (उर्वरा) उत्तम संतान उत्पन्न करने वाली यह (नारी) स्त्री (आगन्) आगई है (हे नर) मनुष्यो ? इस स्त्री मे (बीजं वपत) बीज बोत्रो।

इससे स्पष्ट है कि स्त्री में आत्मा है "सह" है, अनात्मवस्तु आत्मा को उत्पन्न नहीं कर सकती, आत्मा की सर्जक शक्ति 'अनात्म' नहीं हो सकती। स्त्री "आत्मदा" है, आत्मा को देने वाली है जो वस्तु स्वयं अपने पास न हो वह दूसरे को कैसे प्रदान की जा सकती है ? स्त्री के बिना तो पुरुष आधा है, तथैव पुरुष के बिना स्त्री आधी है, दोनों मिलकर ही पूर्णाङ्ग बन सकते हैं। दोनों ही एक दूसरे के बिना अधूरे हैं और दोनों ही एक दूसरे के पूरक हैं। शतपथ ब्राह्मण में आता है—

"आत्मैवेदमग्र आसीत् पुरुषविध । सोऽहमस्मि इत्यग्रे व्याहरन् तत अह नामाभवत। स वै न रेमे। तस्मादेकाकी न रमते स द्वितीयमैच्छत्। सहैतावानास यथा स्त्रीपुमासौ सपरिष्वक्तौ। स इममात्मान द्वैधापातयत्। तत पतिश्च पत्नी चाभवताम्।"

इस प्रकार पति और पत्नी एक दूसरे के बिना अपूर्ण हैं। इस बात को यह सदर्भ कितने सुन्दर अलङ्कार से वर्णन कर रहा है। इसलिये जो अधिकार पति के अर्थात पुरुष के हैं वे स्त्री के भी होने चाहिये। जब वह अनात्म वस्तु नहीं है, पुरुष की भाति आत्मावाली तथा उसकी पूरक भी है तो उसे भी मनुष्यता का, उसके स्वतन्त्र व्यक्तित्व का, तथा अपने क्षेत्र में पुरुष के बराबर ही अधिकार हैं वैसे तो स्त्री और पुरुष की प्राकृतिक उत्पत्ति में ही विभेद है। उस विभेद के अनुसार स्त्री को गृह के अन्तर्विभाग का तथा पुरुष को बाह्य विभाग का क्षेत्र सम्भाल लेना चाहिये। परिवार में उसका भी उच्च स्थान होना चाहिये। परन्तु हम देखते हैं कि स्त्रियों को पशु के समान, दासी के समान समझा जाता रहा है। वस्तुत वह तो घर की रानी है दासी नहीं। अथर्ववेद में इस सम्बन्ध में एक मन्त्र आता है कि—

यथा सिन्धुर्नदीना साम्राज्यं सुषुवे वृषा।
एवा त्वं सम्राज्येधि पत्युरस्त परेत्य ॥

(यथा) जिस प्रकार (वृषा सिन्धु) बलवान समुद्र ने (नदीना साम्राज्य) नदियों का साम्राज्य (सुषुवे) उत्पन्न किया है (एव) इसी प्रकार पत्यु अस्त परा इत्य) पति के घर जा कर (त्व सम्राज्ञी एधि तू साम्राज्ञी बन कर रह।

न केवल पति के ऊपर ही अपितु—

"सम्राज्येधि श्वशुरेषु सम्राज्युत देवृषु।
ननान्दु सम्राज्येधि सम्राज्युत श्वश्रुवा ॥

अर्थात् अपने श्वशुर के साथ, देवर पर तथा ननदों के उपर भी तेरा ही साम्राज्य हो शासन हो और राज्य हो।

इतना महत्व घर में या परिवार में स्त्रियों का है। अत पुरुष तथा स्त्री दोनों के अपने २ क्षेत्र हैं। पुरुष अपने क्षेत्र का राजा है तो स्त्री अपने घरकी महारानी है। वह रक्षणीया है तथा पोष्या

है। अत पुरुष उसकी रक्षा करे न कि उसकी कोमलता पर अपनी परुषता या कठोरता का लाभ उठाए। घर की रानी कहने से भी केवल घर की चार दिवारों में ही उसे "असूर्यम्पश्या राज दारा" बन कर बैठे रहना चाहिये ऐसा अभिप्राय नही है। जैसे ऊपर एक चीन के सुधारक कनफ्यूशस का मत उद्धृत कर आई हूँ। ऋग्वेद का एक मत्र बड़ी ही सुन्दर भावना में कहता है कि—

" अहं केतुरहं मूर्धाहमुग्रा विनावनी"

(अहं केतु) मैं ज्ञानवती हूं, (अह मूर्धा) मैं घर में मुख्य हूं तथा (अह उग्रा विवाचनी) मैं धैर्यशाली वक्तृत्व करने वाली वकील भी हूँ। इससे विदित होता है कि स्त्री भी विदुषी तथा वाहर के कामों से अभिज्ञ भी होनी चाहिये। तभी वह अपने पति को प्रत्येक काम में सम्मति दे सकती है " कार्येषुमन्त्री " बन सकती है।

हमारे पूर्वज ऋषि कहा करते थे कि विष्णुरिवेहसरस्वती ' अर्थात् स्त्री सरस्वती है तथा संसार की वैष्णवी महामाया है। यदि सचमुच विश्व के आयुष्य की वृद्धि करनी हो, यदि वस्तुत जीवन रस विकसित करना हो, यदि सच्ची प्रेरणा की शक्ति सचित करनी हो तो वैष्णवी महामाया की अर्चना करना, पूजा करना हमारा परम धर्म है। " यत्र नार्यस्तुपूज्यन्ते रमन्तेतत्र देवता " द्रौपदी की मान रक्षा करते हुए भारत ने महाभारत का दर्शन किया, और सीता के पतिव्रतानल में आर्यावर्त ने रामायण के इतिहास का अवलोकन किया है। वस्तुत अबला अबला नहीं है। वह तो देवाधिदेव की दिव्य वृत्ति है, शक्ति की पुञ्ज है, बलकी साकार प्रतिमा है, ज्योतिपरायणा कोई लोकोत्तर मूर्तिमन्त साधना है, तपस्या की देवी है, विश्व के निर्माणमंत्र घोषा, विश्ववारा, अरुन्धती और लोपा मुद्राओं द्वारा निर्मित हैं। पुण्यात्मा और सती साध्वी सुशीला स्त्री क समान दुनिया में अन्य कोई वस्तु सुदर नही है, शोभन नहीं है और मंगलमयी नहीं है। तभी तो भगवान कृष्ण ने कहा है गीता में—

"स्त्रीषु दुष्टासु कौन्तेय ! जायते वर्णसंकर "

स्त्रियों के बिगड़ने से वर्णसकर प्रजा पैदा होती है और स्त्रियों के उत्थान से जाति का अभ्युदय हुआ करता है। अत इस दिव्य शक्ति को पूर्णत पहिचान कर उसका आदर करना चाहिये। उसके दैवी गुणों का मूल्य आकना चाहिये।

स्त्रिया तो साक्षात, क्षमा, दया और स्नेह की प्रतिमाएं हैं। कई दृष्टियो से तो उनका महत्व पुरुषों से भी अधिक है। वेद इस बात को बड़ी सुन्दरता से स्पष्ट करते हैं। जेसे—

"उत त्वा स्त्री शशीयसी पुंसो भवति वस्यसा॥ अर्थात् "यह विषय प्रसिद्ध है कि बहुत सी पतिव्रता स्त्रिया पुरुषों से अधिक धर्म में दृढ़तर और प्रशंसनीया होती हैं।" यह आदर्श या माहात्म्य केवलमात्र वेदमन्त्रों में ही निहित नहीं रह गये। आइये प्राचीन इतिहास पर! इन आदर्शों के अनुसार देवियो ने कितनी प्रगति की थी, कहा तक गति प्राप्त की थी, इस पर कुछ दृष्टिपात करके इस लेख को समाप्त करें।

गार्गी मैत्रेयी जैसो दिव्य ब्रह्मवादिनियों ने तो ब्रह्मज्ञान में ऋषियों को भी चकित कर दिया

था। हजारों वेदज्ञ ब्राह्मणों की परिषद् में गार्गी ने याज्ञवल्क्य को ब्रह्मज्ञान के विषय में आह्वान किया था और याज्ञवल्क्य ने " गार्गि ! याति प्राची " कह कर उसकी विद्वत्ता को मुक्तकंठ से स्वीकारा था, शिरोधार्य किया था। उभयभारती ने मंडनमिश्र और शंकराचार्य के शास्त्रार्थ मे मध्यस्थ होकर अपने पति के पक्ष को पुष्ट करने के लिये कहा था—" शकर ! अर्ध देह पर विजयी होकर गर्व न कीजियेगा, सच्चे विजयी होना हो तो पूरे देह के साथ अर्थात् मेरे साथ भी शास्त्रार्थ करो ! " शंकर स्तब्ध हो जाते हैं। कहने का अभिप्राय यही है कि यदि स्त्रियों को भी पुरुषो के बराबर विकसित होने का अवसर दिया जाय तो वे उनसे किसी भी प्रकार पीछे नही रह सकतीं। उनमे भी मन, बुद्धि, आत्मा पुरुषों के समान ही है। हमारा प्राचीन इतिहास इन देवियो के उज्वल चरित्रो से चमक रहा है देखिये, आज भी वे पृष्ठ जिनपर गार्गी, मैत्रेयी, कात्यायनी, उभयभारती, विद्याधरी, ब्रह्मवादिनी, सुलभा आदिके स्वर्णाक्षरों में नाम खुदे हुए हैं, गर्व से मस्तक ऊंचा कर देते हैं, आज भी सती सीता, पार्वती, दमयन्ती, सती सावित्री, साध्वी सेन्ट टेरीसा और केथेराइन की त्याग और तपस्यामय जीवन-ज्योतिया हरएक भारतीय नारी के हृदय मे द्योतित हो रही हैं, आज भी महारानी लक्ष्मीबाई, विमला, उत्तरा, कुन्ती, जोन आफ आर्क, विदुला, केकैई आदि वीराङ्गनाए एक भारतीय के रोम रोम मे वीरता का सञ्चार कर रही है। आज भी उस सिंहनी, रणचण्डिका दुर्गा की शूरता से भीगे हुए शब्द मेरे कानों मे गूज रहे है—

यो मां जयति स ग्रामे, यो मे दर्पं व्यपोहति ।
यो मे प्रतिबलो लोके, स मे भर्ता भविष्यति ॥

कैसा सुन्दर चैलेञ्ज है, किस रमणी की नसों में ये शब्द नवीन रक्त का सचार न करेंगे ? नव-शक्ति जागृत न करेंगे और अपनी दीन दशा को बदलने के लिये प्रतिक्रिया की ज्वाला में जला न देंगे ?

इसलिये आओ ! मातृशक्ति के उपासको ! आओ !! और बड़ी श्रद्धासे आकर अपनी जनयितृ शक्ति की वंदना करो ! उस वैदिक युगका आह्वान करो। देवाधिदेव के चरणों मे हृदयाञ्चल पसार कर उन रमणी रत्नों की भिक्षा मागो जिनके नाम से आज तक हमारा गौरव स्थिर है। यदि इस गुलाम दशा मे भी आशा की झांकी करनी है तो झाको अपनी माताओं के हृदयो में, उनका उद्धार करो, उनकी शिक्षा के लिये, उनकी मान-सिक उन्नति के लिये कमर कसो, उन्हें ठुकराओ मत, फिर देखो वह दिन दूर नहीं जब वह प्राचीन युग का पुन दर्शन हो जाएगा, स्वर्गीयता हमारे देश में छा जाएगी।

जग क्या है ?

हो गया कभी यह जग सपना,
फिर कभी स्वयं ही सत्य बना ।
इस असमञ्जस में जग क्या है,
खो गया ज्ञान भी अब अपना ।

था कभी यहां दिन का प्रकाश,
फिर कभी निशा का हुआ भास ।
तम द्युति के आवागमन बीच,
पद्‌लित हुआ मेरा विकास ।

थी कभी यहां आशा प्यारी,
फिर कभी निराशा की बारी ।
इन दोनों ने मिलकर मेरी,
ली लूट शांति की निधि सारी ।

था कभी जगत् यह करुणा मय,
था कभी जगत् यह अति निर्दय ।
बस अदल बदल कर सुख दुख का,
हो रहा यहां पर क्रय विक्रय ।

अब समझ गया सारी बातें,
ये थीं मेरे मन की घातें ।
यह मन ही का था चमत्कार,
जो दिन में भी देखीं रातें ।

ब्र० राम कुमार, गुरुकुल इन्द्रप्रस्थ ।

हिन्दुस्तानी शिष्टाचार

लेखक—
श्री० प० रामनारायण मिश्र काशी

श्रद्धेय प० रामनारायण जी मिश्र बी० ए० का विद्यार्थियों और नवयुवको के साथ बहुत लम्बा और घनिष्ठ सम्बन्ध रहा है। उन्होंने हाल में काशी विश्वविद्यालय के सेण्ट्रल हिन्दू हाई स्कूल की सेवाओं से चिरकाल पर्य्यन्त हेडमास्टर पद पर कार्य्य करने के बाद विश्राम ग्रहण किया है। उन्हो ने विद्यार्थियोंपयोगी काफ़ी साहित्य पैदा किया है। उनके एतत सम्बन्धी लेख को आर्य्य कुमारो के लाभार्थ हम यहां क्रमश. देते हैं।

जो व्यवहार भले आदमी एक दूसरे के साथ करते है उसको शिष्टाचार कहते हैं। उसका मूल सिद्धात है दूसरों को अपने प्रेम और आदर का परिचय देना और किसी को असुविधा और कष्ट न पहुंचाना।

बचपन ही से शिष्टाचार के नियम जान लेने चाहिएं। ऐसा करने से उन पर चलना स्वाभाविक हो जाता है। ये नियम भिन्न भिन्न समाजों में भिन्न-भिन्न हैं और देश-काल के अनुसार बदलते रहते हैं। उनमें से कुछ नीचे लिखे जाते है—

(क) बड़ों के साथ व्यवहार-सम्बन्धी

(१) बडों को सदा 'आप' कहो, 'तुम' नहीं।

(२) उनको, सवेरे उठते ही, अथवा जब पहले-पहल उनका सामना हो जाय, सोने से पहले, और उनसे अलग होने के समय प्रणाम करो।

बहुत से अच्छे घरों में शाम को, चिराग दीया बलने, के समय भी प्रणाम करने का नियम है।

किसी नए आदमी से परिचय कराया जाय तो उसको प्रणाम करो।

इलायची आदि या किसी प्रकार का पुरस्कार यदि कोई दे तो उसको प्रणाम करो।

प्रणाम करने के समय हाथमे कोई भद्दी चीज न रहनी चाहिए।

प्रणाम चिल्लाकर मत करो, शान्ति से, सामने होकर, नम्रतापूर्वक करो।

(३) कोई बड़ा बुलाए तो " क्या ", ऐ " या "हा" मत कहो, "जी" "जी हाँ " कहो।

बंगालियों मे ऐसे अवसर पर "आज्ञा" और राजपूताना में "हुक्म कहते हैं।

(४) लोगों को बुलाने, पत्र लिखने या उनकी चर्चा करने मे उनके नाम के पहले श्री, श्रीयुत, पंडित, बाबू, महाशय या मौलवी, जो उचित हो, अवश्य लगाना चाहिये। नाम न लिया जाय तो "पंडितजी " या "मौलवी साहब " आदि कहना या लिखना चाहिए।

अपने नाम के आगे ' पंडित " आदि मत लगाओ।

(५) अपने से बड़े की तरफ, जहाँ तक हो सके,पीठ करके मत बैठो या पीठ करके मत चलो।

(६) अपने गुरु, पिता आदि के साथ चलना हो तो उनसे एक दो कदम पीछे रहो। वे पीछे हों तो रास्ता देकर उनको आगे होजाने दो। असबाब उनके हाथ में हो तो कुल या उसका हिस्सा अपने हाथ में उठा लो। दर्वाजे के अन्दर जाना हो तो पहले उनको जाने दो। दर्वाजा बंद हो तो आगे बढ़कर उसको खोल दो और आवश्यकता हो तो अंदर रोशनी कर दो।

दर्वाजे पर यदि पर्दा हो तो उसको उस समय तक उठाए रहो जब तक वे अंदर न चले जायें।

(७) कोई काम साथ करना हो तो जो छोटा है उसको पहले तैयार हो जाना चहिए, अच्छा तो यही है कि दोनों साथ ही तैयार हों। अपने लिए अपने से बड़े को इंतजार नहीं कराना चहिए।

(८) कोई बड़ा किसी दूर के आदमी को बुलाने के लिए कहे तो वहीं से मत चिल्लाओ, जरा आगे बढ़कर उसको बुला लो। किसी बड़े को बुलाना हो तो दौड़कर उसके पास चले जाओ।

(६) कथा या व्याख्यान या भजन के बीच में से न उठो। उठना ही हो तो जो प्रसंग चल रहा है या भजन हो रहा है उसको समाप्त हो लेने दो। बीच मे उठ जाना अपनी बे-खबरी प्रगट करना है और बोलने वाले विद्वान् या गानेवाले का एक प्रकार से अनादर करना है।

व्याख्यान, कथा आदि में बातचीत नहीं करनी चाहिए। जो देर करके आए उसको पीछे बैठना चाहिए आगे बैठने की कोशिश न करनी चाहिए। जिसको खासी का रोग हो उसको कथा, व्याख्यान आदि में बैठकर विघ्न नहीं डालना चाहिए। वहा ऊँघने लगना भी ठीक नहीं।

पुस्तकालय और वाचनालय में भी चुपचाप बैठकर पढ़ना चाहिए।

(१०) हम किसी चबूतरे पर या ऊँची जगह खड़े हों और अपने से बड़े से बातचीत करनी हो तो हमें नीचे उतरकर बात करनी चाहिए।

अपने से बड़े से बातचीत करनी हो तो खड़े हो जाओ विशेषकर यदि वे खड़े हों।

(११) मेज पर झुककर बातचीत मत करो, खड़े रहना हो तो सीधे खड़े रहो। बैठना हो तो कमर टेढ़ी करके मत बैठो।

(१२) अपने से बड़े या मेहमान के साथ गाड़ी पर बैठना हो तो उनके बाएँ बैठो या उनके सामनेवाली बैठक पर। गाड़ी अपनी ही हो तो इस नियम पर विशेष ध्यान रखना चाहिए।

हम गाड़ी पर बैठ हों और हमसे बड़े दूसरी गाड़ी पर आवें तो उनसे बातचीत हमे गाड़ी से उतरकर करना चाहिए, विशेषकर जब वे उतर आवें।

अपने से बड़े या मेहमान के साथ चारपाई पर बैठना हो तो सिरहाने की तरफ उनको बैठाओ जहा तक हो सके, चारपाई पर मत बैठो। चारपाई सोने ही के काम आनी चाहिए।

(१३) अपने से बड़े या मेहमान के आने पर उनका स्वागत खड़े होकर करना चाहिए और जब तक वे बैठ न जाएँ खड़े रहना चाहिए, जब वे जाने लगें तब भी खड़े हो जाना चाहिए और हो सके तो दर्वाजे तक या गाड़ी तक उनके साथ

आना चाहिए। यदि कोई प्रेम से हमसे मिलने आए, तो हमें भ। उनसे मिलने जाने की चेष्टा करनी चाहिए।

(१४) कोई बड़ा या अतिथि हमारे स्थान रीति के विपरीत व्यवहार कर बैठे तो उस पर हँसो मत।

(१५) भोजन या जलपान के समय कोई अतिथि, विद्वान, संन्यासी आ जायें तो उनसे भोजन करने की प्रार्थना करो।

(१६) जब कोई बडा या अतिथि हमारे यहा भोजन करे तो उचित यही है कि हम अपने हाथ से भोजन परोसें और उनके भोजन कर लेने के उपरात खायें। उनसे पहले ही खा लेना तो किसी हालत में भी ठीक नहीं। साथ भोजन करने की अवस्था में भोजन पहले उनके सामने रखना चाहिए और यदि थालिया छोटी-बडी हों तो बड़ी थाली उनके और छोटी अपने सामने रखनी चाहिए। बहुत से लोग खाने बैठें तो सबसे पहले ही खाने न लग जाओ। औरों को खाना पहले शुरू करने दो।

मेहमान के साथ बैठकर खाने में जल्दी मत करो, धीरे धीरे उनका साथ दो। भोजन के उपरान्त जब लोग मुँह-हाथ धो लें तो उनको इलायची, लौंग आदि किसी बरतन में रखकर अपने हाथ से दो, नौकर आदि के द्वारा नहीं।

(१७) जब कोई इलायची आदि सामने रखे तो उसमें से दो ही एक उठाओ, सब न उठा लो।

(१८) गुरु, मालिक, बड़ों आदि के आसन पर उनके न रहने पर भी मत बैठो।

(१९) जिनके मेहमान बनो उनके भोजन का समय पूछ लो और उसी समय उनका साथ दो। न खाना हो तो पहले ही से कह दो।

(२०) जब अपने से बड़े के साथ चलो और छाता एक ही हो तो उसको अपने हाथ में ले लो। छाता इस प्रकार उठाओ कि साथी को तीली न लग जाय।

(२१) किसी का नाम पूछना हो, तो पूछो, "आपका शुभ नाम क्या है ?"

(२२) किसी मित्र के साथ कोई अनजान आदमी आ जाय तो यह न पूछो कि आप कौन हैं। अपने मित्र से, अनजान आदमी की तरफ इशारा करके, पूछो "आप कौन सज्जन हैं ?" मुसलमान लोगों में पूछते हैं "आपकी तारीफ ?"

(२३) अच्छे लोग उचित स्थान पर "कृपा" शब्द का प्रयोग करते हैं, जैसे "कृपा" कर बैठिए, इत्यादि।

शंका समाधान

(२)

II Puja or Worship

Questions

1. Is Puja or Worship conducted in temples, Theerthas and in other places in the right manner in your province?

2. If not, please state the defects and your suggestions for improvement

3. Are there any rituals formulated in your province for different kinds of worship?

4. Do you think their revision necessary to suit present times and if so on what lines?

5. What qualifications, If any, should be prescribed for those officiating as priests?

Answers

1. Not at all

2. Temples and Tirthas are more a place of exploitation rather than of worship. No improvement can be suggested under the present state. A substantial change in the attitude towards worship is required, a wholesome overhauling

3 and 4. The same as above

5. Priests should not **officiate**, they may be **guides.**

प्रश्न

१—क्या आपके प्रान्त मे मन्दिरों, तीर्थों और दूसरे स्थानों में पूजा या उपासना ठीक रीति से होती है ?

२—यदि नहीं होती तो है त्रुटियाँ लिखें और सुधार के उपाय भी।

३—क्या आपके प्रान्त मे विभिन्न प्रकार की पूजा के लिए कोई विधियाँ बनी हुई है ?

४—क्या आपकी सम्मति मे उन्हें वर्तमान समयो के अनुकूल बनाने के लिए उनमें संशोधन की जरूरत है ? यदि है तो किन-लाइनो पर यह संशोधन होना चाहिए ?

५—क्या उन लोगों की कोई विशेष योग्यता होनी चाहिए जो पूजा इत्यादि मे पुरोहित का स्थान ग्रहण करते है। यदि हो तो वह क्या होनी चाहिए ?

उत्तर

१—बिल्कुल नही।

२—मन्दिर और तीर्थ उपासना की जगह नही वरन् लूट-खसोट की जगह है। वर्तमान अवस्था में उनमे कोई सुधार नहीं सुझाया जा सकता है। पूजा के प्रति मनोवृत्ति के बदले जाने की जरूरत हैं।

३ ४—ऊपर के अनुसार।

५—पुरोहितो को स्थानापन्न नही वरन् मार्ग-प्रदर्शक होना चाहिए।

शंका सं० २

नैरोबी (ईस्ट अफ्रीका) से एक आर्य्य सज्जन मे धर्मार्य सभा के मन्त्री जी से कुछ शंकाओं के उत्तर प्राप्त किए हैं। वे शंकाएँ तथा उनके उत्तर इस प्रकार हैं,—

१—यहां पर कई मनुष्य हडिया चलाने की क्रिया को सत्य मानते है। कितने ही प्रामाणिक पुरुष भी इसको प्रत्यक्ष दृष्ट कहते है। हॅडिया चलाना यू॰पी॰ से चमारो द्वारा एक क्रिया होती है जो मन्त्र द्वारा हडिया को उस आदमी तक ले जाते है जिसे मारना होता है और हडिया उस तक स्वयं जाकर टूट जाती है और वह आदमी मर जाता है। इसी प्रकार की और भी कई शाक्त विधिया बताई जाती हैं। क्या इन शाक्त विधियो (मारण, मोहन, उच्चाटन, वशीकरण) इत्यादि मे कुछ भी सचाई है या सब व्यर्थ ही है। एक पुराने आर्यसमाजी जो अब इन विधियो के विश्वासी होकर आर्य्यसमाज से विरक्त हो गये हे उनका कहना है कि किसी स्त्री ने उनके बच्चे के पोचडो को लेकर कोई जादू टोना किया और उनका बच्चा मर गया। बाद मे वह अपने बच्चो के पोचडो को सभाल कर रखते है और सब सन्तानें ठीक हैं। अभी एक बच्चा जिसका दिमाग ठीक था कुछ दिनो से बिगड़ गया है। उसकी माता जो समाज की मेम्बर है बच्चे को तावीज कराती है और मनुष्य खोपड़ी की राख टोने के तौर पर बच्चे को देती है व बच्चा तावीज और राख से ठीक भी हो रहा है। इन सब बातो का क्या कारण है ?

२—क्या दीर्घायुष्य के लिये कोई विशेष यज्ञ है और उस यज्ञ मे क्या विधि है ? यहां एक आर्य्यसमाजी सज्जन जिनको उनकी स्त्री के लघु आयु का भय हो गया है वह यज्ञ कराना चाहते है, उनके लिये कौन सा यज्ञ कराना ठीक होगा।

३—काम्य यज्ञो की क्या कोई वैदिक विधिया है या शाक्त विधियो से ही उन यज्ञो को होने दिया जाय। एक हिन्दू भाई काम्य यज्ञ (पुत्रेष्टि) कराना चाहते है। मैने तो कभी पुत्रेष्टि यज्ञ होते नही देखा है। आप ही लिखें कि उसकी विधि कहां से प्राप्त होगी—या इन महाशय को यज्ञ कराने से मना कर दिया जावे।

४—धन प्राप्ति इत्यादि के लिये भी क्या गायत्री मन्त्र का जप उपयुक्त होता है या किसी दूसरे मन्त्र का जप—या वर्तमान सिद्धान्तानुसार यह जप इत्यादि व्यर्थ ही है। यहा पर कई भाई साम्प्रदायिक बातो मे इसलिये फॅस जाते है कि उनके धार्मिक लोग इस प्रकार की प्रक्रियाओ पर बड़ा बल देते हैं। उनका प्रचार इस प्रकार है कि परमात्मा सब कुछ देते है उनसे हर प्रार्थना और यज्ञ करने की विशेष विधियां होती है जिसका आर्य्यसमाज को बोध नहीं है। स्वामी जी ने अश्वमेध पर्य्यन्त जो यज्ञ लिखे है उनमे पुत्र-प्राप्ति, धन-प्राप्ति, दीर्घायुष्य, शत्रु-विनाशन, मित्र-रक्षा रूप अनेक यज्ञ है पर आर्य्यसमाज को उनका ज्ञान नही है इसी से कई आदमी हमसे विमुख हो रहे है—उनको हमारा अप्रपञ्चा धर्म पसन्द नहीं है।

५—मरने के समय बड़ा विचार उठ खड़ा होता है कि मनु य को चारपाई से नीचे उतारा जाय या नही। कई बार तो यह विवाद भयंकर

रूप धारण कर लेता है और मुझसे व्यवस्था मागी जाती है। आर्य्यसमाज की इस बारे मे क्या राय है—यदि न उतारा जाय तो क्या होता है और क्या उसका कुछ प्रायश्चित्त भी है।

६—मरने के समय मरते आदमी के लिये क्या प्रार्थना करनी चाहिये या उस कमरे मे उसी समय हवन होना चाहिये—यदि न हो तो क्या हानि है—उस समय गीता उपनिषद् के वाक्य या उसके कान मे ओ३म् का नाम बोलना चाहिये ?

७—श्मशान यात्रा के समय क्या मन्त्र या एक छोटा सा शब्द बोला जाय जैसे बगाल मे 'हरि बोल' और पजाब मे 'राम नाम सत है' इत्यादि बोला जाता है—या चुपचाप जाना चाहिये ?

८—क्या राख को जरूर नदी या समुद्र मे डालना चाहिये और हड्डियां जरूर चुगनी चाहिये—यदि श्मशान मे ही खड्डा बड़ा करके गड़वा दिया जावे तो क्या अच्छा नहीं है ?

९—श्मशान वेदी जिसमे मृतक यज्ञ हो उसका आकार चौड़ाई इत्यादि बनाकर भेजें ताकि यहा श्मशान मे वह बन सके।

उत्तर

१—डंडिया चलाना सर्वथा असत्य है। जो आपको कहते हैं उनको भ्रम है। श्री स्वामी सर्वदानन्द जी आज मेरे पास ही हैं उनसे संयुक्तप्रान्त के विषय मे पूछा था वह कहते है कही नही है। गृहस्थी प्रायः मोह मे फंस जाते है, संतान का स्नेह होता है और उसके वशवर्ती होकर प्रायः विचार हीन हो जाते हैं।

२—कोई विशेष यज्ञ नही है। चिन्ता रहित, प्रसन्न रहना भोजन छादन मे नियमबद्ध रहना, स्त्री संग अधिक न करना और व्यायामादि का करना ही आयुवर्द्धक है। यदि कोई भ्रममे हो तो वेद के दीर्घायु वाले मन्त्रो से हवन करके उसे विश्वास दिलादें परन्तु आयु केवल यज्ञ से न बढ़ेगी।

३—अभी तक कोई विधि लिखी नही गई है। पुत्रेष्टि के लिए प्रथम रजवीर्य का निरीक्षण होना चाहिए ताकि पता लग जाय दोष स्त्री का है वा पुरुष का। फिर उसको औषधि देनी होगी और संस्कार विधि मे गुल्लर के बर्तन मे गुल्लर की रई से मथनादि करके घृत बनाकर हवन करना और खिलाना होगा।

४—गायत्री मे बुद्धि की प्रार्थना है। धन के लिए धन वाले मन्त्र का पाठ करना होगा। परन्तु यह कृत्य केवल धन ठगने के लिए है यजमान को धन मिलेगा वा नही यह ईश्वर जाने।

५—चारपाई पर मरने से कोई हानि नही है और न ही कोई प्रायश्चित्त ही है। यदि कोई उतार दे तो भी लड़ने की कोई आवश्यकता नहीं।

६—उसका मन ससार के पदार्थो से हटाने के लिये ईश्वर प्रतिपादक मन्त्र, उपनिषदादि का पाठ हो सकता है।

७—मेरी सम्मति मे ओ३म् नाम सत्य है। ओ३म् पाठ करे तो अच्छा है। यह भा मिलकर

और शांति से, अन्यथा चुप रहना ही ठीक है।

८—स्वामी जी ने संस्कार विधि मे अस्थि-चयन लिखा है उसे उठाकर समुद्र वा नदामे डाल दे, अथवा भूमि मे गाड़दें। ऋषिने भूमिमे गाड़ना अपने लिए भी बनाया था यदि न उठावे तो भी कोई आपत्ति नही। यह सब साधारण हैं। मेरी समझमें न उठाना वा उठाकर नदी पास होतो उस मे डालना अन्यथा भूमि मे गाड़ना क्रम से है।

९—लगभग ८फीट लम्बी, ६फीट चौडी, ६ फीट गहरी हो। लम्बाई चौड़ाई ऊपरसे है। हवन कुण्डवत नीचे न्यून होगी। यदि सब भूमि मे खोदी जाय तो वायु नही आता है, इसलिए तीन फीट भूमि और तीन फीट बाहर हो और उसमे भी वायु जाने के लिए छिद्र रखना चाहिये।

पुनर्जन्म के विषय में—

श्री प० जगत्कुमार जी का एक पत्र बहुत दिन हुए मेरे पास आया था। वह तभी खोया जा चुका और उसका उत्तर भी लिखा न जा सका। मुझे उनका पता नही मालूम। उस मे दो बातें पूछी थीं। एक तो मनुस्मृति कब तक छप सकेगी। दूसरा प्रश्न यह था कि दिल्ली की शान्ति देवी तथा अन्य पुनर्जन्म के उदाहरण यह बताते हैं कि स्त्री का पुनर्जन्म स्त्री की ही योन में क्यों होता है। वस्तुत इधर दो चार उदाहरण जो मिले वह ऐसे ही थे जिन मे पुरुष ने पुरुष की और स्त्री ने स्त्री की योनि मे जन्म लिया। परन्तु यह आवश्यक नहीं है। स्त्री पुरुष और पुरुष स्त्री हो सकता है। हा, एक बात अवश्य है। हमारे अगले जन्म का इस जन्म से बहुत बडा सम्बन्ध है। जिस प्रकार की प्रवृत्ति हम इस जन्म मे बनाते है, वैसी ही दूसरे जन्म मे होती है। इस लिये 'साधारण रीति' से तो स्त्री का स्त्री या पुरुष का पुरुष होना स्वाभाविक है। क्योकि स्त्रिया स्त्रियोचित और पुरुष, पुरुषोचित कार्य करते हैं और उनके वैसे ही संस्कार होते हैं, परन्तु परिवर्तन संभव भी है और होता भी है। क्योकि एक स्त्री पुरुषोचित और पुरुष स्त्रियोचित कार्य कर सकते हैं, ऐसा कम होगा परन्तु होगा।

—गंगा प्रसाद उपाध्याय प्रयाग

साहित्य—समीक्षा तथा प्राप्ति स्वीकार

अग्नि होत्र (अंग्रेजी)

लेखक—श्री डा० सत्यप्रकाश जी डी यस सी लेक्चरार प्रयाग विश्वविद्यालय।

प्रकाशक—सार्वदेशिक आर्य्य प्रतिनिधि सभा देहली।

मूल्य २॥)—५ शिलिङ्ग।

इस पुस्तक मे वैज्ञानिको के इस आक्षेप का कि हवन से कार्बन गैस पैदा होती है जो हानिकारक है, वैज्ञानिक परीक्षणो के आधार पर खंडन करने का यत्न किया गया है। पुस्तक के लेखक स्वय एक वैज्ञानिक है। वैज्ञानिको का आक्षेप बहुत पुराना आक्षेप है। आर्य्यसमाज की ओर से खंडन का यत्न बहुत पहले हो जाना चाहिये था फिर भी यह यत्न 'कभी नही की अपेक्षा देरी अच्छी है' इस कहावत के अनुसार इस समय भी स्वागत योग्य है और इसके लिए लेखक तथा प्रकाशक दोनो बधाई के पात्र है।

हवन के सम्बन्ध मे आर्य्यसमाज मे अपने प्रकार की जहां तक हमे पता है यह पहली पुस्तक है। निश्चय ही यह पुस्तक हवन के सम्बन्ध मे वैज्ञानिक अनुसधान को प्रोत्साहन देगी। पुस्तक मे हवन यज्ञ की उपयोगिता इत्यादि हरेक आवश्यक बात पर प्रकाश डालने का यत्न किया गया है। पुस्तक प्रत्येक आर्य्य-समाज की लाइब्रेरी मे रखने तथा अंग्रेजी पढ़े लिखे लोगो मे प्रचारित किए जाने योग्य है। जो लोग हवन यज्ञ को एक धार्मिक रूढ़ि वा क्रिया कलाप समझ कर इसमे आस्था नही रखते है और जो वैज्ञानिक कसौटी पर ठीक उतरी हुई सचाई के कायल है उन्हे तो यह पुस्तक अवश्य पढनी चाहिए और आर्य्यसमाज को इस ओर विशेष ध्यान देना चाहिए। पुस्तक सजिल्द है। आकार, प्रकार, छपाई, सफाई इत्यादि उत्तम है।

त्रिदोष विज्ञान पूर्णिमा

लेखक—श्री प० परमानन्दजी, आयुर्वेदाचार्य, देहली।

प्रकाशक—प० दुर्गादत्त शास्त्री, आयुर्वेद विशारद।

मूल्य—॥)

वातादि तीन दोष आयुर्वेद प्रासाद के भित्ति-स्वरूप है। आयुर्वेद का अस्तित्व इन तीनो पर ही निर्भर है। यद्यपि इन तीनो का विवेचन भिन्न २ प्रणाली से अनेक विद्वानो ने किया है, और सफलता भी प्राप्त की है, किन्तु वे वातादि दोषो की अपनी विवेचनात्मक धारा मे नहाकर स्वय भी उनकी धारा मे बह गये। प्रस्तुत छोटी सी पुस्तक मे लेखक ने उत्तम रीति से त्रिदोष-विवेचन किया है। विवेचनप्रणाली सरस, सरल एव प्रसाद गुणयुक्त है। लेखक ने प्रौढ़मति वैद्यो के साथ २ ही अल्पमति छात्रो का विशेष ध्यान रक्खा है जिससे कि वे इस दुरूह विषय को सरलता से हृदयङ्गम कर सके। आयुर्वेदाग छात्रो के लिये पुस्तक लाभदायक है।

पृष्ठ सख्या ६६ – मूल्य ॥)

उपयुक्त पुस्तको के अतिरिक्त इस मास हमे निम्न पुस्तकें समालोचनार्थ प्राप्त हुई है। इनमे

से केवल उन्ही पुस्तको की समालोचना की जायगी जो समालोचना के योग्य समझी जायेंगी। पुस्तक प्रेषक कृपया नोट कर लेवें। यह भी कृपया नोट कर लेवें कि भविष्य मे भी यही नियम रहेगा। समालोचनार्थ २ पुस्तकें आनी चाहियें।

(१) देवयज्ञ—लेखक प० बुद्धदेव जी विद्यालकार प्रकाशक अनुसंधान विभाग, आर्य्य-प्रतिनिधि सभा पंजाब, गुरुदत्त भवन, लाहौर। मूल्य।=) ।

(२) नागवश प्रकाश अर्थात् सथालादि क्षत्रिय परिचय—संकलयिता तथा प्रकाशयिता स्वा० शिवानंद तीर्थ हवेली, खड़गपुर (मुगेर)। मूल्य ॥) ।

(३) कन्या विक्रय या लोभी पिता—लेखक चन्द्रिकाप्रसाद सिंह 'चन्द्र' प्रकाशक श्री दीन दयाल लाल, मुरारपुर (गया) । मूल्य ॥)

(४) मानव धर्म्म भाष्य—लेखक स्वामी विवेकानद जी, प्रकाशक रसायन कार्य्यालय, सेगरिया (बीकानेर)। मूल्य ।=)

(५) उद्गार (गद्य काव्य)—लेखक-अध्यापक 'कनक' साहित्यभूषण एव विशेषज्ञ राजबनेडा (मेवाड़)। मूल्य ॥)

(६) बालकोपयोगी धर्म्म शिक्षा (गुजराती) —लेखक प० ज्ञानेन्द्र, सिद्धान्तभूषण, प्रकाशक आर्य्य प्रकाश प्रेस, आर्यन रोड, आनद (खेड़ा)।

(७) हम आर्य्य है—लेखक पं० भद्रसेन आचार्य्य, विरजानंद वेद विद्यालय, अजमेर, प्रकाशक प्रधान, आर्य्य-प्रतिनिधि सभा, राजस्थान अजमेर। मूल्य =)

(८) शहन्शाही सन्देश अर्थात् मन की कुजी —लेखक शहनशाह जी महाराज, शहन्शाही कुटिया, सूत्र मंडी, लाहौर। मूल्य १॥)

मद्रास प्रचार

श्रीमन्नमस्ते !

दुःख है कि पिछले दो-तीन मासों से आपको यहां के समाचार नहीं भेज सका। इसका एक विशेष कारण था। सभव है आपने समाचार पत्रो में पढ़ा हो। एप्रिल के अन्त में यहां एक हिन्दू-मुस्लिम फसाद शुरू हुआ जो लगभग दो महीनों तक "गुरिल्ला वार" की तरह चालू रहा। इसका आरम्भ भी 'पूना" की तरह मारुति-मन्दिर से है। देवता की सवारी जा रही थी, मार्ग मे मुसलमानो ने पत्थर मारने शुरू किये। हिन्दुओ को भी जोश आ गया। लड़ाई घमासान रही। दोनो जमातों के अनेक व्यक्ति घायल हुए। पुलिस की पकड़-धकड़ शुरू हुई। इस लपेट मे स्थानीय आर्यसमाज की दो शाखाए भी आ गई। कई सभासद् भी पकडे गये। दोनो शाखाओं की तलाशियां हुई। मुकद्दमे चल रहे है। लेखक जब पुलिस-कमिश्नर से मिलने गया तो उसने आर्यसमाज को निम्न शब्दो मे दोषी ठहराया:—मुझे मालूम है आज से कुछ वर्ष पूर्व यहां के हिन्दू लड़ाई-झगड़े से कतराते थे। जब से आर्यसमाज यहा आया है हिन्दू भी गैर-हिन्दुओ से लड़ाई पर आमादा हैं। और यह हिन्दुओ की जबर्दस्ती है कि इतने दिनो तक फसाद जारी रहा और सैकड़ों मुस्लिम ज़ख्मी हुए।"

पाठक यह जानकर हैरान होगे कि गत ३ मासो से यहां की आर्यसमाज पर पुलिस की

कड़ी दृष्टि है।

५०००) का दान

पैरम्बूर (मद्रास) के इलाके मे जहा उपरोक्त फसाद हुआ वहीं पर ही तीन ग्राउण्ड भूमि समाज के लिये लेने का प्रयत्न हो रहा है। एक स्थानीय चेट्टी-व्यापारी ने इस भूमि तथा मकान के लिये ५०००) रु० तक दान देने की प्रतिज्ञा की है। सभवतः थोड़े दिनो मे ही जमीन मोल ले ली जायगी।

शुद्धियां—

शुद्धि कार्य निरन्तर जारी है। आन्ध्र प्रान्त के गुण्टूर तथा कृष्णा जिलो मे प्रायः ४०-५० परिवारो की शुद्धियां प्रतिमास हो जाती हैं। ये शुद्धियां प्रायः आन्ध्र-हरिजन ईसाइयो की हैं। इस शुद्धि-कार्य का विशेष लाभ यह है कि जहा २ शुद्धिया होती है वहां २ ईसाइयत की प्रगति लगभग बन्द हो जाती है।

पिछले दिनो मद्रास समाज द्वारा निम्न उल्लेख योग्य शुद्धियां हुई हैं:—

मुहम्मद हिमोरा की शुद्धि—

यह सज्जन जापानी व्यापारी हैं। आप जापान के एक मिनिस्टर के सम्बन्धी भी हैं। आपका बडा परिवार है। आप दो वर्ष पूर्व दिल्ली की जुम्मा मस्जिद मे मुसलमान हुए थे। अब आप आर्यसमाज-मद्रास द्वारा शुद्ध होकर पुन. आर्य-धर्म मे प्रविष्ट हुए है। आपका विचार जापान में आर्य-धर्म का प्रचार करने का है।

कमला जोसफ की शुद्धि—

स्थानीय आदि-द्राविड़ा जमात के एक सुप्रसिद्ध कार्यकर्ता की सुपुत्री कमला जोसफ की शुद्धि हुई। उसका हिन्दू नाम कमला देवी रखा तथा उसका विवाह भी एक उच्च जाति हिन्दू से आर्यसमाज रीति से हुआ।

ऐंग्लो-इण्डियन लड़की की शुद्धि—

बैंगलोर की एक शिक्षित ऐंग्लो-इण्डियन लड़की मिस म्यूरियल की शुद्धि भी आर्यसमाज-मद्रास द्वारा हुई तथा सुशीला नाम रखा गया। शीघ्र ही इनका विवाह एक ब्राह्मण पुलिस सब इन्स्पैक्टर से होने वाला है।

पाण्डिचरी में आर्यसमाज—

दो सप्ताह पूर्व पाण्डिचरी में एक विवाह वैदिक रीति से हुआ जिसका पौरोहित्य आर्यसमाज-मद्रास ने किया। उस अवसर पर व्याख्यान आदि भी हुए। शीघ्र ही आर्यसमाज खुल जाएगा ऐसी आशा है। पं० केशव देव जी ज्ञानी शीघ्र पाण्डिचरी जा रहे है क्योंकि पाण्डिचरी मे फ्रैञ्च भाषा बोली जाती है इसलिये वहां प्रचारार्थ फ्रैञ्च साहित्य की आवश्यकता है। यदि सत्यार्थ प्रकाश का फ्रैञ्च अनुवाद, जिसके लिये श्री पूज्य स्वामी स्वतन्त्रानन्द जी प्रयत्न कर रहे थे, शीघ्र छप जाय तो बहुत सहायता मिलेगी।

छोटे २ ट्रैक्टों को फ्रैञ्च में छपाने का उद्योग आर्यसमाज मद्रास द्वारा शीघ्र ही प्रारम्भ किया जाएगा।

—प्रधान मंत्री, आर्यसमाज, मद्रास।

कर्नाटक प्रचार

इस मास बगलौर शहर और छावनी के अनेक भागो मे प्रचार तथा दलितोद्धार कार्य के अतिरिक्त कगेरीग्राम येडालुग्राम मावल्ली शेषा दिपुर आदि ग्रामो मे सामाजिक कार्य विशेषरूप से किया गया जिसके परिणामस्वरूप ग्राम वासियो तथा हरिजनो मे बड़ी जागृति उत्पन्न हो रही है। इस मास २ हरिजनो के विवाह वैदिक-रीति से व्याख्यासहित कराये गये जिनमे सैकडो नर-नारी सम्मिलित हुए। स्व० सैम्मुएलजोसेफ की पुत्री मिस एमिली की ६ जून को आर्यसमाज भवन कैलासपाल्यम् मे शुद्धि होकर उसका नाम विमला देवी रक्खा गया। १३ जून को डा० भाग्यम्ना M B B S की जो ईसाई मिश्नरी रेवरेण्ड भद्रप्पा की सुपुत्री और किंग जाज हास्पिटल् विजागपट्टम मे लडी असिस्टेन्ट सर्जन् हैं शुद्धि सम ज भवन कैलास पाल्यम मे बड़े समारोह के साथ स्नातक धर्मदेव विद्यावाचस्पति ने कराई। श्रीयुत नीलकण्ठम् ने जो Intermedi... College Library के पुस्तकाध्यक्ष है अपने पिता जी के देहान्त होने पर श्राद्धादि पौराणिक क्रियाओ के स्थान पर स्ना० धर्मदेव जी को घर बुलाकर हवन प्रार्थना उपदेशादि कराये। बहुतसे घरो मे अब यही रिवाज होता जा रहा है। इस मास भी मावल्ली और गंगम्भाचेरी की हरिजन-बस्तियो के सुधार का विशेष प्रयत्न किया गया। स्कूलो में हरिजन बालक बालिकाओ के साथ अच्छा व्यवहार नही किया जाता यह जानकर उनके मुख्याध्यापक मुख्याध्यापिकाओ को स्ना० धर्मदेव जी ने पत्र लिखे जिनका यह परिणाम हुआ कि अब उनके साथ प्रेमपूर्ण समानता का व्यवहार किया जाने लगा है। म्युनिसपलिटी के अधिकारियो को मिल कर भी उनके कष्ट निवारणार्थ यत्न किया जा रहा है। ७,७५ हरिजन भाई-बहिन आर्यसमाज के साप्ताहिक अधिवेशनो म सम्मिलित होकर वैदिक भजनो द्वारा क्रियात्मक भाग लेते रहे। इस मास बगलौर के मौलवी इनायतुल्ला साहेब १८ जून को स्ना० धर्मदेव जी के पास जिज्ञासु भाव से आये और उनके प्रश्न के उत्तर में स्नातक जी ने वैदिक एकेश्वर पूजा के समथन मे कई प्रमाण उनको बताये जिनको उन्होने खुशी से नोट कर लिया। ये अच्छे प्रेमी सज्जन प्रतीत होते है।

पहाड़ी इलाको मे प्रचार

जोलाई मास में महाशय शान्तिस्वरूप जी उपदेशक सार्वदेशिक सभा ने अल्मोडा रानीखेत के अतिरिक्त ११ पहाड़ी ग्रामो में भी प्रचार किया। आर्य समाज के प्रचार से अब जागृति होता जाती है। बेनी नाग क इलाके मे कार्की व बोरा लोग बड़ी तायदाद में आबाद हैं। यह अपने आपको क्षत्रिय कहत है। पर इनकी गणना अन्य द्विज द्विजों म नही करते। उपदेशक महाशय ने इन लोगो मे भी प्रचार किया और उनको यज्ञोपवीत देने को भी प्रस्तुत हुए पर वे लोग चाहते हैं कि रानीखेत के प० हरगोविन्द पत

आकर उनको जनेऊ दें और उनका पानी चलादें। पंडित जी को लिखा है। यहां पर इसलामों का ज्यादा जोर है। उपदेशक ने १० जुलाई को एक शिल्पकार की पुत्री की शुद्धि कराकर उसका विवाह शिल्पकार जाति मे ही करा दिया।

बद्री प्रसाद,
प्रचार अधिष्ठाता।

विदेश प्रचार

श्रीमती आर्य्य प्रतिनिधि सभा, सुरीनाम द्वारा प्रचार कार्य्य

गत मास मे ता० २४ मार्च को अलखमार मे श्रीमान् रामलषण के पुत्र का नामकरण संस्कार तथा श्रीमान् पञ्चम जी के पिता की मृत्यु के उपलक्ष मे हवन यज्ञ पंडित अमृतप्रसाद जी के आचार्यत्व मे सम्पन्न हुआ। सारामाका के अन्दर एक व्यक्ति को संस्कार दिया और मखेन्ता समाज के अन्तर्गत एक उपनयन संस्कार तथा विवाह कराया। अलियॉस मे सुन्दरलाल के प्रयत्न से एक ईसाई की शुद्धि तथा उसकी स्त्री को वैदिक धर्म मे संस्कार करके दीक्षित किया। एवम् अलखमार, कर्मभोग, अनीयॉस, बाकी फीन्सटाब्शी, और सारामाका के अन्दर, एलकैक, खरौनेक, फरोल हार्डेन, परीयांस, कलकत्ता, बम्बई, हीवलख सोर्ख हानासुलेश, सुन्दर बौती मे वैदिक व्याख्यान दिया। अलियॉस एवम् फरोल हार्डेन मे आर्य्यसमाज की सभा को भी स्थापना हो चुकी है।

श्रीमान पं० नर्वदाप्रसाद जी के आचार्यत्व मे विवाह संस्कार, महाशय मगरू तथा महाशय महावीर की पुत्री व धर्म्मसिंह जी की पुत्री, वंसराज सिंह जी के पुत्र का विवाह संस्कार हुआ। म० सुखदेव मंगल की पुत्री का नामकरण संस्कार व आर्य्यसमाज मन्दिर पारामारीबो मे ईस्हाक मुसलमान की शुद्धि की एवं समयानुकूल वेद प्रचार भी किया।

आर्य्यसमाज मन्दिर पारामारीबो मे प्रति सप्ताह हवन यज्ञ होता रहता है, एवं बालकों को भी धर्म शिक्षा दोनो समय मे दी जाता है। पंडितो द्वारा प्रति सप्ताह मे व्याख्यान भी होता रहता है।

आर्य समाज मद्रास द्वारा प्रकाशित

सस्ता आर्य-साहित्य (अंग्रेजी में)

Light of Truth श्री स्वामी दयानन्द सरस्वती कृत सत्यार्थ प्रकाश का यह अंग्रेजी अनुवाद है। इसकी भाषा शुद्ध व सुन्दर है। भावों के विषय मे इतना कहना पर्याप्त है कि इस अकेली पुस्तक ने जितनों को आर्य बनाया है उतना अन्य साधनों ने नही।

ग्लेज पेपर, केलिको की मजबूत जिल्द ३)
अजिल्द १॥)

Fountainhead of Religion इस पुस्तक के विद्वान लेखक श्री गंगाप्रसाद जी चीफ जज, टिहरी ने पुष्कल प्रमाणों द्वारा वैदिक-धर्म को समस्त धर्मों का मूल-स्रोत सिद्ध किया है। इस पुस्तक के अनेक भाषाओं मे अनुवाद हो चुके है—केवल अंग्रेजी मे ही कई संस्करण छप कर हाथों हाथ बिक चुके है।

फेदरवेट पेपर, सुन्दर छपाई। अजिल्द ॥) सजिल्द)।

Ten Principles of Aryasamaj गुरुकुल-कांगड़ी के भूतपूर्व आचार्य श्री चमूपति एम ए ने इस पुस्तक मे आर्यसमाज के दस नियमों की विस्तृत, वैज्ञानिक व्याख्या की है।

पृष्ठ संख्या १६० । मूल्य ।=) मात्र ।

Arya Philosophy अजमेर अर्धशताब्दी पर दिये गए अंग्रेजी व्याख्यानों का यह संग्रह है। देश तथा विदेश दोनों मे प्रचार का अत्युत्तम साधन है। इसकी भूमिका श्री आचार्य रामदेव जी ने लिखी है। मूल्य ।=) मात्र

Vedic Caste System and Panchama Problem यह समयोपयोगी ट्रैक्ट श्री पं० केशवदेव जी ज्ञानी, मद्रास ने लिखा है। इसमे युक्ति-प्रमाण द्वारा आर्य समाज के पक्ष की पुष्टि की गई है। मूल्य =)

The outlines of Aryasamaj लेखक श्री प० केशवदेव जी ज्ञानी, मद्रास। इसमे आर्य समाज के सिद्धान्तो का संक्षिप्त परिचय है। ४र्थ संस्करण। मूल्य –)

Sayings of Swami Dayanand इस मे ईश्वर, वेद, वर्ण, आश्रम शिक्षा, राजनीति आदि विषयों पर श्री स्वामी दयानन्द सरस्वती जी के वचनों का संग्रह है। मूल्य –)

Hinduism Vs Xinity श्री पण्डित केशवदेव जी ज्ञानी ने इस पुस्तिका मे हिन्दू-धर्म तथा ईसाईयत का मुकाबिला किया है। शुद्धि प्रचार के लिए उपयोगी है। मूल्य –)

Hinduism Vs Islam ले० पं० केशवदेव जी ज्ञानी। इसमे हिन्दू धर्म तथा इस्लाम का मुकाबिला है। शिक्षित मुसलमानों के हाथों मे देने योग्य है। मूल्य –)

पता –
श्री मंत्री, आर्य समाज
१७०, चाइना बाजार, मद्रास

विषय-सूची

केन्द्रीय अनाथालय, रावी रोड, लाहौर की आवश्यकताएं

(ले० ला० बोसाराम रिटायर्ड स्टोर कीपर N W R)

(१) इस समय इस अनाथालय मे १७५ बालक बालिकाएं हैं और शीत ऋतु आरहा है। उनके लिये गरम वस्त्र, रजाई, तुलाई, और दरियों की आवश्यकता है। दानी सज्जन जहां अपने बालको के लिये वस्त्र बनवाएंगे वहां इन बालकों का भी अवश्य ध्यान रखें।

(२) वस्त्रों के अतिरिक्त भोजन के लिये घृतादि की आवश्यकता है दानी सज्जन घृत भेजें अथवा उसके लिये दान देकर कृतार्थ करें।

(३) अनाथालय का व्यय १३००) मासिक है वह दानी महाशयों की कृपासे पूरा होगा इसलिये प्रत्येक नर नारी दान देकर इस व्यय को पूरा करें।

(४) इस अनाथालय के प्रबन्ध के विषय में यह लिखना पर्याप्त होगा कि सरकार ने जो भगाए गए बालक पकड़े थे जिनके संबधियों का पता नहीं लगा वह सब बालक इसी अनाथालय मे रखे हैं।

(५) अनाथालय के बालक कभी बाहर मांगने के लिए नही भेजे जाते हैं। उनके पढाने के लिये स्कूल भी है जो सरकार से स्वीकृत है।

(६) इसके अधिकारी इस समय निम्न सज्जन है

प्रधान श्री स्वामी स्वतन्त्रतानन्द जी

उप प्रधान प० विश्वम्भरनाथ जी उप प्रधान आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब

,, पं० ठाकुरदत्त शास्त्री मुलतानी लाहौर

,, डाक्टर गणेशीलाल जी M B B S

कोषाध्यक्ष, विज्ञानशील जी बी० ए०

अंत मे नम्र निवेदन है प्रत्येक धर्म प्रेमी सज्जन अपनी शक्त्यनुसार कुछ न कुछ दान देकर सभा का हाथ बटावें और पुण्य के भागी बनें।

ओ३म्

सार्वदेशिक

* सार्वदेशिक-आर्य-प्रतिनिधि सभा देहली का मासिक मुख-पत्र *

वर्ष ११ | आश्विन १९९४ | अक्टूबर १९३७ ई०] [दयानन्दाब्द ११३ | अङ्क ८

❀ वेद की शिक्षाएँ ❀

अग्नेनय सुपथाराये अस्मान् विश्वानि देव वयुनानि विद्वान् ।
युयोध्यस्मज्जुहुराणमेनो भूयिष्ठान्ते नम उक्तिं विधेम ॥

भाषार्थ—हे ज्ञानस्वरूप परमेश्वर ! आप हमे सन्मार्ग मे चलने मे प्रवृत्त कीजिये । आप सब के ज्ञाता है हमे पापकर्मों से बचने की सद्बुद्धि प्रदान करें, आप हमारे पाप कर्मों को नष्ट करे । हम आप को बहुत २ नमस्कार करते हैं ।

———o———

सम्पादकीय—

पानीपत आर्य्य-समाज नगर-कीर्तन

कुछ दिन पूर्व समाचार-पत्रों में इस बात की चर्चा छिडी कि पानीपत आर्य्य समाज के नगर कीर्तन पर, इस वर्ष सरकार कुछ नई पाबन्दियां लगाना चाहती है। पानीपत मे आर्य्य समाज के संकीर्तन के जलूस तो कई वर्षों से बन्द चले आ रहे हैं। आर्य्य-समाजियों ने उन पर लगाई गई पाबन्दियों के प्रतिवाद मे आवाज उठाई थी, परन्तु उसका कोई असर न हुआ। इस वर्ष जब उन्होंने यह सुना कि उनके वार्षिक नगर कीर्तन पर भी सरकार प्रतिबन्ध लगाना चाहती है तो इस नूतन हस्तक्षेप को सहन करना उन्हें गवारा न हुआ। यह बात निर्विवाद सत्य है कि यदि हम स्वय अपने नागरिक स्वत्वों (Civic rights) का रक्षण नही कर सकते तो उसके लिए कोई दूसरा हमारी सहायता को नहीं आयगा।

पिछले कई वर्षों से हम देख रहे है कि जहा भी किसी आर्य्य समाज के नगर कीर्तन पर जब कभी कोई प्रतिबन्ध लगाया गया तो वहा का समाज ने उसके प्रतिवाद मे नगर कीर्तन को बन्द तो जरूर कर दिया परन्तु अपने अधिकारो की रक्षा के लिए सिवाय याचना का हाथ पसारने के और कुछ भी नहीं किया। इस नीति का परिणाम यह हुआ कि अनेक स्थानों पर आर्य्य समाज के नगर कीर्तन कई वर्षों से रुके हुए हैं। परन्तु आर्य्य समाज पानीपत ने इस नीति का अवलम्बन नहीं किया। वहा के आर्य्य भाइयो ने जब यह देखा कि हमारे धार्मिक तथा नागरिक स्वत्व खतरे मे हैं तो उनकी अन्तरात्मा ने विप्लव खड़ा कर दिया और वे उन स्वत्वो की रक्षा के लिए कमर कस कर तैयार हो गए। ईश्वर और समाज उन्हीं की सहायता करते हैं जो स्वयं अपनी सहायता के लिए कटिबद्ध हो जाते है।

यह बात सत्य है कि पानीपत आर्य्य समाज ने अपनी प्रान्तिक प्रतिनिधि सभा को अपने कष्ट की सूचना दी और उससे सहायता की याचना की। उसने अपनी शिरोमणि सार्वदेशिक सभा को भी इस आड़े समय मे सहायता प्रदान करने के लिए लिखा। परन्तु जिस भाव के कारण इन दोनों सभाओं ने अपना अपना नैतिक संरक्षण उसको दिया वह यह था कि पानीपत आर्य्य समाज अपने अन्त करण की आवाज को सुन कर किसी बाह्य सहायता के बिना भी अपने स्वत्वों की रक्षा करने के लिए कटिबद्ध था। इसी भाव के कारण पानीपत के आर्य्य भाई अपनी सफलता के लिए धन्यवाद के पात्र है।

१ अक्टूबर १९३७ को पानीपत आर्य्य समाज के उत्सव के उपलक्ष मे वार्षिक नगर कीर्तन होना था। इस बात की आशंका निरन्तर बनी हुई थी कि मुसलमान भाइयों की जाबेजा मांगों को परितुष्ट करने के लिए नगर कीर्तन के जलूस पर प्रतिबन्ध लगाए जायेंगे। आर्य्य भाइयों ने इस बात की घोषणा कर दी थी कि चाहे कुछ भी हो वे अपना जलूस नियमानुसार निकालेंगे और

पाबन्दियों की दशा मे सत्याग्रह करने को उद्यत हो जायँगे। उनकी इस सरगर्मी को देख कर हमारे भाई लाला देशबन्धु, एम एल ए ने शिमला मे हिन्दू समाज के अन्य नेताओं के साथ मिल कर इस बात की बड़ी कोशिश की कि किसी तरह पंजाब सरकार के प्रधान मन्त्री सर सिकन्दर हयात खा को इस मामले को सुलझाने की प्रेरणा की जाय। इधर सार्वदेशिक सभा की ओर से भी एक आवेदन पत्र सर सिकन्दर हयात खा की सेवा मे भेजा गया जिसमे यह स्पष्ट अङ्कित किया कि आर्य्य समाजी अपने धार्मिक तथा नागरिक स्वत्वो की रक्षा मे अपना कदम पीछे नही हटायेगे।

समय आने पर लाला देशबन्धु जी, पूज्य महात्मा नारायण स्वामीजी, श्री स्वामी स्वतन्त्रानन्द जी उपप्रधान सार्वदेशिक सभा श्री बाबू शिवचन्द्र जी सहायक मन्त्री, आर्य रक्षा समिति तथा अन्य बहुत से आर्य्यवीर देहली से चलकर पानीपत जा पहुँचे ताकि वहा के आर्य्य भाइयो का सरक्षण भली प्रकार किया जा सके। पंजाब से भी ला० अमृतराय जी उपप्रधान आर्य प्रतिनिधि सभा, श्री प० ज्ञानचन्द्र जी आर्य्य सेवक, श्री डाक्टर लालचन्द जी तथा अन्य उत्साही कार्यकर्त्ता भी वहा पहुच गए। इस तत्परता का परिणाम यह हुआ कि जिला अफसरों को समय पर सत-प्रेरणा हो गई और उन्होने आर्य्य समाज के स्वत्वों पर हस्तक्षेप न किया और एक भयानक स्थिति पैदा होते होते रुक गई। पानीपत का मोर्चा लगते लगते रह गया।

हम आशा करते हैं कि सभी प्रान्तों के आर्य भाई पानीपत के आर्य्य भाइयो को उनकी तत्परता के लिए हार्दिक धन्यवाद देंगे। हमारे ख्याल मे उनकी यह धार्मिक तत्परता अन्य समाजो के लिए एक बड़ी शिक्षा का पाठ पढ़ाने वाली है। यदि कोई समाज सम्मान पूर्वक जीना चाहती है तो उसे सम्मान पूर्वक जीने के लिए हर प्रकार के कष्ट सहने के लिए तैयार रहना चाहिए। यह जीवन की बाजी जान जोखो की बाजी है। जो व्यक्ति या समाज जान जोखो में डालना पसन्द न करेगा उसे सदा कायरता का जीवन व्यतीत करना पडेगा और जो जान जोखों या खतरों से नही डरते वे सदा बाजी ले जाते है। पानीपत आर्य्य समाज के नगर कीर्तन के सम्बन्ध मे हम इस समय केवल इतना कहना चाहते है कि अन्त भला सो भला।

हिन्दी या हिन्दुस्तानी

उपर्युक्त शीर्षक मे आर्यमित्र लिखता है —

राष्ट्रभाषा हिन्दी के सम्बन्ध में कुछ दिनो से एक नयी चर्चा चल रही है, वह यह कि हिन्दी को हिन्दुस्तानी कहा जाय, और उसको एक ऐसी नई भाषा बनाया जाय जिसके समझने मे किसी प्रकार की कठिनाई न हो। चर्चा चलाने वालो का उद्देश्य हिन्दी, उर्दू का मेल-मिलाप करा देना मालूम पडता है, जिससे फिर भाषा सम्बन्धी प्रश्न उपस्थित ही न हो। बात तो अच्छी है, परन्तु कार्य रूप मे परिणत होने लायक नही। अगर हिन्दू मुसलमान दोनो मिलकर वास्तव मे—दिखाने को नही--हिन्दुस्तानी बन सकते है, तो भाषा का प्रश्न भी आसानी से हल हो सकता है। हिन्दी वह भाषा है, जिसे देश के अधिकाश निवासी

बोलते, लिखते और पढते हैं। भारतवर्ष ग्रामो मे बसा हुआ है। वहा जो बोली बोली जाती है; वही हिन्दी या हिन्दी का रूपान्तर मात्र है। जिन लोगो का प्रयत्न है कि बोल-चाल और लिखने पढ़ने की भाषा मे एकदम समानता स्थापित करदी जाय, उन्हें सफलता मिलनी कठिन है। इन दोनो में थोडा बहुत अन्तर अवश्य रहेगा। वास्तव मे हिन्दी उर्दू मे कोई भद नही है। हिन्दी को ही कुछ लोग उर्दू कहने लगे है। हिन्दी मे न तो अरबी-फारसी के शब्दों की प्रधानता होनी चाहिए और न संस्कृत के कठिन शब्दों की भर मार। सस्कृत का बडी बेटी होने के कारण हिन्दी का उससे प्रभावित होना तो स्वाभाविक ही है,—परन्तु उसे जान-बूझकर क्लिष्ट बना देना उचित नही कहा जा सकता। बोल-चाल की सीधी साधी सरल भाषा का नाम ही हिन्दी है, चाहे उसे देवनागरी मे लिखिये, चाहे किसी अन्य लिपि मे। हिन्दुस्तानी भाषा की हिमायत म,मदरसो मे, कामन लैंग्वेज रीडर पढाई जाने लगा है, परन्तु उनकी भाषा को पढकर हँसी आती है। न उसे हिन्दी कह सकते है न उर्दू। इसका नया नाम खिचडी भाषा भले ही रख लिया जाय। हिन्दुस्तानी कही जाने वाली भाषा काम भले ही चला दे परन्तु वह अपना साहित्यिक महत्व स्थापित नहीं कर सकती। कोमन लेंग्वेज रीडरो मे तो भाषासौष्ठव की बिल्कुल हत्या ही होता दिखाई देती है। हमारा तो मत है कि प्राचीन इतिहास कुछ भी हो परन्तु अब तो हिन्दी और उर्दू दोनो अपनी अपनी पृथक् पृथक् सत्ता रखता है। हिन्दी का भी साहित्य है और उर्दू का भी। एक सस्कृत प्रधान और दूसरा फारमी अरबी मिश्रित। अब ये दानो भाषाये उसी प्रकार नही हिल मिल सकतीं जिस प्रकार बंगला, गुजराती या हिन्दी और मराठी। हा, उद्योग अवश्य किया जाय कि साधारण प्रोपैगेंडा और काम-काज की भाषा बहुत सरल, बोल चाल की और सब की समझ मे आने लायक होनी चाहिए। यह बात इस दिशा मे अवश्य माननीय है।

एक बड़ी आवश्यकता—

आर्य्य समाज के साहित्य को मूल्यवान बनाने के लिए श्री प० रामचन्द्र देहलवी की वैदिक सिद्धान्तो की व्याख्याओं के लेख-बद्ध होने की आवश्यकता आर्य्य जगत मे वेग के साथ अनुभव की जा रही है। वस्तुत, यह बहुत बडी आवश्यकता है। जितनी जल्दी इस दिशा म यत्न किया जाय उतना ही अच्छा है। यदि प० जी स्वय इस कार्य्य को करते ता अच्छा था परन्तु पडित जी को जो व्यक्ति जानते है वे जानते हैं कि पंडित जा स यह कार्य्य होना कठिन है। ऐसी अवस्था मे स्वय आर्य्य समाज का यह कार्य्य करना चाहिए। यह कार्य्य दो प्रकार से हो सकता है। एक तो यह कि पडित जी के किसी स्थान पर विशेष २ व्याख्यान कराए जाया करें और उन्ह लेखबद्ध कर लिया जाया करे और पडित जी को दिखलाकर छपा दिए जाया करें। इन लेखो के सकलन मे प० जी के भाषण की मधुरता, ओज, प्रवाह और आनन्द की रक्षा होनी चाहिए तभी उनके लिए यत्न सफल समझा जायगा। इसके लिए प० जी के भाषणो का हूबहू लिखा तथा सुसम्पादित रूप म प्रकाशित किया जाना आवश्यक है। दूसरा तरीका यह हो सकता है कि प० जी के निर्णयपर एक सुदक्ष

लेखक रख दिया जाय और पं० जी स्वयं अपनी व्याख्याएं उसके द्वारा लेखबद्ध करा देवें। इस समय ऐसे ग्रन्थकी बड़ी आवश्यकता अनुभवकी जा रही है जिसमें आर्य्य समाज के मुख्य २ सभी सिद्धान्तों की व्याख्या एक स्थान पर प्रामाणिक सरल रोचक और उन्नत स्टाइल में उपलब्ध हो। इस कार्य्य के लिए पं० जी बहुत उपयुक्त व्यक्ति हैं। आशा है पं० जी तथा आर्य्य जनता इस आवश्यकता पर गम्भीरता पूर्वक विचार करेगी और इसकी पूर्ति का यत्न करेगी। पं० जी के लेखक का व्यय कोई भी धर्म्म प्रेमी आर्य्य सज्जन देकर पुण्य और यश के भागी बन सकते हैं। हम समझते हैं धन की व्यवस्था कोई कठिन कार्य्य नहीं है।

लाहौर वधस्थल—

भारत सरकार ने गोमांस का सप्लाई के लिए लाहौर में एक बड़े वध स्थल खोलने का विचार छोड़ दिया है क्योंकि उनकी सम्मति मे ऐसा करने से प्रजा की धार्मिक भावनाओ को ठेस लगती थी परन्तु हिन्दुओं और सिक्खो ने केवल धार्मिक आधार पर इस स्कीम का विरोध नहीं किया था। उन्होंने और बहुत से मुसल्मानो ने आर्थिक आधार पर भी स्कीम का विरोध किया था।

पं० जवाहरलाल और भारतीय नारी जाग्रति

अभी हाल मे श्रीयुत पं० जवाहरलाल नेहरू ने अहमदाबाद मे एक सार्वजनिक सभा मे बोलते हुए आल इण्डिया वीमेन कान्फ्रेन्स (अखिल भारतीय स्त्री-सम्मेलन) की गति विधि की आलोचना की थी। उसमें उन्होंने प्रगट किया था कि यह संस्था अमीरो की संस्था है जन साधारण की नहीं है। उन्होंने यह भी कहा था कि भारत मे इन दिनो स्त्रियों मे जो जागृति हुई है उसका श्रेय कांग्रेस को है।

वर्तमान युग मे भारतीय स्त्रियो में जागृति ब्रह्म समाज आर्य्य समाज इत्यादि संस्थाओ ने की है और शारदा ऐक्ट इत्यादि उपयोगी कानूनो और उपायों के समर्थन और प्रचलन इत्यादि कार्यों के द्वारा आल इण्डिया वीमेन कान्फ्रेन्स ने भी की है। साथ ही राजनैतिक जागृति कांग्रेस ने पैदा की है। आर्य्य समाज और ब्रह्म समाज ने तो जागृति का सूत्रपात ही किया था। ऐसी अवस्था मे जागृति का तमाम श्रेय कांग्रेस को किस प्रकार जा सकता है यह समझ में नहीं आता। स्त्रियो में जागृति का अर्थ उन्हे भारतीय लाइनो पर सुशिक्षित करना, भारतीय महिलाओ के घर और बाहर के-कर्त्तव्यो, आदर्शों और मर्य्यादाओ का स्मरण कराना और देखना है कि वे कहा तक उन्हे पूरा करती है। एक शब्द मे जागृति की मुख्य कसौटी यह देखना है कि हमारी जाग्रत नारियो का दृष्टि कोण भारतीय है या अभारतीय। यदि भारतीय है तो सचमुच उन्होंने जागृति की है। यदि अभारतीय या पश्चिमी है तो उनकी जागृति को जागृति नहीं कहा जा सकता है। इस कसौटी पर परखकर देखना चाहिए कि जागृति मे किसका श्रेय अधिक है हम समझते है इसमे आर्यसमाजका श्रेय ही अधिक होगा। खद्दर धारण कर लेने मात्र से, घर गृहस्थ के कर्त्तव्यो के बलिदान पर सार्वजनिक जीवन मे आजान भारतीय नारित्व के के आदर्शो और प्रतिभा के विरुद्ध तलाक, बर्थकन्ट्रोल आर्थिक स्वतन्त्रता, पुरुष के साथ प्रतियोगिता इत्यादि का समर्थक बनने बनाने से हमारी नारियां जागृत नहीं कही जा सकती हैं।

महानुभूति—

चीन की विपत्ति मे जिसमें साम्राज्य वादी जापान न बलात आक्रमण करके उसे डाला हुआ है हम महानुभूति प्रगट करते हैं। हम युद्ध म हवाई आक्रमण से बम्बों द्वारा जो निर्दोष पुरुष और स्त्रियाँ मारे गए हैं उनके भाग्य पर हम आंसू बहाते हैं। इसके सिवा हम गुलाम देश के अधिवासी और कर ही क्या सकते हैं। इस प्रकार के युद्ध पर कौन हृदय रखने वाला होगा जो घृणा प्रगट न करे और आततायियों के अमानुषी कृत्यों पर क्षुब्ध न हो उठे। सचमुच इस प्रकार के युद्ध डाके ही कहे जा सकते हैं युद्ध नहीं।

प्रसन्नता है चीन प्राणपण से मुकाबला कर रहा है यदि चीन मुकाबले मे सफल हुआ तो सचमुच चीन की नहीं वरन् न्याय और मनुष्यता की विजय होगी।

कांग्रेस और हिन्दू सभा—

उपर्युक्त शीर्षक मे माडर्नरिव्यू लिखता है,—

"यह सुना जाता है कि पंडित जवाहरलाल जी ने मध्य प्रदेश से आई हुई एक प्रश्नावली का उत्तर दिया है कि कांग्रेस के सदस्य किसी हिन्दू सभा के सदस्य नहीं होने चाहिए। यदि यह नियम मुसलमानों ईसाइयो, सिक्खो, पारसियों इत्यादि के साम्प्रदायिक सस्थाओं की उनकी सदस्यता पर भी लागू होता है तब तो इस पर आपत्ति नहीं हो सकती है अन्यथा यह आपत्ति जनक है।

क्या महाभारत इतिहास नहीं है ?

श्री महात्मा नारायण स्वामीजी महाराज

महाभारत में अनेक स्थलों में अस्वाभाविक बातें देखकर अनेक पश्चिमी विद्वान, विशेषकर अगरेज विद्वान, कह दिया करते हैं कि महाभारत की गणना इतिहास की कोटि में नहीं की जा सकती। परन्तु अन्य देशों की इसी प्रकार की अस्वाभाविक घटनाओं से मिश्रित किताबों को, उन्हें इतिहास कहने में सङ्कोच नहीं होता। उदाहरण के लिये रोम के इतिहासवेत्ता लीवी (Livy) आदि, ग्रीक के इतिहासज्ञ हेरोडोटस (Herodotus) आदि तथा मुसलमान इतिहास लेखक फरिश्ता आदि के लिखे ग्रथों को देखें, जो इतिहास के नाम से प्रसिद्ध हैं, तो उनमें सैकड़ों अस्वाभाविक और अनैतिहासिक बातो का समावेश मिलेगा। जब ये सभी ग्रथ इतिहास कहे और माने जा सकते हैं तब समझ मे नही आता कि महाभारत को क्यों इतिहास न माना जावे। अवश्य रोम के इतिहास लेखकों में, आजकल के इतिहासज्ञ लीवी की जगह गिब्बन (Gibbon) फ्रूड (Froude) का मान करते हैं परन्तु यह नही समझते कि गिब्बन आदि ने जो इतिहास लिखे हैं उनका आधार तो वही लीवी आदि के लिखे हुए इतिहास हैं।

(२) इगलेंड आदि देशों में पद्य में, केवल वीर पुरुषों के वार्ताद्योतक (Epic) काव्य लिखे जाया करते हैं, आख्यान ग्रथ नही लिखे जाते इसलिये महाभारत को पद्य में देखकर उन्होंने इसे भी काव्य ही कहना शुरू कर दिया परन्तु इन लोगों ने यह नहीं समझा कि हमारे देश में तो कानून आदि सभी प्रकार के ग्रन्थ पद्य ही में लिखे गये है जैसे मनुस्मृति आदि अनेक स्मृतिया। इन्हें कौन काव्य कह सकता है ? ये कानून के ग्रन्थ हैं।

(३) वेबर ने एक जगह लिखा है —Since Megasthenes Says nothing of this epic (महाभारत), it is not improbable hypothesis that its Origin is to be placed in the interval between his time and that of "Chrysoston", for what ignorant sailors took not of, would hardly have escaped his observation (History of Sanskrit Literature by Weber, English translation p 186 1882) परन्तु वेबर ने इस बात पर विचार नहीं किया कि मेगेस्थनीज के ग्रन्थ तो अब अप्राप्य हैं। उसके ग्रन्थों के उद्धरण अनेक ग्रन्थों से लेकर डाक्टर श्वान बेक (Dr. Schwan Beck) ने संग्रह किया है। इस सग्रह के आधार पर, कोई भी समझदार पुरुष यह नहीं कह सकता कि मेगेस्थनीज ने क्या नही लिखा।

इन सब बातों पर विचार करने के बाद जो परिणाम उचित रीति से निकाला जा सकता है वह यह है कि महाभारत के इतिहास कहने के विरुद्ध जो पश्चिमी विद्वानों की दलीलें है वे थोथी और रद्द करने के योग्य हैं और महाभारत ठीक उसी तरह से इतिहास है जैसे लीवी और फ़रिश्ता आदि के इतिहास। अवश्य जो उसमे अस्वाभाविक बातें हैं उन पर ध्यान नही देना चाहिये।

भारतवर्षीय प्रदेशों के प्राचीन नाम

(लेखक—श्री स्वामी स्वतन्त्रानन्द जी महाराज)

—❀—

मै भारतवर्ष के प्रान्तों के प्राचीन नाम पाठकों के लाभार्थ लिखने लगा हूँ। इसका मुख्य कारण यह है कि जिस समय कोई व्यक्ति महाभारत का पाठ करने लगता है। उसको यह कठिनाई होती है। वह समझ नही सकता कि जो नाम वह पढ़ रहा है वह किस प्रात का नाम है क्योंकि उस समय जो नाम थे वह नाम इस समय नहीं हैं इस लिये पाठक सदेह मे रहते हैं।

ब्रह्मा, जावा, सुमात्रा, मलाया द्वीप के विषय में कुछ लिखना कठिन है इसमें से कुछ भाग तो भारतीयों ने जाकर बसाए थे। शेप पर भारतीयों का प्रभाव था या राज्य था, यह कहना अभी कठिन है परन्तु इनके अतिरिक्त जो अन्य प्रात हैं उन पर भारतीयों का राज्य रहा है। महाराजा अशोक का धर्म विजय वहा तक था और पाडवों ने राजसूय यज्ञ के पूर्व जिन प्रातों को विजय किया था वह भी यही प्रात थे। चारों भ्राता भीम, अर्जुन, नकुल सहदेव इन प्रातों के विजयता थे। दक्षिण में समुद्र है, पश्चिम में कस्पियन समुद्र, उत्तर में शियेनशान पर्वत तक अर्जुन गया था। पूर्व में आसाम तक का पूरा पता मिलता है। अश्वमेध के समय में अर्जुन ने इनमें से कई प्रातों की विजय यात्रा की थी। आज जिस उत्तर पश्चिम प्रात से भारतीय भययुक्त रहते हैं उनके पूर्वजों ने अपनी विजय पताका वहा फहराई थी। यह सब प्रात भारतवर्ष में ही माने जाते थे इस लिये प्राचीन भारत वर्तमान भारत से कहीं विस्तृत था इसलिये मै ने भारतवर्ष के भिन्न २ प्रातो के पुराने नाम लिख कर उनके आगे वर्तमान नाम वा अन्य प्रकार से उसका पता देने का यत्न किया है जिससे पाठक सहज में समझ जाय कि यह प्रात कहा था और कौनसा है

मैने यह पाठ 'भारतवर्ष के इतिहास की रूप-रेखा' से लिये हैं जिसके लेखक पं० जयचन्द्र जी नारग विद्यालकार हैं और पुस्तक शारदा मन्दिर लिमिटेड देहली से प्राप्तव्य है। आशा है पाठकों को इससे कुछ न कुछ लाभ होगा।

यदि कोई अन्य सज्जन इसमें सुधार कर के इन प्रातों के नाम लिखें अथवा दूसरे देशों के नाम लिखे तो मै उनका धन्यवाद करूगा। क्यों कि पुराने नामों के समझने में विशेष कठिनाई होती है।

स्वर्णभूमि—वरमा, स्याम, मलाया द्वीप
स्वर्ण भूमि—सुमात्रा
स्वर्ण भूमि—करका की समुद्री किनारा
यव द्वीप, जह्म—जावा
कालकम—वरमा (समुचय)

प्राग्ज्योतिष—आसाम और उसके उत्तर का पहाड़ी प्रदेश। इसी नाम से एक प्रात महाभारत के पाण्डव अश्वमेध में रावी के समीप भी पर्वत

में लिखा है।

चीन—याङ०चेक्यॉग, पीलीनदी (होयांगहो) के मध्य का प्रदेश

गाधार—चीन का युईनाम प्रात

मालवा—लश्रो

दशार्ण—लश्रो का पूर्वी भाग वर्तमान लुआङ० फ्रा वाङ

कशमीर—जेहलम की उपरली दून। वेरीनाग से वराममूल तक

दर्द—कृष्ण गगा से सिन्ध तक, गिलगित से हुंजा तक

अभिसार—जेहलम, चनाव के बीच। पुञ्छ राजौरी, भिम्बर का प्रात।

दार्व—चनाव, रावी के बीच, डुग्गर, जम्मू का प्रात।

कष्टवार—मकदूदा से चनाव तक। वर्तमान किशतवार।

भद्रावकाश दार्व, कष्टवाट के बीच का देश। वर्तमान भद्रवा

त्रिगर्त—रावी, व्यास, सतलज के बीच का प्रात। जिला कांगड़ा, होशयारपुर, जालधर बलासपुर, नालागढ, मंडी, सुकेत।

चम्पा—रावी की दून। चम्बा के आसपास का प्रात

उत्सव संकेत, लाहुल—चन्द्रभागा की उपरली दून किशतवार के ऊपर, चम्पा के आगे।

कनौर—सतलज की उपरली दून। बुशहर राज्य। सिमला से तिब्बत रोड़ पर ५० मील से।

लद्दाख जङ्सकर रूपशू हानले चूमूर्ति	यह सब सिन्धु की दून में कशमीर, कनौर के बीच में क्रम से पूर्व से पश्चिम की ओर है।

गुगे—चुमूर्ति के आगे का प्रदेश

डरी—मानसरोवर के चौगिर्द कैलाश पर्वत तक।

कुलूत—कुल्लू का प्रदेश, व्यास की उपरली दून। त्रिगर्त के आगे।

क्युठल—सतलज, रौंस नदी के मध्य। क्युंथल, सिमला, डगशाई, बघाट (सोलन) कसौली, जुत्वलादि राज्य।

साल्व, जौनसार—रौंस नदी के पूर्व, देहरादून के ऊपर का प्रदेश।

कट प्रदेश—गढवाल। भागीरथी से पिण्डर तक गङ्गा की धाराओं का प्रदेश।

कूर्माचल—कुमाऊ, गढ़वाल से पूर्व।

शाकल प्रदीप—कुमाऊ से नैपाल तक का प्रदेश।

नैपाल—नैपाल प्रदेश।

सिकिम, भोटान, तोवाङ, अका, दफला, मीरी अबोर—क्रम से नैपाल से पूर्व को हैं।

किरात—नैपाल का पूर्वीय प्रदेश जिसे अब भी नैपाल वाले किरात नाम से कहते हैं।

त्रिविष्टप—तिब्बत

बोलौर—सिधु श्योक के मध्य का देश जिसे कशमीर वाले छोटा तिब्बत कहते हैं उपरला हिन्द।

चीनी तुर्किस्तान

गधार पश्चिमी—युसफजई, बुनेर, स्वात, वाजौर, दीर। सिन्धु से कुनार नदी तक का प्रदेश। इसकी राजधानी पुष्करावती, स्वात कावल नदी के सगम पर थी।

कपिश—दोरा, खावक घाटा के बीच कावल नदी तक, गधार और कपिश की सीमा कुनार नदी बनाती थी वर्तमान काफरस्तान।

वाह्लीका—बलख प्रदेश। बदखशा के पश्चिम।

पामीर—बदखशा, बलख, हिन्दुकुश, बन्दे बाब के उत्तर आमू की धाराओ का प्रदेश।

काष्कार—चितराल।

पकथ कम्बोज—अफगानिस्तान और रूस राज्य का कुछ भाग।

पार्थव, पाह्लव—खुरासान प्रदेश

उड्डीपान—स्वात की उपरली दून

तुर, तुरान—रूसी तुर्कस्तान।

उत्तर कुरु—थियेनशान पर्वत के आचल में। यह पर्वत चीनी तुर्कस्तान के ठीक उत्तर मे है।

कम्बोज—गलचा प्रदेश, कश्मीर के उत्तर मे

तुरवार—बदखशा, बलख के पूर्व।

लम्पाक—लमगान।

नगरहार—निग्रहार, जलालाबाद के आस-पास का प्रदेश।

पकृथ—तीराह

सुग्ध—बुखारा समरकन्द का प्रदेश

खोतन—सीता नदी के निचले काठे से कुछ पूर्व। सीता का नाम अब 'यारकन्द' है

हूणो का प्रदेश—वक्ष, मुर्गाव के बीच का प्रवेश

रोह, लोहित—अफगानस्तान का भाग जो बलख के इधर है।

चोल (उत्तर)—बलख के पश्चिम दक्षिण में रेतीली पहाड़ियों का प्रदेश।

सुम्ह (उत्तर)—चरीकर, काओशां के बीच का प्रदेश।

परम कम्बोज—आमू नदीका मैदान, जरफशा नदी के साथ २ बदखशां के समीप।

ऋषिक—उपरला हिन्द। चीनी तुर्कस्तान।

हर उवति—कन्धार नगर के आस पास के प्रदेश।

मकस्थान—मकरान

जरंक, शकस्थान—सीस्तान।

आरिया—हेरात प्रदेश (हरात)।

कलात—दर्रा बोलान के दक्षिण का प्रदेश।

लासवेला—पुराली नदी के आस पास।

मद—ईरान का उत्तर पश्चिमी भाग।

पार्सो—मद के दक्षिण फारस खाड़ी तक।

मर्व—कस्पियन सागर के पूर्व का देश।

वर्कन—मर्व के दक्षिण का भू भाग।

उरशा—जिला हजारा। एबटाबाद।

गधार पूर्वी—रावल पिण्डी से पश्चिम, तक्षशिला राजधानी थी।

सिन्ध—डेरा जात। डेरा इस्माइलखा, डेरा गाजीखां का जिला, कुछ सिन्ध प्रान्त का भाग।

सौवीर—सिन्ध प्रात।

कैकेय—जिला जेहलम, शाहपुर (सरगोधा) गुजरात।

मद्र—रावी चनाव के बीच का प्रदेश राजधानी स्यालकोट।

क्षुद्रक—वियाशा (व्यास के दाई ओर। रिपाडकी)।

मालव—रावी की निचली धारा के दोनों ओर।

कठ—माझा जिला लाहौर, अमृतसर का तरनतारन का भाग।

उशीनर—पूर्व उत्तर पजाब।

शिवि—रावी, चनाव के संगम के पास, कमालिया के चौगिर्द रहते थे।

अम्बष्ट, क्षत्र, वसाति—पचनद के पास, उच भावल पुर स्टेट मे रहते थे।

मुचि कर्ण—रोडी के पास आवाद थे।

यौधेय—जोहिया वार। सतलज के निचली तरफ फीरोजपुर से भावलपुर तक।

वाहीक—सारा पंजाब बाहीक कहलाता था।

कुनिन्द, कुलिन्द—जिला अम्बाला, सहारनपुर, देहरादून टौंस नदी तक।

कुरु—हस्तिनापुर (जिला मेरठ मे) से सरस्वती तक।

कुरुक्षेत्र—सरस्वती के आस पास का प्रांत।

मत्स्य—मेवात। जिला गुडगावा अलवर, जयपुर राज्य।

शाल्व देश—आबू का चौगिर्द

मरुस्थल—मारवाड़ जोधपुर, जैसलमेर।

सुराष्ट—काठियावाड

शूरसेन—मथुरा का प्रांत।

ब्रह्मावर्त—सरस्वती घगर के बीच का प्रदेश।

ब्रह्मर्षिदेश—कुरुक्षेत्र, शूरसेन, मत्स्य पंचाल, सब मिलाकर।

पंचाल उत्तर—रुहेलखण्ड।

पंचाल दक्षिण—जिला फरुखाबाद, कनौज कानपुर।

मल्ल—जिला गोरखपुर मे गण राज्य था।

कौशल उत्तर—गोंडा, वहरायच का प्रदेश।

कौशल दक्षिण—जिला छत्तीस गढ।

चेदी—चम्बल, केन के बीच का देश, बंघेलखण्ड।

दशार्ण—वेतवा केन के बीच का प्रदेश। पूर्वी मालवा।

वत्स—जिला प्रयाग काशीराज्य के पश्चिम।

काशी राज्य— गङ्गा के उत्तर दक्षिण काशीनगर के आस पास।

कारुप—वत्स राज्य दक्षिण

अयोध्या—अयोध्या शहर के चौगिर्द

मिथिला—जनकपुर सीतामढ़ी, दर्भंगाका प्रांत।

मगध—दक्षिणविहार।

अवंति—उज्जैन मालवा।

आकर विदिशा—भिलसा का प्रांत।

सुराष्ट्र—काठियावाड।

लाट—दक्षिणी गुजरात।

वरुगजू भरु कच्छ—कोकण दक्षिणी गुजरात के मध्य का प्रदेश

अर्पक शूर्पारक—कोकण (महाराष्ट्र मे समुद्री तट) कर्नाटक के उत्तर।

चेर केरल —पालाघाट कोटियम सेलम तक। मद्रासप्रांत का उत्तरीय पश्चिमी तट।

पाण्ड्य—मदुरा, तिरनावली, त्रावनकोर।

कोचीन का प्रांत।

चोल—इसकी दक्षिणी सीमा पददू कोटा की बेलार नदी थी। (मद्रास प्रांत का भाग)

नामरपर्णी द्वीप सिंघलद्वीप—सेलोन

नाग द्वीप—सेलोन का उत्तरीय भाग

माल दिविन—मालद्वीप

रठिकपेशतोहरण—महाराष्ट्र

कर्नाटक—महाराष्ट्र के कोकण के नीचे बंबई प्रांत, मैसूर राज्य।

बनवास—उत्तरीय कर्नाटक

महिष् मडल—दक्षिणी कर्नाटक (मैसूर)

दामिल, तामिल नाड़—मद्रास सूबा जहां तामिल भाषा है।

परिलिया—तामिल प्रांत मे पुरुल तट का प्रदेश।

आंध्र—तामिल के उत्तर जहा तेलगू भाषा है।

विदर्भ—वरार प्रांत, अमरावती, युतमाल आदि जिले

निषध—सतपुड़ा की पश्चिमी सीमा

समतट—गंगा, ब्रह्मपुत्र के मुहाने के पास का प्रदेश।

वरेन्द्र—गंगा ब्रह्मपुत्र के बीच का प्रदेश। समतट के उत्तर।

वंग—पूर्वी बंगाल

राढ—समतक के पश्चिम का प्रदेश।

अंग—जिला भागलपुर।

पुण्ड्र—वंग का उत्तर प्रांत।

सुम्ह—वंग का पश्चिम जिला मेदनीपुर।

कलिंग—उडीसा का समुद्रीतट

अशमका—आंध्र के उत्तर। मूलक के दक्षिण कलिंग के पश्चिम।

मूलक—अशमक के उत्तर का प्रांत।

मूषिक मूतिका—अशमक कलिंग के बीच में एक छोटासा राज्य था।

पिछले जन्म की याद

प्रो० जिनारजा दास के विचार

अभी हाल मे श्रीयुत प्रो० जिनारजा दास का ग्वालियर के राजमहल मे महाराजा की प्रेरणा पर एक भाषण हुआ था। उस भाषणमें पुनर्जन्मके समर्थन में प्रो० महादय ने उत्तम विचार प्रगट किए है। भाषण का सार.इस प्रकार है:—

"पुनर्जन्म का सिद्धान्त हिन्दुओं, बौद्धों और जैनियों तक हो सीमित न था। ससार के अन्य बहुत से भागों में भी यह सिद्धान्त पाया जाता था। यूनान में प्लेटो इस सिद्धान्त का समर्थक था और पाइथागोरस ने इस सिद्धान्त का अपने उपदेशों का आधार बनाया था। सिद्धान्त के रूप मे पुनर्जन्म सब के लिए बड़ा आकर्षक है और आज भी इस सिद्धान्त में व्यापक रूप से विश्वास किया जाता है।

अमेरिका में तो इस सिद्धान्त पर बहुत ही विश्वास किया जाता है। इस सिद्धान्त के सम्बन्ध में सिर्फ एक शंका है और वह यह है 'यदि मेरे पिछले जन्म थे तो मुझे उनकी याद क्यों नहीं है।"

पिछली स्मृतियां

एक फ्रेंच फिलास्फर बर्गसन ने कहा है 'अपने पिछले जन्म के सम्बन्ध में विचार द्वारा हमें बहुत कम याद रहता है परन्तु पुनर्जन्म का अधिकाश स्मरण हमारी इच्छाओं, क्रियाओं, स्वभावों ओर चेष्टाओं से होता रहता है। जिस प्रकार गुण और उसकाप्रकाश है उसी प्रकार इस के पीछे पिछली स्मृतियों का रिकार्ड भीहै। मनुष्य में जो आसाधारण गुण होते हैं वे पिछले जन्मों की स्मृति को जाहिर करते हैं।

पुनर्जन्म के सिद्धान्त के अलावा तात्कालिक मित्रता और शत्रुता की बात को अन्य किसी बात से नही समझाया जा सकता है। जब दो व्यक्ति मिलते हैं,और जैसा कि कहा जाता है, एक दूसरे से प्रेम करने लगजाते हैं तो गहरे प्रेम और त्याग का जो वे तत्काल जाहिर करते हैं क्या कारण हो सकता है ? 'इस प्रकार के प्रणय-भाव का कारण हमारी पिछले जन्म की स्मृतिया ही हैं। इसी प्रकार के घृणा और विरोधी भावों का कारण पिछले जन्म की शत्रुता और विरोध होता है। नैपोलियन को जब कि वह बहुत छोटा अफसर था सेना सचालन का बहुत अच्छा ज्ञान था और ३० वर्ष की अवस्था से पूर्व ही सेनापति के रुप में उसने युद्ध-कला के ज्ञान का आश्चर्यजनक परिचय दिया था। उस की इस प्रतिभा का कारण पैत्रिक न था, क्यों कि उसके खान्दान मे पहले कोई सैनिक न था। वैज्ञानिक साक्षी द्वारा भी यह बात सिद्ध नही है कि पूर्वजों द्वारा संगृहीत गुण हर अवस्था में बच्चों तक पहुंचें। नैपोलियन का इस जन्म मे प्रतिभाशाली योद्धा होना उसके पूर्व जन्म के संस्कार ही हो सकते हैं।

प्रसार कैसे हो ?

श्री चन्द्र गुप्त जी वेदालंकार

लेखक के विचारो तथा लेखके उद्धरणों से हम सर्वांश मे सहमत नही है फिर भी-लेख मे काफ़ी पठनीय सामग्री है इसी लिए हम इसे दे रहे है—

सम्पादक

ढाई हजार वर्ष पुरानी बात है कि महात्मा बुद्ध सारनाथ मे खड़े अपने पांच शिष्यों से कह रहे थे-"चरथ भिक्खवे चारिकं बहुजनहिताय बहुजन कुशलाय लोकानुकम्पाय अत्थाय हिताय देव-मनुस्सान। देसेथ भिक्खवे धम्मं आदिकल्याणं मज्झकल्याणं परियोसानकल्याणं सात्थ सव्यञ्जनं ब्रह्मचरियं पकासेथ" अर्थात् भिक्षुओ! अब तुम जाओ और बहुतो के कुशल के लिये तथा देवताओं और मनुष्यों को भलाई के लिये भ्रमण करो। तुम उस सिद्धान्त का प्रचार करो जो आदि मे उत्तम है, मध्य मे उत्तम है और अन्त मे उत्तम है। सम्पन्न, पूर्ण तथा पवित्र जीवन का प्रचार करो। तथागत का अपने शिष्यो को यही प्रथम उपदेश था। यही से भगवान् का धर्मचक्र प्रवर्त्तन प्रारम्भ होता है। अपनी शिक्षाओं का प्रचार करने के लिये बुद्ध से पूर्व किसी भी सुधारक ने अपने शिष्यो को इतनी प्रबल प्रेरणा न दी थी और नाही ससार की शिष्य-मण्डलियों मे से किसी ने अपने गुरु के उपदेश का इतनी दृढता से पालन किया जितना बौद्ध भिक्षुओंने। इन भिक्षुओंकी दृढ़ प्रतिज्ञा तथा अपूर्व उत्साहके सम्मुख मीलो ऊंचा बर्फ से लदा हुआ हिमाचल लज्जावनत हो गया। सैकड़ो मील लम्बी, सुनसान तथा ज्वालामयी मरुस्थलिया ठण्डी सडकें बन गई। प्रचण्डघोषकारी सागरोंकी तरल तरङ्गावली कोमल फूलो की सेज बन कर बिछ गई। ये लोग सोने-चान्दी की खानें ढूढने न निकलते थे, तेल के कुओं या चाय के बगीचों की भी इन्हे चाह न थी। अन्य राष्ट्रो को अपना दास बना कर उन पर शासन करने की उमग इनके मन मे एक क्षण को भी कभी न उठी थी। इनके सम्मुख तो एक ही उद्देश्य था और वह यह कि-प्राणिमात्र का कल्याण करना है। प्रेम, सेवा, दया अहिंसा और सत्य को लेकर वे एक के अनन्तर दूसरे देश मे बढते चले गये। वे जहा भी गये अपार

जब हम लाखों पीडित व्यक्तियो की साधारण जीवन दशा देखते है तो हमे मालूम होता है कि इन लोगो के लिए पुनर्जन्म का सिद्धान्त ही एक मात्र आश्वासन का कारण बन सकता है। क्योकि हम यह देखते है कि जो न्यूनताएँ इस जीवन मे उपस्थित है उनकी पूर्ति की आशा हमे दूसरे जन्म मे हो सकती है। साथ ही-पुनर्जन्म का सिद्धान्त हमारे लिए भावी उन्नति का एक विशाल क्षेत्र पैदा कर देता है जो कि इसी एक ही जन्म का मानने वालो की दृष्टि मे कदापि आ हो नहीं सकता।

जन समुदाय उनको शिक्षा के सम्मुख सिर झुकाता चला गया। तनिक सोचिये आज उत्तर तुर्किस्तान के बीच सौ मील लम्बी पहाड़ी पट्टी है। कोई पड़ाव नहीं, कोई रास्ता नहीं, किसी प्रकार का रहने-सहने, खाने-पीने का प्रबन्ध नहीं, पीठ पर सामान लाद कर लेजाना भी अत्यन्त दुष्कर है। आज यदि इस प्रदेश को नापने के लिये कहा जाए तो कितने मनुष्य ऐसे होंगे जो इस कार्य को करने के लिये तय्यार होंगे ? लेकिन जिन्होंने उस समय जब न मोटर थी, न रेल थी, न तार था, न वायुयान थे-कोई भी साधन न था इसे पार कर धर्म का सन्देश फैलाया था। उन्होंने कितना महान कार्य किया था इसका अनुमान लगा सकना कुछ कठिन नहीं है ? बौद्ध भिक्षुओं के आत्म त्याग का ही यह परिणाम था कि बुद्ध के परिनिर्वाण के छ सौ वर्षों के भीतर ही जापान, कोरिया, चीन, खोतन, बर्मा, स्याम, अनाम, कम्बोडिया, मलायाप्रायद्वीप, जावा, सुमात्रा बोर्नियो, और सलिबस तक बौद्ध धर्म प्रचण्ड अग्नि की भांति फैल गया '

यह चित्र है जिसे एक दिन आर्यसमाज ने अपना आदर्श बनाया था। प्रत्येक आर्य एक ऐसे दिन का स्वप्न लेता है जब मक्का और मदीने की बड़ी से बड़ी मस्जिद पर 'ओ३म्' की वैजयन्ती फहराती होगी। ऐसा ही स्वप्न अमरात्मा श्रद्धानन्द ने लिया था। उन्होंने कहा था-"मैं तो उस दिन को देखने का व्याकुल हो रहा हूं जब कि योरुप और अमेरिका के बड़े से बड़े पार्लियामैन्ट हाउस की ऊँची से ऊँची चोटी पर वैदिक पताका लहराती हो।"

परन्तु प्रश्न यह है कि बौद्धों ने अपना विशाल धर्म-साम्राज्य स्थापित कैसे किया ? क्या इसके आधार में बड़े बड़े शास्त्रार्थी महारथियों के कलेवर बिछे हुए हैं, जिस पर यह भवन खड़ा है ? नहीं, बिलकुल नहीं। बौद्धधर्म के सम्पूर्ण इतिहास में शास्त्रार्थों का महत्त्व बहुत कम रहा है। स्वय महात्मा बुद्ध ने महाकाश्यप के शास्त्रार्थ के पश्चात् कोई भी शास्त्रार्थ नहीं किया। उनकी शिक्षाओं का प्रभाव उपदेशों तथा उनके क्रियात्मक जीवन द्वारा आप से आप फैलता चला गया। चीन मे जब काश्यपमातङ्ग ने कन्फ्यूशस और ताऊधर्मी दोनों को परास्त कर दिया और चीनी सम्राट मिङ्ती ने बौद्धधर्म स्वीकार कर लिया, फिर वहा भी शास्त्रार्थ की आवश्यकता नहीं रही। तिब्बत में जब आचार्य पद्मसम्भव ने विधर्मियो को हरा दिया और तिब्बती सम्राट तान्-चङ्-गम्-पो ने बुद्ध की शरण ग्रहण की फिर वहा भी कोई शास्त्रार्थ नहीं हुआ। तदनन्तर मगोलों का समय आया। मगोलों की राजधानी कराकुरम मे कुबलेईखा के सभापतित्व मे जब 'नेमो' ने ताऊ-धर्मियों को पछाड़ दिया और ७०० ताऊधर्मियों ने सिर मुडाकर बौद्धमत स्वीकार कर लिया तथा कुबलेइखा ने यह कहते हुए बौद्धधर्म की दीक्षा ग्रहण की कि जिस प्रकार सब अंगुलिया हथेली से निकली हैं वैसे ही सब धर्म बौद्धधर्म से निकले हैं। इस घटना के पश्चात् मगोल साम्राज्य मे फिर कोई शास्त्रार्थ नहीं हुआ। बौद्धमत फैला और बिना शास्त्रार्थ के फैला। महात्मा बुद्ध ने

मगध, काशी, कोशल, कौशाम्बी, अवन्ती, शाक्य लिछवी, भग्ग, कोलिय, मोरिय, मल्ल, तथा अङ्ग के राजाओं और प्रजाओं को शास्त्रार्थों द्वारा अपना अनुगामी नहीं बनाया था। प्रत्युत अपने मधुर उपदेशों के द्वारा ही पूर्व देश के सम्पूर्ण राजाओं, यश जैसे समृद्ध नागरिकों को, अनाथ पिण्डक-से बड़े-बड़े व्यापारियों को, जीवक से वैद्यों को, शरीपुत्र और मौद्गलायन से महाविद्वानों को, महाप्रजापति गौतमी, भद्राकापिलानी और सामावती-सी रानियों तथा कुलीन देवियों को अपने उपदेशों तथा समयानुकूल शिक्षाओं द्वारा ही आकृष्ट किया था। बुद्ध के पश्चात सम्राट् अशोक ने बौद्धधर्म के प्रति विशेष उत्साह प्रदर्शित किया। उसने भी शास्त्रार्थों का आश्रय न लेकर सेवाव्रत को अपनाया। अशोक की कार्यप्रणाली का वर्णन उसके शिलालेख सहस्रों वर्षों पश्चात आज भी कर रहे हैं। उसने कुएं बनवाए, धर्मशालाएं खड़ी कीं, चिकित्सालय खोले, सड़कों पर पेड़ लगवाए, पशुहत्या बन्द की, दागना रोका, धर्म-यात्राएं कीं, जनता में धर्म के प्रति रुचि उत्पन्न करने के लिये कर्मचारी नियुक्त किये और इन सबसे बढ़कर उसने धर्म के लिये अपनी सम्पत्ति, अपना तन, अपना मन और अपने हृदय के टुकड़े राजकुमार और राजकुमारी तक दे डाले। एक बार प्रचारार्थ निकले हुए, दूर—लङ्का में बैठे अपने आंखों के तारों को उसने आयुभर फिर कभी देखा तक नहीं। ये कारण थे जिनसे बौद्धधर्म की दुन्दुभि मिश्र से लेकर सिंहल द्वीप तक बजने लगी। तृतीय महासभा की समाप्ति पर काश्मीर, गान्धार, हिमवन्त प्रदेश, बनवासि, अपरान्त, महिषमण्डल, सुवर्णभूमि और सिंहलद्वीप में जो प्रचारक मण्डल भेजे गये थे उन्होंने भी शास्त्रार्थ द्वारा प्रचार न किया था। दीपवंश और महावंश को पढ़ने से इसमें तनिक भी सन्देह नहीं रहता कि सभी प्रचारकों ने जो इन देशों में प्रचारार्थ भेजे गये अपनी अलौकिक शक्तियों तथा उपदेशामृत द्वारा देश के देश धर्म में दीक्षित कर लिये। इनमें से एक ने भी शास्त्रार्थ नहीं किया। कुशान सम्राट् कनिष्क ने मध्य एशिया तक बौद्धधर्म को फैलाया। उसने भी बिना शास्त्रार्थों के विंध्याचल से लेकर पामीर की पर्वतमाला के परे तक बुद्ध का सन्देश प्रचारित कर दिया। भिक्षुओं में परस्पर फूट पड़ी, विवाद उठे, झगड़े हुए, सम्प्रदायों का विकास भी हुआ, यहां तक कि एक समय ऐसा भी आया जब बौद्धसंघ निश्चितरूप से १८ सम्प्रदायों में बंट गया। उनके पृथक् पृथक दर्शन, साहित्य और सिद्धान्त भी चलने लगे। इतने पर भी बौद्धसंघ एक रहा। प्रत्येक देश में सब सम्प्रदाय साथ साथ चलते रहे। विहारों और पूजास्थलों में कोई भेद न था। संघारामों में सभी यात्रियों का समान आदर होता था। ह्वेन-त्साङ् लिखता है "यात्रियों का आदर सभी जगह बहुत होता है। उनसे उनके धर्म विचार आदि के विषय में कोई प्रश्न नहीं किया जाता। इसी नीति के कारण ही आज भी मनुष्यजाति का एक तिहाई भाग बुद्ध का उपासक बना हुआ है।"

आज आर्यसमाज को आवश्यकता है कि

विविध देशों में प्रचारार्थ प्रचारक भेजे जाएँ। जाने वाले योग्य व्यक्तियों का अभाव है। हर एक दूसरे के गले पर छुरी चलाना चाहता है। इस कार्य के लिये अपने को कोई आगे नहीं बढाता। सम्राट अशोक ने तो अपने पुत्र और पुत्री तक को परदेश भेज डाला था। चीनी दूत मण्डल की प्रार्थना पर काश्यप मातङ्ग, धर्मरक्ष तथा कुमार जीव स्वय चीन गये थे। निब्बती सम्राट् के निमंत्रण पर नालन्दा के आचार्य अतिशा पद्मसम्भव आदि स्वय जाते रहे। हिन्दू-धर्म के प्रतिनिधि बन कर विवेकानन्द स्वय अमेरिका गये। एक दिन आर्यसमाज के नेता भी इसी तरह मैदान मे उतरे थे। और बड़े बडे विद्वान अफ्रीका के विस्तृत मैदानों मे धर्म का सदेश लेकर पहुंचे थे। पर आज दशा दूसरी ही है। आज तो आर्यसमाज के विद्वान पारस्परिक झगड़ों की उलझन मे उलझे हुए हैं। वे इसे तिल ञ्जलि देकर प्रचारार्थ क्यो नहीं निकलजाते? प्रचार की तो बात दूर आज तो समाज प्रमाणवाद से चिपट रहा है। वह एक एक शब्द पर मरने लगा है। विचार स्वातन्त्र्य महापाप समझा जाता है। जरा जरा सी बात पर बडे बडे नेता निकाल दिय गये। यही कारण है कि समाज का क्षेत्र बहुत सकीर्ण होता जा रहा है। विद्वान लोग इसमे सम्मिलित होते हुए सकुचाते है। ऋषि दयानन्द ने तो अपने ग्रन्थ सत्यार्थप्रकाश मे स्पष्ट शब्दों मे विचार स्वातन्त्र्य को स्वीकार किया है फिर न जाने यह सकीर्णता कहा से घुस आई ? सत्य, अहिंसा आदि धर्म के तत्त्वो पर तो कोई विचार तक नही करता लेकिन सगठन के अवान्तर गौण भेदों को ही धर्म अधर्म का प्रश्न बना रक्खा है। दूसरी ओर बौद्धधर्म को देखिये। महात्मा बुद्धने विचारों में खुली छूट दे रक्खी थी। अगुत्तर निकाय मे कथा आती है—एक व्यक्ति तथागत के पास पहुंच कर कहने लगा २५० नियमों का पालन करने मे असमर्थ हूँ। इस पर तथागत ने कहा क्या तुम ३ शीलो का पालन कर सकते हो ? उत्तर मे आगन्तुक ने स्वीकृति दी। इसके अतिरिक्त बुद्ध ने देश तथा परिस्थितियो के अनुसार सीमान्त निवासियों, बनवासियों आदि को विशेष छूट दे रक्खी थी। ह्वेनत्साङ् अपने यात्रावृत्तान्त मे लिखता है कि वैशाली के भिक्षु कुछ नियमो का पालन नहीं करते। पूछने पर ज्ञात हुआ कि बुद्ध ने उन्हें इस की छूट दी थी। सब प्रकार से स्वतत्रता देने पर भी बौद्धधर्म की आत्मा का हनन न हुआ। धर्म की आत्मा वही रही, बाह्य आकार भी वही रहा, केवल समय तथा देश के अनुसार थोडा थोड़ा परिवर्तन आता रहा। इस का कारण बुद्ध का उपदेश था जो उन्होंने निर्वाण के समय आनन्द को दिया था। उन्हो ने कहा था "अत्तदीपा विहरथ अत्तसरणा अनञ्ञ सरणा धम्मदीपा धम्मसरणा अनञ्ञसरणा।

अर्थात् आनन्द ! आत्मा ही तुम्हारी ज्योति है, तुम्हारा प्रदर्शक है, आत्मा ही तुम्हारी शरण है इसके अतिरिक्त अन्य कोई वस्तु तुम्हारी सहायक नही। तुम धर्म की ज्योति मे चलो, धर्म की शरण मे रहो और किसी की नहीं। यदि आर्य-

सौर पञ्चांग

लेखक—
श्री पं० गङ्गाप्रसादजी चीफ जज टेहरी।

मेरी सम्मति है कि सौर पञ्चाङ्ग का प्रचार सारे भारतवर्ष मे और आर्य्य जगत मे किया जावे तो कई प्रकार से लाभदायक होगा। सौर वर्ष में अधिमास नहीं आता। प्रति वर्ष १२ मास ३६५ दिन होते हैं इसलिए उसका मिलान योरोप के कलेन्डर व पञ्चाङ्ग से सुगमता से होता रहता है।

यह ठीक है कि वर्तमान सौर पञ्चाङ्ग में लग भग २१ वा २२ दिनकी भूल है। विषुवत् सक्रान्ति जो इस समय लगभग १३ अप्रैल को होती है २३ मार्च को होनी चाहिए। विषुवत शब्द का अर्थ ही यह है कि जिस में रात और दिन समान हों, जैसा अमरकोष में भी लिखा है "यत्र रात्रिदिने-साम्य विषुव विषुवच्च तत्"। ऐसा लगभग २३ मार्च को होता है १३ अप्रैल को नहीं। इस भूल का कारण यह है कि कई सहस्र वर्षों से हमारे सौर पञ्चाङ्ग में संशोधन नहीं हुआ। यौरोप के कलेन्डर में जो उस समय Julian Calendar कहलाता था इसी तरह १० वा ११ दिन का फ़रक था। पोप ग्रेगरी ने सत्रहवी शताब्दी में इसका संशोधन किया और उसकी आज्ञा से जनवरी मास में १० वा ११ दिन छोड़ दिये गये थे और आगे के लिए ऐसा नियम किया गया जिससे फ़रक न बढ़ने पावे। उस संशोधित कलेन्डरको रोमन कैथोलिक मतानुयायी देशों ने उसी समय मान लिया। इंग्लैन्ड तथा अन्य प्रोटेसटेन्ट देशों ने कुछ समय पीछे माना। अब समस्त योरोप और अमरीका में संशोधित कलेन्डर जो ग्रेगोरियन कलेन्डर कहलाता है प्रचलित है।

हमारा सौर पञ्चाङ्ग भी उसी प्रकार सशोधित हो सकता है। एक वर्ष में २१ या २२ दिन छोड़ने होंगे। मैंने इस विषय में एक लेख कुछ वर्ष हुए लिखा था और इस विषय को अजमेर दयानन्द निर्वाण अर्द्ध शताब्दी के अवसर पर सार्वदेशिक सभा की ओर से धर्म्मार्य सभा में भी रखा था, सभा ने उस प्रस्ताव को स्वीकार कर के उसको

समाज आज इसे आदर्श बनाकर चले तो शीघ्र ही संसार का कल्याण हो सकता है। फिर हमारा वह स्वप्न पूर्ण हो सकता है जबकि सम्पूर्ण ससार आर्य्यसभ्यता का अनुयायी होगा। आर्य-समाज की आज भी आवश्यकता है। ससार में शान्ति स्थापना, अत्याचार दमन, भेदभाव तथा छूआछूत को मिटाने के लिये आर्य सस्कृति की आज भी जरुरत है। लेकिन उसके संदेश को संसार के कोने कोने में पहुँचाने के लिये योग्य कार्यकर्ताओं यथा उत्तम योजनाओं की आवश्यकता है। आशा है आर्य भाई मेरे विचारों पर उदारतापूर्वक विचार करेंगे।

———

भारतवर्ष के प्रमुख ज्योतिषियों के पास भेजा परन्तु फल कुछ न निकला।

मैंने अपने लेख की एक प्रति श्रीयुत महामना पूज्य मालवीय जी तथा सौर पञ्चाङ्ग काशी के प्रकाशक और ज्ञान मंडल प्रेस के स्वामी श्रीयुत बाबू शिवप्रसाद गुप्त जी के पास भी भेजी थी क्योंकि मेरा यह विचार था कि यदि पञ्चाङ्ग का संशोधन काशी व काशी विश्वविद्यालय से हो जावे तो सम्भव है कि सारी हिन्दू जनता उसको अपना लेवे। पूज्य मालवीय जी ने उत्तर में लिखा था कि वे इसके लिए यत्न करेंगे। इसके कुछ समय पीछे लगभग दो बरस हुए इन्दौर में अखिल-भारतवर्षीय ज्योतिर्विदों का सम्मेलन हुआ था जिसके सभापति महामना मालवीय जी हुए थे। कुछ ज्योतिर्विदों से जो उस सम्मेलन में गये थे मुझको ज्ञात हुआ कि पूज्य मालवीय जी ने सौर-पञ्चाग की पूर्वोक्त भूल को दूर कराने को उद्योग किया परन्तु उसमें सफलता न हुई। लगभग २०० उपस्थित ज्योतिषियों में से केवल १५ वा २० ने उक्त संशोधन का समर्थन किया शेष ने इस कारण से नहीं किया कि उससे फलित के अनुसार प्रचलित पर्व आदि में परिवर्तन होते थे।

ऐसी दशा में पूर्वोक्त संशोधन जिसमें किसी एक वर्ष के २१ वा २२ दिन छोड़ने होंगे सम्प्रति सम्भव नहीं मालूम होता तो भी मेरी दृढ़ सम्मति है कि सार्वदेशिक सभा और समस्त आर्यप्रातनिधि सभाओं को सौर पञ्चाङ्ग को अपनाना और फैलाना चाहिए। देशी सौर वर्ष की तिथियों में स्थान २ पर कुछ भेद पाये जाते हैं। प्रति वर्ष प्रत्येक मास में निश्चित दिन भी नहीं होते। परन्तु ज्ञान मंडल से प्रकाशित होने वाले "सौर पञ्चाङ्ग और "सौर रोजनामचे" में इस त्रुटि को दूर कर दिया गया है। उसमें प्रत्येक सौर मासके दिन नियत कर दिए गये हैं जो इस प्रकार हैं-मार्गशीर्ष और पौषके २५ दिन, कार्तिक, माघ, फाल्गुन और चैतके ३० दिन, आषाढ़ के ३२ दिन और शेष मास अर्थात बैसाख, ज्येष्ठ, सावन, भाद्रपद और आश्विन के ३१ दिन, चौथे वर्ष फाल्गुन मास भी ३१ दिन का होता है। मेरी सम्मति है कि यदि सार्वदेशिक आर्य्य प्रतिनिधि सभा ज्ञान मण्डल प्रेस के सौर पञ्चाङ्ग को स्वीकार करके अपने अधीन समस्त सभाओं और समाजों को भी उसके स्वीकार करने का आदेश व परामर्श देवे तो उत्तम होगा और इस समय जो भारतवर्ष मे अनेक पञ्चाङ्ग प्रचलित हैं और सौर पञ्चाङ्ग की तिथियों मे भी जो न्यूनाधिक भेद हैं उनके स्थान में एक पञ्चाङ्ग के प्रचार में सहायता मिलेगी जो कई प्रकार से देश के लिये लाभदायक है।

स्त्रियों की शिक्षा कैसी होनी चाहिए ?

रघुनाथप्रसाद पाठक

—※—

स्त्री-शिक्षा के सम्बन्ध में कई विचार प्रचलित हैं। एक विचार यह है कि स्त्रियों का यह काम नहीं है कि वे पढ़ना लिखना और हिसाब सीखें। उन्हें दक्षतापूर्वक गृहस्थ का सचालन करना चाहिये। खाना बनाना तथा बच्चों का पालन-पोषण करना उन्हें आना चाहिये। उन्हें सीना पिरोना भी आना चाहिये इससे अधिक और कुछ नहीं। यदि वे पढ़ना जानेंगी तो वे अपना वक्त नाविलों के पढ़ने में गुजारेंगी और घर का काम धन्धा न हो सकेगा। ना ही भोजन बनाने में उनका मन लगेगा। शिक्षित मनुष्यों की तरह शिक्षित स्त्रियों का भी स्वास्थ्य खराब होता है। सख्त मेहनत वे नहीं कर सकती हैं। प्रसव के समय उनकी मृत्यु संख्या बिना पढ़ी लिखी स्त्रियों की अपेक्षा अधिक होती है। शिक्षित स्त्रियां ही अधिक संख्या में नपेदिक इत्यादि बीमारियों की शिकार होती हैं। इस विचार की सम्यक् परीक्षा की जरूरत है तथापि हम विस्तार में न जाकर केवल इतना ही कह देना चाहते हैं कि यह स्वाग में सत्य और ठीक विचार नहीं है। स्त्रियों को शिक्षा प्राप्ति का उतना ही हक है जितना पुरुषों को और अब इस युग में स्त्रियों को बिल्कुल न पढ़ाये जाने की बात उपहासास्पद ही प्रतीत होती है। इस प्रकार के विचार कुछ उन लोगों के हैं जो रूढियों के गुलाम हैं या मानसिक दासता के कारण जिनकी विचार शक्ति कुण्ठित हुई हुई है और जिनकी दृष्टि में स्त्री पुरुष की दासी के अतिरिक्त और कुछ नहीं है और जिनका एक मात्र काम सेवा तथा बच्चे पैदा करना है। कुछ उन लोगों के भी है जो वर्तमान शिक्षा पद्धति से निराश तथा उसके दुष्परिणामों से भयभीत हुए हुए हैं यद्यपि वे स्त्रियों के पढ़ाए जाने तथा उनकी उन्नति के पक्षपाती हैं। यों कह सकते हैं कि लड़कियों की वर्तमान शिक्षा पद्धति से लोग इतने निराश हो गए हैं कि अब वे लड़कियों का बिना पढ़ा-लिखा होना पढ़े-लिखे होने से ज्यादा अच्छा समझने लग गए हैं। इसे हम वर्तमान शिक्षा प्रणाली की प्रतिक्रिया का नतीजा ही कह सकते हैं। इस विचारकी हमें कद्र करनी ही होगी और स्वीकार करना होगा कि वर्तमान लाइनोंपर स्त्रियों की शिक्षा, शिक्षाके उद्देश्यको ठीक उसी प्रकार पूरा नहीं कर रही है जिस प्रकार बच्चों की शिक्षा के उद्देश्य को। यह पद्धति उन विषयों की शिक्षा देती है जो उनके जीवन के लिए उपयुक्त नहीं होते हैं। पिछले दिनों प्रेस में एक विवाद छिड़ा था। सवाल किया गया था कि 'क्या ऐलजब्रा और ज्योमेटरी अच्छी पत्नियां बनाती हैं ?' किसी मनचले आलोचक ने यह

प्रश्न करके इस बात का उत्तर दिया था कि 'क्या ऐलजब्रा और ज्यौमेटरी अच्छे पति बनाती हैं ? इसमे सन्देह नहीं जो शिक्षा-पद्धति गृहस्थ संचालन की कला और ज्ञान के बलिदान पर विभिन्न कलाओं और विज्ञान मे दक्षता प्रदान कराती हो वह त्रुटिपूर्ण है। इस सिलमिले मे एक बड़ी मनोरञ्जक मज़ाक की जो हमने कहीं पढ़ी थी याद आती है—

'Papa, said a young girl to her father, 'Did you see my result? I have got honours in Philosophy and economics. Isn't it Capital?' 'Really' said the father 'And it would be grand if your prospective husband secures honours in cooking, sewing, knitting and child welfare.

'पिताजी ! क्या आपने मेरा इम्तिहान का नतीजा पढा ? फिलासफी और इकनामिक्स मे मैं मुमताज रही हूँ। क्या यह अच्छी सफलता नहीं है ? पिता ने कहा ' बेटी ! वस्तुत यह शानदार होगा यदि तुम्हारा होनेवाला पति खाना बनाने, सीने-पिरोने और बच्चों के पालन-पोषण मे मुमताज रहे।' स्पष्ट है यह शिक्षा-पद्धति त्रुटिपूर्ण है और एकदम अस्वाभाविक है। स्त्रियों के लिए न केवल अस्वाभाविक ही है वरन ज्यादा भयकर भी है।

जो शिक्षा स्त्रियों को स्नेहमयी माता, कुशल गृह देवी, ममतामयी बहिन, पति की सहचारिणी और अनुव्रता पत्नी तथा देश, धर्म और जाति के लिए उपयोगी बनाने में समर्थ हो वही शिक्षा शिक्षा कही जा सकती है।

आवश्यकता इस बात की है कि वर्तमान शिक्षा-पद्धति मे इस प्रकार का परिवर्तन किया जाय जिससे शिक्षा के उपर्युक्त उद्देश्य की पूर्ति हो। कांग्रेसी सरकारों को इस कार्य्य को पूर्ण करके देश की एक बडी सेवा करनी चाहिए।

महात्मा गान्धी जी से शुद्धि विषयक पत्र व्यवहार

[ले०—श्रीयुत के ज्ञानी, मद्रास]

—※—

शायद् पाठकों को ज्ञात होगा कि गत कुछ मासों से मद्रास में हिन्दू-मुस्लिम झगडा है। दुर्भाग्य से आर्य समाज-मद्रास भी इस लपेट में आगया है और इसका परिणाम यह हुआ है कि स्थानीय दो समाजें लगभग ४ मासों से बन्द पड़ी हैं। बहिरंग प्रचार रुक गया है। कुछ मुकद्दमे चल रहे हैं। नगर मे १४४ धारा लागू है। अस्तु।

इसी सम्बन्ध में १४ सितम्बर को मैं श्री सी राज गोपालाचारी जी के पास, जो इस समय मद्रास प्रान्त के "प्राइम-मिनिस्टर" हैं, भेंट के लिये गया। उन्होंने लगभग ४५ मिनटों तक बडे ध्यान से मेरी सब बातों को सुना और सब प्रकार की सुविधा देने की आशा दिलाई। केवल एक विषय पर उनका मतभेद था। उन्होंने कहा —

"आप मानते हैं कि आर्य समाज के शुद्धि-प्रचार से मुसलमान नाराज़ होते हैं? फिर आप इस कार्य को स्थगित क्यों नहीं कर देते ?" मैंने कहा —

'हमारा शुद्धि कार्य तो बहुत कुछ Defensive या स्व-रक्षात्मक है। यदि मुसलमान हिन्दुओं को धर्म भ्रष्ट न करें तो शुद्धि-कार्य की विशेष आवश्यकता ही न रहेगी।"

उन्होंने कहा —

"आखिर यहा (मद्रास प्रान्त में) मुसलमान हैं ही कितने ? मुश्किल से छः फी सदी। और हिन्दू ? लगभग ६० फी सदी। क्या हिन्दुओं को इतना घबडाने की जरूरत है ?"

मैंने कहा —

"आज से कुछ सदियां पूर्व पंजाब व बंगाल के हिन्दू भी ऐसा ही कहा करते थे। पर अब उन की क्या अवस्था है ? जरा, वहीं के हिन्दुओं से पूछ कर देखिये ?"

उन्होंने कहा —

"तुम मेरा मतलब नहीं समझे। तुम्हें जातीय दृष्टि कोण से इस विषय को देखना चाहिये। आखिर, परस्पर वैमनस्य पैदा करके तो देश उन्नति नहीं कर सकता ?"

मैंने कहा —

"जातीय दृष्टि से मैं निवेदन करूंगा कि आप एक राज्य-नियम बनादें कि सब मत-परिवर्तन" सिविल मैरिज" के समान किसी न्यायाधिकारी के सामने हुआ करें। मुझे आशा है कि आर्य समाज इस विषय मे सहमत हो जाएगा।"

उन्होंने कहा —

"मैंने शुद्धि सम्बन्धी अपने विचार तुम्हें कह दिये हैं। आगे तुम स्वय विचार सकते हो।"

मैंने कहा —

"यह प्रश्न केवल आर्य समाज का ही नहीं

सारे हिन्दू-समाज का है। अतएव मैं आप को इस विषय में अन्य उत्तर नहीं दे सकता। हा! मैं आपका विचार अपने लोगों के सामने अवश्य रखु गा तथा महात्मा गाधी जी से भी उचित पत्र-व्यवहार करूगा।"

१५ सितम्बर को मैने निम्न पत्र द्वारा महात्मा गाधी जी से इस विषय में प्रश्न किये जिनका उत्तर उन्होंने २५ सितम्बर के "चार प्रश्न" शीर्षक से 'हरिजन' मे दिया है।

मेरा पत्र

माननीय बापू जी!

मै लगभग १५ वर्षों से शुद्धि-कार्य कर रहा हूं। हजारों शुद्धिया मेरे द्वारा हुई हैं। यद्यपि मैं अपने तुच्छ अनुभव से यही मानता हू कि शुद्धि कार्य की हिन्दू समाज को अत्यन्त आवश्यकता है, तथापि देश में एक ऐसा पक्ष भी है जो इस कार्य को राष्ट्रीय दृष्टि से हानिकर समझता है। अत एव मेरी नम्र प्रार्थना है कि आप निम्न प्रश्नों पर प्रकाश डालने की कृपा करें। यदि आप उचित समझें तो "हरिजन" मे इन प्रश्नों का उत्तर प्रकाशित कर सकते हैं।

(१) उन हिन्दुओं को, जिन्होंने किसी भी कारण से एक बार इस्लाम व ईसाइयत मे प्रवेश कर लिया हो, और अब हार्दिक प्रायश्चित्त करके पुन हिन्दू-धर्म मे प्रविष्ट होना चाहते हो। क्या उनकी शुद्धि अभीष्ट है? उदाहरणार्थ आप अपने पुत्र "हरिलाल" को ही ले सकते हैं।

(२) जैसा आप को ज्ञात ही है, लाखों हरिजनों ने, विशेषत दक्षिण प्रान्त में, सामूहिक रूप से मत-परिवर्तन किया है। परन्तु ट्रावन्कोर की मन्दिर-घोषणा और आपके हरिजन-हितैषी कार्य ने उनकी आखें खोल दी हैं। वे अब पुन हिन्दू धर्म में आना चाहते हैं। आप इस विषय मे क्या सलाह देंगे?

(३) एक हिन्दू को विशेष प्रलोभन देकर विधर्मी बनाया गया। परन्तु पीछे से उसे "अन्यों" की वञ्चना पता चली। अब वह आकर हिन्दू-धर्म का द्वार खटखटाता है। क्या आप उसे अन्दर आने देंगे?"

(४) अनेक हिन्दू लड़के व लड़कियां मिश्नरियों व मुल्लाओं द्वारा अबोध अवस्था में ही विधर्मी बना लिये जाते हैं। परन्तु यदि समझ आने पर वे हिन्दू धर्म में फिर दाखिल होना चाहें तो क्या आप उन्हें कबूल करेंगे?"

महात्मा गान्धी का उत्तर

"यद्यपि ऐसे प्रश्नों का उत्तर मै पहिले भी कई बार दे चुका हूँ फिर भी दुहराने में कोई हर्ज नहीं। मेरी सम्मति मे उपरोक्त मत परिवर्तन वास्तविक नहीं। यदि एक व्यक्ति भय, लालच व बलात्कार से विधर्मी होता है तो उसे विधर्मी नहीं कहना चाहिये। सच्चा परिवर्तन तो हृदय से होता है और उसमे भगवान की प्रेरणा रहती है। भगवान् की पुकार मनुष्य की पुकार से सदैव भिन्न होती है। जिन दृष्टान्तों को ऊपर प्रश्नों मे लिया है वे सच्चे मत परिवर्तन के नहीं हैं। वे तो छल, प्रवचना और जाल हैं जिनके द्वारा

विधर्मी अपना उल्लू सीधा करते हैं। ऐसे मत-परिवर्तन को मैं जाली सिक्के की मिसाल दूंगा जिसे धोखेबाज लोग भोले लोगों में चला कर मौज लूटते हैं।"

"अतएव मैं उपरोक्त अवस्थाओं में निस्सन्देह उन सब हिन्दुओं को अपने मत में पुनः प्रविष्ट कर लूंगा जो हृदय से प्रायश्चित्त करते हैं। मैं तो उनके लिये शुद्धि-संस्कार की भी आवश्यकता नहीं समझता क्यों कि वे वस्तुतः हृदय से विधर्मी बने ही नहीं।'

❀ ❀ ❀

लेखक ने निम्न का एक और प्रश्न भी श्री म० गांधी जी से किया था जिसका उन्होंने किसी भी कारण से उत्तर देना उचित नहीं समझा। वह प्रश्न यों है —

"मैं मानता हूं कि आर्य समाज व हिन्दू सभा के शुद्धि-कार्यों ने मुसल्मानों को हिन्दुओं का विरोधी बनाया है। परन्तु क्या आप यह उचित समझते हैं कि हिन्दू तो शुद्धि करना बन्द कर दें और मुसल्मान व ईसाई मजे में हमारे हज़ारों लाखों भाइयों को प्रति वर्ष विधर्मी बनाते चले जाएं ?"

शंका समाधान

(क्रमागत)

Questions —

III YAJNAS

1 Please name the various kinds of Yajnas in vogue in your Province

2, Which of them, if any, do you consider essential for the present age and present conditions and how are they to be performed ?

3 Are the 'Pancha-Maha-Yajnas' performed properly now-a-days, even by those who are doing them ?

4 If not, how do you propose to rectify the defects ?

5 Should not animal sacrifice be abolished ? If the answer is in the affirmative, what steps do you propose to carry out the above object ?

Answers —

1 Out of the 5 Mahayajnas, Sandhya and Agnihotra should form the minimum for a household Other Yajnas besides Mahayajnas are extinct Yajnas in connection with Samskaras, and a few such as Purnamasi, Navasamvatsareshti, or shasyesti may be introduced.

2 Agnihotra should form the essential central basis of these Yajnas.

3 & 4 Sandhya (Brhmayajna) and Agnihotra these two are the most common. The other Yajnas have changed their forms according to the needs of the present society.

5. Animal sacrifices are now much less common and whatsoever they are, they should be abolished by creating public opinion against them, and if possible by law also

प्रश्न

१-अपने प्रान्त मे प्रचलित विविध प्रकार के यज्ञों के नाम बतलाएँ।

२-यदि कोई यज्ञ प्रचलित हों तो वर्तमान युग और वर्तमान अवस्थाओं के लिए उनमें से कौन २ आवश्यक हैं और उनके करने की क्या २ विधियां हैं ?

३-जो लोग आजकल पंचमहा यज्ञ करते हैं क्या वे भी उन्हें ठीक २ रीति से करते हैं ?

४–यदि नहीं करते है तो आपकी सम्मति मे त्रुटियों का निवारण किस प्रकार हो सकता है ?

५–क्या पशु-बलि बन्द नही होनी चाहिए ? यदि बन्द होनी चाहिए तो आपकी सम्मति मे क्या कार्यवाही की जानी चाहिए ?

उत्तर

१–पाचो महा यज्ञो का अनुष्ठान होना चाहिए और कम से कम संध्या और अग्निहोत्र गृहस्थ मे अवश्य होने चाहिएँ ।

२–इन यज्ञो का केन्द्रीय आधार अग्निहोत्र होना चाहिए ।

३, ४–संध्या और अग्निहोत्र ये दो बहुत प्रचलित है । वर्तमान सोसायटी की आवश्यकताओं के अनुसार दूसरे यज्ञों का रूप बदल गया है ।

५ पशु-बलि अब बहुत कम प्रचलित है और यदि कही २ है तो उसके विरुद्ध लोकमत पैदा करके उसे बन्द कर देना चाहिए । यदि सम्भव हो तो कानून द्वारा भी बन्द करा देनी चाहिए ।

विवाह

नैरोबी के एक सज्जन ने श्री स्वामी स्वतन्त्रानन्द जी मन्त्री धर्मार्य्य सभा से (विवाह) सम्बन्धी कतिपय शकाओं का समाधान प्राप्त किया है । शकाये तथा समाधान इस प्रकार हैं:—

प्रश्न —विधवा विवाह और सामान्य विवाह की विधियों मे कुछ भेद है या नहीं—यदि है तो क्या ? दूसरी बात यह भी लिखें कि विधवा विवाह की अवस्था मे दूध पीता बच्चा या छोटा बच्चा किस अवस्था तक माता के साथ रहना चाहिये या बच्चा माता के साथ ही रहना चाहिये ? कानूनी दृष्टि इस बारे मे क्या है ? गहने कपड़े का क्या फैसला होना चाहिये और विवाह लड़की के माता पिता को करना चाहिये या श्वशुर पक्ष को ? यदि श्वशुर पक्ष की सम्मति न हो तो विवाह हो सक्ता है वा नहीं ? यदि श्वशुर पक्ष की सम्मति है और माताकी नही है तो क्या स्थिति होगी और यदि दोनो की न हो लडकी की हो तो विवाह हो सक्ता है या नहीं ? इस अवस्था मे कन्या दान कौन करेगा ?

गोत्र क्या है ? अमुक गोत्रोत्पन्ना मे गोत्र के स्थान मे कौन सा गोत्र है—क्या सगोत्र विवाह निषिद्ध है—गोत्र शब्द पाणिनि मुनि का गोत्र है या उपजातियों का नाम है ।

क्या विवाह से पहिले समावर्तन सस्कार कराते हुये अलकरणमसि कह कर चूडा या कोई आभूषण पहिनाना अवैदिक है—समावर्तन सस्कार होना चाहिये वा नही ?

उत्तर –विधवा विवाह और सामान्य विवाह मे भेद है । एक विधि पहले छपी थी । उस कमेटी मे मै, रामदेवजी, ब्रह्मदत्तजी, नारायण स्वामीजी, आर्य मुनिजी थे । वह राजपाल से मिलेगी अथवा स्वामी धीरानन्द जी से पता लगजायगा । मेरी सम्मति मे यदि कई सतान हों तो पाणिग्रहण पर्याप्त है । यदि एक आध सतान हो, वह भी अल्पवयस्क हो तो कुछ करलेना चाहिये और यदि बिना सतान और युवती ही हो १६-२४ वर्ष तक तो विधि अधिक कर लेनी उचित होगी ।

(२) जब तक बालक माता का दूध पीवे माता के पास रहना चाहिये फिर न रहे। तीन वर्ष पर्याप्त होंगे।

(३) जो स्त्री धन है वह स्त्री ले अर्थात् जो माता, पिता भ्राता पति ने दिया है वह स्त्री का ही है जो श्वशुर ने दिया है वह भी थोडा हो तो स्त्री का है और यदि अधिक हो तो श्वशुर ले सकता है यह मब सामयिक बातें है जैसा उचित हो कर लेना चाहिये।

(४) जिस पक्ष की सम्मति हो वह विवाह कर दें। यदि दोनों की न हो और स्त्री चाहे तो अपने आप करले। प्रश्न कन्यादान का है। गाधर्व विवाह मे कन्यादान कोई नहीं करता है और इसे छोड दिया जाय।

(५) गोत्र वश ही है अन्येतु गोत्र वशमाहुं। जो उपम्यजातिया है यह भी कुछ काम देसकतीं हैं। विवाह मे माता की पाच और पिता की ७ पीढी के अन्दर विवाह न होना चाहिये।

(६) चूडा पहनाना आवश्यक नहीं, इच्छा पर है, चाहे पहन ले चाहे न पहने। जैसे स्नातक को भूषणादि का विधान सस्कार विधि मे है परन्तु आजकल कोई नहीं पहनता है।

सार्वदेशिक सभा के प्रचारकों का कार्य्य

कर्नाटक

अगस्त सन् ३७ के प्रचार तथा हरिजनोद्धार कार्य का संक्षिप्त विवरण

इस मास बंगलौर शहर छावनी तथा समीपस्थ ग्रामों मावह्ली गगम्मा, चेरी, शेषाद्रिपुर आदि मे प्रचार और दलितोद्धार कार्य करने के अतिरिक्त कंगेरी, शूले, टिप्टूर, कृष्णराज पुरम्, मैसूर इत्यादि मे शुद्धि, हरिजनोद्धारादि विषयक कार्य किया गया। २१ अगस्त से २८ ता० तक वेद-प्रचार सप्ताह मनाते हुए बंगलौर, कगेरी, शूले इत्यादि में स्ना० धर्मदेव विद्यावाचस्पति जी ने ५०० से अधिक हरिजन भाई बहिनों को गायत्री मंत्र दीक्षा दी। २१ अगस्त को समाज भवन (कैलासपाल्यम) मे श्रावणी व उपाकर्म मनाते हुए जिस मे हरिजन भाई बहिन भी बहुत बड़ी सख्या मे उपस्थित थे अन्यों के अतिरिक्त १० हरिजन बालकों का नियमपूर्वक उपनयन सस्कार हुआ। अनेक देवियों ने भी उस अवसर पर यज्ञोपवीत धारण किया। २२ ता० को कगेरी गुरुकुलाश्रम में वहा के अधिकारियों की प्रार्थना पर स्नातक जी ने यज्ञोपवीत और गायत्री मंत्र की व्याख्या करते हुए उपाकर्म (श्रावणी) की विधि करवाई। अमेरिकन् मिशन् के मि० कैथन इत्यादि सज्जन भी सभा में सम्मिलित हुए जिनको स्नातक जी ने "Daily Prayer of an Arya" 'The Significance of the Vedic Sanskaras", "Exposition of the Gayatri" "Voice of Arya Varta" आदि पुस्तके भेंट की। इधर हरिजनों के सुप्रसिद्ध नेता श्री स्वामी निश्चल प्रकाश जी (उपनाम श्री नारायण स्वामी पिल्ले भू० पू० Municipal Counciller बगलौर छावनी) ने अपनी षष्ठिपूर्ति (६० वें वर्ष की समाप्ति पर किये जाने वाले समारोह) के उपलक्ष मे हवन प्रार्थना उपदेशादि के लिये स्नातकजी से प्रार्थना की जिस के अनुसार २२ ता० को कगेरी से शूले जा कर हवन, प्रार्थना, उपदेश (लगभग २५० हरिजनों को गायत्री मंत्र दीक्षा सहित) के अतिरिक्त सार्वजनिक सभा मे जो 'षष्ठिपूर्ति' के सम्बन्ध मे सायंकाल की गई और जिसमे ६०० से अधिक उपस्थित हुए ईश्वर भक्ति' पर स्नातक जी ने भाषण दिया। यह समाचार किसी सज्जन के पत्र द्वारा जान कर कि २००, ३०० व्यक्ति टिप्टूर की तरफ ईसाई होने वाले हैं स्नातक जी तुरन्त वहा पहुचे और मतपरिवर्तन (Conversion) को रोकने का प्रबन्ध किया गया। शीघ्र ही बहुत सी शुद्धियों का प्रयत्न उधर किया जा रहा है। वहाके S A V नायडू नामक P W D contractor की जो १० वर्ष हुए ईसाई हो गया था ईसाई क्षेत्र में भाषणादि के कारण उधर सुप्रसिद्ध था स्नातक जी ने मैसूर आर्य समाज भवन मे १२ अगस्त को

शुद्धि कराई। उसकी अपनी इच्छानुसार उस सज्जन का नाम सत्यज्ञानानन्द रक्खा गया। उसी दिन श्रीमती प्रेस अम्मा नामक एक देवी की जो अध्यापिका का कार्य करती है और जिन के दादा ईसाई हो गये शुद्धि कराकर 'दयावतीदेवी' नाम रक्खा गया। शुद्धि संस्कार के पश्चात् वैदिक रीति से इन दोनो का विवाह सस्कार स्नातक जी ने व्याख्यान सहित करवाया जिस मे बडी सख्या मे मैसूर की देविया तथा सज्जन सम्मिलित थे। श्रीयुत सत्य ज्ञानानन्द ही अब अनेक शुद्धियो के लिये टिप्टूर की तरफ प्रयत्न कर रहे है। यह बडी प्रसन्नता की बात है कि हरिजन भाई बहिन वैदिक धर्म और आर्य समाज की ओर अधिकाधिक आकर्षित हो रहे है। उनके मान्य नेता भी समाज के प्रति प्रेम दिखाते हुए वैदिक सस्कारो को अपना रहे है। इस मास हरिजनो के सुप्रसिद्ध नेता श्री मुर्गेशम M R A M L C के सुपुत्र श्री गणेशन पिल्ले का विवाह सस्कार श्रीमती अमृत लक्ष्मी के साथ स्नातक जी ने १६ अगस्त को वैदिक रीति से व्याख्या सहित कैलासपाल्यम् मे कराया। इसका उपस्थित जनता पर ऐसा प्रभाव पडा कि श्रीयुत मुर्गेशम पिल्लेजी ने स्नातकजी को अत्यन्त हार्दिक धन्यवाद देते हुए सब को वैदिक सस्कार कराने की प्रबल प्रेरणा की जो वास्तविक दलितोद्धार का प्रधान साधन है। स्नातकजी द्वारा लिखित "The Significance of Vedic Sanskaras" के द्वारा जिसका कर्णाटक और तामिल भाषा मे अनुवाद भी तय्यार हो गया है, वैदिक सस्कारो की लोकप्रियता खूब बढ़ रही है। तामिल भाषा में अनुवाद सेन्टजोसेफ कालेज बगलौर छावनी के तामिल भाषा के प्रोफेसर चगलवरायन जी ने किया है। ये दोनो अनुवाद भी शीघ्र छपने वाले है। कर्णाटक अनुवाद 'हिन्दूधर्म' नामक मासिक पत्र के (जो कगेरी गुरुकुलाश्रम से प्रकाशित होता है और जिसम स्नातकजी पूर्ण सहयोग इस शर्त पर दे रहे है कि उसमे वैदिक सिद्धान्त विरुद्ध लेख न प्रकाशित होगे) अगस्त अङ्क मे श्रीयुत सुधाकरजी सिद्धान्त विशारद ने करके प्रकाशित किया है। स्थानीय पत्रो तथा उत्तर भारत के पत्रो के अतिरिक्त स्नातकजी ने इस मास ईसाइयो के कलकत्ता से प्रकाशित होने वाले "Epiphany" नामक साप्ताहिक पत्र मे जिसका वार्षिक चन्दा केवल ४ आ० है ईसाईमत पर समालोचना प्रश्न रूप मे भेजी जो उस पत्र के २१ और २८ अगस्त के अङ्को मे प्रकाशित हुई और जिसके अत्यन्त उपहासजनक उत्तर सम्पादक की ओर से दिये गये है। स्नातकजी ने उस पत्र मे पत्रव्यवहार को जारी रखने का निश्चय किया है।

कृष्णराजपुरम मे Seventh Day Advent Mission का एक 'Spicers College' नामक प्रसिद्ध ईसाई कालेज है जिसमे अधिकतर प्रचारको को तय्यार किया जाना है। इस कालेज मे कलकत्ता के रेवरेण्ड मुकर्जी बाइबल के प्रोफेसर हैं। उनसे ३१ अगस्त को लगभग ३ घण्टे तक स्नातकजी ने ईसाईमत की तर्क और विज्ञान-विरुद्धता तथा उसकी विशेषत: Old

Testament की ईश्वर विषयक कल्पना की निस्सारता पर चर्चा की। रेवरेण्ड मुकर्जी उनकी युक्तियों का कोई सन्तोषजनक उत्तर न दे सके। स्नातकजी ने उन्हे वैदिकधर्म विषयक अनेक पुस्तकें भेंट की। 'मिर्जा रहीमबेग' इत्यादि कुछ मुसल्मान सज्जनों के साथ स्नातकजी का वैदिक-धर्म, इस्लाम, वेद, आर्य समाज आदि धार्मिक विषयों पर १६ ता० को प्रेमपूर्वक सम्भाषण हुआ। २६ अगस्त को समाज भवन मे श्री कृष्णजयन्ती समारोह मनाने के अतिरिक्त इस अवसर पर स्नातकजी ने Yogi Raj Shri Krishna and 'Arya Samaj नामक ट्रैक्ट लिखकर प्रचारार्थ शिक्षित जनता मे वितरणार्थ आर्य समाज की ओर से प्रकाशित किया।

उल्लेखनीय अन्तर्जातीय विवाह

पाठक महोदय 'सार्वदेशिक" और "आर्य मित्र" आदि से गोगी विदनूर के रेवरेण्ड भद्रप्पा की सुपुत्री डा० भाग्यम्मा M B F R F P B, (Glasgow) की शुद्धि जो विजागपटेम मेडिकल कालेज मे असिस्टेन्ट प्रोफेसर और वहा के किंग-जार्ज हस्पताल मे लेडी असिस्टेन्ट सर्जन हैं) की प० धर्मदेव विद्यावाचस्पति द्वारा बंगलौर आर्य समाज (कैलास पाल्यम) मे १३ जून को कराई थी। शुद्धि का वृत्तान्त पढ़ चुके होंगे। गत १६ सितम्बर को उक्त देवी का आन्ध्र युनिवर्सिटी वाल्टेयर मे फिलासफी के प्रोफेसर डा० पुरुषोत्तम नायडू M A Ph D (London) के साथ विवाह संस्कार पत्थरपुर मे प० धर्मदेव जी ने वैदिक रीति से कराया। वर वधू ने विवाह संस्कार के समय शुद्ध खादी के वस्त्र धारण किये थे और प्रतिज्ञा मन्त्रों का उन्हो ने स्वयम् अर्थ-सहित पाठ किया। स्नातक जी ने अंग्रेजी मे विवाह संस्कार की विधियो तथा मुख्यमन्त्रों की व्याख्या की जिसका जनता पर बहुत ही अच्छा प्रभाव पड़ा। ईश्वर की कृपा से ये वैदिक संस्कार अच्छे लोकप्रिय हो रहे हैं। इसी मास स्नातक जी ने दो और विवाह संस्कार हैदराबाद मे कराये जिनमे सैकड़ो आर्य सज्जनों और देवियो के अतिरिक्त अनेक मुसलमान, ईसाई 'यूरोपियन' तथा हैदराबाद रियासत के बहुत से अधिकारी भी सम्मिलित हुए। वैदिक संस्कार को देख और उसकी व्याख्या को सुन कर सब बडे प्रसन्न हुए। ८ सितम्बर को होने वाले विवाह मे वर गुरुकुल कागडी के सुयोग्य स्नातक म० शिवप्रसाद जी आर्य के सुपुत्र प० सुरेशचन्द्रजी विद्यालङ्कार थे और वधु बेलगाम के सेठ बिहारीलालजी की सुपुत्री श्रीमती राजकुमारीजी स्नातिका कन्या-महाविद्यालय जालन्धर थी जो इस वर्ष पंजाब युनिवर्सिटी की 'विशारद' परीक्षा मे सर्व प्रथम निकली है। ११ सितम्बर को महात्मा शिवप्रसादजी आर्य की सुपुत्री श्रीमती सावित्री देवी का विवाह श्रीयुत वेली राम जी B. A के साथ हुआ। कन्या के अर्थ सहित शुद्ध वेद मन्त्र पाठ को सुनकर जनता पर विशेष प्रभाव पड़ा।

केरल

मौखिक प्रचार—वेल्लूर, कोयलोन, शुचीन्द्रम पारशाला, कन्या कुमारी इन स्थानो मे व्याख्यान

दिया। व्याख्यानों से लोग पुन धीरे २ सचेत होने लगे हैं।

इस के अतिरिक्त प्रचार और शुद्धि के सिलसिले में तोडपुला, कुत्ताटकुलम, नेयाटिवकरा, वेङ्गानूर, नगर कोइल आदि स्थानों की यात्रा करके लोगों स बातचीत की। विशेषतया पुलय जाति के नेता मि० अयकाली से मिला। बातें करने से मालूम हुआ कि लोगा का विधर्मी हो जाने का कारण धार्मिक पराधीनता (छुआछूत आदि) नहीं अपितु गरीबी ही है। इसलिए किसी ऐसी सस्था के द्वारा काम करें तो सफलता होगी जिसमे अध्ययन करके निकलने पर वे अपने पैरों पर खड़ा हो सकें। लोग आर्य समाज को हृदय से चाहते हैं। परन्तु परिस्थिति ही बाधा पहुँचाती है।

शुद्धि —इस महीने में २० ईसाइयों को शुद्ध करके हिन्दू बनाया।

लेख — "Daily Prayer of an Arya" का अनुवाद किया जा रहा है। आधे से अधिक हो चुका है।

नारायणदत्त

लंका

साधु शिव प्रसाद जी ने लगभग तमाम जुलाई मास में कोलम्बो (लंका) मे प्रचार कार्य्य किया। साधु जी 'मलायो महा सभा' के निमन्त्रण पर वहां गये थे। वहा उनके प्रचार का बहुत उत्तम प्रभाव रहा। बड़े२ प्रतिष्ठित, विद्वान और सम्मानित व्यक्तियों की बड़ी २ सभाओं में वैदिक धर्म्म के विभिन्न पहलुओं पर उनके कई व्याख्यान हुए। प्रसिद्ध बौद्ध संस्था बौद्ध मिशन विद्योदय कालेज में कोलम्बो के सर्वोच्च धर्म्माचार्य के निमन्त्रण पर वे पधारे और उनका व्याख्यान हुआ। नगर के बड़े २ संमान्य और धर्म्म प्रेमी सज्जनों ने प० जी को अपने यहां आमन्त्रित करके उनके साथ धर्म्म चर्चा की। कोलम्बो के लार्ड मेयर से भी उनकी भेंट कराई गई और उन्होंने लार्ड मेयर को आर्य्य समाज का परिचय दिया। कैंडी के भारतीय एजेन्ट ने पं० जी के 'वैदिक धर्म्म द्वारा विश्व शान्ति' लैक्चर में भाग लिया।

कोलम्बों में लगभग १०००० भारतीय हैं जिनमें से लगभग ४०००० मलाबारी हैं। दूसरे भारतीय मुसल्मान, ब्राह्मण, बंगाली, भाटिया, बोहरे, मराठे, पार्सी, हिन्दुस्तानी, खोजे इत्यादि हैं। अधिकांश लोग सिंहाली हैं जो कट्टर बौद्ध हैं। यद्यपि कोलम्बो बड़ा खर्चीला शहर है तो भी वहाँ वैदिक धर्म्म का अच्छा प्रचार हो सकता है।

श्री बा० शिवचन्द्र जी का दौरा

आर्य्य रक्षा समिति के सहायक मन्त्री श्री बा० शिवचन्द्र जी मध्य भारत के दुष्काल पीड़ित भीलों में सभा की ओर से सहायता कार्य्य करके देहली लौट आये हैं। उन्होंने अजमेर, रतलाम, उज्जैन, शाजापुर, झाबुआ, थांदला, दोहद, फ्रीगैंडगञ्ज, इन्दौर, नागपुर और दुर्ग की यात्राएँ कीं।

इस समय भीलों की अवस्था वैसी चिंतनीय नहीं है जैसी १—२ मास पूर्व थी चूँकि उधर काफी वर्षा हो चुकी है और शीघ्र फ़स्ल तय्यार हो जाएगी। बा० शिवचन्द्र जी की रिपोर्ट है कि भीलों मे स्थायी रूप से बैठकर प्रचार कार्य्य करने से ही कुछ फल

निकल सकता है। और यह बहुत ज़रूरी कार्य है। इस सम्बन्ध में उन्होंने सभा में एक विस्तृत स्कीम प्रस्तुत की है जिस पर सभा गंभीरता पूर्वक विचार कर रही है। यदि भीलों में काम करने वाले कार्य्य कर्त्ता धर्म्म भाव वाले बलवान और परिश्रमशील हों तो, भले ही भील लोग बहुत पिछड़े हुए हैं, उनमें जागृति पैदा की जा सकती है और उनकी हालत सुधारी जा सकती है। भीलों में शिक्षा तथा अन्य सुधार कार्य्य जो किया गया है उसका अच्छा परिणाम निकला है। इस समय इस प्रकार के कार्य्यों को विस्तृत करने की ज़रूरत है।

इस दौरे में बा० शिवचन्द्र जी ने शाजापुर और इन्दौर में आर्य्य वीर सेवा दलों की स्थापना की और कई सभाओं में जिनमें इन्दौर के मेडीकल स्कूल की जन्माष्टमी की सभा भी सम्मिलित है व्याख्यान दिए— अजमेर के झगड़े के सम्बन्ध में सभा के प्रतिनिधि के रूप में उन्होंने अजमेर की यात्रा की थी—उन्होंने अपनी रिपोर्ट सभामें भेज दी है। शाजापुर (ग्वालियर) आर्य्यसमाज के गत कीर्तन पर वहाँ कई सौ मुसलमानों ने हमला कर दिया था इसके सम्बन्ध मे आपने वहाँ के अधिकारियों से भेंट की।

पं० ज्ञानेन्द्र जी सिद्धान्त भूषण का कार्य्य

ता० १-८-३७ के दिन बीलीमोरा ज्ञान मन्दिर में 'ध्वजारोहण' उत्सव मनाया गया। भजनादि होने के बाद 'ध्वज का महत्व' पर एक मनोहर व्याख्यान दिया गया। युवकों की उपस्थिति अच्छी सख्यामें थी।

१ ८-३७ तक बालकों और युवकों का समय समय आना होता रहा। धर्म शिक्षा का और शंका समाधान का समय रखा गया था। प्रति दिन का कार्य यही रहा।

१० ८ ३७ को मरोली में A V पटवर्धन स्कूल में हेड मास्टर श्री केवल भाई की अध्यक्षता में "ईश्वर की सत्ता और उसका स्वरूप" पर व्याख्यान हुआ। शंका समाधान भी किया गया। उसके प्रभाव से प्रभावित होकर दूसरे व्याख्यान के लिये श्री केवल भाई ने कहा।

ता० ११-८ ३७ को 'ज्योतिष' विषय पर शंका समाधान रखा गया।

ता० १२-८ ३७ उपरोक्त हाई स्कूल मे 'रामायण और उसकी आवश्यकता' पर व्याख्यान हुआ।

ता० १४ ८-३७ और ता० १५-८-३७ को कड़ादे में अवतार, वेद, पुराण, मूर्तिपूजा, कंठी यज्ञोपवीत पर शंका समाधान हुआ।

ता० १६ ८-३७ को हरि स्कूल में श्री. डा रमणलाल की अध्यक्षता में 'पूर्व और पश्चिम का नैतिक धोरण' पर व्याख्यान हुआ। बाद मे शंका समाधान रखा गया।

ता० १८-८ ३७ को विद्यार्थियों की सभा हुई, चर्चा का विषय "विधवा विवाह होना चाहिए या नही ?" उस दिन का अध्यक्ष मुझे बनाया गया। चर्चा की समाप्ति पर मैंने विवाह का उद्देश्य बताया, गुण, कर्म और स्वभावानुसार विवाह होना चाहिए। योग्य उमर पर हो तो विधवा विवाह की आवश्यकता ही नहीं रहेगी। यदि कोई करे तो वे शूद्र हैं। आपत्ति काल में नियोग होना चाहिए। वर्तमान कलुषित परिस्थिति देखकर विधवा विवाह होता है। वह स्मार्त है वैदिक नहीं है।

ता० १५-८-३७ से १८ ८ ३७ तक हरिपुरा में प्रात. काल और सायंकाल को संध्या हवन होते रहे।

ता० १७-८-३७ को "भद्रं कर्णेभिः" मंत्र पर कथा की गई। उपस्थिति अच्छी थी।

ता० १८-८-३७ को "एकता में आर्य्य समाज का कार्य" विषय पर व्याख्यान हुआ। शंका समाधान रखा गया। लोगों में अच्छा प्रभाव पड़ा उपस्थिति अच्छी थी।

ता० २१-८-३७ को बीखीमोरा 'ज्ञान मन्दिर' में श्रावणी के उपलक्ष्य में एक सभा हुई। व्याख्यान का विषय 'यज्ञोपवीत की आवश्यकता' था। जनता की उपस्थिति अच्छी थी।

ता० २१-८-३७ को प्रातः काल के ५॥ बजे 'ज्ञान मन्दिर' से सरघस निकला। शहर के भिन्न भिन्न भाग मे फिरता हुआ ८॥ बजे 'ज्ञान मन्दिर' पर आया।

८। बजे यज्ञ किया गया तीन जिज्ञासुओं ने यज्ञोपवीत धारण किये।

सायंकाल सभा हुई व्याख्यान का विषय 'आदर्श कृष्ण' था।

यज्ञ भजनादि हाने के बाद व्याख्यान हुआ।

(गढ़वाल प्रचार)

आजकल शिल्पकार भाइयों की हालत इस प्रकार हो रही है कि पहिले इन लोगों ने अल्मोड़ा और गढ़वाल की एक शिल्पकार सभा बनाई थी। कुछ गढ़वाल के शुद्ध हुए आर्य भाई हैं, उनका उस सभा से मतभेद होने से, आर्य शिल्पकार नाम की अलग सभा खोल रखी है। इन लोगों ने दो चार स्थानों में सभा करके कोली लुहार, औजियों का एक खान पान करने का कार्य किया था। उसमें कुछ शुद्ध हुये भाई ता इसलिये सम्मिलित नहीं हुये कि जबतक यह लोग मास इत्यादि खाना नहीं छोड़ेंगे और न शुद्ध होंगे, तबतक इनके साथ खान पान नहीं कर सकते। उधर जिन थोड़े कोली लुहारों ने औजी भाइयों के साथ खान पान किया था उनकी बिरादरी ने उनका बहिष्कार कर रखा है। किसी २ भाई ने तो ऐसा करने के लिये दूसरे समय के लिये अपनी बरादरी को वचन दे दिया है कि ऐसा अब कभी नहीं करेंगे। जब इनको समझाने का परिश्रम किया कि औजियों के साथ खान पान करने मे कोई हानि नहीं है तो यह लोग कहते हैं कि हम तो सनातनी हैं, आप लोग हमको गिरा रहे हैं। अब यह लोग आर्य समाज का भी उपदेश नहीं सुनते हैं। संगठन के बदले शिल्पकार भाईयों में अनेक प्रकार का विरोध फैल रहा है। जो भाई इस प्रकार के कार्य करने वाले हैं जब उनसे निवेदन किया कि जिस आर्य्य समाज की कृपा से सबका उद्धार हो रहा है आपका और हमारा कर्त्तव्य है कि सब मिलकर आर्य समाज का प्रचार करेंगे, ऐसा करने से ब्राह्मण, राजपूत, कोली, लुहार इत्यादि का एक खान पान होता जा रहा है इससे ही सबका सच्चा संगठन बन सकता है। जिन ऋषि सिद्धान्तों से सबमे प्रकाश फैल रहा है उन्हीं सिद्धान्तों से आपकी जाति उठेगी। जब कोई भाई शुद्ध होने के लिये तैयार होते हैं, तो

उनको टाल देते हैं कि हमने पहले अपनी जाति का सगठन करना है जिससे हम डि० बोर्ड आदि से अपना हक ले सकेंगे। आर्य शिल्पकार सभा शिल्पकार सभा का विरोध समाचार पत्र मे तथा प्रस्ताव मे करती है और इसी प्रकार शिल्पकार सभा, आर्य शिल्पकार सभा का विरोध करती है।

अगस्त मास का विवरण

एक ग्राम मे पशुबलि होने वाली थी। प्रचारक ने वहा जाकर उन लोगो को उपदेश दिया जब हिंसा के विषय मे उनसे प्रश्न किये कि आप सनातन धर्म मे जीव हिंसा करना बता सकते हैं। परन्तु उन लोगो ने उत्तर देने के बदले ध्यान तक भी नही दिया है। देवो के पुजारियों से कहकर अपना कार्य आरम्भ किया, रात्रि का समय था हम भी उनसे आज्ञा लेकर उसी स्थान पर बैठ गये। लेख के अधिक होने से पूरा विवरण नही लिख रहे है परन्तु उनमे से एक बात सृष्टि उत्पत्ति के विषय पर लिखकर भेज रहे है। पुजारियो ने देवी की विरदावली गढवाली भाषा के गीतो मे आरम्भ की, इन्होने भागवतादि पुराणो से भी सृष्टि उत्पत्ति एक निराली ढग की गाई। प्रथम शक्ति रूप पार्वती के सिवाय कुछ नही था, जब पार्वती ने मन मे विचारा कि अकेले रहकर क्या करूँगी, तो प्रथम कलिया लुहार और उसकी स्त्री सोना लोहन उत्पन्न किये, कलिया लुहार पार्वती से हाथ जोड़कर कहने लगा मुझको क्या आज्ञा है। पार्वती ने आज्ञा दी कि सृष्टि पैदा करो, उसने प्रश्न किया किस तरह सृष्टि पैदा करूंगा, पार्वती ने एक बैल पैदा किया और कलिया लुहार से कहा इसको मारकर सीगो के झंडेसा बनाओ, और पैरो का हतोडा, आज्ञा पाकर कलिया लुहार ने ऐसा ही किया। फिर तीन खम्भे लोहे के बनाये उन खम्भो मे शूर्म, ऊर्म, कूर्म नाम के देवता पैदा करके बैठाये, इस प्रकार तो सृष्टि बनो है। पुन पार्वती सोचने लगी कि बिना पति के कैसे रहेगे, तो कुँडू और पूँडू नाम के दो नाग पैदा किये, इन दोनो से समुद्र मथने का काम किया गया है। समुद्र के मंथने से प्रथम इन्द्र, विष्णु, ब्रह्मादि देवता हुये, परन्तु पति बनना किसीने स्वीकार नही किया, सब यही कहते गये कि आपने हमको पैदा किया हम तो आपके पुत्रवत है। महादेवजी ने पति बनना स्वीकार किया है। इतने मे एक देवीजी नाचते २ पुरुषो के बीच दौडती हुई आई फिर पुरुषो ने भी नाचना शुरू किया। हम वहा से उठकर चले गये है। अपने मन मे उस परम पिता जगदीश्वर को बार २ धन्यवाद करता रहा कि जिसकी महान् कृपा मे ऋषि का आना हुआ नहीं तो इसी प्रकार जितने मनुष्य उतने ही पुराण बनते जाते, तब इस आर्यावर्त की क्या हालत होती, जब कि अठारह पुराण से ही आर्य जाति मे मतभेद हो रहा है। दूसरे दिन मेला हुआ जिसमे ४००० हजार मनुष्य इकट्ठे हुये थे, ब्राह्मण लोग इन जीवो को मुक्ति दिलाने के लिये पाठ कर रहे थे, जिस ग्राम मे यह मेला किया, यहा सब ब्राह्मण देवता ही

रहते हैं। इस मेले में भी आर्य समाज का प्रचार हुआ।

२—आर्य भाईयों के स्थानों पर जाकर वेद प्रचार के कार्य करने के लिये सब भाईयों को सगठन होने के लिये आर्य समाज में आने को कहा गया।

३—२१ तारीख से २८ तक वेद प्रचार सप्ताह कार्य किया गया जिसमें दश ग्रामों में जाकर ग्यारह स्थानों पर हवन यज्ञ हुआ। उन्हीं स्थानों मे आर्य जाति को वेदों के पठन पाठन का उपदेश किया गया। आर्य समाज के दो मेम्बर बनाये गए।

शुद्धि तथा रक्षा कार्य्य

—१७-६ ३७ को आर्य समाज कलम (निज़ामस्टेट) की तरफ़ से यवनो के पंजे से एक राजपूत परिवार की शुद्धि की गई। शुद्ध हुओं के नाम आनकी बाई, विठल सिंह, सुन्दरबाई, पांडुरंग, गोदाबाई, गङ्गाबाई, रामकृष्ण हैं।

—आर्य समाज समस्तीपुर ने एक ईसाई की शुद्धि की। यह महाशय पहले ब्राह्मण थे। कुछ समय पहले ईसाई हो गए थे।

—देहरादून मे एक हिन्दू पंजाबी जो कपड़े की दुकान करते थे उन्होने मरनेसे ३ घंटे पहिले इस्लाम धर्म स्वीकार किया। मुसलमानोंने उनका जलूस निकाला और उसके २० मनुष्यों को भी मुसलमान बनाना चाहा परन्तु आर्य समाज के उद्योग से इस परिवार की रक्षा हो गई। इसका श्रेय बा० नारायण जी को है।

—आर्य समाज पुंघली ने आर्य समाज सिसवा बाज़ार के उद्योग से एक जन्म के ईसाई की शुद्धि की। उपस्थिति लगभग ७०० के थी।

—आ० स० आँवला (बरेली) के उद्योग से एक जन्म के मुसल्मान की शुद्धि हुई। उसका नाम मुहम्मद से बदल कर मोहनलाल रक्खा गया।

—७ अगस्त को आ० स० गया द्वारा एक स्त्री की शुद्धि हुई जो कुछ दिन पूर्व मुसल्मान हो गई थी।

—आ० स० अजमेर में मि० एडवर्ड जौन डेविड और मिस ब्यू‌इयलारेन्स की शुद्धि १६ अगस्त को समारोह पूर्वक हुई।

विविध पत्र पत्रिकायें

आर्यो चेतो

श्री प्रो. शिवदत्त ज्ञानी एम ए 'आर्यो चेतो' शीर्षक लेख मे 'आर्य सेवक' मे आर्यो की वर्तमान व्यापक गिरावट के कारणों पर विचार करते हुए लिखते हैं:—

"निस्संकोच भावसे कहा जा सकता है आर्यों ने वैदिक सिद्धान्तो को आचरण में लाने का प्रयत्न नही किया। उन्होंने राजनैतिक वातावरण से प्रभावित होकर विचार और आचार को अलग २ ही रखना सीखा। उन्होने यह नहीं समझा कि जबतक विचार और आचार मे सामंजस्य स्थापित नहीं होता तब तक कोई भी स्थायी उन्नति अथवा विकास नही हो सकता। लोगो ने समझा कि केवल चार आने मासिक चन्दा दे समाज के रजिस्टर मे नाम लिखा कर साप्ताहिक अधिवेशनों मे उपस्थित हो जाने से ही सच्चे आर्य समाजी या 'दयानन्द के वीर सैनिक' बन सकते है। इस आत्म वंचना से प्रभावित होकर लोग समाज मे प्रविष्ट होने लगे। वहाँ आकर पद के लिये, अधिकार के लिए या किसी और स्थान के लिए झगड़ने लगे।"

आगे इस स्थिति के भ कर परिणाम की ओर वे निम्न शब्दों मे इशारा करते हैं —

"यदि यही स्थिति रही तो वह समय दूर नही जब आर्य समाज इस हिन्दू धर्म का एक कुंठित सम्प्रदाय मात्र रह जायगा जिसमें नाना प्रकारके रोगोत्पादक कीटाणु भी उत्पन्न हो जायेगे।"

———

साहित्य समीक्षा तथा प्राप्ति-स्वीकार

इस शीर्षक में केवल उन्हीं पुस्तको इत्यादि की समालोचना कीजाती है जो समालोचनाके योग्यसमझी जाती हैं। इसका निर्णय कि कौन पुस्तक समालोचना के योग्य है कौन नहीं है सम्पादकीय विभाग करता है। यदि हमारे इस नियम के अनुसार किन्ही भाइयो को निराशा हो तो वे इसके लिए कृपया हमें क्षमा करेंगे। प्रत्येक प्रकार के प्राप्त साहित्य की प्राप्ति स्वीकार इस स्तम्भ मे करनेका प्रयत्न किया जाता है। समालोचनार्थ पुस्तको की २ प्रतिया आनी चाहिये।

सम्पादक

समीक्षा

(१)

बालकोपयोगी धर्म्म शिक्षा

लेखक—ज्ञानेन्द्र जी मू० –)।।।

मिलने का पत —

ज्ञानमन्दिर बीलीमोरा B B & C I R१

प० ज्ञानेन्द्र जी सिद्धान्तभूषण लिखित बालो पयोगी धर्म शिक्षा जो गुजराती भाषा और गुजराती लिपि म है प्राप्त हुई। यह पुस्तक बालको क लिए अत्यन्त उपयोगी है। आर्य समाज की जानने योग्य अनक बातें इसमे आ गई है। सध्या, हवन स्वस्तिवाचन शान्तिप्रकरण भी इसमे है। यह पुस्तक कन्या पाठशालाओ और बालक पाठशालाओं मे लगने योग्य है। जिन आर्य समाजियोंके बालक सरकारी स्कूलों मे पढते हैं उनको भी यह अवश्य पढाई जानी चाहिये।

(२)

मूर्तिपूजा रहस्य

मिलने का पता—

ज्ञानमन्दिर बीलीमोरा B B & C I R१.

मूल्य)। १।) सैकडा

इस पुस्तक मे मूर्ति पूजा पर युक्ति युक्त विचार किया गया है और स्मृति तथा श्रुति के आधार पर भी विचार किया है। पूजा प्रेमियो के पढ़ने योग्य है।

वैदिक धर्म्म की सार्वभौमता

मूल्य ।=)

मिलने का पता—

ज्ञानमन्दिर बीलीमोरा B B & C I R१.

इस पुस्तक मे तुलनात्मक विचार किया गया है। इस लिए यह अधिक उपयोगी हो गई है। पहले प्रकरण मे धर्म का स्वरूप, दूसरे मे साम्य भाव, तीसरे मे विश्वव्यापी प्रेम, चौथे मे सर्वाङ्गीण उन्नति, पाचवे मे विज्ञानकी भूमिका पर प्रकाश डाला गया है इनसे ही विषयों का पूर्ण परिचय हो जाता है। इसमे लेखक महोदय न श्रुतिस्मृति विद्वानो और प्रतिष्ठित सज्जनो के प्रमाणों से अपने पक्ष को सिद्ध किया है। हमारी सम्मतिमे प्रत्येक धर्म प्रेमी पुरुष को जिसे गुजराती भाषा आती हो इसे पढना चाहिए। इस पुस्तक लिखने पर हम लेखक को बधाई देते है।

स्वतन्त्रानन्द

Gems of Vedas

प्रकाशक—शारदा मन्दिर लिमिटेड नई सड़क देहली

मूल्य -)॥

यह पुस्तक वेद की चुनी हुई छोटी २ बहुमूल्य शिक्षाओ का संग्रह है। इसमे ईश्वर देश, व्यक्तिगत और सामाजिक उत्थान सम्बन्धी विविध विषयों का समावेश किया गया है। ये शिक्षायें कण्ठाग्र किए जाने योग्य हैं। पुस्तक न केवल अंग्रेजी जानने वालो के लिए ही वरन हिन्दी जानने वाले स्त्री पुरुष या बच्चे सब के लिए समान रूप से उपयोगी है। पुस्तक अधिक से अधिक मात्रा मे प्रचारित किए जाने योग्य है।

—

प्राप्ति-स्वीकार

बालधर्म बोध (२ भाग)

लेखक—श्री विश्वम्भरसहाय प्रेमी, प्रेमी प्रेस मेरठ मूल्य —) प्रत्येक का।

जीवन विज्ञान (आयुर्वेदीय मासिक-पत्र)

विशुद्धानन्द सरस्वती मारवाडी हस्पताल का मुख पत्र वार्षिक मूल्य २॥)

११८ एमहर्स्ट स्ट्रीट कलकत्ता,

आर्य समाज मद्रास द्वारा प्रकाशित

सस्ता आर्य-साहित्य (अंग्रेजी में)

Light of Truth श्री स्वामी दयानन्द-सरस्वती कृत सत्यार्थ प्रकाश का यह अंग्रेजी अनुवाद है। इसकी भाषा शुद्ध व सुन्दर है। भावों के विषय में इतना कहना पर्याप्त है कि इस अकेली पुस्तक ने जितनों को आर्य बनाया है उतना अन्य साधनों ने नहीं।

ग्लेज़ पेपर, कैलिको की मजबूत जिल्द २)
अजिल्द १॥।

Fountainhead of Religion इस पुस्तक के विद्वान लेखक श्री गंगाप्रसाद जी चीफ जज, टिहरी ने पुष्कल प्रमाणों द्वारा वैदिक धर्म का समस्त धर्मों का मूल-स्रोत सिद्ध किया है। इस पुस्तक के अनेक भाषाओं में अनुवाद हो चुके हैं – केवल अंग्रेजी में ही कई संस्करण छप कर हाथों हाथ बिक चुके हैं।

फेदरवेट पेपर, सुन्दर छपाई। अजिल्द ॥।) सजिल्द १)।

Ten Principles of Aryasamaj गुरुकुल-कांगड़ी के भूतपूर्व आचार्य श्री चमूपति एम ए ने इस पुस्तक में आर्यसमाज के दस नियमों की विस्तृत, वैज्ञानिक व्याख्या की है।

पृष्ठ संख्या १६० । मूल्य ।=) मात्र।

Arya Philosophy अजमेर-अर्धशताब्दी पर दिये गए अंग्रेजी व्याख्यानों का यह संग्रह है। देश तथा विदेश दोनों में प्रचार का अत्युत्तम साधन है। इसकी भूमिका श्री आचार्य रामदेव जी ने लिखी है। मूल्य ।=) मात्र

Vedic Caste System and Panchama Problem यह समयोपयोगी ट्रैक्ट श्री पं० केशवदेव जी ज्ञानी, मद्रास ने लिखा है। इसमें युक्ति-प्रमाण द्वारा आर्य समाज के पक्ष की पुष्टि की गई है। मूल्य =)

The outlines of Aryasamaj लेखक श्री पं० केशवदेव जी ज्ञानी, मद्रास। इसमें आर्य समाज के सिद्धान्तों का संक्षिप्त परिचय है। ४र्थ संस्करण। मूल्य –)

Sayings of Swami Dayanand इसमें ईश्वर, वेद, वर्ण, आश्रम, शिक्षा, राजनीति आदि विषयों पर श्री स्वामी दयानन्द सरस्वती जी के वचनों का संग्रह है। मूल्य –)

Hinduism Vs Xinity श्री पण्डित केशवदेव जी ज्ञानी ने इस पुस्तिका में हिन्दू-धर्म तथा ईसाईयत का मुकाबिला किया है। शुद्धि प्रचार के लिए उपयोगी है। मूल्य –)

Hinduism Vs Islam ले० [illegible] देव जी ज्ञानी। इसमें हिन्दू धर्म [illegible] सज्जनों के मुकाबिला है। शिक्षित मुसलमानों [illegible] योग्य है। मूल्य –)

पता –
श्री मंत्री, आर्य समाज
१७०, चाइना बाज़ार, मद्रास

लेख-सूची

केन्द्रीय अनाथालय, रावी रोड, लाहौर की आवश्यकताएं

(ले० ला० बोसाराम रिटायर्ड स्टोर कीपर N W R)

(१) इस समय इस अनाथालय मे १७५ बालक बालिकाएं है और शीत ऋतु आरहा है। उनके लिये गरम वस्त्र, रजाई, तुलाई, और दरिया की आवश्यकता है। दानी सज्जन जहां अपने बालको के लिये वस्त्र बनवाएगे वहां इन बालको का भी अवश्य ध्यान रखें।

(२) वस्त्रो के अतिरिक्त भोजन के लिये घृतादि की आवश्यकता है दानी सज्जन घृत भेजें अथवा उसके लिये दान देकर कृतार्थ करें।

(३) अनाथालय का व्यय १३००) मासिक है वह दानी महाशयो की कृपासे पूरा होगा इसलिये प्रत्येक नर नारी दान देकर इस व्यय को पूरा करें।

(४) इस अनाथालय के प्रबन्ध के विषय मे यह लिखना पर्याप्त होगा कि सरकार ने जो भगाए गए बालक पकड़े थे जिनके सबधियो का पता नही लगा वह सब बालक इसी अनाथालय मे रखे है।

(५) अनाथालय के बालक कभी बाहर मांगने के लिए नही भेजे जाते हैं। उनके पढ़ाने के लिये स्कूल भी है जो सरकार से स्वीकृत है।

(६) इसके अधिकारी इस समय निम्न सज्जन हैं —

प्रधान श्री स्वामी स्वतन्त्रानन्द जी

उप प्रधान प० विश्वम्भरनाथ जो उप प्रधान आर्य प्रतिनिधि सभा पजाब

[illegible] शास्त्री मलतानी लाहौर

जो M B, B S

बी० ए०

[illegible] भी सज्जन अपनी शक्त्यानुसार कुछ न कुछ दान देकर

सभा [illegible] क भागी बनें।

ॐ

सार्वदेशिक

* सार्वदेशिक-आर्य-प्रतिनिधि सभा देहली का मासिक मुख-पत्र *

वर्ष ११ | कार्तिक १९९४ | नवम्बर १९३७ ई०] | [दयानन्दाब्द ११३ | अङ्क ९

❀ वेद की शिक्षाएँ ❀

ओ३म् क्रतो स्मर । Yaju. 40—15

हे कर्मशील मनुष्य ! तू ओ३म्, का स्मरण कर।

O Man of action! Meditate on Om—thy Lord, Creator and Protector.

स ओतः प्रोतश्च विभूः प्रजासु । Yaju. 32—8

वह व्यापक प्रभु सब प्रजाओं मे ओत प्रोत है ।

The Universal Lord is All-Pervading He is present everywhere

'Gems of Wisdom'

—:०:—

सम्पादकीय

दीपावली आई और गई

दीपावली का उत्सव भारतवर्ष में बड़े चाव और उत्साह से मनाया जाता है। लोग इसके आगमन की प्रतीक्षा करते हैं। इस त्योहार को मनाने के लिए सजावट के सभी सामान जुटाते हैं। घरों को साफ सुथरा बनाते हैं। नये बही खाते खोलते हैं। दीपावली की रात्रि को प्रकाश और प्रसन्नता का समुद्र उमड़ता दीखता है।

आर्य समाज के लिए दीपावली का महत्व और भी बढ गया है। हिन्दु त्योहार होनेके कारण तथा भगवान रामचन्द्र जी के उपलक्ष में मनाया जाने के कारण, पहले से ही त्योहार कुछ कम महत्त्व का नहीं था, परन्तु भगवान दयानन्द का निर्वाण दिवस होने से तो आर्य समाजियों के लिए यह दिन एक गम्भीर सन्देश को लाने वाला बन गया है।

दीपावली के दिन हम लोग प्रति वर्ष अपने आचार्य भगवान् दयानन्दका निर्वाण उत्सव मनाते हैं। समाज मन्दिरों अथवा विशाल मण्डपो मे एकत्रित होते हैं। ऋषि के गुणो का बखान होता है। उसके जीवन की बडी बड़ी घटनाओं का उल्लेख करके जनता का उनके उपकारो की याद दिलाई जाती है। महर्षि का दिव्य-जीवन भारत के लिए एक महान् विभूति है। उस जीवन के पाठ से बाल-वृद्धों, नर-नारियों सभो को लाभ पहुच सकता है। जिस प्रकार एक विशाल पर्वत के सामने खड़े होकर हम अपनी क्षुद्रता को थोडे समय के लिए भूल जाते हैं, ठीक उसी प्रकार दयानन्द जीवन को सुन कर हम अपने भीतर एक प्रकार का उल्लास, उभार तथा उत्थान अनुभव करते हैं। इस देश की, वर्तमान समय में, जो भी प्रगति दृष्टिगोचर हो रही है, उसका मूल कारण यदि ढू ढा जावे तो वह किसी न किसी रूप में आचार्य दयानन्द की शिक्षा मे ही मिलेगा। यदि यह कहा जावे कि दयानन्द इस युग के प्रवर्तक हुए हैं तो इसमे जरा भी अत्युक्ति न होगी।

परन्तु एक बात यह है जिस का जिकर किये बिना हम नही रह सकते। दीपावली के उत्सव पर जब निर्वाणोत्सव मनाते समय हम ऋषि के गुणों का चिन्तन करते हैं ता अनायास ही यह प्रश्न हमारे हृदय मे उत्पन्न हो जाता हैं कि दयानन्द जैसे आचार्य को पाकर, जिसकी प्रशसा आज सारा ससार मुक्त कठ से कर रहा है, हम उसके मिशन को क्यों सफलता पूर्वक सर्वत्र फैला नहीं सके ? ईसामसीह कोई बडे विद्वान् न थे परन्तु उन्होंने चद लकड़हारों और मछली पकडने वालों को इकट्ठा करके, उनके द्वारा अपने मिशन को बडी सफलता से चहुँओर फैलाया। महात्मा बुद्ध ने सीधी सादी शिक्षा का आश्रय लेकर अपना मिशन ससार भर में फैला दिया। यहीं तक नही, हजरत मुहम्मद जैसे अनपढ व्यक्ति ने भी जितनी सफलता से अपनी शिक्षा का प्रसार किया उस का स्मरण करके हम चकित हो जाते हैं। परन्तु दयानन्द का मिशन जिस धीमो और मंद गति से चल रहा है उस का ध्यान करके सिवाय निराशा के और कुछ नही सूझता। यह क्यों ?

इस का क्या कारण है ?

हमें तो यही सूझता है कि योग्य आचार्य को योग्य शिष्य अभी तक प्राप्त नहीं हुए। हम मानते हैं कि आर्यसमाज में लगन से कार्य करने वाले व्यक्ति मौजूद हैं और थोडी बहुत प्रगति जो आर्यसमाज मे दीखती है, यह सब उनकी ही तत्परता का फल स्वरूप है। परन्तु दयानन्द का मिशन इतना महान् है कि उसके चलाने और फैलाने के लिये साधारण तत्परता से काम न चलेगा। हम मे अनेक मिशनरी उत्पन्न होने चाहिये जो अपने घरबार को छोड कर, सुखों को लात मार कर बौद्ध भिक्षुओं या ईसाई मिशनरियों के समान वर्षों तक अन्य देशों मे बैठकर उस मिशन का प्रचार करें। हमारी सभा-सोसाइटियों को ऐसी परिस्थिति उत्पन्न करनी चाहिये जिससे ऐसे व्यक्ति पैदा हो सकें जो भगवान दयानन्द के मिशन को सर्वत्र फैलाने का बीडा उठावें।

यदि दीपावली के दिन हम सब अपने आप से यह प्रश्न पूछें कि भगवान दयानन्द के मिशन को फैलाने मे हम व्यक्तिरूप कहां तक सहायक हो रहे हैं और यदि उसका उत्तर संतोषजनक हो तो दीपावली का उत्सव हमारे लिये प्रसन्नता का देने वाला हो सकता है अन्यथा नहीं।

आर्यसमाज का भविष्य किस प्रकार उज्वल हो सकता है

श्री महात्मा नारायण स्वामी जी महाराज का अभी हाल में एक लेख आर्य्य पत्रों मे छपा है। उसमें उन्होंने वे उपाय लिखे हैं जिनसे आर्य्यसमाज अपना भविष्य उज्ज्वल कर सकता है। वे उपाय निम्न प्रकार हैं —

(१) आर्यसमाज के अन्तर्गत संस्थाओं का पृथक ट्रस्ट बना दिया जाय और वही ट्रस्ट कमेटी संस्थाओं का प्रबंध करे। आर्यसमाज की अन्तरंग सभा केवल प्रचार का काम करे जिसमें मौखिक और लेखबद्ध दोनों प्रकार के प्रचार शामिल हैं।

नोट—ट्रस्ट इस प्रकार बनाया जा सकता है जिससे आर्यसमाज के अधिकार तो संस्था से पृथक् न हों किन्तु प्रबंध अवश्य पृथक् होता रहे।

(२) आर्यसमाजों में आमतौर से निर्वाचन की प्रथा बंद करदी जावे। प्रत्येक समाज का निर्वाचन ३ आदमियों की एक उपसभा कर दिया करे जिस उपसभा में आर्य प्रतिनिधि सभा का एक प्रतिनिधि एक समाज का और तीसरा एक विद्वान् उपदेशक या सन्यासी हो।

(३) प्रान्तिक और सार्वदेशिक सभाओं मे केवल प्रधान का निर्वाचन हुआ करे। बाकी मन्त्री मण्डल आदि को प्रधान स्वयं बनाया करे।

(४) आर्य सभासद ठीक ठीक उपनियमों के अनुकूल बनाये जाया करें उनकी संख्या चाहे कितनी ही न्यून क्यों न हो जावे।

(५) आर्यसमाज के मन्दिरों का गौरव बढ़ाने के लिये उनमें बारात आदि का ठहराना बंद कर दिया जाय। उनमें नियम पूर्वक प्रतिदिन या प्रति दूसरे दिन कथा, स्वाध्याय और सिद्धान्तों का विवेचन हुआ करे।

(६) आर्यों मे पारस्परिक सहभोज और विवाह की प्रथा गुण कर्मानुसार जारी की जावे।

(७) परिवारो मे आर्य जीवन के लाने का पूरा पूरा प्रबन्ध किया जावे।

और भी कुछ बातें हो सकती हैं, सम्प्रति विचार विनिमय और कार्य प्रारम्भ करने के लिये यह काफी है।

ईरान में पर्दे का अभाव

"ईरान और अफगानिस्तान के दर्शक को इन दोनों देशों में जो बड़ा भेद दृष्टिगोचर होता है वह यह है कि ईरान मे पर्दे का नाम निशान नहीं है। स्त्रिया यूरोपीय वेश मे तमाम ईरान में घूमती फिरती हैं मानो किसी यूरोपीय नगर मे घूम रही हैं। लड़के और लड़कियो की शिक्षा के लिए शिक्षा सस्थाओं का जाल बिछा हुआ है। लड़कों और लड़कियो की प्रारभिक शिक्षा साथ २ होती है।" इस प्रकार के विचार मध्य प्रदेश के शिक्षा विभाग के डा० डॉ० एम० डो० सूफी, एम ए, डी लिट ने कलकत्ता के एक प्रस प्रतिनिधि पर प्रगट किए हैं। डाक्टर महोदय ने शिक्षा सम्बन्धी ससार यात्रा की है। ईरान की देवियों को पर्दे से मुक्ति मिल गई है और लड़कों और लड़कियों की शिक्षा के लिए वहां पूरी २ व्यवस्था है यह बात प्रशंसनीय है। परन्तु ईरान की स्त्रियां यूरोपीय कपड़े क्यों पहनती हैं? क्या उनकी अपनी जातीय पोशाक नहीं है? यदि नहीं है तो वे कोई सुन्दर और सलीकेदार पूर्वीय पोशाक नियत कर सकती हैं?

——

शिक्षा-कान्फरेंस

मारवाड़ी शिक्षा-मडल की रजत जयंती की संरक्षता में, गत् २२ और २३ अक्तूबर को, वर्धा में शिक्षा-कान्फरेन्स का अधिवेशन हुआ। पहले दिन की कार्यवाही के बाद गांधी जी के तैयार किये हुए नीचे लिखे मूल प्रस्तावा पर अपनी राय ज़ाहिर करने के लिये कान्फरेंस खुद-ब खुद एक कमेटी में परिणत हो गई :—

१ शिक्षा की वर्तमान पद्धति किसी भी तरह देश की आवश्यकताओं की पूर्ति नहीं कर सकती। उच्च शिक्षा की तमाम शाखाओं में अंग्रेजी भाषा को माध्यम बना देने के कारण, उसने उच्च शिक्षा पाये हुए मुट्ठी भर लोगा तथा अपढ़ जनसमुदाय के बीच एक स्थायी दीवार-सी खड़ी कर दी है। इसकी वजह से जनसाधारण तक छन छनकर ज्ञान के जाने मे बड़ी रुकावट पड़ गई है। अंग्रेजी को इस तरह अत्यधिक महत्व दे देने के कारण शिक्षित लोगों पर इतना भार पड़ गया कि प्रत्यक्ष जीवन के लिए उनकी मानसिक शक्तियां पंगु हो गई हैं और वे अपने ही देश मे विदेशियो की भाति बेगाने बन गये हैं। धन्धों के शिक्षण के अभाव मे शिक्षितों को उत्पादक काम के सर्वथा अयोग्य बना दिया है और शारीरिक दृष्टि से भी उनका बड़ा नुकसान किया है। प्राथमिक शिक्षा पर आज जो खर्च हो रहा है वह बिलकुल निरर्थक है। क्योंकि जो कुछ भी सिखाया जाता है उसे पढ़ने वाले बहुत जल्दी भूल जाते हैं और शहरों तथा गांवों की दृष्टि से उनका दो कौड़ी का भी मूल्य नहीं है। वर्तमान शिक्षा पद्धति से जो कुछ भी लाभ होता है उससे देश का प्रधान कर दाता तो वञ्चित

ही रहता है। उसके बच्चों के पल्ले तकरीबन कुछ नहीं आता।

२ प्राथमिक शिक्षा का पाठ्यक्रम कम से कम सात साल का हो। इसमे बच्चों को इतना सामान्य ज्ञान मिल जाना चाहिये जो उन्हें साधारणतया मैट्रिक तक की शिक्षा मे मिल जाता है। इसमे अ ग्रेज़ी नहीं रहेगी। उसकी जगह कोई अच्छा सा धंधा सिखाया जाय।

३ इसलिए लड़कों और लड़कियों का सर्वतोमुखी विकास हो, सारी शिक्षा जहाँ तक हो सके एक ऐसे धंधे द्वारा दी जानी चाहिए, जिसमे कुछ उपार्जन भी हो सके। इसे यों भी कह सकते हैं कि इस धंधे द्वारा दो हेतु सिद्ध होने चाहिएँ—एक तो विद्यार्थी उस धंधे की उपज और अपने परिश्रम से अपनी पढ़ाई का ख़र्चा अदा कर सके, और साथ ही, स्कूल में सीखे हुए इस धंधे द्वारा उस लड़के या लड़की में उन सभी गुणों और शक्तियों का पूर्ण विकास हो जाय, जो एक पुरुष या स्त्री के लिए आवश्यक हैं।

पाठशाला की ज़मीन, इमारतें और दूसरे ज़रूरी सामान का खर्च विद्यार्थी के परिश्रम से निकालने की कल्पना नहीं की गई।

कपास, रेशम और ऊन की चुनाई से लेकर सफ़ाई (कपास की) धुलाई, पिंजाई, कताई, रंगाई, मॉड लगाना, ताना लगाना, दुसूती करना, डिजाइन (नमूने) बनाना तथा बुनाई, कसीदा काढ़ना, सिलाई आदि तमाम क्रियाएँ, कागज़ बनाना, कागज़ काटना, जिल्दसाज़ी, अलमारी फरनीचर वग़ैरा तैयार करना, खिलौने बनाना, गुड़ बनाना, इत्यादि ऐसे निश्चित धंधे हैं जिन्हे कि आसानी से सीखा जा सकता है और जिनके करने के लिए बहुत बड़ी पू जी की भी ज़रूरत नहीं होती।

इस प्रकार की प्राथमिक शिक्षा से लड़के और लड़कियाँ इस लायक हो जायँ कि वे अपनी रोज़ी कमा सकें। इसके लिऐ यह ज़रूरी है कि जिस धन्धे की शिक्षा उन्हें दी गई हो उसमे राज्य उन्हे काम दे। अथवा राज्य द्वारा मुक़र्रर की गई क़ीमतो पर सरकार उनकी बनाई हुई चीज़ों को ख़रीद लिया करे।

४ उच्च शिक्षा को ख़ानगी प्रयत्नों और राष्ट्र की आवश्यकता पर छोड़ दिया जाय। इनमें कई प्रकार के उद्योग और उनसे सम्बन्ध रखने वाली कलाए, साहित्य शास्त्रादि तथा सगीत, चित्रकला आदि शामिल समझे जायें।

विश्व विद्यालय केवल परीक्षा लेने वाली संस्थाएं रहें और उसके अनेक विभागो के लिए पाठ्यक्रम तैयार करें और उन्हे स्वीकृति दे। किसी भी विषय की शिक्षा देनें वाला तब तक एक भी स्कूल नही खुलेगा- जबतक कि वह इसके लिए अपने विषयसे सम्बन्ध रखने वाले विश्व विद्यालय से मजूरी हासिल नहीं कर लेगा। विश्व विद्यालय खोलने की इजाज़त किसी भी ऐसी सुयोग्य और प्रामाणिक संस्था को उदारतापूर्वक दी जा सकती है, जिसके सदस्यो की योग्यता और प्रमाणिकता के विषय में कोई सन्देह न हो। हां यह सब को बता दिया जाय कि राज्य पर उसका ज़रा भी खर्च नही पड़ना चाहिए, सिवा इसके कि वह केवल एक केन्द्रीय शिक्षा-विभाग का ख़र्च उठायगा।"

दूसरे दिन, कमेटी जिन निश्चयों पर पहुँची उनक

परिषद् के सामने रखा गया, उनपर बहस हुई, और अन्त को उन्हें स्वीकार कर लिया गया। कान्फ्रेंस में जो प्रस्ताव पास हुये वे यह हैं।

(१) इस कान्फ्रेंस की राय में देशके सब बच्चो के लिए सात बरस की मुफ्त और अनिवार्य शिक्षा का इन्तजाम होना चाहिए।

(२) शिक्षा का माध्यम मातृभाषा होना चाहिए।

(३) यह कान्फ्रेंस महात्मा गान्धी की इस तजवीज का अनुमोदन करती है कि इस तमाम समय में शिक्षा का मध्यबिन्दु किसी किस्म की दस्तकारी होना चाहिए, जिससे कुछ लाभ हो सके, और बच्चों में जो अच्छे गुण पैदा करना हैं और उनको जो शिक्षा दीक्षा (तरबियत) देना है वह जहां तक हो सके इसी केन्द्रीय दस्तकारी से सम्बन्ध रखती हो और इस दस्तकारी का चुनाव बच्चों की रुचि और योग्यता का ध्यान रख कर किया जाय।

(४) यह कान्फ्रेंस आशा करती है कि इस तरीके से धीरे धीरे अध्यापकों के वेतन का खर्च निकल आयगा।

एक प्रवासी आर्य्य भाई का वियोग!

अपने एक सम्वाददाता के पत्रसे यह जान कर हमे अत्यन्त दुःख हुआ कि ट्रीनीडाड के प्रसिद्ध आर्य्य श्रीयुत सेठ पन्नालाल जी अब इस संसार में नहीं हैं। श्री पन्नालाल जी को श्री पण्डित अयोध्या प्रसाद जी ने आर्य समाज मे दीक्षित किया था। आर्यसमाज से उन्हें बहुत प्रेम था। ट्रीनीडाड में तथा दक्षिण अमेरिका के उपनिवेशों में आर्य समाज को वे एक शक्ति के रूप में देखने का स्वप्न रखते थे और तन, मन, धन,से उसके लिये यत्नवान थे। सचमुच उनकी मृत्यु ट्रीनाडाड में आर्यसमाज की प्रगति के लिए एक बड़ा धक्का है। गत वर्ष सेठ पन्नालालजी के व्यक्तिगत सम्पर्क में आनेका हमे देहली में जब कि वे भारत यात्रा के लिए आये थे सौभाग्य प्राप्त हुआ था। उनके सरल और सात्विक व्यक्तित्व तथा आर्य समाज के प्रति उनके अटूट प्रेम से हम बड़े प्रभावित हुए थे। उन जैसे लक्षाधीश की सहज सरलता, विनयशालता और श्रद्धा देखते ही बनती थी। धर्मशाल दानियो में विनय, निष्काम भावना, श्रद्धा इत्यादि जो गुण और विशेषताएँ होनी चाहिए वे उनमें देख पड़ती थीं।

श्री सेठ जी अपने पीछे बहुत से मित्र तथा भरा-पुरा परिवार छोड़ गए हैं। इस महान दुःख में हम उनकी धर्मशीला पत्नी तथा परिवार के अन्य सदस्यो के प्रति अपनी हार्दिक समवेदना प्रकट करते हैं और दिवगत आत्मा की सद्गति के लिए परमात्मा से प्रार्थना करते हैं।

ऋषि दयानन्द का प्रभाव

ले०—श्री पं० चन्द्रभानु सिद्धान्त भूषण
आर्यसमाज हनुमान रोड नई देहली

ऋषिवर दयानन्द जहा अनेक गुणों के धनी थे वहा वे एक प्रभावशाली व्यक्तित्व के भी मालिक थे। ऋषिनिर्वाणोत्सव के उपलक्ष मे सार्वदेशिक के पाठकों को उनके विविध प्रकार के प्रभावों की प्रभा का आभास कराने के लिये उनके विशाल जीवन की कुछ घटनाओं का उल्लेख किया जाता है.--

विद्या का प्रभाव

महर्षि विद्या के समुद्र थे, उनका पाण्डित्य अगाध था। अनेक पण्डित उनसे शास्त्रार्थ की ताव न लाकर ईर्ष्या करते थे तथा जन साधारण मे उनके सम्बन्ध मे इधर उधर की बाते उडाने लगते थे। सवत् १६२५ वि० स्थान फरुखाबाद का जिक्र है कि वहा पर एक सखरिया धुरन्धर पण्डित आया, उसको वहा एक पण्डित ने कहा कि बहुत लोग दयानन्द को ईसाइयों का मनुष्य कहते हैं। चलो, किसी, समय उसके पास पहुंचे और इस बात का पूरा पता लगायें। वे दोनों गुप्त रीति से रात के दो बजे स्वामी जी के पास पहुंचे। ऋषि उस समय आसन लगाये बैठे थे। शिष्टाचार के पश्चात— सरयूपारी पण्डित ने स्वामी जी से अनेक श्रौत, स्मार्त और दार्शनिक प्रश्न पूछे। उनका उत्तर पाकर वह परम तृप्त होगया और चलते समय चरण स्पर्श करके कहने लगा, भगवन्! हमने सुना तो यह था कि आप कपटवेषी प्रच्छन्न ईसाई हैं परन्तु दर्शनों से पता लगा कि आप एक धर्मावतार हैं और विद्या के पारावार हैं। अगले दिन उस ब्राह्मणवर्य्य ने सर्व साधारण को कहना आरम्भ कर दिया कि श्री दयानन्द जी ऐसा दूसरा पण्डित भारत भर में नहीं हैं। उन्होंने मुझे ऐसे शास्त्रीय रहस्य बताये हैं कि जो मैंने पहले कभी नहीं सुने थे। उनका कथन सर्वांश मे सत्य है।

वार्तालाप का प्रभाव

स्वामी जी जहां विद्या मे निपुण थे वहा वे वर्तालाप में भी बडे पटु थे, वे बडे २ उद्दण्ड और उद्धत पुरुषों को अपनी वाणी के जादू से सीधा कर दिया करते थे। विद्या की राशि काशी मे सवत् १६२६ की एक घटना है कि वहा एक रामस्वामी मिश्र, महा महोपाध्याय निवास करता था। वह युवावस्था के प्रभाव से स्वामी जी के लिए बहुत ऊंच नीच वचन बोला करता था। उसे गर्व था कि यदि मै एक बार भी स्वामी दयानन्द से बात चीत करूं तो उनसे प्रतिमा पूजन आदि का खण्डन छुडवा कर उन्हें सीधा करदूं। वह महाराज के पास आता इसलिये नहीं था कि उन का मुख देख लेने से पातक लग जाएगा। यह सोचकर कि अन्धेरे मे दयानन्द का मुख देखे बिना भी उसे सीधा किया जासकता है वह एक दिन रात के समय स्वामी जी के पास आया

और कहने लगा "तेरे जैसे पतित पुरुष के साथ मै देववाणी मे बोलना पाप समझता हूँ इसलिये देशभाषा मे बात-चीत होगी, परन्तु पहले तुम्हे मेरी एक शर्त्त माननी पड़ेगी।"

स्वामी जी ने हँसकर कहा, "आप मुझे संस्कृत भाषा बोलने से रोकते है परन्तु संस्कृत भाषा के शब्द तो बोलने देंगे? अच्छा, यही सही, अब आप अपनी शर्त्त कहिये।"

उसने कहा "मै अपने साथ एक छुरी लेता आया हूँ। वह दोनों के बीच रक्खी जायगी। जो शास्त्रार्थ मे हार जायगा उसकी इससे नाक काट ली जायगी।"

स्वामी जी ने हँसते हुए कहा, "पण्डित जी! एक शर्त्त मेरी भी मान लीजिये। वह यह कि एक चाकू भी पास रख लिया जाय। जो हम मे से हार जाय उससे उसकी जीभ काट ली जाय। क्यो कि नाक तो इन बातों मे निर्दोष है। वाद विवाद मे जो कुछ अनर्थ होता है वह जीभ द्वारा ही होता है। कोई आध घड़ी तक स्वामी जी ने उसके साथ वार्त्तालाप किया इस से वह इतना प्रभावित हुआ कि फिर आगे से सभ्यता और सरलता से बर्त्ताव करने लगा।

व्यक्तिगत प्रभाव

इस छोटे से लेख में ऋषि के अन्य प्रभावा की चर्चा न करके केवल उनके व्यक्तिगत प्रभाव की एक घटना और लिखी जाती है क्योंकि एक आदर्श प्रभावशाली महान् आत्माके लिये जहा उस की विद्या और व्यवहारकी बातों को परखना पड़ता है वहा सबसे बढ़कर उसके व्यक्तिगत प्रभाव की झाकी भी देखनी पडती है, इस कसौटी पर भी ऋषि दयानन्द पूरे उतरते है। सन् १८७८ ई० स्थान हरिद्वार की बात है कि एक दिन एक २० वर्ष का नवयुवक जो अमृतसर का रहने वाला था श्री स्वामी जी की सेवा में उपस्थित हुआ और कहने लगा कि मै आर्यसमाज अमृतसर का सभा सद् था परन्तु मुझे वहा के आर्यसमाजियों ने आर्यसमाज की सभासदी से निकाल दिया है। स्वामी जी ने पूछा कि आपको किस अपराध पर बहिष्कृत किया गया? उसने उत्तर दिया कि मुझ पर पुस्तकें चुराने का दोष आरोपित किया गया था। इस पर स्वामीजी ने जरा गंभीर होकर कहा कि सच सच कहना तुमने पुस्तकें चुराई थी या नहीं? ऋषि दयानन्द की यह बात सुनकर वह सकपका गया, उसकी गर्दन नीची होगई, वह भूमि कुरेदने लगा परन्तु थोड़ी ही देर मे ऋषिदयानन्द के तेजस्वी मुख-मण्डल ने उस पर बिजली का असर किया, वह अपने को छिपा नहीं सका और कहने लगा—महाराज! यह दोष मुझ से हुआ अवश्य है। मुझे इसका हार्दिक पश्चात्ताप है, मै आप से प्रार्थना करता हूं कि मुझे फिर से आर्य समाज मे शरण दी जावे। स्वामी जी ने यह देखकर कि यह अपने किये पर हृदयसे लज्जित है उसका अपराध क्षमा कर दिया और ला० रामशरणदास जी रईस मेरठ से कह दिया कि आर्यसमाज अमृतसर को लिख दो कि इसका अपराध हमने क्षमा करदिया है, इसे पुन आर्यसमाज मे प्रविष्ट कर लें।

———

शान्ति पाठ

श्री बा० पूर्णचन्द्रजी बी० ए०
एल० एल० बी एडवोकेट

आर्यसमाज के प्रत्येक धार्मिक कार्य के अन्त में शान्ति पाठ पढने की प्रथा है। बहुधा यह शान्ति पाठ रस्म की अदायगी के रूप म पढा जाता है। जहा तक हम ने देखा है, आर्यसमाज के अतिरिक्त दूसरे मतो मे इस प्रकार शान्ति पाठ नहीं होता। हमे गभीरता से यह विचार करना है कि शान्ति पाठ से वास्तविक क्या अभिप्राय है और इसके पढने स क्या प्रयोजन है? शान्ति पाठ मे हम ईश्वर से याचना करते है कि हे ईश्वर? आपकी कृपा से यह देवलोक, अन्तरिक्ष यह पृथ्वी ओषधि और वनस्पति जल और अग्नि शान्ति प्रदान करने वाली है। प्रश्न यह है कि क्या इन सब शक्तियो मे अथवा भौतिक पदार्थो मे अशान्ति भरी हुई हे जो हमको इनके द्वारा शान्ति प्राप्त करने की प्रार्थना करने की आवश्यक्ता हुई। दूसरा प्रश्न यह ह कि क्या शान्ति या अशान्ति इन शक्तिया मे हे? या उसका केन्द्र कही और हे? इस केन्द्र के समझ लने से हमारे लिए शान्ति पाठ का अभिप्राय समझ लेना सरल हो जायगा। जिस प्रकार ईश्वर प्रार्थना और उपासना की अन्य विधियो का सम्बन्ध हमारे क्रियात्मक जीवन से है, इसी प्रकार शान्ति पाठ का भी। शान्ति पाठ पढते ही हमारे हृदय के अन्दर कुछ विशेष भाव आने च हिए और उन भावो का प्रभाव हमारे धार्मिक और क्रियात्मक जीवन पर पडना चाहिये।

शान्ति या अशान्ति हमारे मानसिक भावो का परिणाम ह। हमारा ससार के पदार्थों व दैनिक शक्तियो स भोक्ता व भोग का सम्बन्ध है ईश्वर की प्रदत्त यह दैविक व आदि भौतिक शक्तिया हमारे सुख के लिए है और उनका उद्देश्य हमारे लाभ पहुचाने के लिए है। प न्तु हम अपनी कल्पनाओ व विचारो से, इन शक्तियों से अपनी स्वार्थ सिद्धि करना चाहते है, और स्वार्थ सिद्धि की भावना उत्पन्न होते ही यही सुख के साधन हमारे दुःख साधना हो जाते है। हम अपने मन्तव्य को एक उर्दू के कवि के शब्दो मे प्रकट करेंगे।

"जीने न देगी आँखे, तेरी, बेवफा मुझे।
इन खिड़कियो स झाँक रही है कजा मुझे॥

यह कवि महाशय अपने प्रेमी की आँखो की शिकायत करते है। पहल तो कवि ने किसी से अनुचित प्रेम की वासना उत्पन्न की और फिर उसे अपने आधीन करना चाहा, जिससे वह प्रेम करते है, वह अनुचित पराधीनता क्यो स्वीकार करे। और इस पर कवि महाशय बेवफाई का दोष आरोपण करते है। और दूसरे की निरपराध आँखो स आप को इतनी अशान्ति हो रही है, कि आपको मौत के स्वप्न दीखते है। जीते जी

मौत याद आती है। बहुत सम्भव है कि जिसकी आंखो से कवि के अन्दर इस प्रकार अशान्ति उत्पन्न हुई, उस बेचारे को खबर भी न हो। हम ससार में बहुधा एक चीज को देखते है, और उस से अनुचित मोह करने लगते है, किसी दूसरे को देखकर अकारण रुष्ट हो जाते है, चाहे अनुचित क्रोध हो चाहे उचित मोह फल दोनो का अशान्ति है। शान्ति पाठ करते समय इस लिए हमको अपनी मानसिक भावनाए और जीवन के व्यवहारो पर दृष्टि रखनी चाहिए। हमारा लक्ष्य यह होना चाहिए कि यदि हम अशान्ति से बच कर शान्ति प्राप्त करना चाहते है, नो हमारे हृदय और मस्तिष्क के विचार इस योग्य होना चाहिए। जब मै यह देखता हू कि समाज के साप्ताहिक अधिवेशन के पश्चात् या किसी संस्कार के अन्त मे लोग एक दम खड़े होकर जल्दी जल्दी शान्ति-पाठ करते जाते है और जूता पहनने की ओर उनकी दृष्टि होती ह, तो मुझे बडा दु ख आश्चय और निराशा होती है। हम आयसमाज मे एक बार के स्थान मे तीन बार शान्ति की प्रार्थना करते हैं और तिगनी ही अशान्ति बढती जाती है। हम सब को इस सुन्दर प्रथा को सार्थक और वास्तविक रूप मे लाभदायक व उपयोगी बनाना चाहिये। आज अन्य देशो मे मनुष्य अन्य मनुष्यो के मारने की चिन्ता मे लगे हुए है, और वह मारने का यत्न हवा मे, पृथ्वी पर, जल पर बल्कि जल के भी अन्दर मारने का यत्न करते हैं और ऐसे दूषित व्यवहारो का ही यह परिणाम है कि जनता को सब ओर से दु ख और अशान्ति दृष्टि गोचर होरही है। इस से बचने के लिए हमें अभ्यास और ईश्वर की शक्ति पर मनन करने की आवश्यकता है। और तभी यह पृथ्वी जल और वायु हमारे लिए शान्ति प्रदान करने वाली होगी। इन जड़ पदार्थों मे शान्ति है न अशान्ति। यह तो हमारे मानसिक व्यवहारो पर आश्रित है। चोरी करने जाने वाला वायु के चलने से भी भयभीत हो जाता है चौकीदारी करने वाले कुत्ते तेज हवा के चलने पर भी भौंकने लगते है, और इसी प्रकार हम अपने जीवन को अपने मानसिक सकल्प की छाया में दुखी और सुखी स्वय बनाते रहते है। और इस लिए हम को दु:ख और अशान्ति ही नसीब होती है। हम को रूढ़िवाद स बचना चाहिए और ऐसा उपाय करना चहिए कि यह शान्ति पाठ केवल एक प्रथा न रह जाय बल्कि सार्थक, लाभदायक विधि सिद्ध हो।

श्रीयुत नटरञ्जन और आर्य्यसमाज

ले०—श्रीयुत बा० शिवचन्द्रजी, सहायक मन्त्री आर्य्य-रक्षा समिति सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा, देहली

(लेखक ने यह लेख अंग्रेजी में इण्डियन सोशियल रिफ़ार्मर, लीडर तथा हिन्दुस्तान टाइम्ज़ इत्यादि पत्रों में छपाया है—मि० नटरंजन ने, सार्व० सभा की ओर से जो साहित्य उन्हें भेजा गया है और जिसकी चर्चा इस लेख में की गई है उसकी प्राप्ति पर, रिफ़ार्मर में प्रसन्नता प्रगट की है। आशा है जिस उद्देश्य से से यह साहित्य भेजा गया है वह उसे पूरा करेगा।

—सम्पादक

१८ सितम्बर १९३७ के इण्डियन सोशियल रिफार्मर में 'मेरी किसमें आस्था है' शीर्षक एक लेख इंडियन सोशियल रिफार्मर के सपादक श्री० नटरंजन जी के नाम से प्रकाशित हुआ है। इस लेख में मुख्यतया आर्य्य समाज के सम्बन्ध में कतिपय भ्रम पूर्ण बातें लिखी गई हैं और उन बातों की वजह से विवाद उठ खड़ा हुआ है।

श्रीयुत नटरजन लिखते है 'मेरी धार्मिक उन्नति की कहानी ब्रह्म समाज और बौद्ध धर्म्म का ज़िक्र किए बगैर पूर्ण नहीं होगी। आर्य्य समाज का आधारभूत वेदों के कर्मकाण्ड वा याज्ञिक भाग का जबरदस्ती किया हुआ भाष्य है यद्यपि जिसे क्रियात्मक दृष्टि से नियमित रूप में हिन्दू धर्म में परित्याग नहीं किया गया है। यदि नटरजन महोदय ब्रह्मसमाज और बौद्ध धर्म्म के ही कुछ गुण गान पर सन्तोष करते तो किसी को कुछ कहने की आवश्यकता न थी परन्तु वे बिना प्रसंग के आर्य्यसमाज की चर्चा कर बैठे हैं। श्रीयुत नटरंजन महोदय से उस मान सहित जिसके वह अधिकारी हैं, मुझे कहना चाहिए कि आर्य्य समाज के विरुद्ध अपनी बातों को उन्हें सप्रमाण प्रस्तुत करना चाहिए था। 'बलात भाष्य' की, जो आर्य्य समाज के विरुद्ध उनका दोषारोपण है, उन्हें अवश्य ही व्याख्या करनी चाहिए थी। प्रतीत होता है सायण, महिधर, मैकसमूलर और ग्रिफिथ के वेदों के याज्ञिक भाग के भाष्य में जो यज्ञों मे पशु-बलि का विधान करते हैं श्री० नटरजन जो को आस्था है। ऋषि दयानन्द कृत यज्ञ-भाग का अर्थ, जिसे आर्य्य-समाज बुद्धि-सगत मानता है, यज्ञ, होम तथा अग्निहोत्र या जिसका अर्थ परोपकार करना, दुष्प्रवृत्तियों का दमन करना और स्वास्थ्य के लिये सुगन्धित द्रव्यों और वनस्पतियों को अग्नि में जलाना था। विवाह में तथा अन्य दूसरे संस्कारों के अवसरों पर होने वाले क्रियाकलाप के सम्बन्ध में भी इसी प्रकार की बातें कही जा सकती हैं। निस्संदेह महर्षि दयानन्द भारत के "लूथर" थे। बेहूदा रीति-रिवाजों और कुप्रथाओं के विरुद्ध उन्हें युद्ध करना पड़ा था। वेदों मे वर्णित जीवन की अकृत्रिम सीधी सादी और स्वाभाविक विधियों की ओर ऋषि दयानन्द हमें ले गए। 'दयानन्द और वेद' पर लिखते हुए योगी अरविन्द घोष लिखते

हैं "वेद भाष्य के सम्बन्ध में मेरा निश्चय है कि भले ही वेदों का अन्तिम और पूर्ण भाष्य कोई हो ऋषि दयानन्द को लोग ठीक २ पते की बात मालूम करने वाला पहिला व्यक्ति मानकर उसका सम्मान करेंगे। प्राचीन अन्धकार, और अव्यवस्था तथा युगों की गलत फहमियों में भी ऋषि दयानन्द की आंखें साक्षात् प्रकाश को देखने वाली थी। उनकी पैनी आंखे सत्य पर गई और जो आवश्यक था उस पर जाकर ठहरीं। ऋषि दयानन्द को उन दरवाजों की कुञ्जी मिली है जिन्हें समय ने बन्द कर दिया था और उन्होंने पिजडों में बन्द स्रोतों पर लगी हुई मुहरों को छिन्न भिन्न कर दिया है।" योगी अरविन्द स्वयं संस्कृत-साहित्य के प्रकाण्ड पंडित हैं, धार्मिक और सामाजिक साहित्य में उनकी अच्छी गति है। पाठक स्वय निर्णय कर सकते हैं कि ऋषि दयानन्द के वेदों के याज्ञिक भाग के भाष्य के सम्बन्ध में श्रीयुत अरविन्द घोष और श्रीयुत नटरञ्जन दोनों की सम्मतियों में से किसकी सम्मति ठीक है।

श्रीयुत नटरञ्जन आगे लिखते हैं "शिव की मूर्ति पर चूहे के चढने की घटना जिसने आर्य्य-समाज के निर्माता की जीवन-धारा को बिल्कुल बदल दिया और पौराणिक धर्म्म का विरोधी बना दिया, किसी आदमी के धार्मिक दृष्टि-कोण मे इस प्रकार का महत्व-पूर्ण परिवर्तन कर सकती है यह समझ में नहीं आता।" श्री नटरञ्जन महोदय ने लोगों को मरते हुए अवश्य देखा होगा और यह बात प्रतिदिन के जीवन की बहुत साधारण घटना है। परन्तु क्यों नहीं वे भगवान बुद्ध जैसी जीवन की उच्च अवस्था को प्राप्त कर सके हैं ? उन्होंने बन्द बर्तन में पानी को खौलते हुए, भाप बनते हुए और ढक्कन को हरकत करते हुये देखा होगा। उन्होंने पतङ्ग उड़ते और वृक्ष से फल गिरता हुआ देखा होगा। परन्तु क्यों नही उन्होंने वाष्प-एञ्जिन और वायुयान आविष्कार किया और क्यों नहीं वे आकर्षण के नियम मे कोई नई बात मालूम कर सके ? इस प्रकार की घटनायें बहुत तुच्छ हैं लेकिन फिर भी वे किसी की जीवन-धारा को बदल देती हैं और उसके दृष्टिकोण मे महत्व-पूर्ण परिवर्तन कर देती हैं जिनका परिणाम अद्भुत होता है।

मि० नटरञ्जन आगे लिखते हैं "परमात्मा की दृष्टि में मनुष्य उससे भी तुच्छ है जितना हमारी दृष्टि में चूहे तुच्छ हैं। हम अपने दैनिक जीवन में आत्माओं की आत्मा के साथ खिलवाड़ करते हैं। ऐसा करने की हमें छुट्टी है। परन्तु किसी ने भी यह नहीं कहा कि चूंकि हमें ऐसा करने की आज्ञा है इसलिए परमात्मा पाखण्ड या भ्रम है।" यदि लेखक महोदय आर्य्य-समाज से चिढ़े हुए न होते तो वे इस प्रकार की बात न कहते। ऋषि दयानन्द ने मूर्ति-पूजा का खण्डन किया है, परमात्मा की सत्ता का नहीं।

श्रीयुत नटरञ्जन आगे लिखते हैं—"शुद्धि से मुझे स्वभावत घृणा है।" कट्टर पथी व्यक्ति को भले ही शुद्धि से घृणा हो परन्तु सत्य के जिज्ञासु को कभी घृणा नहीं हो सकती। निस्सन्देह आर्य-समाज छल-कपट, भय अथवा प्रलोभन के द्वारा शुद्धि को कभी भी सहन नहीं करता है। परन्तु

यदि कोई व्यक्ति अन्तरात्मा की आवाज़ पर सत्य, प्रकाश और धर्म्म की खोज के लिए आना है तो किसी को क्या अधिकार है कि उसे ऐसा करने से रोके तब क्या उस दशा में वह ऊँचे दर्जे की स्वार्थपरता और पाप नहीं होगा ?

श्रीयुत नटरञ्जन भ्रान्त धारणा के वशीभूत प्रतीत होते हैं जब वे लिखते हैं 'कि हिन्दूधर्म्म ने दूसरे धर्म वालों के जिहादी आन्दोलन के होते हुए भी जिसकी पीठ पर राजनैतिक शक्ति थी और प्रचुर आर्थिक साधन थे अपनी स्थिति को सुरक्षित रक्खा है क्योंकि वह साधारण विश्वास के विरुद्ध निश्चय रूप से शुद्धि से उपराम रहा है।"

श्रीयुत नटरञ्जन इस बात को भली भांति जानते हैं कि मुसल्मान लोग जो भारत में आक्रमण कारियों के रूप में आए थे और यहां बस गए थे मुट्ठी भर थे। परन्तु आज उनकी संख्या आठ करोड़ हो गई है। क्या वे आकाश से टूट पड़े हैं ? वे सब श्रीयुत नटरञ्जन के विचार के कट्टर पन्थी हिन्दुओं में से ही गए हैं। क्या इसका यह अर्थ है कि हिन्दू धर्म्म ने अपनी स्थिति को सुरक्षित रक्खा है ? वह ऋषि दयानन्द ही था जिसने प्रवाह को बदला है और एक बार हिन्दू धर्म्म को धर्मान्तर करने वाला धर्म्म बना कर उसे निर्मूल होने से बचा दिया है। आज भी यदि आर्य्य-समाज मि० नटरञ्जन के मतानुसार अपना हाथ खींच ले और अगले ३०० वर्ष तक ऋषि दयानन्द जैसी महान् आत्मा आविर्भूत न हो, और मुसल्मान और ईसाई निर्बाध गतिसे अपना कार्य्य करते रहें तो निश्चय ही हिन्दू धर्म्म का पृथ्वीतल से अस्तित्व मिट जायगा।

श्री युत नटरञ्जन यह भी लिखते हैं — राजा राम मोहन राय मूर्ति पूजा के विरुद्ध न थे। मैं समझता हूँ नटरञ्जन जी ने राजा साहब की जीवनी नहीं पढ़ी है। यदि वे पढ़ेंगे तो उन्हें मालूम हो जायगा कि राजा साहब भी मूर्ति पूजा के विरुद्ध थे। मूर्ति पूजा के विरुद्ध उनके बहुत से विचारों में से एक इस प्रकार है —

"मूर्ति पूजा जैसी हमारे देश वासियों में इस समय प्रचलित है जिसका हमारे विद्वान पंडित उसे सदाचार में वृद्धि करने वाली कहकर समर्थन करते हैं न केवल व्यापक रूप से शास्त्रों द्वारा त्याज्य है वरन् साधारण बुद्धि से भी उसे महान भयकर समझना चाहिए और समझना चाहिए कि यह दुराचार की ओर प्रेरित करने वाली तथा सामाजिक सुखों का विनाश करने वाली है। इसके द्वारा अश्लीलता, व्यभिचार, विषयासक्ति, झूठ, कृतघ्नता कपट और विश्वासघात का बोल बाला रहता है। निस्सन्देह महर्षि दयानन्द भी मूर्ति पूजा के विरुद्ध थे उनका अटल विश्वास था कि मूर्ति पूजा वेद-विरुद्ध है और भारत के पतन और उसकी दासता के मुख्य कारणों में से एक है। उन्होंने इस विषय पर अपने समय के बड़े २ विद्वानों को बनारस में तथा अन्य जगहों में परास्त किया था।

मुझे अत्यन्त दुख है कि श्रीयुत नटरंजन

महोदय ने अपनी स्वाभाविक अरुचि के कारण ऋषि दयानन्द जैसी महान व्यक्ति और उनके स्थापित किए हुए आर्य समाज को पढने और समझने के अवसर को गवा दिया है। ऋषि दयानन्द के प्रति योगी अरविन्द के मूल्य वान विचारा की ओर एक वार फिर हम अपने पाठकों का ध्यान आकर्षित करते हैं। महर्षि दयानन्द और राजा राम मोहन राय की तुलना करते हुए वे लिखते हैं, "राम मोहन राय उपनिषदो पर जा कर ही रुक गये। दयानन्द ने इससे आगे दृष्टि दौडाई और मालूम किया कि हमारा वास्तविक आधार मूल वेद है। ऋषि दयानन्द म स्वाभाविक प्रतिभा थी और वह उसे प्रकाशमान बनाने मे समर्थ हुए।

डाक्टर रवीन्द्र नाथ ठाकुर ने भी लिखा है, मैं महान् गुरु दयानन्द का अभिनन्दन करता हूँ जिसकी दिव्य दृष्टि ने भारत के आध्यात्मिक इतिहास मे 'सत्य और एकता के दर्शन किए थे, जिसके प्रकाशमान मस्तिष्क ने भारतीय जीवन के समस्त विभागों को समझा था। जिस की भारत के प्रति आवाज भूत काल के अन्धकार और अज्ञान की निद्रा छुडा कर सत्य और पवित्रता के प्रकाश को ओर ले जाने की थी।

श्री युत नटरजन जी को कदाचित स्मरण होगा जब उन्होने गत एक अवसर पर भी आर्य समाज और उसके यशस्वी संस्थापक पर आक्रमण किया था। मैंने उन आक्रमणों का निराकरण करने का यत्न करते हुए उन्हे निवेदन किया था कि वे शान्त हृदय से और निष्पक्ष दिमाग से उन दोनों का अध्ययन करें, और तब ही उनके पक्ष या विपक्ष मे लेखनी उठाए। प्रतीत होता है उन्होंने ऐसा नहीं किया है। तौभी अन्त मे, मैं बहुत सम्मान पूर्वक श्री युत नटरंजन जी से ऋषि दयान द के जीवन और उनकी शिक्षाओं को गम्भीरता पूर्वक अध्ययन करने का यत्न करने का निवेदन करूगा और कहूगा कि हिन्दू धर्म पर उनके (ऋषि दयानन्द) द्वारा किए गये उपकारों का आदर करें। यह दुख की बात है कि 'इण्डियन सोशियल रिफार्मर' के संपादक आधुनिक भारत के सब से बडे सोशियल रिफार्मर के उपकारों का अब तक भी आदर नही कर सके हैं। हमारी सार्वदेशिक सभा ने आर्य समाज के सम्बन्ध मे उन्हे कुछ साहित्य भेजा है। मुझे आशा है उनके सम्यक् अध्ययन से श्रीयुत नटरजन महोदय अपने जीवन के सायकाल मे आर्य समाज के सिद्धान्तों को समझने मे समर्थ होंगे। "कभी नहीं की अपेक्षा देर अच्छी होती है।"

सत्यार्थप्रकाश लेखमाला—

मोक्ष का स्वरूप

(ले०—श्री० स्वामी स्वतन्त्रानन्द जी महाराज)

मोक्ष के साधन ज्ञान कर्म उभय हैं। वह समुच्चयवाद से है यह मैं पिछले लेख मे सप्रमाण लिख चुका हूँ इसके पश्चात् मोक्ष का स्वरूप भी चिन्तनीय है। प्रथम यह चिन्तनीय है मोक्षभावरूप है वा अभावरूप है। आर्य समाज मोक्ष को भावरूप मानता है। साधारण रीति से भी देखा जाय तो जीव की प्रवृत्ति सर्वथा अभाव म नहीं है। यह सत्य है जीव दुःख नहीं चाहता दुःखाभाव चाहता है वह भी केवल दुःखाभाव ही नहीं उसके साथ सुख हो तब तो जीव प्रसन्न होता है केवल अभाव तो शून्य ही होगा इसलिये केवल अभाव मानना शून्यवाद का दूसरा नाम ही है जिसे वैदिक सिद्धान्त लिखना ठीक नहीं है इसलिये आर्य-समाज मोक्ष को भावरूप मानता है सत्यार्थप्रकाश समुल्लास ९ पृष्ठ २९३ पर निम्न पाठ है—

प्रश्न—मुक्ति किसको कहते है ?

उत्तर—'मुञ्चति पृथग्भवन्ति जना यस्यां सा मुक्ति' जिसमे छूट जाना हो उसका नाम मुक्ति है।

प्रश्न—किससे छूट जाना ?

उत्तर—जिससे छूटना चाहते हैं।

प्रश्न—किससे छूटना चाहते है ?

उत्तर—दुःख से।

प्रश्न—छूट कर किसको प्राप्त होते और कहाँ रहते है ?

उत्तर—सुख को प्राप्त होते हैं और ब्रह्म में रहते है।

इस पाठ से सिद्ध है कि महर्षि जी मोक्ष को भावरूप मानते है। इसके पश्चात् एक बात विचारणीय है वह यह कि मोक्षावस्था मे जीव ब्रह्मरूप हो जाता है वा जीव, जीव ही रह कर मोक्ष सुख का भोक्ता होता है। यदि जीव को ब्रह्म रूप की प्राप्ति स्वीकार करली जाय उस अवस्था मे जीव सुखरूप (आनन्द रूप) तो हो जायगा क्योंकि ब्रह्म को सब ही सच्चिदानन्द रूप मानते है उस अवस्था मे वह सुख का भोक्ता न होगा। ब्रह्म को कोई भी भोक्ता नही मानता है। जो भोक्ता होगा वह कर्त्ता भी होगा यह सामान्य नियम है। जीव कर्त्ता है अतः भोक्ता है जीव कभी दुःखी होता है कभी सुखी। जीव को सुख दुःख निमित्त से होते है ब्रह्म मे वैसे निमित्त न होने से वह जीववत् भोक्ता न होगा और जीव ब्रह्मरूप न होगा।

इस विषय मे सब से अधिक विचार उपनिषद् और वेदान्त सूत्रों मे है। और सूत्रों के विषय वाक्य उपनिषद् वचन ही है इसलिये मैं उनके पाठ लिखना उचित जान कर लिखता हू आशा है पाठक उन पर विचार करेंगे।

संपाद्याविर्भाव स्वेन शब्दात्। वेदांत सूत्र अध्याय ४ पाद ४ सूत्र १ मुक्तः प्रतिज्ञानात् २ आत्मा प्रकरणात ३।

इन सूत्रों के विषय वाक्य इस प्रकार है —

एष मेैष सम्प्रसादोऽस्माच्छरीरात्समुत्थाय पर ज्योतिरूपसपद्य स्वेन रूपेणाभिनिष्पद्यत। स उत्तम पुरुष। छान्दोग्योपनिषद् ८, १२, ३।

भावार्थ—इस प्रकार यह जीव (सम्प्रसाद) इस शरीर से पृथक् होकर पर ज्योति (ब्रह्म) को प्राप्त होता है और अपने स्वरूप मे (स्वेन रूपेण) स्थित होता है वा स्वराग्य को प्राप्त होता है वह उत्तम पुरुष है।

इसमे शङ्का होती है इसको मोक्ष विषयक क्यों माना जाय यह किसी अन्य अवस्था का प्रतिपादक क्यो नही। इस शङ्का के निवारण करने के लिये दूसरा सूत्र है "मुक्तः प्रतिज्ञानात्" इसका विषय वाक्य है।

अशरीर वाव सन्त न प्रियाप्रिये स्पृशत।

छा० ८ १२ १।

भावार्थ—जीव को सुख दुःख शरीर साथ होने की अवस्था मे ही होते हैं अशरीर अवस्था म इनका स्पर्श नही होता इसलिये यह अशरीरावस्था विषयक होन स मोक्ष विषयक ही है। और प्रकरण आत्मा का है। यथा—

य आत्माऽपहतपाप्मा विजरो विमृत्यु।

छा० ८, ७, १।

जो आत्मा पापरहित जरारहित और मृत्यु रहित है उस आत्मा का प्रकरण होने से मोक्ष का ही प्रतिपादक है।

इन सूत्रों और वाक्यो मे "स्वेन रूपेण" पाठ है और आगे उसे उत्तम पुरुष लिखा है क्या यह जीव ब्रह्मरूप मे रहता है इस बात को कहतो है वा जीव जीवरूप में ही रहता है इसका प्रतिपादक है अगले सूत्र मे इस शङ्का को निवृत्त कर देते है।

सङ्कल्पादेव तु तच्छ्रुतेः। वेदांत दर्शन ४ ४ ८

मोक्ष मे जितने भोग है सब सङ्कल्प से ही प्राप्त होवे है ससार सम यत्न साध्य नही होते।

"स यदि पितृलोककामो भवति सङ्कल्पादेवास्य पितर समुत्तिष्ठन्ति। छां ८, २, १

मोक्षावस्था मे यदि पितृ लोक की कामना हो तो सङ्कल्प से ही प्राप्त हो जाता है। वह सुख सङ्कल्प से मिल जाते है।

जब सङ्कल्प से भोग मिलते हैं तो ब्रह्म नहीं जीव ही होगा इसके आगे फिर लिखा है—

जगद्व्यापारवर्जं प्रकरणादसंनिहितत्वाच्च।

वेदांत दर्शन ४, ४, १७।

शङ्करभाष्य जगदुत्पत्त्यादि व्यापार वर्जयित्वान्यदणिमाद्यात्मकमैश्वर्यं मुक्तानां भवितुमर्हति। जगद् व्यापारस्तु नित्य सिद्धस्यैवेश्वरस्य।

जगत् रचना तो परमात्मा के ही आधीन है यह जीव को कभी प्राप्त नही होता अन्य बातें मोक्ष जीव मे हो जाता है। फिर सूत्रकार लिखता है—

भोग मात्र साम्य लिंगाच्च। ४, ४, २१।

भोगमात्रमेवैषामनादिसिद्धेनेश्वरेण समानमिति श्रूयते। शङ्करभाष्यम्

भोग मात्र ईश्वर की समता है अन्य सब बातो मे समता नही है अर्थात् जीव को मोक्षा-

सार्वदेशिक आर्य संघ की आवश्यकता

[श्री प० भगवानस्वरूप जी न्यायभूषण अजमेर]

आर्य्य समाज सिद्धान्त रूप से सदा से वर्ण को गुण कर्मानुसार मानता रहा है, इस विषय पर अनेक शास्त्रार्थ हुए, आर्य्यसमाज ने बड़ी शान के साथ सदा विजय प्राप्त की। विरोधियों के छक्के छुड़ाए। आर्य्यसमाज के अन्तर्गत जब कभी किसी ने इस विषय पर मत भेद प्रकट किया आर्य्यसमाज ने बड़ी दृढ़ता पूर्वक उनके साथ वर्ताव किया। अगर नहीं माने तो दूध में से मक्खी की तरह निकाल फेंका। इतना होते हुए भी जैसा चाहिए आर्य्यसमाज ने इस का क्रिया त्मक रूप से प्रचार नहीं किया, ऐसा अनेक लोगों का ख्याल है।

मेरा ख्याल है कि आर्य्यसमाज में अनेक ऐसे हैं जिन्होंने कभी का ही जन्म गत जात पांत के जूए को अपने कंधे से उतार फेंका है, परन्तु सब बिखरे हुए हैं। एक को एक का पता नहीं। यही कारण है कि उन्हें कठिनाइयां उठानी पड़ी और पड़ रही हैं क्योंकि जन्म गत बिरादरी को तो उन्होंने छोड़ ही दिया था नए रूसार में कोई संघटन न होने से उन्हें कोई सोसाइटी मिली नहीं।

यद्यपि यह है कटु परन्तु सत्य है अतएव लिखने में मुझे सङ्कोच नहीं कि वर्तमान समय

वस्था में दुःख नहीं होता वह सुख में ही रहता है ब्रह्म आनन्द स्वरूप है जीव सुख (आनन्द) का भोक्ता होता है इसी सुख में दोनों की समता है।

यह सब प्रमाण इस बात को सिद्ध करते हैं जीव ब्रह्म मोक्षावस्था में भी भिन्न २ ही रहते हैं यह दोनों एक कभी नहीं होते हैं इसलिये जो जीव को मोक्ष में ब्रह्मरूपता कहते हैं वह सिद्धांत ठीक नहीं है।

सत्यार्थ प्रकाश नवम समुल्लास में महर्षि ने इस बात को इस प्रकार लिखा है:—

प्रश्न—मुक्ति में जीव का लय होता है वा विद्यमान रहता है ?

उत्तर—विद्यमान रहता है।

प्रश्न—कहां रहता है ?

उत्तर—ब्रह्म में ।

अपनी स्वशक्ति से जीवात्मा मुक्ति में हो जाता है। और सङ्कल्प मात्र शरीर होता है जैसे शरीर के आधार रहकर इन्द्रियों के गोलक के द्वारा जीव स्वकार्य करता है वैसे अपनी शक्ति से मुक्ति में सब आनन्द भोग लेता है ....

क्योंकि मुक्ति जीव की यह है कि दुःखों से छूटकर आनन्द स्वरूप सर्व व्यापक अनन्त परमेश्वर में जीव का आनन्द में रहना।

इस प्रकार आर्य समाज के सिद्धान्त में मुक्ति भावरूप है अभाव रूप नहीं। मोक्षावस्था में जीव ब्रह्मरूप नहीं बनता प्रत्युत जीवरूपसे आनन्द का भोक्ता होता है।

———

मे आर्यसमाज एक प्रकार का कलब बन गया है। अधिकांश लोग आर्यसमाज के सदस्य रहते हुए अपनी २ बिरादरी मे ही रहते है । उन का खान पान, विवाह व्यवहार शादी गमी सब बिरादरी से है अतएव वे बिरादरी मे शरीक होते है । बिरादरी उन के यहां शरीक है । जिन्हों ने उसे छोड दिया है इस बात को देखते और अपने आपको अलग पाते हुए कुछ खिन्न प्रतीत होते हैं ।

यद्यपि इस समय भी अनेक नवयुवक ऐसे है जो जन्म गत जात पात से बड़े दु खी हो रहे हैं उस की जजीरो को तोडने के लिए कटिबद्ध है, परन्तु इस दृश्य को देख कर रुक जाते है, आगे बढने का साहस नही करते।

इन कार्यों से मेरा विचार है कि श्रीमती-सार्वदेशिक सभा एक ऐसा सघ बनावे कि जिस मे इस प्रकार के व्यक्तियो का समावेश हो, जो जन्म गत जात पांत के विरुद्ध क्रियात्मक पग बढ़ा चुके हो या बढाने को उद्यत हों ।

कदाचित आप को ज्ञात होगा, अभी मुम्बई मे आर्य्य परिवार सघ की स्थापना हुई है, इसी प्रकार यू० पा० पंजाब बगाल, और राजस्थान आदि सभी प्रान्त की सभाओ ने इस दिशा में कुछ न कुछ किया है परन्तु वह सब अपूर्ण पड़ा हुआ है। यदि सार्वदेशिक सभा इस कार्य को अपने हाथ मे लेवे और इसे सार्वदेशिक संघ बनाने का यत्न किया जावे तो मे समझता हूँ सभी प्रान्तीय सभाओ का जो कुछ पृथक २ प्रयत्न है वह केन्द्रित हो जायगा और सफलता की अधिक आशा हो जायगी।

इस समय तक सभाओं ने जो कुछ इसका मसाला किया है वह सार्वदेशिक सभा मगालें और एक ऐसी सूची तैय्यार की जावे जिन में भारत या इससे बाहर के भी उन समस्त आर्य व्यक्तियो की नामावलि मय पता के व पूर्ण परिचय के हो जिन्होने इस दिशा मे कार्य्य किय है और जो आगे को उद्यत है । वह सूची उन सब सदस्यों को दी जावे। सदस्यों से इस के निमित्त कुछ शुल्क लिया जावे।

ऐसा करने से लाभ यह होगा कि अभी जो पृथक न रहते हुए अपने आप को अकेला अनुभव करते हैं वह पूरा हो जायगा, दूसरे ब्याह शादी आदि के लिए प्रत्येक को पता रहेगा कि उसके विचारानुकूल व्यक्ति वहा हैं वह चुनाव सरलता पूर्वक कर सकेगा।

आशा है सभा इस विषय पर विचार करके कोई क्रियात्मक रूप देने का आयोजन करेगी। मे इस विषय मे सदा योग्य सहायता करने को उद्यत हूँ। इस प्रकार के विचार वाले अनेक व्यक्ति इसमे सहयोग देने को उद्यत होगे।

आत्मा का अमरत्व

एक अंग्रेज महिला के विचार

मृत्यु का भय

मौत से कोई नहीं बच सकता है क्योंकि यह अनिवार्य्य है। यदि जहर का प्याला पीनेसे पूर्व क सुकरात के शब्दों को वा प्लेटो के मृत्यु सम्बन्धी विचारों को याद करें, भारतवर्ष की शिक्षाओं के मृत्यु सम्बन्धी ऊचे आदर्शों की तो बात ही क्या, तो हमें विदित होता है कि 'मृत्यु' का अर्थ चोले का बदलना है, और यही बात स्पष्ट रूप से सत्शास्त्रों मे बतलाई गई है, मुख्यतया १८ वीं और १६ वी शताब्दी में जब नास्तिकता ने वहां अपने पैर जमा लिए थे, हम पश्चिम के अस्पष्ट दिमागों में 'मृत्यु' के लिए एक प्रकार का पाशविक भय देखते है। अब भी हम मृत्यु के लिए वहा यह लिखा हुआ देखते हैं।

Death is so fearful that I hate life more for the reason that it leads to Death, rather than for the thorns with which the path of life is sown "

मृत्यु बड़ी भयानक है। जीवन का रास्ता कांटों से भरा हुआ है इस की वजह से मैं जिन्दगी से जितनी घृणा करती हूँ उससे कहीं ज्यादा इस लिए घृणा करती हूँ कि यह मृत्यु की ओर लेजाती है।

प्रकृति के नजदीक रहने वाले लोगों में आमतौर से 'मृत्यु' शब्द का प्रयोग नहीं होता है। वे कहते हैं, वह चला गया, वह विदा हो गया, अर्थात् इस जीवनके उसके व्यापार खतम हो गए।

प्रकृति के सम्पर्क में रहने वाले व्यक्ति सत्य की आधार भूत शिक्षाओं के सम्पर्क मे रहते हैं और वे मृत्यु के रहस्य तथा महत्व को स्वभावत समझते हैं। मृत्यु का दु ख दुर्जनों मे पैदा होता है जो अपराधों और जान बूझ कर की हुई गलतियों से अपनी आत्मा को कलुषित करते हैं। यह भली भांति पूर्णतया समझ में आ गया है कि प्रत्येक दुरात्मा मृत्यु से डरता है।

केवल दुरात्मा तथा अज्ञानी लोग ही मृत्यु से डरते हैं, बात यह नहीं है। बडे २ विद्वान और विचारक भी जिन्दगी के परिवर्तन अर्थात् मृत्यु से पूर्व बड़े भयभीत देखे गए हैं, और यह बड़ी आश्चर्य्यजनक बात देख पडती है। ऐसी अवस्था में लोग जानना चाहेंगे कि सासारिक पदार्थों के प्रति उनका कैसा रुख रहा है। निश्चय ही उनका रुख सासारिक पदार्थों में मोह का रहा है त्याग का नही रहा है।

जो धार्मिक विचारों के नही हैं वे भी मृत्यु का विचार आने पर धार्मिक अनुष्ठानों की ओर झुक जाते हैं परन्तु मृत्यु के विचार के मन से निकलते ही वे ऊल जलूल बात कहने लग जाते हैं। बीसवी शताब्दी Twentieth Century नामक पत्रिका मे श्री० प्रो०ए०आर० वादिया बीसवीं शताब्दी के विचारों और वास्त-

विश्वासों के सम्बन्ध में बहुत सी मनोरञ्जक सम्मतियों पर प्रकाश डालते हुए एक सम्मति इस प्रकार प्रगट करते हैं।

"दुनिया धार्मिक भाव से वंचित हो रही है। धर्म के सन्देह में, दुनिया धर्म के अर्थ और महत्व के प्रति अधी बन रही है" इसमें सन्देह नहीं विद्वान् प्रोफेसरकी सम्मति बिलकुल सही है। वास्तव मे मनुष्य समाज ने इस सन्देहावस्था मे ग्रसित होकर बहुत कुछ खो दिया है जो उसकी मानसिक और शारीरिक रचनात्मक शक्ति को दृढ़ बनाने मे उत्तम योग देता।

जो व्यक्ति आत्मा के अमरत्व को जानता है वह शारीरिक और मानसिक प्रत्येक प्रकार के व्यापार के अपने आनन्दप्रद कर्तव्य को भी जानता है। प्रार्थनाओंमें 'आत्माकी अमरता' शब्दो का महत्त्व दर्शा दिया गया है। जो इस बात पर मनन करता है वह समझता है कि मनुष्य विविध योनियों मे–मानवी और पाशविक–अपने कर्म के अनुसार जन्म लेता है। वह यह भी समझता है कि क्षण २ मे प्रत्येक वस्तु बदल रही है और अपनी पूर्वावस्था मे कभी नही आई है। संसार की इस गति मे सबसे महान रचनात्मक उदारता सन्निहित है और अपनी शक्ति के अनुसार इस सर्वतोमुखी रचना मे अपने कर्तव्य की पूर्ति करना बड़ा आनन्द दायक है ?

रूसो कहता है 'जिस व्यक्तिका यह दावा है कि वह विना भय के शान्ति पूर्वक मृत्यु का आलिङ्गन करता है वह झूठा है," महान् लेखक रूसो—ने तमाम मानव जाति की ओर से बोलने का काम अपने जिम्मे इसलिए लिया होगा कि वह स्वयं मृत्युसे डरता होगा। निश्चयही मृत्यु प्रतिदिन की बातों और कामों की सीमाओं से परे है। इसलिए हृदय की विशेष शान्ति के द्वारा ही यह कार्य सम्पन्न होना चाहिए। यह भाव दैनिक जीवन की शान्ति से कहीं दूरकी बात है। जीवन-परिवर्तन मे दिव्य शान्ति का परिचय वास्तविक साहस होता है जिसके साथ ज्ञान जुड़ा हुआ है। भारत के ऋषियो ने साफ़ तौर पर बतलाया है कि 'हम मरते नहीं है वरन् बदलते है, इन चन्द शब्दों मे 'आत्मा को अमरत्व' का सर्टीफिकेट दिया हुआ है। गीता के उन शब्दों को याद करो जिनमे आत्मा को अपरिवर्तन वादी, अमर और अनश्वर बतलाया गया है। तमाम युगो मे आत्मा के अमरत्वकी विजय हुई है और अमरत्व स्वीकार किया गया है। आज आस्तिक वैज्ञानिको ने भी इस बात को स्वीकार कर लिया है। बडे दुःख की बात है कि बुद्धिमान विचारक मौत से डरते है और भोले भाले-साधारण व्यक्तियों को उस डर की बीमारी लगाते है। क्यो नहीं वे अपने को उस प्रकाशमान प्राचीन ज्ञान से जिसपर संसार के सर्वश्रेष्ठ दिमागों ने अपनी स्वीकृति की मुहर लगादी है आलोकित करते हैं। निश्चय ही श्रेष्ठों के सम्पर्क मे आनेपर वे भी श्रेष्ठ परिणामों पर ही पहुँचगे।

संसार के पदार्थों और रिश्तो मे ममता और स्वार्थ छोड़ने वालों और उनमे प्रयोगाधिकार और कर्तव्यबुद्धि रखने वालों को मृत्यु का डर नहीं रहता। उत्तम ज्ञान और उस ज्ञान के

अन्तर्जातीय विवाह की आवश्यकता

[लेखक—रघुनाथप्रसाद, पाठक]

अन्तर्जातीय विवाहों को आर्य्य समाज इसलिए प्रोत्साहित करता है कि जन्म की जात-पात की दीवारों को उनके अगणित अभिशापों के साथ छिन्न भिन्न करके वैदिक वर्ण व्यवस्था की स्थापना की जाय और समाज को अपनी स्वाभाविक स्थिति मे गति करने दिया जाय। आर्य्य-समाज के इस सिद्धान्त का अर्थ विघातक नहीं है जैसा कि आर्य्य-समाज के विरोधी समझते हैं वरन् रचनात्मक है। विवाह पर समाज का कल्याण और उसकी स्वाभाविकता बहुत कुछ आश्रित है। विवाह का मुख्यतम उद्देश्य समाज को उत्तम सन्तान देना है। इसके लिए आवश्यक है कि विवाहयोग्य लड़के और लड़कियों मे हो जिनमे गुण कर्म और स्वभाव इत्यादि की समता हो तथा वे उत्तम कुलों के हों। यह तभी सम्भव है जब विवाह का क्षेत्र विस्तृत हो और समाज का विकास गुण कर्म, स्वभाव पर आश्रित ब्राह्मण, क्षत्रिय वैश्य और शूद्रों के विभाजन पर हो जन्म की जात-पात पर न हो। यही उद्देश्य आर्य्यसमाज के अन्तर्जातीय विवाहो का है।

वर्तमान ब्राह्मण, क्षत्रिय इत्यादि वर्ण जन्म की जात पात पर आश्रित है और इसलिए कृत्रिम हैं। अपने २ वर्णों मे विवाह करने की प्रवृत्ति से आर्थिक सामाजिक तथा अन्यान्य कई प्रकार की हानिया हो रही हैं। योग्यों का अयोग्यों के साथ विवाह हो रहा है, इतना ही नहीं वरन् इस प्रवृत्ति की वजह से उनका भी विवाह हो रहा है जो विवाह के क़तई अधिकारी नहीं है। परिणाम यह है कि अयोग्य सन्तानों की, मूर्खों, नपुंसकों, बहरों, गूँगों, भद्दी सूरत वालों, आत्महत्या करने वालों, वेश्याओं, पागलो, चिड़चिड़े स्वभाव वालों और अन्य अपराध करने वालों की संख्या बढ़ रही है। यह हो रहा इस समस्या का सामाजिक पहलू।

जन्म की जात-पात की वजह से विवाह के संकुचित क्षेत्र मे एक दूसरी दिक्कत पेश आती है। योग्य लड़कों और लड़कियो के संरक्षकों को धन लूटने का अमोघ अवसर प्राप्त हो जाता है। कुछ जातियों मे लड़कियों की तुलना में लड़कों की संख्या अधिक है दूसरी जातियों में लड़कियों की संख्या अधिक है। इस प्रकार मांग

अनुसार उत्तम आचरण से मनुष्य मृत्यु को पार किया करता है। यही ससार के श्रेष्ठतम धर्म का आन्तरिक रहस्य है। आत्मा का स्वाभाविक गुण ज्ञान और प्रयत्न है। श्रेष्ठतम धर्म्म इन दोनों बातों का ठीक २ नियमन करता है इस नियमन के हो जाने पर मनुष्य को मौत नहीं डराती है।

———

और उसकी पूर्ति का नियम क्रिया मे आ रहा है इसलिए हम देखते हैं कुछ जातियों मे (आमतौर पर ऊंची जातियों में) लड़कों के अभिभावक लड़कियों के अभिभावकों से इतना अधिक पैसा मागते हैं कि लड़की की शादी ही कठिन हो जाती है। दूसरी जातियों में (आम तौर पर नीची जातियों मे) लडके के अभिभावकों को लड़की के अभिभावकों को पैसा देना होता है। नतीजा यह है कि बडी २ उम्र के लडके और लडकिया बिन व्याहे बैठे रहते हैं और इस प्रकार बैठने के दुष्परिणाम प्रत्यक्ष ही हैं। यह दिक्कत तभी दूर हो सकती है जब विवाह का क्षेत्र विस्तृत हो जाय और यह अन्तर्जातीय विवाहों से ही हो सकता है।

एक ही वर्ण मे विवाह करने का एक और दुष्परिणाम है जिसे हम सहज ही नहीं जान सकते हैं। यह गम्भीर अध्ययन और समझ का विषय है। वैज्ञानिकों की स्थापना है एक ही जाति या उपजाति मे यदि लम्बे अर्से तक विवाह होते रहे तो एक ही रक्त के दौर से सन्तानो का शरीर और दिमाग का विकास स्थिर हो जाता है उनमे नए रक्त के न आने से नूतनता नहीं आती और कालान्तर मे समाज के विकास का स्रोत कुंठित होकर उसका विनाश हो जाता है। यह विषय सम्यक् विचार की अपेक्षा रखता है और अधिक विस्तार चाहता है। इस समय हम केवल संकेत ही किए देते हैं। इस बात को उन लोगो को विशेष रूप से नोट करना चाहिए जो यह कहते है कि जब अपने वर्ण मे ही योग्य जोड़ मिल जाय तो क्यो अन्य वर्ण मे शादी की जाय।

इन सब बातों को देखते हुए आवश्यक है अन्तर्जातीय विवाहों को अपनाया जाय और उनका प्रचार किया जाय। एक बात और ! लडके लडकियों की योग्यता, रुचि, गुण स्वभाव तथा कुल ही अन्तर्जातीय विवाहो मे सर्वोपरि होने चाहिएं केवल जन्म की जात-पात को तोड़ने का ही एक मात्र भाव सर्वोपरि नही होना चाहिए। ऐसा होने से लाभ के बदले हानि ही होगी। साथ ही आर्य्य-विवाह ऐक्ट की स्प्रिट मे ही ये विवाह होने चाहिएं सिविल मैरेज ऐक्ट वा उससे मिलते-जुलते ऐक्ट की स्प्रिट मे नही जो हमे हमारे शास्त्रों और धर्म्म और आदर्शों से विमुख करते हैं।

महर्षि के भाष्यों की बहिरङ्ग परीक्षा

ले०—श्रीमती सुशीलादेवी त्रिवेदी विद्यालङ्कृता
गुरुकुल महाविद्यालय सोमगढ़ (काठियावाड़)

इस लेख में हमें यह देखना है कि महर्षि के वेदभाष्य कितने हैं ? उन्होंने किस किस वेद पर किस भाषा में कितने समय मे भाष्य किया ? इस विषय पर विचार करने से आधुनिक समय में ऋषिभाष्य पर की जाने वाली अनेक आपत्तियों का समाधान हो सकता है।

स्वामी जी महाराज का संपूर्ण भाष्य तो केवल मात्र यजुर्वेद पर ही मिलता है ऋग्वेद पर तो वे ७ वें मडल ६१ वें सूक्त के दूसरे मत्र से आगे किन्ही दैवी कारणों से भाष्य न कर सके। फिर सामवेद तथा अथर्ववेद पर वे कब कलम उठाते ? कमनसीब भारतीयोंके भाग्याकाश में वह अनमोल सितारा अधिक समय तक न चमक सका, अकाल ही में अस्त हो गया। अत वर्तमान काल मे ऋषि के भाष्य यजुर्वेद पर तथा आधे से अधिक समय तक ऋग्वेद पर ही उपलब्ध होते हैं। परन्तु उनकी शैली का परिचय इन भाष्यों से भी प्राप्त किया जा सकता है।

महर्षि दयानन्द ने ऋग्वेद भाष्य का निर्माण स०१९३४ मार्गशीर्ष शुक्लपक्ष की छठी को प्रारम्भ किया था। इस विषय में ऋग्वेद भाष्य के प्रारम्भ में लिखा है।

विद्यानन्द समवति चतुर्वेदसंस्तावना या,
संपूयश निगमनिलयं सम्प्रणम्याथ कुर्वे।
वेदत्र्यङ्के विधुयुतसरे मार्गशुक्लेऽङ्क भौमे,
ऋग्वेदस्याखिलगुणगुणिज्ञादातुर्हि भाष्यम्॥

अर्थात जो चारों वेदों की भूमिका विद्यानन्द को देती है उसे पूरा कर परमेश्वर को प्रणाम कर सं० १९३४ मार्ग शुक्ल छठी मंगलवार के दिन ऋग्वेद भाष्य का आरम्भ करना है। इसके कुछ समय के अनन्तर विक्रमी स० १९३४ के पौष सुदि १३ गुरुवार के दिन यजुर्वेद भाष्य का आरम्भ किया इस सम्बन्ध में भाष्यारम्भ में निम्न श्लोक दिया गया है।

चतुस्त्र्यङ्कैरङ्कै. अवनिसहितैर्विक्रमसरे
शुभे पौषे मासे सितदलभविश्वोन्मिततिथौ।
गुरोर्वारे प्रात प्रतिपदमतिष्टसुविदुषा
प्रमाणैर्निबद्धं शतपथ निरुक्तादिभिररि॥

विक्रमीय स० १९३४ पौष सुदि गुरुवार त्रियोदशी तिथि के दिन यजुर्वेद भाष्य का बनाना प्रारम्भ किया जाता है। एवम् ऋग्वेद भाष्य के प्रारंभ से लगभग एक मास के पश्चात ऋषि ने यजुर्वेद भाष्य का निर्माण प्रारभ कर दिया था। इस भाष्य की समाप्ति के विषय मे भाष्य समाप्ति पर निम्न लेख लिखा गया है—

मार्गशीर्ष कृष्ण पक्ष १ (एक) शनौ सं० १९३९ मे समाप्त किया। वैशाख शुक्ल ११ स० १९४६ में छप कर समाप्त हुआ एवं ऋग्वेद तथा

यजुर्वेद का भाष्य ऋषि ने लगभग एक ही समय प्रारम्भ कर दिया था उनमे यजुर्वेद का भाष्य लगभग पाच वर्षों मे पूरा कर लिया था। साथ ही साथ आधे से अधिक ऋग्वेद का भाष्य भी वे निर्माण कर चुके थे।

महर्षि के ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका का मुद्रण स०१६३४मे प्रारम्भ हुआ था तथा १६३५मे समाप्त हो चुका था। परन्तु वेद भाष्यों का मुद्रण तथा सशोधन उनके स्वर्गारोहण के पश्चात् भी १६४० तक होता रहा। उनके भाष्य प्रथम तो मासिक अङ्कों मे ही निकलते रहे थे तथा उनके जीवन काल मे यजुर्वेद के ११ अध्याय एवं कतिपय मंत्र ५१ अङ्कों तक मुद्रित हुए थे और ऋग्वेद का प्रथम मडल ८६ सूत्र के पाचवे मत्र तक ही ५१ अङ्कों तक मुद्रित हो पाए थे। इस प्रकार उनकी उपस्थिति मे दोनो भाष्यों के लगभग पाचों हिस्से ही मुद्रित होसके थे शेष तो उनके देहावसान के पश्चात् प्रगट हुए हैं। यजुर्वेद का पूर्ण मुद्रण तो उनकी मृत्यु के लगभग ६ वर्षों के अनन्तर १६४६ में हुआ है। ऋग्वेद भाष्य का पूर्ण मुद्रण तो इस के भी १० वर्षों के बाद लगभग १६५६ वि० असाढ़ मास और कृष्ण पक्ष की पाचवी को हुआ है। इससे स्पष्ट हुआ कि यह दोनों भाष्य उनकी मृत्यु के चिरकालान्तर वर्तमान स्वरूप में दृष्टि गोचर हुए हैं। भाष्यों मे अनेक त्रुटियों के आने का यही कारण है। इन भाष्यों का हिन्दी में अनुवाद भीमसेन आदि विद्वानों ने किया है। और संस्कृत भाष्य भी अधिकाश महर्षि की देखरेख में पण्डितों ने किया है। इस विषय मे उनके एक पत्र का कुछ अश यहा उद्धृत करते हैं जिससे भलीभाति प्रतीत होता है कि उनके भाष्यों मे कुछ गड़बड़ी का आभास उन्हें स्वयं हो रहा था—

"और समर्थदान से लिखा है कि ज्वालादत्त नई भाषा बनाता है। यदि वह हमारे संस्कृत और अभिप्राय के अनुकूल हो तो ठीक है नहीं तो जो पोपलीला की भाषा बनाकर वहीं छपवादे और हमको मालूम न हो पश्चात् प्रसिद्ध होने से कोलाहल होगा तो क्या होगा? हा अब तक तो उसने कुछ भी नहीं किया परन्तु सम्भव है कुछ गड़बड़ करे तो हो सकता है। इस लिए जो कुछ वह बनावे उस पर समर्थ दान देखलो। जैसा कि अब भाष्य में एक गोल-माल शब्द (देवता) लिख दिया था। सो यह हमारे दृष्टिगोचर होने से शुद्ध हो गई यदि वहा ऐसी छपगई तो बड़ी हानि का सभव है इस लिए ऐसा न होना चाहिये।

मि० आ० व० ६
शुक्रवार स० १६४०
जोधपुर मारवाड़

दयानन्द सरस्वती

भाष्यों का बहुत कुछ अश महाराज की मृत्यु के अनन्तर ही संशोधित तथा मुद्रित हुए हैं। इन बातों को ध्यान में रख कर क्या ऋषि के उपलब्ध भाष्य अक्षरशः प्रमाणित माने जा सकते हैं? यदि नहीं तो, इसमें ऋषि का तनिक भी गौरव घटता नहीं है। रात दिन प्रचार मे व्यग्र रहने से ऋषि वेदभाष्य के लिये प्रतिदिन तीन चार घटों से अधिक समय न निकाल सकते थे फिर उन्होंने

भाष्य अपनी लेखनी से भी नहीं लिखे पंडित से ही लिखवाते। अत अशुद्धियों का रह जाना स्वाभाविक है एव किसी भी अवस्था में मिलता हुआ उनका भाष्य हमारे लिये स्तुत्य है, वेद के ज्ञान का प्रकाशस्तम्भ है।

इनके भाष्य सस्कृत तथा हिन्दी दोनों में है। संस्कृत में पहिले पदार्थ फिर अन्वय तथा भावार्थ दिये गये हैं स्थान स्थान पर निरुक्त, व्याकरण, ब्राह्मणग्रन्थ, उपनिषद्, और मनुस्मृति आदि आप्त-ग्रन्थों के प्रमाणों से भाष्य सजे हुए हैं। कहीं कहीं उव्वट सायणादि आचार्यों के पक्षों का विरोध भी बताया गया है। यजुर्भाष्यमें तो प्रत्येक अध्याय की समाप्ति पर अध्याय का सार तथा पूर्व अध्याय से सगति भी दिखाई गई है। प्रत्येक मंत्र के आदि मे उसका प्रतिपाद्य विषय भी दिया गया है। हिन्दी भाष्य में अर्थ तथा भावाथ दण्डान्वय सहित दिये गये हैं। दोनों प्रकार के भाष्यों की तुलना करने से कहा जा सकता है कि भाषा भाष्य संस्कृत की तुलना मे कहीं २ असमीचीन है। मुद्रण तथा सशोधन की त्रुटियों के अतिरिक्त अर्थ विषयक अशुद्धिया भी हैं अत भाषा भाष्य बहुत प्रामाणिक नहीं प्रतीत होता। सस्कृत भाष्य में ऋषि ने पदों का अर्थ देने में अपनी अनुपम योग्यता का परिचय दिया है। गभीरता से यदि अवलोकन करें तो प्रतीत होता है कि यह भाष्य ब्राह्मण उपनिषद् तथा निरुक्त की आर्ष शैली को ही अनुसरण करता है। भाष्य में दण्डान्वय के साथ पदों का अर्थ नहीं किया गया है इससे प्राय करते समय कठिनता प्रतीत होती है वस्तुत देखा जाय तो ऋषि ने ऐसा करके महान् उपकार किया है। पदों के अर्थ दे दिये गये हैं। पाठक उनका भलीभाति चर्वितचर्वण करें उनका एक के स्थान में अनेक अद्भुत अर्थ प्रतीत होने लगे गे। जब शब्दों के अर्थों के अन्तस्तल मे प्रवेश कर लिया जाय फिर मत्र को देखने से अर्थ में कुछ नवीन भव्यता और सुन्दरता प्रतीत होगी। दण्डान्वय के साथ दिये गए अर्थों मे पाठकों का परिश्रम नहीं करना पड़ता है जिसका परिणाम यह होता है कि शब्दों का गहराई मे चले जाने का स्वभाव नहीं पड जाता और इससे मत्र का सहज गभीर मनन करना कठिन हो जाता है। इस लिये महर्षि की यह शैली तो पाठकों की विचार शक्ति को अधिकाधिक उत्तेजना देने वाली है।

एक एक पद के अर्थ ऋषि भाष्य मे प्रकरण भेद से भिन्न २ किये गये हैं। इन पदों के अर्थ का सग्रह करके एक कोष का भी निर्माण किया जा सकता है (किया भी गया है)। ऋषि के भाष्य में पदों के जो अर्थ किये गये हैं वे निराधार नहीं हैं। उनके आधार मे अन्य आर्ष ग्रन्थ हैं। ऋषिभाष्य के पारायण के समय हमें एक शब्द के उस विशेष स्थान मे दिये गये अर्थ से ही सन्तुष्ट नहीं रहना चाहिये प्रत्युत जितने भी अर्थ किये गये हैं उनका वहा प्रयोग करके अर्थका आनन्द लेना चाहिये शब्दों के नाना अर्थ में संकोच न करना चाहिये। क्योंकि प्रकरण तथा विशेषणों के आधार पर शब्दों के अनेक अर्थ हो ही जाया करते हैं। सिद्धान्त के विरोधी न होने से उन अर्थों के लेने में कोई बाधा नहीं होती

है। हम देखते भी है कि प्राचीन ऋषियों ने मन्त्रों के भिन्न २ अर्थ किये हैं परन्तु वे सब संगत तथा सिद्धान्त के अनुरूप है। हमे भी इस विषय का ध्यान रखकर अपनी सुबुद्धि से नाना अर्थ करने मे सकोच न करना चाहिये। ऋषिभाष्य को इस दृष्टि से देखने से हम अन्तत इस परिणाम पर पहुचते हैं कि ऋषि ने मन्त्रों के जो अर्थ किये है वह एक रूप से पूर्ण हैं, सर्वथा पूर्ण नहीं क्योंकि स्वय उनके ही पदार्थों के अनुसार उस मंत्र का सगत द्वितीय अर्थ भी हो सकता है। इस रीति से देखने पर ऋषि भाष्य अनेक प्रकार के विचारों का भाण्डार प्रतीत होता है।

अपने भाष्य के विषय में लिखते हुए ऋषि लिखते हैं—

परन्त्वेतैर्वेदमंत्रैर्यत्राग्नि होत्राद्यश्व मेधान्ते यद्यत्कर्तव्य तत्तदत्रविस्तरतो न वर्णयिष्यते। कुत कर्मकाण्डानुष्ठानस्यैतरेयशतपथब्राह्मणपूर्वमीमासाश्रौतसूत्रादिषुयथार्थं विनियोजितत्वात्।

"'तथैवोपासनाकाण्डस्यापि प्रकरणशब्दानुसार तो हि प्रकाश करिष्यते। एवमेवज्ञानकाण्डस्यापि।"

अर्थात् ऋषि की प्रतिज्ञा है कि उनके भाष्य में ज्ञान कर्म तथा उपासना काण्ड का विचार नहीं किया जाएगा क्योंकि यह विषय दर्शन, उपनिषद् तथा ब्राह्मण ग्रन्थों मे विचार पूर्वक कहे गये हैं इसलिये भाष्य मूल अर्थ दिया जाएगा। इससे स्पष्ट है कि महर्षि दयानन्द जी के भाष्य अन्वय पूर्वक अर्थ का ही प्रतिपादन करते हैं। अन्य भाष्यकारों की भाति मन्त्रगत भावों की व्याख्या नहा करते हैं। इसका कारण पाठकों की मनन शक्ति तथा विचार प्रवाहिणी शक्ति की रक्षा करना ही है।

उक्त विचारों को ध्यान में रख कर वर्तमान काल मे उपलब्ध महर्षि दयानन्द के भाष्यो में प्रतीयमान शाब्दिक व आर्थिक त्रुटिया का समाधान हो जाता है। इस लेख में हमने भाष्य की बहिरङ्ग परीक्षा ही करने का प्रयत्न किया है। किसी अन्य अवसर पर अन्तरङ्ग परीक्षा करने का प्रयत्न करेंगे।

हमारा साहित्य और स्त्री-समाज

सा० कमलाबाई किबे

मध्य-श्रेणीके लोगों को सारे दिन कड़ी मेहनत के काम करने पड़ते है, इसलिए उन्हें यह मालूम ही नहीं पड़ता कि दिन कब बीता। थोड़ी बहुत जो फुरसत मिलती है, तो उसमें पढ़ने की प्रवृति कम होती है। किताब मोल लेकर पढ़ना तो बहुत दूर की बात है। यदि मुफ्त म पुस्तक मिल जाय, तो उसपर भी मुश्किल से ही ध्यान जाता है। वे यही कहते हैं—"हमें पढ़ने का वक्त ही कहा है? काम करते-करते जी ऊब उठता है। थोड़ा आराम करने की भी फुरसत नही मिलती, फिर पढ़ना कैसा? अगर पढ़ें भी तो किताबें चाहिए, उन्हें मोल लेने के लिए पैसा नहीं है। किसी से मागने जायें तो देता नहीं। पुस्तकालयों मे तलाश करें, तो मातृ भाषाकी पुस्तकें रखने वाले पुस्तकालयों का अभाव है।" दूसरी ओर प्रकाशकों और पुस्तक विक्रेताओं की यह चिल्लाहट सुनाई पड़ती है कि पाठकों और और खरीदारों के अभाव में उन्हें अपनी पुस्तकों की प्रतियां रद्दी के भाव मे बेचनी पड़ती हैं। इस बात मे सत्य का अंश न हो, सो बात नहीं। हा कुछ लोगों को मुफ्त में कोई किताब मिल जाय तो पढ़ने की अनिवार्य इच्छा हो आती है, लेकिन पुस्तक जिस हालत में मिलती है, उसी हालत में उसका वापस आना बहुत कम होता है, पर इससे अधिक आशा करना भी फिजूल है।

इधर हमारे अनेक देशवासी सन्तोष की मूर्ति बने बैठे हैं। भविष्य में अच्छा समय आने वाला है, बस इसी आशा पर किसी वर्तमान हलचल में भाग लेना हराम समझते है—नशेबाजों की तरह सुखस्वप्न देखने में ही व्यस्त। भविष्य में नया जोश और नई स्फूर्ति आने की बातें सोचते हैं; किन्तु स्फूर्ति रखने का जा प्रधान साधन है पुस्तकावलोकन, उससे स्वप्न में भी परिचय प्राप्त नहीं करते। संसार के अनेकानेक विषयों के ज्ञान से भरी हुई पुस्तकें आप लोगों का उत्सुकता से मुंह ताक रही हैं। बाहरसे निर्जीव दीखने वाली पुस्तक आपको घर बैठ सब प्रकार की जानकारी देने को सदा तय्यार रहती है। पुस्तकों का यह स्वाभाविक धर्म ही है कि मनुष्य जब चाहे, तभी वे उसे ज्ञान दान करने को प्रस्तुत हैं। उन्हें कभी आलस छू कर भी नहीं निकलता, पढ़ने वाले यदि उसकी उपेक्षा भी करे, तब भी वे उसका तिरस्कार नहीं करतीं, वरन् वे अपने पाससे निकलने वाले व्यक्ति की ओर भी प्रेम से निहारा करती हैं। तब जो उन्हें अपनावेगा, उसके प्रति उनमे कितनी सहानुभूति और आदर पैदा होगा, यह आप स्वयं सोच लीजिए। जो पुस्तक अपने में भरा हुआ अगाध ज्ञान-भण्डार हमें हरदम सौंपने को तय्यार रहतो है, उसे अपने पास से हटाना कितनी शरम की बात है। इसका अर्थ तो यही है कि 'सब सुख दाता कल्प वृक्ष के नीचे बैठकर भी मनुष्य अकिंचन ही रहे। कल्प वृक्षों को साधारण इतर वृक्ष समझने वाले नादान मनुष्य के समान ही हमारे समाजकी

सीधी राह पर ले जाने वाले अच्छे लेखकों की भी कमी है।

आजकल समाज मे पढने की कुछ-कुछ रुचि उत्पन्न हुई दीख पड़ती है। ऐसी परिस्थिति में पुरुषों और स्त्रियों के हाथ में जो साहित्य पहुँचे वह उच्च कोटि का होना चाहिए। यदि ऐसा न होगा, तो समाज बाल्यावस्था में ही गलत रास्ते पर भटक जायगा, जिससे समाज और देश दोनों को हानि पहुँचेगी। ऐसा होने से उसका उत्तरदायित्व हमारे साहित्यनिर्माताओं पर होगा। भावी पीढ़ी के कल्याण पर दृष्टि रखकर हमारे साहित्यकारों को न्याय-बुद्धि, संगठन और विकार-रहित भावसे अपने इस कर्तव्यको निभाना चाहिए— विशेषकर इस बात मे बहुत सतर्क रहना चाहिए कि हमारी महिलाओं के हाथ में जो पुस्तक जाय, वह ऐसी हो, जो उसके विचारों को सन्मार्ग की ओर प्रेरित करे और उनके मन मे अच्छे संस्कार उत्पन्न करे। बात यह है कि कोई भी पुस्तक पढने से उसका प्रभाव पाठक के मन पर पडता है—अच्छी का अच्छा, बुरी का बुरा। स्त्रियोंके स्वभाविक कोमल अन्तःकरण पर तो यह प्रभाव बहुत जल्द पडता है। इसलिए यदि हमारी देशी भाषाओं के लब्ध-प्रतिष्ठ साहित्यिक खोज-बीन करके अपनी-अपनी भाषाओं की ऐसी पुस्तकों की सूची प्रकाशित कर दें, जो विशेषकर महिलाओं के पढ़ने योग्य और हितकारी हों, तो देश का बड़ा उपकार हो इस काम को अनिश्चित समय तक के लिए उठा रखना हानिकारक है, क्योंकि महिलाएँ ही प्रत्येक समाज की आधार होती हैं, अतः देश हितैषी साहित्यकारों का कर्तव्य है कि वे महिलाओं की सर्वांगीण उन्नति में सहायता पहुँचायें।

प्रति वर्ष अनेकों पुस्तकें निकलती हैं, बहुत-सा सामयिक साहित्य भी पैदा होता है, किन्तु महिलाओं में उन्हें पढ़ने वालियों की संख्या कितनी है? बहुत कम। यह बात ठीक नहीं है। मैं यह मानती हूँ कि सब साहित्य एकदम नहीं पढ़ा जा सकता, फिर भी बराबर समय निकाल कर प्रयत्न करते रहने से बहुत कुछ पढा जा सकता है। दुर्भाग्य वश हमारे समाज मे कितनी ही स्त्रियां ऐसी पाई जाती हैं, जो अंग्रेजी भाषा मे प्रकाशित कहानियों और उपन्यासों को पढने में अपना गौरव समझती हैं, पर जब मातृ भाषा के ग्रन्थोंका प्रश्न आता है, तो वे कह बैठतीं हैं—"हमारी भाषा मे पढने लायक चीज निकलती ही क्या है?"

ऐसी महिलायें क्या कभी अपनी सन्तान मे मातृभाषा के प्रति प्रेम उत्पन्न कर सकेंगी? क्या संकुचित विचारों की ये स्त्रियां आदर्शमाता बन सकती है? इस प्रसंग मे एक घटना का वर्णन कर देना अनुचित न होगा। एक मुख्य विद्यालय की अध्यापिका से मैंने पूछा—"क्या आपके विद्यालय मे खास खास धार्मिक ग्रन्थ पढाये जाते है?" उक्त अध्यापिकाजी ने तुरन्त ही उत्तर दिया 'पाठ्य-विषय तथा विद्यालय-सम्बन्धी अन्य व्यवहारिक कार्य ही कौन थोड़े हैं, जो धार्मिक ग्रन्थों का बोझ सिर पर लादा जाय?" यह उत्तर सुनकर मैं आश्चर्य मे आ गई। जिन शिक्षिकाओं के हृदय मे धार्मिक ग्रन्थों के प्रति ऐसी भावना हो, वे लड़कियों को धर्म का ज्ञान क्या देंगी? अच्छा भाई

धार्मिक भावना से नहीं, बल्कि सुन्दर, ग्रंथ समझ कर ही हमारी बहनें यदि वाल्मीकि रामायण और महाभारत पढ़ें, तो उनको कितना बौद्धिक लाभ होगा ? जब महिलाएं इन राष्ट्रीय ग्रन्थों का इतना आदर करती हैं, तो फिर अशिक्षिता स्त्रियों के विषय मे क्या कहना।

जिन स्त्रियों के हृदय में राष्ट्रीय ग्रन्थों के प्रति ऐसी उपेक्षा हो, उनकी लड़कियों मे राष्ट्रीय विचार कैसे उत्पन्न हो सकते हैं ? बच्चों का क्या क्या अवश्यमेव पढ़ाया जाना चाहिए, इसका एक पाठ क्रम बनाने की जरूरत है।

अपनी मातृभाषा के ग्रन्थों का अध्ययन तो नित्यप्रति कर्तव्यकी भांति होना चाहिए। स्वयं तो पढना ही चाहिए, अन्य भाई-बहनोंको भी स्वाध्याय की आदत डालने के लिए प्रेरित करना चाहिए। सुन्दर विचारों से परिपूर्ण पुस्तक तो संसार के असंख्य रत्नों से भी अधिक मूल्यवान है। यदि किसी आदमी के पास अगणित द्रव्य हो, तो वह रत्नों को खरीद सकता है, शूर सैनिकोंकी सहायता से मनुष्य सम्राट भी भले हो बन जाय, पर यदि प्रतिभाशाली लेखककी प्रतिभा बाचकोंके अभावसे निरुत्साहित होकर लुप्त हो गई, तो वह किसी मूल्यपर भी वापस नही मिल सकती। मातृभाषा की अभिवृद्धि के लिए प्रत्येक स्त्री-पुरुष का कर्तव्य है कि वह यथाशक्ति द्रव्य, लेख अथवा प्रोत्साहन द्वारा अपने लेखकसमाजकी सहायता करे।

हमारी मातृभाषामें जो ग्रन्थ निकलते हैं, उनपर मासिक पत्रों तथा समाचार पत्रों में सम्मतियां तथा आलोचनाएँ प्रकाशित होनी चाहिए जिससे लेखकोंको प्रोत्साहन मिले। जनता को यह बतलानेकी आवश्यकता है कि कौन-कौन से ग्रन्थों में क्या क्या विचार हैं। वह दिन बड़े सौभाग्य का होगा, जब अपने देशके श्रेष्ठ कवि, उत्तम, प्रतिभाशाली नाटक रचयिता और उच्चकोटिके दार्शनिकोंके विचारों से हमारे घर-घर के छोटे बड़े सभी परिचित होंगे। अभी उस दिन एक बड़े घराने की महिलासे मैंने कवीन्द्र रवीन्द्रनाथका जिक्र किया, तो मुझे यह देखकर अत्यन्त आश्चर्य हुआ कि कवीन्द्रके विषय मे वे बिलकुल नहीं जानतीं। मेरा ऐसा ख्याल नहीं था कि हमारे लक्ष्मीपतियोंने विद्वानोंको अपने घरसे इतनी दूर रखा है। बिजली के छू जानेसे जैसा धक्का लगता है, वैसा ही धक्का मुझे उपर्युक्त घटनासे लगा।

अन्तमें एक बात और निवेदन कर दूं। आज-कल पढ़ी-लिखी स्त्रियोंमें भी एक बुरी आदत पड़ती जाती है, वह यह कि अपनी मातृभाषा बोलते समय वे अंगरेजी शब्दों का व्यवहार करने लगती हैं। यह लक्षण ठीक नहीं है। मेरी प्रार्थना इतनी ही है कि बोलना किसी एक ही भाषा मे चाहिए, जब मातृभाषामें बोलना हो, तब शुद्ध मातृभाषामे और जब अंगरेजीमे बोलना हो, तो केवल अंगरेजी मे। दोनो भाषाओंकी खिचड़ी बनाना ठीक नहीं।

अपनी मातृभाषाका प्रयोग शुद्ध रीतिसे हो और उसकी दिनों-दिन वृद्धि हो, इसके लिए प्रयत्न करना प्रत्येक स्त्री-पुरुषका कर्तव्य है। दृढ़ इच्छाशक्तिवाला एक व्यक्ति भी अपनी कार्यक्षमता से जब परिस्थितिको बदल सकता है, तो फिर यदि हम मिलकर अपनी मातृभाषाके साहित्यके भंडार की पूर्तिका प्रयत्न करें, तो हमें सफलता अवश्य मिलेगी। (विशालभारत)

शंका समाधान

(क्रमागत)

इन शङ्काओं के समाधान के लिए सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा का कार्यालय जिम्मेवार है।

—सम्पादक

Questions.—

IV SAMSCARAS

1 Which of the Samscaras do you consider essential for the present age and which unessential ?

2 Which of the Samscaras should, in your opinion, be made obligatory and which optional ?

V MARRIAGES

1. Of the different forms of Marriages in vogue at the present time, which do you think are suited to the present conditions of the country, and which of them are to be condemned ?

2 What are your views regarding (*a*) inter-caste marriages, (*b*) inter-racial marriages (*c*) early and unequal marriages and (*d*) civil marriages ?

3. What do you think is the reasonable age for a boy or a girl to marry ?

4. Do you think pre-puberty marriages should still continue ?

5. What are your views regarding 'Varasulkam' and 'Kanyasulkam '

Answers:—

1 The 16 are prescribed, the most essential being all of them but the most common are. Jatakarma, Namakarana, Annaprasana, Chudakarma, Karnavedha, Upanayana, Vivaha and Antyesthi

2. The above eight may be made obligatory and others may be left to the option

1 Only one form of marriage which is performed with the due Panigrahana caremony is to be welcomed

2 There should be no prejudice against inter-caste marriages In fact, the Arya Samaj dose not recognise the present caste system of the Hindu Society So the inter-caste question does not arise There is nothing against inter racial

marriages also The question is of political and social importance Early and unequal marriages should be stopped If the intercaste marriages become legal under the ordinary circumstances civil marriages would become meaningless

3. 24 for a boy and 16 for a girl is the ideal minimum It may be provisionally lowered to 20 and 14 but not less

4 There is no meaning to pre puberty marriages. They should be altogether stopped.

5 Vara or Kanya sulkam are abhorring terms Nothing in the name of dowry or contract should be permissible and a strong opinion against it should be created

प्रश्नः—

संस्कार

१. आपकी सम्मति मे वर्तमान काल मे कौनसे संस्कार जरूरी हैं और कौनसे गैरजरूरी हैं ?

२. आपकी सम्मति मे कौनसे संस्कार अनिवार्य्य और कौनसे ऐच्छिक होने चाहिएँ ?

विवाह

१ विवाह के भिन्न २ रूपों में से जो आजकल प्रचलित हैं आप किन्हे देश की वर्तमान अवस्थाओं के अनुकूल समझते हैं और किनको त्याज्य समझते हैं ?

२ अन्तर्जातीय, अन्तर्प्रान्तीय बाल तथा अनमेल विवाह तथा सिविल विवाह के सम्बन्ध मे आपके क्या विचार हैं ?

३ आपकी सम्मति मे लड़के और लड़की की विवाह योग्य कम से कम क्या उम्रें होनी चाहिए ?

४. क्या आपकी सम्मति मे युवावस्था से पूर्व अर्थात् अपरिपक्व अवस्था की शादियां अब भी जारी रहनी चाहिएँ ?

५ वरशुल्क और कन्याशुल्क के बारे मे आपके क्या विचार हैं ?

उत्तर:—

१ १६ संस्कारों का विधान है। ये सब ही आवश्यक हैं परन्तु निम्न बहुत प्रचलित है—

जातकर्म्म, नामकरण, अन्नप्राशन, चूडाकर्म, कर्णवेध, उपनयन, विवाह और अन्त्येष्टि।

२ ये आठो संस्कार अनिवार्य्य तथा अन्य ऐच्छिक ठहराए जा सकते हैं।

१. विवाह का केवल वही रूप स्वागत योग्य है जो पाणिग्रहण संस्कार के उचित अनुष्ठान के द्वारा पूर्ण हो।

२ अन्तर्जातीय विवाहो का विरोध नहीं होना चाहिए। वास्तव मे आर्य्य समाज हिन्दू समाज की वर्तमान जात-पात की पद्धति को स्वीकार नहीं करता है इसलिए अन्तर्जातीयता का प्रश्न नहीं उठता है। अन्तर्जातीय विवाह के विरुद्ध भी कोई बात नहीं है। समस्या एक राज-

नैतिक और सामाजिक महत्त्व की है। बाल तथा अनमेल विवाह बन्द हो जाने चाहिएँ। यदि सामान्य अवस्थाओं मे अन्तर्जातीय विवाह जायज होजाएँ तो सिविल मैरेज का कोई अर्थ न रहेगा।

२. विवाह की कम से कम आदर्श आयु लड़के की २४ और लड़की की १६ है। आरजी तौर पर यह २० और १४ भी की जा सकती है परन्तु इससे कम किसी अवस्था मे भी नहीं होनी चाहिए।

४ अपरिपक्व अवस्था के विवाहों का कोई अर्थ ही नहीं है वे बिलकुल बन्द हो जाने चाहिएँ।

५ 'वर और कन्या शुल्क' दोनों घृणित शब्द हैं। दहेज वा सौदे के नाम पर कुछ भी विहित नहीं है। और इसके विरुद्ध जबरदस्त लोकमत पैदा होना चाहिए।

शंका (२)

आर्य्य समाज के उपनियम (क) से विदित होता है आर्य्य सभासद् बनने के लिए 'सदाचार' से रहने की व्यवस्था दी हुई है। कृपा करके व्यवस्था दीजिए कि क्या कोई पुरुष एक समय मे दो विवाहिता स्त्रिया रखते हुए किसी आर्य्य समाज का सदस्य सिद्धान्तानुसार हो सकता है? जब कि प्रथम विवाहिता स्त्री सर्वथा स्वस्थ्य हो—

समाधान

इस मामले में उपनियम स्पष्ट है। सदाचार की व्याख्या मे पतिव्रत और पत्नीव्रत को भी शामिल किया गया है। एक से अधिक स्त्री के साथ विवाह करना पत्नीव्रत के सर्वथा विरुद्ध है इस लिए वह सिद्धान्तानुसार समाज का सदस्य नहीं हो सकता है।

शंका सं० (३)

(१) क्या स्वामी दयानन्द जी महाराज ने कहीं पर अपने पत्र-व्यवहार मे नियोग के स्थान पर पुनर्विवाह या विधवा-विवाह पर बल दिया है। क्या पुनर्विवाह या विधवा विवाह आर्य्य समाज की दृष्टि से विधेय है।

(२) आर्य्य समाज के वर्तमान सिद्धान्तों में (नियमों मे नहीं) परिवर्तन करने का आर्य्य समाज को अधिकार है?

समाधान

(१) विधवा विवाह विधेय है। इसके पक्ष मे ऋषि के पूना के व्याख्यान और मथुरा-शताब्दी का प्रस्ताव है।

(२) स्मार्त सिद्धान्तोंका परिवर्तन होसकता है।

शंका समाधान पर शंका

सितम्बर १९३७ ई० के सार्वदेशिक पत्र में पृ० ३०६ पर शंका समाधान प्रकरण मे जो उत्तर छपे हैं उनमे स० ३ का उत्तर अभावात्मक उचित नहीं है।

काम्य यज्ञों मे पुत्रेष्टि-यज्ञ भी एक है। प्राचीन काल म इसकी पद्धति जहा तहा काम मे लाई जाती था। इसकी वह शुद्ध विधि विलुप्त थी जिसे १५-१६ वर्ष क परिश्रम से सन् १९३६ ई० मे तैयार करके छापा गया है। इस सचित्र पुत्रेष्टि यज्ञ में लेखक द्वारा किये गये यज्ञों से उत्पन्न हुए २ बहुत स बालकों का सचित्र परिचय भी भूमिका मे दिया गया है।

चारों वेद, ब्राह्मण, उपनिषद, और आयुर्वेद को मथ कर पूर्ण अनुभव के साथ यह "पुत्रेष्टि-यज्ञ" छापा गया है। इस व्याख्या को आर्य्य समाज के विद्वानों और पत्रों ने पसन्द किया है।

संयुक्त प्रान्त में आर्य-वीर-सेवादल की वृहत् आयोजना

सार्वदेशिक सभा की आर्य्य-रक्षा समिति के सहायक मन्त्री जी का प्रस्तावित दौरा

आर्य्य-रक्षा समिति के सहायक मन्त्री श्रीयुत बा० शिवचन्द्र जी ने निम्न विज्ञप्ति आर्य्य-सामाजिक प्रेस में भेजी है —

संयुक्त प्रान्त की जिन जिन आर्य्य-समाजों में आर्य्य वीर सेवादल अभी तक स्थापित नहीं हुये हैं वहाँ पर यह दल मेरठ में होने वाले जयन्ती महोत्सव से पूर्व स्थापित हो जाने चाहिये ताकि जयन्ती के अवसर पर आर्य्य रक्षा समिति द्वारा स्वीकृत संयुक्त प्रान्तीय आर्य्य वीर सेवादल समितिका संगठन होसके।

आज युवक समुदाय आर्य्य समाज से निराश है और इसकी ओर आकर्षित नहीं होता है। इसके कई कारणों में से एक मुख्य कारण यह है कि इस समय आर्य्य समाज की ओर से उनके सन्मुख संगठित रूप से कोई रचनात्मक प्रोग्राम नहीं रक्खा हुआ है। युवक का जीवन उत्साह और उमंग का जीवन होता है। जहां भी कहीं उसे इन गुणों का विकास करने का अवसर मिलता है वहीं वह जाता है। आज उसे आर्य्य समाज में यह अवसर प्राप्त नहीं है। इसलिये यह अत्यन्त आवश्यक है कि आर्य्य-समाज देश के युवकों के सम्मुख एक ऐसा क्रियात्मक तथा रचनात्मक प्रोग्राम रक्खे जो उनके उत्साह को आगे बढाने वाला हो जिससे वे आर्य्य समाज के भविष्य को आशामय और उज्जवल बना सकें। आर्य्य-वीर सेवादल के प्रोग्राम को इस प्रकार का बनाने का यत्न किया जा रहा है जिससे उक्त अभाव की पूर्ति की जा सके।

ऐसा विचार है कि जयन्ती के अवसर पर आर्य्य-वीर सेवादल सम्मेलन करने से पूर्व इस योजना में विशेष रुचि रखने वाले कुछ मुख्य व्यक्तियों की लगातार कई दिवस तक बैठक की जावे और उनमें गम्भीरता पूर्वक यह विचार किया जावे कि आर्य्य वीर सेवादल के कार्य को किस प्रकार विस्तार दिया जावे। इसके द्वारा युवकों को किस प्रकार आर्य्य समाज की ओर आकर्षित किया जावे तथा आर्य्य समाज में आई हुई निराशा और शिथिलता को किस प्रकार दूर करने में यह सेवादल सहायक हो सकता है।

आशा है आर्य्य समाजें शीघ्र से शीघ्र आर्य्य-वीर सेवादल स्थापित कर उसकी सूचना मुझे तथा पं० शिवदयाल जी, सदर, मेरठ को देने की कृपा करेंगी। आर्य्य वीर सेवादल के नियम तथा प्रवेशपत्र आदि सार्वदेशिक सभा से मिल सकते हैं।

आर्य्य वीर सेवादल की योजना को संयुक्त प्रान्त में सफल बनाने के लिये दिवाली के पश्चात मैं अपना दौरा आरम्भ करूंगा। मेरा प्रोग्राम इस प्रकार होगा। कृपया इन समाजों के मन्त्रीगण नोट कर लें —

६—७ नवम्बर मुरादाबाद, ८—१० चन्दौसी,

११—१२ बरेली, १३—१४ शाहजहाँपुर, १५—१६ हरदोई, १७—१६ लखनऊ, २०—२१ फैज़ाबाद, २२—२५ बनारस, २६—२८ बनारस हिन्दू विश्व विद्यालय, २६—३० मिर्जापुर, १ दिसम्बर—४ इलाहबाद ५—६ फतेहपुर, ७—८ कानपुर, ६—११ आगरा, १२ मथुरा, १३ गुरुकुल वृन्दावन।

यदि उक्त प्रोग्राम म किसी प्रकार का परिवर्तन करना पड़ा तो उसकी सूचना पत्र अथवा तार द्वारा दे दी जावेगी।

मेरे दौरे के सम्बन्ध म जो मीटिंग बुलाई जावे, उस में यथासम्भवकेवल आर्य पुरुषोंको ही सम्मिलित किया जावे। आर्य्य युवकों को विशेष रूप से सम्मिलित करने का यत्न किया जावे।

सिवाय आर्यसमाज चन्दौसी के अन्य समस्त समाजों में उसी दिन सायंकाल को जिस दिन मैं पहुचूँ मीटिंग बुलाने का प्रबन्ध किया जावे! मीटिंग बुलाने का समय सायंकाल के ७ बजे से पूर्व और ७॥ बजे के पश्चात न रक्खा जावे! समय की पाबन्दी की जाव।

जिन शहरो मे एक से अधिक आर्यसमाजें हो वहा पर वहाँ की सबसे बड़ी समाज म मीटिंग बुलाने का प्रबन्ध किया जावे।

शुद्धि-समाचार

गत ६ अक्टोबर को मिस अरोहा मोआना हार्ड केसिल (Miss A H Hard Castle) नामक एक अंग्रेज़ महिला की शुद्धि हिन्दू धर्म्म में श्रीयुत जगद्गुरु शंकराचार्य्य (कुर्तकोटि) द्वारा बम्बई में हुई। यह देवी स्विटज़रलैंड में पैदा हुई थी और वहीं उनकी शिक्षा हुई थी। स्विटज़रलैंड की यूनिवर्सिटी की आप एम ए हैं और रोम तथा यूनान के धर्म्म और दर्शन ये उनके रिसर्च (अनुसन्धान) विषय रहे थे। गत वर्ष वे भारत में पधारी थीं और अध्ययन तथा अनुभव ने उन्हें आर्य्यधर्म्म को स्वीकार करने के लिए प्रेरित किया था। इस अवसर पर श्री जगद्गुरु ने आर्य्य धर्म्म की महत्ता पर अच्छा प्रकाश डाला था। उनके भाषण का सार इस प्रकार है —

'हिन्दू धर्म्म संसार के प्रचलित धर्म्मों में सबसे अधिक सहिष्णु है यह बात इसके आन्तरिक भाव को ठीक २ समझने से स्पष्ट होती है। जो लोग जिनमें बहुत से हिन्दू भी शामिल हैं यह कहते हैं कि आर्य्य धर्म्म के दर्वाजे बाहर वालों के लिए बन्द हैं वे गलती पर हैं।

सनातन आर्य्य धर्म्म का वर्तमान हिन्दू-धर्म्म विकृत वा परिवर्तित रूप है और इस परिवर्तन की वजह से ही लोग इस प्रकार की गलती कर बैठते हैं। आर्य्य धर्म्म समस्त कालों और समस्त लोगों के लिए था और इस गलती की वजह से ही वह हिन्दुस्तान तक ही कट्टर ब्राह्मणों द्वारा परिमित कर दिया गया था। वास्तव में हिन्दू धर्म्म का वह रूप जो प्राचीन काल के आर्य्यों के धर्म्म के साथ सम्बन्ध स्थिर रख सका है उदार और सहिष्णु होगा क्योंकि मानव-इतिहास के प्रारम्भ से ही आर्य्य जाति ही सबसे अधिक उदार और सहिष्णु रही है।—हमारा कर्त्तव्य है जो लोग इस धर्म्म के प्रासादों से लाभ उठाना चाहें उन्हें लाभ उठाने दें। ऐसा न करना स्वार्थपरता और अधार्मिकता है और हिन्दू धर्म्म की स्प्रिट के विरुद्ध है।

'हिन्दू धर्म्म भेड़ें नहीं मूंडता है और इसका कारण यह है कि हमारा धर्म्म सहिष्णुता पर आश्रित है। हमारा कर्त्तव्य है हम अपनी भुजाओं को पसारें और पश्चिम के उन लोगों का स्वागत करें जो हममें आना चाहें और उन आध्यात्मिक प्रसादों का भोग करना चाहें जो हिन्दू धर्म्म हमें प्रदान करता है। परन्तु मैं इस अवसर पर यह चेतावनी दूंगा कि जब हम अपने में नए भाइयों और बहनों को मिलाएँ तो हमे इस पर खुशी से फूलना नहीं चाहिए। हमारा व्यवहार ऐसा भी नहीं होना चाहिए मानो हमने दूसरे मत पर विजय प्राप्त की है। यह धार्मिक भावना नहीं है और निश्चय ही आर्य्य धर्म्म की भी यह भावना नहीं है। हम केवल पथ प्रदर्शकों और सहायकों के रूप मे ही अपने दायरे में नए आगन्तुकों का स्वागत करेंगे। पश्चिम के कुछ लोग हममें मिल गए हैं और हमारे धर्म्मानुयायी हो गए हैं इस पर हमे विजय दुदुभि नहीं बजानी

चाहिए। क्यो ? इसलिए कि हमने कभी संख्या बढ़ाने की नहीं सोची है। हमारी जाति ने कभी भी मुट्ठी भर से सौ, सौ से हजार और इससे आगे लाख, करोड़ इस प्रकार के अनुपातो मे उन्नति नहीं की है। हमे कोई समय याद नहीं है जब हम मुट्ठी भर थे। हम सदैव एक बड़ी जाति और एक बड़ा परिवार थे।

मैं बड़े प्रेम से कुमारी हार्ड कैंसिल का जो इसके बाद 'अरुणा' के नाम से सम्बोधित होगी। आर्य्य धर्म्म मे स्वागत करता हूँ। मैं उनके सुख और प्रसन्नता की कामना करता हूँ। मैं उन्हें विश्वास दिलाता हूँ कि उन्हे इस बात की चिन्ता नहीं करनी चाहिए कि वह उन लोगों के साथ रहेंगी जो उनकी दृष्टि मे असभ्य होंगे और कभी २ उनके भावों को ठेस पहुँचाएंगे और न उन्हें यह अनुभव करना चाहिए कि अपने बचपन के धर्म्म से उनका सम्बन्ध विच्छेद हो गया है। उनके नए धर्म्म म सब श्रेष्ठतम शिक्षाएँ उन्हें मिलेगी जो व्यापक रूप मे उनका प्राचीन धर्म्म ही है। मै उनसे कहूँगा कि वे हिन्दू देवी के रूप मे अपना नया जीवन यापन करें।

मेरी कामना है कि कुमारी अरुणा हिन्दू समाज मे बहुमूल्य योग सिद्ध होगी और अपनी उपस्थिति से सदैव उसे आल्हादित करेंगी।

—

साहित्य-समीक्षा

'अग्नि-होत्र' (अंग्रेजी)

श्रीयुत डा० सत्यप्रकाश रसायन शास्त्र के विद्वान हैं। वैज्ञानिक आधार पर अग्निहोत्र और उसकी महत्ता के अध्ययन का आपका मौलिक प्रयास सर्वथा स्तुत्य है प्रस्तुत पुस्तक में आधुनिक वैज्ञानिक दृष्टिकोण से अग्नि-होत्र की विवेचना की गई है। आज के भौतिक उपयोगितावाद के युग में प्रत्येक बात को तर्क तथा वैज्ञानिक विवेचन के आधार पर ग्रहण करने वाली जनता के लिए विषय की सूक्ष्म आध्यात्मिक विवेचना न करके, आपने वैज्ञानिक दृष्टिकोण से ही, अग्निहोत्र की भौतिक उपयोगिता सिद्ध की है। पूर्वीय संस्कृतिकी प्रत्येक बात को अन्धविश्वास और धार्मिक ढकोसले के नाम से पुकारने वाले व्यक्तियों के प्रति एक सच्चे वैज्ञानिक के नाते आपने एक महत्त्व पूर्ण विषय पर प्रकाश डालकर अपना कर्त्तव्य पालन किया है। पुस्तक की उपादेयता इस कारण और भी बढ़ जाती है कि अग्निहोत्र जैसे आवश्यक विषय के अध्ययन के लिए इससे पश्चिमी विद्वानो को भी प्रेरणा मिलेगी।

प्रारम्भिक अध्यायों में आपने अग्निहोत्र के लिए आवश्यक ज्ञान का संकलन किया है। अग्नि होत्र के विविध कृत्यों का विश्लेषण करते हुए आपने बतलाया है कि इसकी रीति पूर्णत वैज्ञानिक है। यज्ञ का समय उसके उपकरण, यज्ञ के आरम्भ मे अग्नि प्रतिष्ठा, समिधा प्रदान तथा एक नियमित समयान्तर से वैदिक मन्त्रों के अन्तमें आहुतियों का दिया जाना, घृताहुतियों का सामग्री की आहुतियों से पूर्व वितरण आदि सम्पूर्ण बातें एक निश्चित वैज्ञानिक ढग पर रखी गई हैं। उपर्युक्त सम्पूर्ण क्रियायें यज्ञ कुण्ड में प्रतिष्ठित अग्नि को शनै शनै. एक नियमित रूप से बल देकर प्रज्वलित करने में सहायक बनती हैं। विचारने से स्पष्ट हो जाता कि इन क्रियाओं में ज़रा सा व्यतिक्रम होने से भी अग्नि का स्थिर रूप से प्रज्वलित रहना असम्भव हो जायगा अग्नि प्रतिष्ठा के उपरान्त यदि घृत की समिधाओं का विधान न रखा जाय, अथवा समिधाप्रदान की क्रिया से पूर्व पंच घृताहुतियों का विधान रखा जाय, और सामग्री की आहुतियों को घृताहुतियों से पूर्व ही रखा जाय तो ये सब क्रियाएँ जो एक वैज्ञानिक शृङ्खला में आबद्ध होकर अग्नि के प्रज्वलन में सहायक होती हैं, प्रत्येक प्रकार से उस कार्य मे बाधक बन जावें। अस्तु अग्नि के नियन्त्रित तथा नियमित रूप से जलनेके लिए ही इन सब क्रियाओंको एक विशेषक्रम में बांधा गया है।

अगले अध्याय मे यज्ञ मे काम आने वाले काष्ठ, वनस्पतियों तथा अन्य पदार्थों का वर्णन, गुण विवेचन तथा वैज्ञानिक विश्लेषण है। इन पदार्थों का गुण-विवेचन संस्कृत, बगला, अरबी फारसी तथा अंग्रेज़ी ग्रन्थों के आधार पर किया गया है। पदार्थों के रासायनिक विवेचन मे पारिभाषिक शब्दों का प्रयोग सर्व साधारण को कठिन जान पड़ेगा।

रासायनिक प्रक्रियाओ का वर्णन करते हुए आप लिखते हैं कि हमारे पूर्वज इस तथ्य पर पहुँच चुके थे कि प्रत्येक वस्तु के परमाणु अग्नि के सम्पर्क द्वारा अधिक क्षमता पूर्ण तथा प्रभावशाली बन जाते हैं। जब अपने मूल गुणों को अक्षुण्ण रखते हुए वाष्प में परिवर्तित

लेखक—श्री सत्यप्रकाश डी०एस०सी। प्रकाशक सार्वदेशिक आर्य्य प्रतिनिधि सभा देहली। कागज़ छपाई सुन्दर सजिल्द पुस्तक का मूल्य २।) विदेश से ५ शिलिंग।

होते ही शक्ति का रूप धारण करलेता है। अग्निहोत्र की सम्पूर्ण उपादेयता इसी सिद्धान्त पर स्थिर है। यदि औषधियो का मूल रूप मे ही सेवन किया जाय तो वे इतनी गुणकारी सिद्ध न होगा जितनी वे अग्नि के सम्पर्क मे आकर बन जाती है। इस प्रकार अग्निहोत्र के वायु मिश्रित सूक्ष्म तत्त्व हमारे शरीर मे प्रवेश कर हमें ही स्वस्थ नहीं बनाते, अपितु हमारे लिए एक स्वास्थ्यकर वातावरण भी पैदा करते हैं, जिससे हमारे प्राणो को बल मिलता है। पाश्चात्य वैज्ञानिक प्राय १८वी शताब्दि तक जलने की वास्तविक प्रकृति से अनभिज्ञ थे केवल इम्म विचार को ध्यान मे रखते हुए हमे अग्नि होत्र की अवहेलना न करनी चाहिए। हमारे ऋषियो ने शायद अपनी अनुभूतियों तथा अनुभव के आधार पर ही अग्निहोत्र की उपयोगिता को समझ लिया था, और उसके लिए इस प्रकार की वनस्पतियों को भी चुन लिया था जो हमारे लिए स्वास्थ्यकर एव बलप्रद हो। अपने अनुभव के आधार पर ही सम्भव उन्होंने यह भी जान लिया था कि अग्नि होत्र की क्रिया द्वारा हम बहुत से संक्रामक रागो से मुक्त रह सकते हैं। आधुनिक वैज्ञानिको ने भी फिनाइल सदृश कतिपय कीट नाशक औषधियों का आविष्कार किया है। विद्वान लखक ने अपन वैज्ञानिक अनुभव द्वारा यह सिद्ध किया है कि अग्नि होत्र की रासायनिक प्रक्रिया मे कई प्रकार के एसिड तथा फिनाइल जैसे अनेक पदार्थ उत्पन्न होते हे जा निश्चित रूप से कीट नाशक तथा सक्रामक रोगो से रक्षा करने वाले हैं।

प्रारम्भ के अध्यायो मे बताया गया है कि अग्निहोत्र मे विभिन्न काष्ठ, — वनस्पति, मेवा आदि काम में आते है। अग्नि का तापमान पर्याप्त ऊचा तथा क्रमशः परिवर्तनशील रहता है। १२००° सेंटी ग्रेड से १३००° सेंटी ग्रेड अ'शों तक अधिक से अधिक रहता है। लपटो के बुझ जाने पर ३५० सेन्टी ग्रेड से ६०० सें० अ श तक ताप रहता है। यह ताप कतिपय रासायनिक क्रियाओ के लिए अत्यन्त उपयुक्त है। २००° से ३३०° अ'श तक का ताप चन्दन अगर, देवदारु तथा ऊचे ताप से उबलने वाले अन्य सुगन्धित पदार्थ के तैल तत्त्वो को वायु में मिला देता है। इसी प्रकार अन्य पदार्थ अपने अनुकूल ताप पर वायु में मिलते रहते हैं। वायु मे मिश्रित होने की क्षमता रखने वाले तत्वों के वायु मे मिलने के उपरान्त एक और महत्त्वपूर्ण रासायनिक क्रिया होती है जिसे फ्रोटो कैमिकल रीएक्शन कहते हैं। सूर्य की किरणो के सम्पर्क से वायुमिश्रित इन तत्त्वों मे जो परिवर्तन होता है, वह स्वास्थ्य के लिए अत्यन्त उपादेय होता है।

पुस्तक के अन्त मे ऋतुओं के अनुकूल सामग्री के परिवर्तन शीर्षक पाठ मे आपने सामग्री मे इसप्रकार को पूर्णत वैज्ञानिक सिद्ध किया है।

हमे आशा है कि अंग्रेज़ी पाठकों मे पुस्तक का यथेष्ट समादर होगा। इस प्रकार के साहित्य का हिन्दी मे प्राय अभाव-सा ही है। ऐसी उपयोगि पुस्तक के अनुवाद की अत्यन्त आवश्यकता है। विदेशी चकाचौंध मे आकर जो लोग हवन की खिल्ली उडाया करते हैं उन्हे श्री डाक्टर सत्यप्रकाश जी की लिखी इस पुस्तक को अवश्य पढना चाहिए। इससे उन्हे विदित होगा कि अग्नि होत्र की विधि कितनी विज्ञानमूलक, उपयोगी और अनिवार्य हे।

श्री सत्यप्रकाश जी डी० एस० सी० के परिचय के सम्बन्ध मे इतना कह देना काफ़ी है कि आप श्रीयुत गङ्गाप्रसाद जी उपाध्याय के सुयोग्य पुत्र और इलाहबाद यूनिवर्सिटी में विज्ञान के अध्यापक हैं। डाक्टर साहब ने प्रस्तुत पुस्तक अपने पूज्य पिता जी को ही समर्पित की है। (आर्य्यमित्र)

लेख-सूची

केन्द्रीय अनाथालय, रावी रोड, लाहौर की आवश्यकताएं

(ले० ला० बोसाराम रिटायर्ड स्टोर कीपर N W R)

(१) इस समय इम अनाथालय मे १७५ बालक बालिकाएं है और शीत ऋतु आरहा है। उनके लिये गरम वस्त्र, रजाई, तुलाई, और दरियो की आवश्यकता है। दानी सज्जन जहां अपने बालको के लिये वस्त्र बनवाएंगे वहां इन बालको का भी अवश्य ध्यान रखे ।

(२) वस्त्रो के अतिरिक्त भोजन के लिये घृतादि की आवश्यकता है दानी सज्जन घृत भेजें अथवा उसके लिये दान देकर कृतार्थ करे।

(३) अनाथालय का व्यय १३००) मासिक है वह दानी महाशयो की कृपासे पूरा होगा इसलिये प्रत्येक नर नारी दान देकर इस व्यय को पूरा करें।

(४) इस अनाथालय के प्रबन्ध के विषय मे यह लिखना पर्याप्त होगा कि सरकार ने जो भगाए गए बालक पकड़े थे जिनके सबधियो का पता नही लगा वह सब बालक इसी अनाथालय मे रखे है।

(५) अनाथालय के बालक कभी बाहर मांगने के लिए नही भेजे जाते हैं। उनके पढ़ाने के लिये स्कूल भी हैं जो सरकार से स्वीकृत है।

(६) इसके अधिकारी इस समय निम्न सज्जन है —

प्रधान श्री स्वामी स्वतन्त्रानन्द जी

उप प्रधान पं० विश्वम्भरनाथ जी उप प्रधान आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब

,, पं० ठाकुरदत्त शास्त्री मुलतानी लाहौर

,, डाक्टर गणेशीलाल जी MB, BS

कोषाध्यक्ष श्री विज्ञानशील जी, बी० ए०

अत मे नम्र निवेदन है प्रत्येक धर्मप्रेमी सज्जन अपनी शक्त्यानुसार कुछ न कुछ दान देकर सभा का हाथ बटावें और पुण्य के भागी बनें।

ओ३म्

सार्वदेशिक

* सार्वदेशिक-आर्य प्रतिनिधि सभा देहली का मासिक मुख्य पत्र *

वर्ष ११	मार्गशीर्ष १९९४ दिसम्बर १९३७ ई०	दयानन्दाब्द ११३	अङ्क १०

वेद की शिक्षाएँ

स नो बन्धुर्जनिता स विधाता । Yaju [illegible] 10

वह हमारा बन्धु, उत्पादक और पालक है ।

The Lord is our Friend, Creator and Sustainer

स न इन्द्रः शिवः सखा । Rig [illegible]-3

वह परमेश्वर हमारा कल्याणकारी मित्र है ।

The Lord is our Gracious Guide and Friend

सम्पादकीय—

आर्य्य समाज का भविष्य

श्रीयुत माननीय म० कृष्ण जी ने अपने पत्र 'प्रकाश' में 'आर्य्य समाज का भविष्य' शीर्षक एक लेख लिखा है। उसमें उन्होंने इस समस्या पर विचार किया है कि इन दिनों आर्य्य समाज की ओर नवयुवक क्यों नहीं आकर्षित होते हैं और आर्य्य समाजियों के बच्चे आर्य्य समाज में क्यों नहीं आते हैं। श्री महाशय जी आर्य्य समाज के पुराने और अनुभवी सेवक हैं। हमे आशा थी कि वे इस समस्या पर जो इस समय आर्य्य समाज की एक अत्यन्त महत्व पूर्ण समस्या है ऐसा प्रकाश डालेंगे और इसका ऐसा हल प्रस्तुत करेंगे जिसके सम्बन्धमे कुछ कहनेकी आवश्यकता शेष न रहेगी परन्तु खेद है उसके सम्बन्ध में बहुत कुछ कहने की आवश्यकता शेष रह गई है।

आर्य्य समाज की ओर नवयुवकों के आकर्षित होनेके सम्बन्ध मे जो चर्चा श्री कृष्ण जी ने अपने पत्रमे की है उसको पढकर तो यही कहना पडता है कि "दोनो पक्षोंमे बहुत कुछ कहा जासकता है।" "आर्यसमाज की ओर नवयुवकोंको आकर्षित करना चाहिए, वह इस समय आकर्षित नहीं हो रहे, यदि आर्य समाजियों के लड़के आर्य समाज में नहीं आते तो कोई मुजायका नहीं, हमे आर्य समाज के बाहर के नवयुवकों को खींचना चाहिए, पर करें क्या रोटी का प्रश्न तथा राजनैतिक अवस्थाएँ नवयुवकों को आर्य समाज में नहीं आने देतीं।" 'इस प्रकार के विचार प्रकट करते हुए, अपने लेख के अन्त में श्री म० कृष्ण जी अपने पाठकों को यह प्रेरणा करते हैं कि "आदर्शवादी बनो, आदर्श को हर समय अपने सामने रक्खो, विश्वभर को आर्य बनाओ।"

हमें इस लेख का बहुत कुछ अंश अप्रासंगिक प्रतीत हुआ है, ऐसा कहने के लिए हम अपने भाई से क्षमा मागते है। प्रश्न यह है कि आर्य समाज में नवयुवक क्यो नहीं आते ? इसका उत्तर सीधे तौर पर हमें देने का यत्न करना चाहिए। आर्थिक तथा राजनीतिक समस्याओं का इस प्रश्न से कोई सम्बन्ध नहीं और यदि कोई है भी तो उसके विचार करनेकी हमें यहां आवश्यकता प्रतीत नहीं होती।

नवयुवकों को आकर्षित करने के लिए नवयुवकों जैसे हृदय रखने वाले, उनके समान ऊंची आकांक्षाओं में ओत प्रोत रहने वाले, उदार-हृदय विशाल व्यक्तित्व रखने वाले, अपने तन, मन, और धन को नवयुवकों के अर्पण करने वाले व्यक्तियों की आवश्यकता होती है। हम पूछते हैं कि ऐसे व्यक्ति इस समय आर्य समाज में कहा हैं ? आर्यसमाज के प्रारम्भिक जीवनमें महात्मा हंसराज तथा महात्मा मुंशीराम जी ने अनेक नवयुवकों के लिए अपने आपको आकर्षण का केन्द्र बनाया था और उनके हित के लिए वे अपने आपको सर्वदा अर्पण करनेके लिए तय्यार रहते थे। सैंकड़ों नवयुवक इस समय ऐसे मिलते हैं जिनको आर्थिक, नैतिक और आध्यात्मिक सहायता महापुरुषों ने की थी। उनका यह गुण अर्थात् आत्मसमर्पण नवयुवकोंके लिए आकर्षणका कारण

बनता था।

स्वर्गीय पण्डित केशवदेव जी शास्त्री आर्य समाज के क्षेत्र में सम्मोहनी शक्ति से युक्त प्रभाव शाली व्यक्तित्व के मालिक थे। जहा वे रहते थे, देश के कोने २ से सब प्रान्तों के नवयुवक उनके पास खिंचे चले आते थे। उनका घर विद्यार्थियों के लिए एक आश्रम का रूप धारण किए रहता था, उनकी कमाई नवयुवकों के लिए साझी कमाई समझी जाती थी। नवयुवक स्थान २ से उनसे पत्र व्यवहार द्वारा अपने सुख दुख का वृत्तान्त लिखते रहते थे और शास्त्री जी सदैव उनके पत्रों का आशा-भरी भाषा में उत्तर देना अपना गौरव समझते थे। इस समय जब हम उनके व्यक्तित्व का चिन्तन करते हैं तो हमे उनके समान आर्य्य-समाज मे दूसरा व्यक्ति देखने में नहीं आता।

आर्य समाज के नेता नि सन्देह आर्य समाज की सेवा में लग रहे हैं परन्तु नवयुवकों की समस्याओं को सुलझाने, उनकी आकांक्षाओं में उनका साथ देने तथा उनके जीवन-मार्ग पर उनके साथ चलने के लिए विरला ही कोई व्यक्ति इस समय हमे देख पड़ता है। यही कारण है कि आदर्शवादी नवयुवक आर्य समाज के निकट आना पसन्द नहीं करते।

बाकी रही यह बात कि आर्य्य समाजियों के बच्चे आर्य्य समाज मे क्यों नहीं जाते इसका कारण हमारे ख्याल में आर्य समाज के वर्तमान घरेलू युद्ध हैं। नवयुवकों के मन में यह भाव दिनोंदिन स्थान पकड़ता जाता है कि आर्य समाज में सिवाय व्यक्तिगत झगड़ों के दूसरी बात नहीं रही है। हमारे सामाजिक पत्रों में जब दिनरात एक दूसरे के व्यक्तित्व को गिराने तथा पार्टी बाजी की घृणित चालों को प्रोत्साहन देने का कार्य हो रहा हो तो उस समय यदि आर्य्य समाजियों के लड़के आर्य्य समाज में जाना पसद न करें तो आर्य्य समाजी उनको बाधित भी कैसे कर सकते हैं ?

धार्मिक समाज के उत्थान का सबसे बड़ा साधन आत्म-समर्पण समझा जाता है। आत्म-समर्पण के अर्थ यह होते हैं कि हम दूसरों को सदा अपने से आगे रखें या रखने की चेष्टा करें। उनके प्रति सदैव उदारता का व्यवहार करें। यदि वे किन्हीं अधिकारों को हमसे छीनकर अपने हाथ में लेना चाहें तो हम प्रसन्नतापूर्वक उन अधिकारों को उनके हाथों सौंप दें और स्वय चुप्पी साधकर कुछ अर्से के लिये दूसरों को यह देखने का अवसर देवें कि हमारे विरोधियो की रीति नीति कहा तक कृत कार्य्य सिद्ध हो सकती है। परन्तु यदि हम धार्मिक समाज के अन्दर अपने विरोधियों के प्रति उदारता का व्यवहार न करते हुए स्वय डटकर अपने स्थान से टस से मस न हों तो हम धार्मिक समाजको एक राजनैतिक क्षेत्र बना देते हैं। जब आत्मसमर्पण (Self-Surrender) के स्थान में आत्म सवर्द्धन (Self aggression) के नियम का व्यवहार होता है तो उसकी त्रुटिया सब उसके साथ उपस्थित हो जाती हैं।

सक्षेप में आर्य्य समाज के क्षेत्र में नवयुवकों के लिये आकर्षण न होने के निम्न कारण हैं जिन पर ठडे दिल से हम लोगों को विचार करना चाहिये :--

(१) उदार तथा विशाल व्यक्तित्व का अभाव।

(२) नवयुवकोंके प्रति सहानुभूति तथा सम्वेदना रखने वाले व्यक्तियों का अभाव।

(३) नवयुवकों के लिये अपने तन, मन, धन को अर्पण करने वाले आर्य्य समाजस्थ पुरुषों का अभाव।

(४) आर्य्य समाज के परस्पर घरेलू झगड़ों की बढ़ती हुई प्रवृत्ति तथा उसके कारण नवयुवकों को उत्तम प्रेरणा का न मिलना।

(५) आर्य्य समाज के क्षेत्र में आत्म समर्पण के स्थान में आत्म मनर्द्धन के नियम का व्यवहार।

ऋषि दयानन्द का चित्रपट (फिल्म)

श्री पंडित गंगाप्रसाद जी चीफ जज टिहरी के 'आर्य्य मित्र' में प्रकाशित लेख के आधार पर कि ऋषि दयानन्द का चित्रपट (फिल्म) बनाया जाय आर्य्य पत्रो में विवाद उठ खड़ा हुआ है। यह विषय जैसा कि पंडितजी ने अपने लेख में प्रगट भी किया है सार्वदेशिक सभा की अन्तरंग सभा के विचाराधीन है। अच्छा होता यदि अन्तरंग सभा के निर्णय की प्रतीक्षा की जाती और आवश्यक होने पर ही लोकमत जाना जाता।

नाटक और सिनेमा का कोई मूल्य ही नही है यह हम स्वीकार नहीं कर सकते हैं। इनका मूल्य इनके आधार वर्द्धक सुरुचिपूर्ण होने और सदुपयोग पर आश्रित है। आज पश्चिम में भी सिनेमाओं द्वारा विविध विषयों की शिक्षा के प्रचार में इनका प्रयोग उपयोगी सिद्ध हो रहा है। इसमें सन्देह नहीं जो रूप इन दोनों का हमारे सामने इस समय है वह एक दम भयंकर हैं। इसी पर से लोगों को वे त्याज्य समझ पड़ते हैं और उनका ऐसा समझना स्वाभाविक और ठीक ही है।

ऋषि दयानन्द का फिल्म बनाने की कोई विशेष आवश्यक्ता नहीं देख पड़ती है। ऋषि का जीवन इतना प्रकाशित है कि फिल्म द्वारा उसके प्रकाशित किए जाने की आवश्यक्ता प्रतीत ही नहीं होती है। जनता सिनेमाओं के वर्तमान दूषित वातावरण और इस प्रवृत्ति के दुष्परिणामो से इतनी भयभीत हो चुकी है कि वह ऋषि के फिल्म की बात सोचना भी गवारा नहीं करती हैं। इसके सैद्धान्तिक पहलूके सम्बन्ध में यदि कोई है सार्वदेशिक वा धर्मार्य्य सभा को शीघ्र सुनिश्चित व्यवस्था देनी चाहिये। नाटकों इत्यादि के सम्बन्ध में भी व्यवस्था देनी चाहिये।

जो लोग आर्यसमाज के प्रचार में सिनेमा के उपयोग या ऋषि दयानन्द के फिल्म की बात कहते हैं उनके इरादों पर सहसा सन्देह नही होना चाहिए। जो आर्य्य लोग इस प्रकार का प्रस्ताव करते है उस पर हमें ठंडे दिल से विचार करना चाहिए और यदि सिनेमा द्वारा प्रचार व्यवहारिक दृष्टि से ठीक जचता हो तो उसका उपयोग करने में झिझक नही होनी चाहिए। यदि इस प्रकार के प्रचार को अंगीकार करने में कोई सैद्धान्तिक कठिनाई होतो इसे उसी भांति अंगीकार करना चाहिए जिस भांति विधवा-विवाह को सैद्धान्तिक कठिनाई के होते हुए भी व्यवहारिक दृष्टि से अंगीकार किया था। इसके दो लाभ होंगे एक तो हमारा प्रचार सुरुचि पैदा करने में सहायक होगा दूसरा यह है कि आर्य्य समाज के कार्य्यों पर प्रत्यक्ष वा अप्रत्यक्ष रूप में जो कुछ कुठाराघात इन दिनों हो रहा है वह बंद हो जायगा साथ ही सिनेमाओं के द्वारा आर्य्य समाज के विरुद्ध जो प्रचार होता है उस पर भी प्रतिबंध लग जायगा।

श्री रैम्जे मैकडानल्ड

इस मास भारत तथा भारत से बाहर जो उल्लेखनीय मृत्युएँ हुई हैं उनमें से एक ब्रिटिश साम्राज्य के भूतपूर्व प्रधानमन्त्री श्री रैम्ज़े मैकडानल्ड की मृत्यु है। हम भारतवासी उनके जीवन से जो सबसे बड़ी शिक्षा ग्रहण कर सकते हैं वह यह है कि वे एक स्वनिर्मित व्यक्ति थे। एक साधारण स्थिति से उठकर वे उच्च स्थिति पर पहुंचे थे और वह भी अपने अध्यवसाय परिश्रम और व्यक्तित्व के द्वारा। लन्दन के एक अंधेरे गोदाम मे १५शि० प्रति सप्ताह पर मामूली मजदूरी का काम करने वाले मैकडानल्ड ब्रिटिश साम्राज्य के प्रधान मन्त्री बन गये थे जिसका गौरव हरएक को प्राप्त नहीं होता है। निःसदेह उनका व्यक्तित्व असाधारण था। हमें इस बात का गौरव है कि श्रीयुत मैकडानल्ड गुरुकुल कांगड़ी में पधारे थे जब कि महात्मा मुन्शीराम जी (स्व० स्वामी श्रद्धानन्द जी) तथा आचार्य रामदेव जी उसके कर्णधार थे। वे आर्य समाज द्वारा प्रचारित गुरुकुल शिक्षा प्रणाली से बहुत प्रभावित हुए थे और उन्होंने उसकी बड़ी प्रशंसा की थी।

श्री जगदीशचन्द्र वसु

प्रसिद्ध वैज्ञानिक श्री जगदीशचन्द्र वसु की मृत्यु से भारतीय गगन मण्डल का एक जाज्वल्यमान सितारा अस्त हो गया है। श्रीयुत बोस की वैज्ञानिक प्रतिभा के चमत्कारों ने विज्ञान की दुरूह गुत्थियों को जिन्हें पश्चिम के वैज्ञानिक सतत परिश्रम करने के बाद भी हल नहीं कर पाए थे वा जो बातें उनके दिमाग में भी नहीं आई थीं उन्हें हल कर दिया था और पश्चिम के विद्वानों की इस भ्रमपूर्ण धारणा को निर्मूल सिद्ध कर दिया था कि भारतीय लोग जन्मसे ही असभ्य और जगली हैं। श्रीयुत बोस का विज्ञान के प्रति सब से महत्व पूर्ण योग वृक्षों में जीव ज्ञात करना समझा जाता है। कलकत्ते मे उन्होंने बोस रिसर्च इन्सटीच्यूट स्थापित की हुई थी जिसमें वृक्षों के बहुमूल्य परीक्षण किए जाते थे और देश और विदेश के विद्यार्थी उनके चरणों में बैठकर विज्ञान का अनुसधान किया करते थे। निःसन्देह वसु महोदय ने न केवल विज्ञान का ही वरन् अपने भारतवर्ष देश का गौरव भी बढ़ाया था और वह भारत की इस पतितावस्था मे एक बहुमूल्य देन थे जिसको लेकर भारतवासियों का सिर सभ्य कहे जाने वाले लोगों मे गर्व से ऊंचा था। ऐसे नररत्न के निधन पर हम अपने को जितना अकिञ्चन समझें और पश्चात्ताप करें उतना ही कम है।

श्री जयशंकर प्रसाद जी—

श्री जयशंकर प्रसाद जी के निधन से हिन्दी संसार एक प्रसिद्ध लेखक प्रतिभावान कवि और नाटककार से वंचित हो गया है। 'प्रसाद' जी ने समाज को सुरुचि पूर्ण और सात्विक साहित्य प्रदान करके उसकी उल्लेखनीय सेवा की था इसलिए उनकी मृत्यु राष्ट्रीय और सामाजिक क्षति है। आज यों तो समाज में बरसात में मेंढकों की नाईं स्वयंभू बहुत से लेखक और साहित्य सेवी विद्यमान हैं परन्तु उनकी और उनके साहित्य की सामाजिक उपादेयता नहीं के बराबर है। यदि यह कहें कि उनमें से बहुत से समाज के दूषण हैं तो अत्युक्ति न होगी। 'प्रसाद' जी लेखकों और साहित्य सेवियों की इस श्रेणी से भिन्न हिन्दी के उच्च श्रेणी के लेखकों में से थे जिसमें श्री प्रेमचन्द जी

श्री नाथूराम शंकर, श्री मैथिलीशरण गुप्त प्रभृति कवियों और लेखकों को स्थान प्राप्त करने का गौरव प्राप्त रहा है और जो सच्चे अर्थों में सामाजिक विभूति हैं तथा रहे हैं। 'प्रसाद'जी ने हिन्दी साहित्यमें विशिष्ट नाटक रचना के अभाव की पूर्ति की थी और इसका सर्व प्रथम श्रेय उन्हीं को है। उन्होंने अपने नाटकों से प्राचीन आर्य्य संस्कृति का गौरव स्थापित करने का सत्प्रयत्न किया है। हम दिवंगत आत्मा की शान्ति और सद् गति के लिए प्रार्थना करते हुए उनके दुखी परिवार और हितू बांधवों के प्रति हार्दिक समवेदना प्रगट करते हैं।

कन्या-वध की कुप्रथा—

सहयोगी 'हरिजन सेवक' उपर्युक्त शीर्षक से लिखता है:—

गत वर्ष गांधी जी ने बिहार प्रांत के कतिपय राजपूतों में प्रचलित कन्या-वध की अमानुषिक कुप्रथा पर 'हरिजन-सेवक' में एक लेख लिखा था। इस कुप्रथा के समूल नाश के लिए वहां एक सभा भी काम कर रही है, जिसका नाम 'कन्यावध निवारिणी सभा' है। यह कुप्रथा भागलपुर, मुंगेर और पूर्णिया ज़िले में सर्वत्र तथा संथाल परगना और दरभंगा ज़िले में जहां तहां प्रचलित है। केवल बिहार में ही नहीं, राजपूताने के शेखावाटी, मारवाड़ आदि, और पंजाब व संयुक्तप्रांत के कुछ हिस्सों में भी यह कुप्रथा प्रचलित है। कहीं यह तिलक दहेज की प्रथा के कारण जीवित है, तो कहीं तथोक्त वंश गौरव के नाम पर! सद्यः प्रसूता बच्चियों का किस निर्दयता के साथ वध किया जाता है उसके स्मरणमात्र से ही रोमांच हो आता है। ठाकुर भोलानाथसिंह जी लिखते हैं —

"कन्या को मारने का काम स्वयं उसकी माता करती है! कोई नमक चटाकर और कोई तम्बाकू खिलाकर मार डालती है। कोई नवजात शिशु के मुंह पर गर्भ का जेर रख देती है। बच्ची दम घुटकर मर जाती है। जो इस तरह नहीं मारना चाहती, वह उसे दूध पिलाना छोड़ देती है। दाई उसके रक्त मज्जा आदि को साफ़ नहीं करती, और चीटियां, कीड़े आदि उसके शरीर में लिपटकर खून चूसते रहते हैं। कैसा वीभत्स व्यापार है!'

कहीं कहीं इससे भी अधिक निर्दयता के साथ कन्या-वध किया जाता है। कहते हैं—खाट के पाये के नीचे उसे दबा देते हैं।

लोग बच्चियों को मारकर सूप में रखकर ले जाते हैं। गड्ढा खोदकर मृतक बच्चो को उसमें डाल देते हैं, और मिट्टी से ढक देते हैं, सूप को उसी जगह छोड़ आते हैं। श्मशान में अक्सर अनेक सूप पड़े हुए मिलते हैं।

राजपूतों में यह पैशाचिक प्रथा प्रचलित है, इसलिए केवल राजपूत ही इसके दोषी नहीं हैं। यह तो सभी के ध्यान देने की बात है। गांधी जी के इन शब्दों पर हम सब ही का ध्यान जाना चाहिये—"हम अपने को राजपूत इत्यादि नहीं मानते; न बिहारी, पंजाबी इत्यादि। हम अपने को हिन्दुस्तानी मानते हैं और एक ही राष्ट्र मानते और मनाते हैं। इसलिये धर्म-दृष्टि या राष्ट्र दृष्टि से हम एक हैं और एक के दोष की ज़िम्मेदारी हम सब पर आती है। इस न्याय से इस राजपूत कन्यावध के लिए हम सब, राजपूत हों या और कुछ, जिम्मेदार हैं।'

पुत्र जन्म पर आनन्द बधाइयां गाने वाले किंतु

आर्य समाज का तीसरा नियम

श्रीयुत पं॰ गंगाप्रसाद उपाध्याय प्रयाग।

आर्य समाज का तीसरा नियम यह है—

वेद सब सत्य विद्याओं की पुस्तक है। वेद का पढ़ना पढ़ाना और सुनना सुनाना सब आर्यों का परम धर्म है।

झांसी के श्रीयुत महाशय शिवलाल जी शर्मा की एक छपी हुई विज्ञप्ति मेरे पास इस आशय की आई हुई है कि इस नियम का संशोधन इस प्रकार कर दिया जाय :—

वेद ईश्वरीज्ञान सब सत्य विद्याओं की पुस्तक है। वेद का पढ़ना पढ़ाना और सुनना सुनाना सब मनुष्य मात्र का परम धर्म है।

शर्मा जी ने मेरी सम्मति मांगी है। संशोधन के देखने से ही स्पष्ट हो जाता है कि शर्मा जी एक श्रद्धालु और धर्म परायण पुरुष हैं। उनको आर्यसमाज से हित है और इसी भाव से प्रेरित होकर उन्होंने इस संशोधन का प्रस्ताव किया है। परन्तु मुझे खेद है कि मैं संशोधन के पक्ष में नहीं हूं।

इसका मुख्य कारण यह है कि किसी संस्था के नियमों और उपनियमों में भेद होता है। नियम स्थायी और व्यापक होते हैं। उपनियम देश, काल की अपेक्षा से बदलते रहते हैं। अभी आर्य सार्वदेशिक सभा कुछ उपनियमों को बदल चुका है और सम्भव है कि

पुत्री के जन्म लेते ही उसका गला घोट देने वाले नादान माता-पिता गांधी जी के इन अमूल्य शब्दों पर ध्यान दें, और इस भ्रूण-हत्या जैसे महान् पाप से अब भी अपना हाथ खींच लें।

पुत्र और पुत्री दोनों को जीने का समान अधिकार है। दोनों के अस्तित्व से ही जगत् चल सकता है। तब पुत्र-जन्म से हर्ष क्यों और पुत्री जन्म से शोक क्यों?"

श्रद्धानन्द जयन्ती—

इस वर्ष श्रद्धानन्द जयन्ती ३ १२ ३७ बृहस्पतिवार को पड़ेगी। आशा है आर्य्य जगत इस दिवस को समारोह पूर्वक मनायगा और स्वर्गीय स्वामी जी के गुणों और उपकारों को स्मरण करेगा।

स्वर्गीय स्वामी जी में क्या २ गुण थे उनका व्यक्तित्व कैसा था? आर्य्य समाज और देश के प्रति उनकी क्या २ सेवायें और त्याग थे और उनमें उनका स्थान कैसा था यहां इस पर प्रकाश डालने की जरूरत नहीं है वे प्रायः सब पर प्रगट हैं। उनका बलिदान हमारे लिए क्या अर्थ और सन्देश रखता है यहां यह भी बतलाने की जरूरत नहीं है। एक मुस्लिम धर्म्मान्ध ने श्री स्वामी जी की हत्या करके यह स्पष्ट कर दिया था कि वैदिक धर्म्म इस्लाम धर्म्म के मुकाबले में ऊंचा है और जब तर्क, बुद्धि इत्यादि सभ्य और मानवोचित उपाय वैदिक धर्म्म के असूलों को निस्सार सिद्ध नहीं कर सके थे तो तलवार के उपाय का आश्रय लिया गया था जिसका समर्थन प्रकाश के इस युग में कोई भी बुद्धिमान और समझदार व्यक्ति नहीं कर सकता है और जो ऐसे मामलों में कमजोरी का सूचक होता है सचमुच मुस्लिम हत्यारे ने वैदिक धर्म्म की यह एक बहुत बड़ी सेवा और इस्लाम धर्म्म की एक बड़ी असेवा की थी। स्वामी जी के बलिदान की यही बात हमें सबसे ज्यादा अपील करती है।

भविष्य में भी अनेक परिवर्तनों की आवश्यकता पड़े । परन्तु नियम एक स्थायी चीज़ हैं । संस्था संचालन के लिए उनका नित्य बदलना सस्था के लिए हानिकारक है । यह नियम ऋषि ने बहुत गम्भीर विचार के पश्चात् बनाये हैं । इनमे उदारता, व्यापकता तथा स्थायित्व है । इसलिए जनता का कर्त्तव्य इन नियमों का पालन करना है न कि उनको बदलना ।

इन नियमों का आर्यसमाज के साथ एक प्रकार का सम्बन्ध हो गया हैं । आर्यसमाज शब्द को उच्चारण करते ही इन नियमों का स्मरण आजाता है । एक प्रथा बन चुकी है । इसको विचलित करना मेरी सम्मति में ठीक नहीं । यदि ऋषि ही ने कुछ शब्द परिवर्त्तन कर दिया होता तो वैसी परिपाटी बन जाती । परन्तु अब बनाई परिपाटी को भंग करना किसी प्रकार भी उचित नहीं है । नियमों में कोई ऐसी धारा भी नहीं है जिसके अनुसार जनता को नियम बदलने का अधिकार हो ।

एक बात और है । मेरी राय में सशोधन अनावश्यक भी हैं ।

सत्य विद्या और ईश्वरीय ज्ञान मे भेद भी नहीं । वहां 'सत्य विद्या' का 'परमेश्वर' को 'आदि मूल' बतलाया है । इससे वेद सत्य विद्याओं की पुस्तक होने से ईश्वरीय ज्ञान होजाता है । यहा ऋषि का सकेत केवल पुस्तक से है । वह वेदों के विषय में दार्शनिक उलझनों की ओर सकेत नही करते । वे आर्यो के दैनिक कर्त्तव्य की ओर इशारा करते हैं । उनका तात्पर्य है कि आर्य्य समाज के सभासद् नित्य ही वेद को पढ़ें पढावें, सुने सुनावें ।

उन्होंने यह दस नियम आर्य्य समाज के बनाये हैं जो नियम जिस संस्था का होता है, वह उसी के सभासदों पर लागू होता है । जो उस सस्था से सम्बन्ध नही रखना चाहता उसके लिये कोई नियम नहीं बनाये जा सकते, न उनको मनवाया जा सकता है । अत. यह तीसरा नियम भी आर्य्यों के लिये ही है । आर्य वही है जो वेदों को मानते हैं, जो वेदों को नहीं मानते वे आर्य्य नही और न उन पर कोई हमारा जोर है कि हम उनके लिये कोई नियम बनावें या उनसे पाबन्दी करा सकें ।

इस में कोई सकुचितपना भी नहीं है । प्रत्येक पुरुष आर्य्य समाज मे आ सकता है । जो आयेगा वही आर्य्य होगा । और उसी पर नियम लागू होगा । जो आर्य्य समाज में प्रविष्ट होना नही चाहता उसे इन नियमों की क्या परवा ? उसका परमधर्म कुछ हो परन्तु वह उसको भोगता ही नही । अत उसके विषय में कहना हमारे क्षेत्र से बाहर है । जब हम कहते हैं कि वेद का पढना प्रत्येक मनुष्य का कर्त्तव्य है तो इस का अर्थ यह है कि 'आर्य' होना प्रत्येक मनुष्य का कर्त्तव्य है या आर्य्य समाज में प्रवेश करना प्रत्येक मनुष्य का कर्त्तव्य है । आर्य्य समाज खुला ही सब के लिये है । परन्तु जो अपने इस कर्त्तव्य को नहीं समझता, उस पर हमारे नियम किसी प्रकार भी लागू किये नही जा सकते ।

—'आर्य्य मित्र'

तृत्व (त्रैत्) वाद

ले०—
श्री महात्मा नारायण स्वामी जी महाराज

आर्य्य जाति में प्राचीन (वैदिक) काल से वेद की शिक्षानुसार ईश्वर, जीव और प्रकृति के नित्य मानने का सिद्धान्त माना जाता चला आ रहा है। आर्य्य समाज इसी तृत्व वाद का अब भी प्रचार करता है। यह सिद्धान्त एक समय बड़ा व्यापक और आकर्षक था। इस सम्बन्ध मे, कुछेक महत्व की बातो का, उल्लेख किया जाता है —

१—असोरिया के प्राचीन निवासियो ने इस सिद्धान्त को अपनाया था और वे इस तृत्व वाद को मानते थे। उनके तृत्व का रूप यह था —

(१) मानवी मस्तिष्क को, बुद्धि प्रदर्शनके लिए चित्त के स्थान मे मानते थे।

(२) बैल का शरीर, बल प्रदर्शनार्थ, सत के स्थान पर मानते थे।

(३ गरुडपक्षी सर्वव्यापकत्व के लिये, आनद की जगह मानते थे।

तीनों के मिलाने से वही आर्यों का प्रसिद्ध तृत्ववाद सूचक, ईश्वर की सत्ता और स्वरूप का द्योतक, "सच्चिदानन्द" शब्द बन जाता है। इस प्रकार यह सिद्धान्त असीरिया में ईसा के ७२० वर्ष पूर्व प्रचलित था—

२—मिश्र में ७०० बी० सी० में, पूर्ण पुरुषत्व के प्रदर्शक, ये तीन बातें मानी जाती थीं।

(१) बल के चिन्ह रूप, पशुत्वका होना = सत

(२) बुद्धि की व्यक्त सत्ता = चित्त

(३) आत्मा = आनन्द

इसके सिवा ईश्वर में वे तीन रूपों का समाविष्ट होना मानते थे। ईश्वर को मिश्रवाले आर्य्य हारुस (Harus) कहते थे।

(१) ईश्वरत्व महत्ताद्योतनार्थ = सत

(२) रा (Ra) जोवत्व—चेतना प्रदर्शनार्थ = चित

(३) इसकारा ब्यूस (The scara baeus) आनन्द प्रदर्शनार्थ = आनन्द

३—उस समय का पश्चिमी दर्शन शास्त्र भी तृत्ववाद ही माना करता था। प्लेटोनिस्ट Platonist का एक स्कूल, इलकजैंडरिया में था जो ईश्वर में (देखो Cud worth's Intellectual System) तीन बातों का होना आवश्यक मानता था—

(१) महान ईश्वरत्व (The supreme God)

(२) मस्तिष्क या बुद्धि

(३) आत्मा

इस प्रकार युरोप और उसके आस पास, वैदिक तृत्ववाद का कुछ शुद्ध और कुछ विकृत रूप आम तौर से माना जाता था और इनका मानना उस समय का फैशन बना हुआ था।

४—ईसाई मत मे उस समय तृत्व वाद (तसलीस या Trinity) नहीं माना जाता था। बाइबिल के पढ़ने वाले जानते हैं कि Trinity या इसके समान अर्थ वाला कोई शब्द, उसमें

नहीं आया है। ईसा की दूसरी शताब्दी के अन्त से पहिले तक—इस वाद को ईसाई नहीं जानते थे। उस समयके ईसाई पादरियों ने, अपने भीतर इस कमी के होने को अनुभव किया, इसलिए सन् ३२५ ईस्वी में नाइस की कौन्सिल (The Council of nice) ने ईसा में ईश्वरत्व के होने का विधान किया और ईसा को "God of God very God of very God" पुकारे जाने का निश्चय किया—इसके बाद सन् ३८१ A D में हुई कुस्तुन्तुनिया की (The Council af Constantinople) ने ईश्वरमें तीन व्यक्त्यत्व (Three person in one God) के होने का निश्चय किया और तत्कालीन राजाथियोडोसियस (Theodosius) ने घोषणा की कि जो कोई इस तृत्ववाद को उपयुक्त भाति न मानेगा, उसे दण्ड मिलेगा—तब से यह तृत्व वाद ईसाई मतावलम्बी मानने लगे हैं।

(५) अभी हाल की बात है कि कैम्ब्रज विश्व विद्यालय के गिरजे में, सरमन होते हुए विशप हैन—राशडैल L. L D ने, ईसाइयों में प्रचलित तृत्ववाद की निरर्थकता प्रकट करते हुये कहा था कि—

The father is power = सत

The son is wisdom = चित

The holy Spirit is love = आनन्द

स्पष्ट है कि विशेप महोदय वेद प्रतिपादित तृत्व वाद ही को महत्व पूर्ण समझते हैं।

—

सत्यार्थ प्रकाश लेखमाला—

मोक्ष का साधन

(ले०—श्री स्वामी स्वतन्त्रानन्द जी महाराज)

म क्ष का साधन ज्ञान है, वा कर्म है, अथवा ज्ञान,और कर्म उभय हैं यह विचार मोक्षवादियोमे आरम्भ से चला आता हैं। इसमे आर्यसमाज का पक्ष क्या हैं इस बात को बताने के लिये यह लेख लिखता हू।

प्रथम पक्ष ज्ञान का है।

(१) वेदाहमेतं पुरुष महांतमादित्यवर्णं तमस परस्तात्।

तमेव विदित्वातिमृत्युमेति नान्यः पंथा विद्यतेऽयनाय। यजु॰ अ, ३१, म० १८

सर्व व्यापक महान् प्रकाश स्वरूप, अज्ञान-रहित परमात्मा को जानकर ही मौत से तर जाता है मोक्ष के लिये अन्य मार्ग नही है।

(२) ऋते ज्ञानान्न मुक्तिः। सांख्य दर्शन

बिना ज्ञान के मोक्ष प्राप्त नही होती।

(३) भूतेषु भूतेषुविचित्य धीरा प्रेत्यास्माल्लोकादमृता भवन्ति। केन० १३

ज्ञानी उस परमात्मा को व्यापक जान कर इस लोक से मर कर मोक्ष को प्राप्त होता है।

(४) तमात्मस्थ, येऽनुपश्यंतिधीरास्तेषां शांतिः शाश्वती नेतरेषाम्। कठ० ५।१३

जो धीर उस आत्मस्थ को देख लेते है उनको शांति प्राप्त होती है दूसरों को नहीं।

(५) ज्ञान की आई आंधी

देखो भाई

सभै उडानी भ्रम की टाटी रहे न माया बांधा रहाउ। दुचिते की दुइ थून गियरानी मोह बलेडा टूटा।

तिसना छान परी धर ऊपर दुरमत भांडा फूटा॥१॥

आंधी पाछे जो जल बरखे तिह तेरा जनभीना कह कबीर मन भया प्रगासा उदे भान जब चीनो।

कबीर साहिब

यह प्रमाण ज्ञान से मोक्ष की प्राप्ति का विधान करते हैं इनके अतिरिक्त और भी अनेक प्रमाण हैं और ऐसे भी हैं जो कर्म निषेध करते हैं इसलिये इनके आधार पर कहा जा सकता है मोक्ष ज्ञान साध्य है।

दूसरे पक्ष मे कर्म मोक्ष के साधन हैं इसमे भी प्रमाण मिलते हैं। यथा—

(१) कुर्वन्नेवेह कर्माणि जिजीविषेच्छत समा।
एवं त्वयि नान्यथेतोऽस्ति न कर्म लिप्यते नरे॥
यजुर्वेद अ० ४०।२

कर्म करते हुए शत वर्ष जीने की इच्छा करे, इस प्रकार कर्म मे लिप्त नही होता अन्य मार्ग नही।

(२) तस्यै तपो दम कर्मेति प्रतिष्ठा। केन० ३३

ब्रह्म की प्राप्ति के लिये तप, दम, कर्म प्रतिष्ठा

रूप है।

(३) नहि कश्चित्क्षणमपि जातु तिष्ठत्यकर्मकृत्।
कार्यते ह्यवशः कर्म सर्वः प्रकृतिजैर्गुणैः।
गीता अ० ३।५

बिना कर्म किये कोई क्षण भर भी नहीं रह सकता, स्वभाव से विवश होकर कर्म किये जायगे।

(४) नियतं कुरु कर्म त्वं कर्म ज्यायो ह्यकर्मणः।
शरीरयात्रापि च ते न प्रसिध्येदकर्मणः॥
गीता अ० ३।८

अकर्म से कर्म श्रेष्ठ है तू कर्म कर बिना कर्म तेरी शरीर यात्रा भी सिद्ध न होगी।

इन प्रमाणो से कर्म करने का विधान सिद्ध होता है इन सब मे केवल कर्म पद है वह कर्म नित्यानैमित्तिक काम्य प्रायश्चितादि भेद से नाना प्रकार के है। परंतु इस लेख मे इस प्रकरण मे मैने यह विचार नही करना है किसे करे और किसको न करे। इस समय तो यही दिखाना है कि वेद, उपनिषद् गीता ज्ञानवत् कर्म करना भी मानते हैं। ज्ञान कर्म उभय मानने वालों के दो भेद है क्रम समुच्चय, सम समुच्चय। क्रम समुच्चयवादी अतः करण की शुद्धि ज्ञानोत्पत्ति के लिये कर्म मानते है जिस समय ज्ञान हो जाय पुनः किसी कर्म की आवश्यकता नहीं सम समुच्चयवादी ज्ञान कर्म को एक काल मे कर्तव्य समझते हैं। प्रथमपक्ष वाले जैसे ज्ञान कर्म का परस्पर विरोधी मानते हैं दूसरे इस प्रकार नहीं मानते है। क्रम समुच्चय वाद मे विशेष विवाद नही है। उनको यदि ज्ञान वादियों मे मान लें तो भी निर्वाह हो जायगा परन्तु सम समुच्चय वादियो का किसी मे समावेश नही हो सकता इसलिये उभयवाद के अर्थ इस समय सम समुच्चय ही समझने चाहिये।

नवीन वेदांत ज्ञान वादी है। नैष्कर्म्य सिधि उनका प्रसिद्ध पुस्तक है और प्रकरण पुस्तको मे कर्म का निषेध मिलता है परन्तु इस समय उन को न लिखकर मै नवीन वेदांत के फलाध्याय के कुछ सूत्र लिखता हू जो ज्ञानोत्पत्ति पश्चात् भी कर्म करने स्वीकार करता है।

(१) अग्निहोत्रादि तु तत्कार्यायैव तद्दर्शनात्।
वेदांत दर्शन ४ ।१६

पुण्यस्याश्लेषविनाशयाऽघन्यायोऽतिदिष्ट, सोऽनिर्देश सर्वपुण्य विषय इत्याशंका प्रतिवक्ति—अग्निहोत्रादित्विति—तु शब्द आशंकामपनुदति यन्नित्य कर्म वैदिकमग्निहोत्रादि तत्कार्यायैव भवति ज्ञानस्य यत्काय तद्वाम्यापि कार्यमित्यर्थ, कुतः तमेत वेदानुवचनेन ब्राह्मणा विविदसन्ति यज्ञेन दानेन तपसा बृ० ४।४ २२ इति दर्शनात्। शांकर भाष्यम्।

इसका भावार्थ यह है, पुण्य का अश्लेष मानने से वह भी अघवत् त्याज्य होगा इस प्रकार सर्व पुण्य विषयक शका होने से उसकी निवृति के यह सूत्र है इसमे तु शब्द शका निवारण करता है और अग्निहोत्रादि वैदिक कर्म को कर्त्तव्य बताता है क्योकि जो ज्ञान का कार्य मोक्ष है वह मोक्ष कर्म का भी कार्य है। उपनिषद् मे ऐसा ही लिखा है ब्राह्मण वेद स्वाध्याय से यज्ञ, दान, तप से ब्रह्म जानने की इच्छा करते हैं।

(२) इस सूत्र अग्निहोत्रादि कर्मों का सम समुच्चय है और अगले सूत्र अतो अन्यापि

ह्यकेषामुभयो ॥ १७ ॥

अतो अग्निहोत्रादेर्नित्यात्कर्मणोन्यापिह्यस्ति-साधुकृत्या या फलमभिसंधाय क्रियते तस्या एष विनियोग उक्त एकेषां शाखिनाम्। सुहृदः साधु कृत्यामपयति, इति। शांकर भाष्यम्।

भावार्थ—अग्निहोत्रादि नित्य कर्मो से भिन्न साधु कर्म अच्छे कर्म। सत्य भाषणादि एक शाखा वाले कर्तव्य मानते हैं। सूत्रकार अग्निहोत्रादि और अन्य नेक कर्मों का करना मानता है इससे यह सम समुचय का प्रतिपादक है इस प्रमाण के होते हुए भी पता नहीं वेदांती कर्म त्याज्य किस प्रकार मानते हैं।

इसी सिद्धान्त को मानकर महर्षि दयानन्द जी ने सत्यार्थ प्रकाश के नवम समुल्लास के आरंभ मे ही वेद मन्त्र लिखा है और उसके अर्थ लिख कर इस सिद्धान्त को माना है।

(३) विद्या चाविद्यां च यस्तद्वेदोभय सह।
अविद्यया मृत्यु तीर्त्वा विद्ययाऽमृत ॥
मश्नुते ॥ यजु० ४।१४

जो मनुष्य विद्या और अविद्या के स्वरूप को साथ ही साथ जानता है वह अविद्या अर्थात् कर्मोपासना से मृत्यु को तरके विद्या अर्थात् यथार्थ ज्ञान से मोक्ष को प्राप्त होता है। सत्यार्थ प्रकाश पृष्ठ २८७

इस मंत्र के पूर्व दो मंत्र हैं जो अविद्या अर्थात् कर्मोपासना मात्र सेवी को अधकार की प्राप्ति की घोषणा करके केवल ज्ञानवादी को उससे भी अधिक तम की प्राप्ति बतलाते हैं।

इसलिये इस मन्त्र मे कर्म ज्ञान का सम समुचय है। और यही वैदिक सिद्धांत है जिसे आर्य समाज मानता है।

प्रमाण वाद के पश्चात् यदि युक्ति से विचार करे तो भी दोनो की आवश्यकता है।

यदि कोई व्यक्ति किसी नगर को जाना चाहे और द्रुतगति से चले परन्तु उस गन्तव्य नगर की विपरीत दिशा मे चलता हो वह न पहुचेगा इसी प्रकार यदि कोई व्यक्ति उस नगर के मार्ग से भलीभाति परिचित है परन्तु कर्म कुछ भी नही करता है वह भी गतव्य स्थान को प्राप्त न करेगा और जिसको दिशादि मार्ग का बोध है और उसी दिशा मे चलने का यत्न करता है वह गन्तव्य स्थान को अवश्य प्राप्त कर लेगा।

इस प्रकार प्रमाण (वेद, उपनिषद, गीता, वेदांत सूत्र) तथा युक्ति से सम समुचय वाद सिद्ध है और प्रत्येक जिज्ञासु को इसका आश्रय लेकर भव सागर से पार होने का यत्न करना चाहिये।

देवासुर संग्राम

[लेखक—आचार्य श्री चन्द्रकान्त जी वेदवाचस्पति आचाय गुरुकुल विद्यालय, सोनगढ़ काठियावाड़]

संसार एक समरस्थली है। कभी इसमे राम रावण का युद्ध होता तो कभी कौरव पाण्डव का, कभी इटली अबिसिनिया को हड़पने को तैयार होता है तो कभी जापान की मछली चीन के मगर को खाना चाहती है। बड़े बडे राजनैतिक कहते हैं कि विश्व १६१४ के महान् युद्ध से भी सन्तुष्ट न रह कर उससे भी भयङ्कर विसवकारी विग्रह का स्वप्न ले रहा है तो क्या विश्व क्रम में शान्ति देवता का कोई स्थान नही है? तो क्या इन अमानुषीय युद्धों के भयङ्कर परिणामों को देख कर भी मानव-समाज सचेत होना नहीं चाहता है? वस्तुत सत्य तो यह है कि यह दीखने वाले युद्ध तो न दीखने वाले इनसे भी भयङ्कर युद्धों के प्रतिविम्ब मात्र है। विधाता ने मनुष्य की इन्द्रियों को स्वभावतः बहिर्गामी बनाया है—"पराचि खानिव्यतृणत् स्वयभू तस्मात् पराङ पश्यति नान्तरात्मन्" इसलिए यह 'उच्चै श्रवा' बाहर के ऊचे २ शब्द ढोल और नगाड़ों के आवाज, वाहनों की गड़गडाहट तोप व बन्दूक के भयङ्कर शब्दों को सरलता से सुन सकता है, वाह्य वस्तु के दर्शनादिअनायासेन कर सकता है, अन्दर की धीमी अन्तरात्मा की आवाज इस कैसे सुनाई दे सकती है? कोई विरला धीर पुरुष ही आंखों को मून्द कर अन्तर्गत को देखने का प्रयत्न करता है—"कश्चिद्धीर प्रत्यगात्मानमैक्षद्‌ावृत्तचक्षुरमृतत्वमिच्छन्" वहिर्जगत की अन्र्जातीय की छाया मात्र है—वाह्य युद्ध अन्दर के अमूर्त युद्ध के मूर्त प्रतिबिम्ब ही है। इस त्रिकाला वाधित सत्य को न समझने से ही जगत यादवस्थली का केन्द्र बना हुआ है। "यथा पिण्डे तथा ब्रह्माण्डे" वाह्य युद्धों के विजेता नेपोलियन, सिकन्दर अशोक और चन्द्रगुप्त की कीर्तिपताका के सम्मुख हम नतमस्तक अवश्य होते हैं परतु हमारी श्रद्धा का पुष्प हार तो बुद्ध, महावीर, कृष्ण चन्द्र और महर्षि दयानन्द के चरणों मे ही चढ़ा करता है। क्योंकि यह बीर ही नही महावीर हैं। उन्होंने भौतिक साधनों से स्वराज्य को प्राप्त नहीं किया प्रत्युत अभौतिक दैवी साधनों से सच्चे स्व को (आत्मा को) प्राप्त किया है। कोटि कोटि योनयों में परिभ्रमण करने वाले आत्मा रूपी हस पर अशुभ वासनाओं का ऐसा जाल बिछा हुआ है कि वह पराधीनता के पाश में भी शान्ति का स्वप्न देखता है। आत्म सुवर्ण के ज्ञान व कर्म पखो पर आसुरी सम्पत्ति का इतना भार पड़ा हुआ है कि दैवी सपत को सर्वथा भूलकर आत्म-हस पराधीनता की तामसी शान्ति को ही रामराज्य समझने लगता है। इस पराधीनता की शान्ति की अपेक्षा ससार के सघर्षों, अन्तः एवं वहिर्जगत के घोर सग्रामों में वीरों की भान्ति अचल रहना प्रशस्ततर है। लौंगफेलो Long fellow ने ठीक ही कहा है—

In the world's broad field of battle,
In the bivouac of Life,
Be not like dumb driven cattle,
Be a hero in the strife

अशुभ वासनाओं के जाल में परतंत्र रहकर छटपटाते आत्मा की श्मशान शान्ति की अपेक्षा दुन्दुभिनाद खून की नदियां सहस्रगुणा प्रशंसनीय है परन्तु जीवन का चरम लक्ष्य तो शुभ वासनाओं के वायु मण्डल में विहरते हरि (आत्मा) हंस का दिव्य आत्म स्वरूप में विहार करके प्रेम निधान शांति-सदन में प्रतिष्ठित होना ही है।

प्राचीन वैदिक एवं लौकिक संस्कृत साहित्य में तथा भिन्न २ धर्मों के साहित्य में, विविध रूपों में देवासुर संग्राम का वर्णन किया गया है। वेद ब्राह्मण व पुराणों में देवों के राजा इन्द्र तथा दैत्यों का राजा वृत्र दैत्य के संग्राम का वर्णन किया गया है। इन्द्र तथा वृत्र की कथा का आधिदैविक तथा आधिभौतिक स्वरूप से भिन्न आध्यात्मिक स्वरूप ही है। सम्भवत: कथा का यही वास्तविक तात्पर्य है। ऐतिहासिक कथाओं के आध्यात्मिक अर्थीकरण (Spiritual interpretation) से धर्मों के इतिहास की गुत्थियां खुल सकती हैं। यह पद्धति ब्राह्मण ग्रन्थ, उपनिषदें तथा आचार्य यास्क के निरुक्त में ही उपलब्ध नहीं होती अपितु स्वीडन वोग के अनुयायीयों तथा ईसाई गाथा शास्त्र के विद्वानों ने भी इसको स्वीकृत किया है। महाकवि टेनीसन तथा शेक्सपीयर के नाटकों की कथा वस्तु के विषयों को भी इसी पद्धति से समझा जा सकता है। प्राय: कवियों के काव्य में वर्णित पात्र-मूर्तिमन्त भाव हुआ करते हैं अत: यह सहज में कहा जा सकता है कि इन्द्र और वृत्र की कथा आलंकारिक है। ऐश्वर्य शाली दिव्य गुणों व शुभ वासनाओं का अधिपति आत्मा इन्द्र है। और असुर भावों का प्रेरक ज्ञान को आवृत्त करने वाला अहं भाव अनात्म-भाव का प्रतिनिधि वृत्र है वास्तव में इन्द्र (आत्मा) अजात शत्रु युधिष्ठिर है जैसे सूर्य के प्रखर प्रताप के सन्मुख मेघ तितर बितर हो जाते हैं, सामने खड़े ही नहीं रह सकते हैं—जैसे प्रकाश के आते ही अन्धकार भाग जाता है वैसे ही अजेय आत्मा की सत्ता मात्र ही अनात्म भाव की विरोधनी होती है तथापि अशुभ वासनाओं के सान्निध्य से आत्मा रूपी सिंह अपनी स्वाभाविक स्थिति को भूल कर अपने को यौद्धा मान बैठता है वस्तुत: इन्द्र स्वरूप आत्मा आठ चक्रों तथा नव द्वारों वाली देहरूपी अयोध्या पुरी के अजेय राजा राम हैं। "अष्ट चक्रा नवद्वारा देवानां पूरयोध्या" अत: वेदादि धार्मिक ग्रंथों में इन्द्र तथा वृत्र के युद्धों के जो वर्णन आते हैं वे सब मायिक हैं—काल्पनिक हैं—रूपक रूप से ही हैं। वेद में कहा भी गया है "न त्वं युयुत्सेकतमच्चनाह न ते अमित्र मघवन कश्चिदस्ति मायेत्सा ते यानि युद्धान्याह न त्वं युयुत्से न् पुरा युयुत्से" वास्तव में हरएक प्राणी के देह रूपी राष्ट्र में प्रतिक्षण देवासुर संग्राम के प्रतिनिधि रूप से इन्द्र वृत्र लड़ रहे हैं। पुण्य-पाप, प्रकाश-अन्धकार, दिन रात, सत्य, अहिंसा, अभय, प्रेमादि देवी संपत तथा असत्य- हिंसा, द्वेषादि आसुरी संपत शुभ अशुभ वासनायें देवासुर संग्राम के योधा हैं।

वशिष्ठ मुनि योगवासिष्ठ में कहते हैं 'द्विविधो वासनाव्यूह. शुभश्चैवाशुभश्चते" "शुभाशुभाभ्या मार्गाभ्या वहन्ती बासनासरित" अर्थात् शुभ वासना तथा अशुभ वासना की नदिया बह रही हैं, आत्मा की नौका को किसी न किसी नदी में बहना ही पड़ता है। आत्मा तटस्थ होकर केवल साक्षी बन कर नहीं रह सकता है। कठ उपनिषद् में कहा गया है "श्रेयश्च प्रेयश्च मनुष्यमेत तौ सपरीत्य विविनक्ति धीर। श्रेयोहि धीरो अभिप्रयसो वृणीते प्रेयो मन्दो योगक्षेमात् वृणीते" अर्थात् मनुष्य को श्रेय और प्रेय दोनों प्राप्त हैं बुद्धिमान दोनों को ठीक ठीक जाच कर अलग अलग करता है निसन्देह बुद्धिमान मनुष्य प्रेय के मुकाबले श्रेय को मागता है और बुद्धिहीन सासारिक सुख की प्राप्ति तथा रक्षा के लिए प्रेय को मागता है।

इस संसार में कर्तव्य और सुख, श्रेय और प्रेय [Duty and pleasure] दोनों के एक ही समय मे उपस्थित होने पर अशुभ वासनाओं की सारता में बहने वाला जीव सुख को महत्व देकर कर्तव्य की मूक पुकार को दबा देता है। ऐसी अवस्था मे शुभ व अशुभ वासनाओं की नदी पर आत्मा तटस्थ तो नह रह रुकता इस लिये जो आत्मा शुभ वासनाओं में अपना जीवन नौका को ले जाता है वह कर्तव्यपथ से कभी विमुख नहीं होता और फलत शुभ वासनाओं के प्रबल प्रवाह में इतने वेग से बहता जाता है कि अशुभ वासनाओं में बहजाने को सम्भावना भी नहीं रह जाती। यही अवस्था है जब कल्याण वाहिनी चित्तनदी ऋतम्भरा प्रज्ञा के आलोक से आत्मा को अजेय बना देती है। अब क्रान्ति शान्ति में, प्रवृत्ति निवृत्ति में परिणत हो जाते हैं। विवेक और विचार का भ्रम स्वभाव-सिद्ध भक्त-पुरुष-सुलभ शम के स्वरुप को धारण किया करता है। यह अवस्था स्थितप्रज्ञ की हुआ करती है। परन्तु इस दशा से पूर्व तो हजारों रामायण और महाभारत के घोर संग्राम लडने होते हैं। सुख दुख, मान अपमान, जय पराजय, हानि लाभ के द्वन्दों से ऊपर उठकर कमल-दल की भाति अछूता रहकर जो वीर धीर बनकर लडता है जयमाल उसके ही गले में पड़ा करती है यहां कायर का काम नहीं वीर और महावीरों का काम है। लडते लडते वीर जब कभी हताश और निराश होजाते हैं भक्तवत्सल भगवान तब करुणा का मेघ बन बरसा करता है।

हमारे शरीर मे ज्ञानेन्द्रियों और कर्मेन्द्रियों का आत्मा के साथ भयङ्कर सग्राम (Tug of war) छिड़ा हुआ है। इसमें आत्मा तब ही पूर्ण विजयी होता है जब भक्ति से आप्लावित हुए भगवान प्रसन्न हुआ करते हैं। असुरमण्डल की अङ्गिरामन्यु तथा स्पेन्तामन्यु रूप शक्तियों का परस्पर सग्राम, सुरा और शैतान का युद्ध, ये सब देवासुर सग्राम के ही नामान्तर है। इन संग्रामों के महत्व को समझकर हमें वीरों की भान्ति किले पर किले फतह करने चाहिये। तब भगवान की अपार कृपा के हम पात्र हो सकते हैं।

देवासुर संग्राम मे असुरों को हराने के लिये देवों ने दधीचि ऋषि की अस्थि का वज्र बनाया

था दूसरे शब्दों मे कहें तो याज्ञिक भावनाओं का सहारा लिया था परन्तु कदम कदम पर, अणु २ में व्यापक विष्णु स्वरूप परमात्मा को पुकार पुकार कर ही पूर्ण विजय प्राप्त की थी। धृतराष्ट्र रूप अन्धे मिथ्या ज्ञान ने आत्मा का राष्ट्र मचाया हुआ है। अज्ञान (धृतराष्ट्र) से उत्पन्न प्रबल अहंकार (दुर्योधन) आसुरी सम्पति का अधिनायक बन कर इसकी सहायता कर रहा है। इस युद्ध मे विजयी बनने के लिये युधिष्ठिर रूप व्यवसायात्मिका धर्मबुद्धि, अर्जुन रूप उज्ज्वल विवेक शक्ति, और भीम रूप प्रबल आत्मबल, भगवद्भक्ति के प्रतिनिधि कृष्ण की सहायता लेकर ही प्रवृत्त हुए है। "यतो धर्मस्तत कृष्ण, यतः कृष्णस्ततो जय", देवासुर-सग्राम मे धैर्य और दृढ निश्चय का बहुत मूल्य है। मंजिल कितनी ही दूर हो तो भी बहादुर घबराता नहीं। कार्लाइल के शब्दों मे 'I will achieve it or die" "देहं वा पातयामि कार्य वा साधयामि" की ज्वाला मे जलने वाला आत्मा रूपी पतंगा ध्येय को पालेना है, श्रुति कहती है 'एष त साधु कम कारयति यमूर्ध्व निनीषते" अर्थात प्रभु की करुणालहरी से ही समस्त शुभवासनायें तथा तदनुसारी कर्मों की स्फुरणा हुआ करती है। भगवान् जिसे वरना चाहते हैं उसीको छाती से लगा लेते हैं। "यमेवैष वृणुते तेनैव लभ्य"

मर्यादा पुरुषोत्तम रामचन्द्र जी ने रावणरूपी राक्षस को हराकर सीता-माता के सतीत्व की रक्षा के द्वारा आर्यों व देवों को विजयी बनाया था। इसीलिए वे विजया-दशमी के प्रिय-देवता बने और अयोध्या की जनता ने उनके स्वागत मे स्नेह-भरे आत्म-दीपों से दिवाली मनाई है, सच है कि देवासुर सग्राम के विजेता ही विजयादशमी और दिवाली के वीर देवता हुआ करते है, ठीक ऐसे ही विजेता महर्षि दयानन्द और स्वामी रामतीर्थ थे।

दशेन्द्रिय रूपी रावण पर विजय पाकर उत्कट वैराग्य विवेक तथा ब्रह्मचर्य स्वरूप हनुमान् की सहायता से देवराज दयानन्द ने सती सीता रूपी परमात्म विद्या को स्वाधीन बनाकर कामक्रोधादि आसुरी माया पर विजय प्राप्त करके सच्ची विजया-दशमी मनाई और भगवत्स्नेह मे रोम रोम की बत्ती बना-बनाकर ज्ञान की अमर दीपावली मनाई है रात मे प्रभात और मृत्यु मे जीवन का रहस्य समझाया है यही सच्चा देवासुर सग्राम का विजय है। गीता ने क्या ही सुन्दर कहा है—

"या निशा सर्वभूताना तस्या जागति सयमो
यस्या जाग्रति भूतानि सा निशा पश्यतो मुने

शंकासमाधान

(क्रमागत)

VI SHRADDHAS

(Including Apara Kriyas or Funeral Ceremonies)

Questions —

1 Please name the Shraddhas in vogue in your province ?

2 Do you think performance of Shraddhas necessary ? If your reply is in the affirmative, what useful purpose do they serve ?

3 Are they performed in the right way now-a-days ? If not, what in your opinion are defects and what are your suggestions to improve them ?

4 Is it desirable that they be given up altogether as is done by some at present ?

5 Which of the Shraddhas do you consider essential and which unessential ?

6 Is the present ritual suitable ? If not, how is it to be modified ?

Answers —

Arya Samaj does not advocate Mrita Shraddha, and is deadly against it Perpetuation of the memory of a deceased is quite different a thing

श्राद्ध

प्रश्न—

(१) कृपया अपने प्रान्त में प्रचलित श्राद्धों के नाम लिखें ?

(२) क्या आप श्राद्धों का होना आवश्यक समझते हैं ? यदि आपका उत्तर स्वीकारात्मक हो तो लिखें उनसे क्या लाभ होता है ?

(३) क्या आजकल श्राद्ध ठीक २ रीति से होते हैं ? यदि नहीं तो उनमें क्या त्रुटियाँ हैं और वे किस प्रकार दूर की जा सकती हैं ?

उत्तर—

आर्य्य-समाज मृत श्राद्ध का समर्थन नही करता है वरन् इसके बिल्कुल विरुद्ध है। मृतक व्यक्ति की स्मृति कायम करना एक बिल्कुल जुदी बात है।

(२) मूर्ति पूजा

(१) प्रश्न—जो कि ४ धाम सप्तपुरी आदि नगरों और ग्रामों मे उन्नत शिखर और मन्दिर और उनमें देवताओं की मूर्तियों का स्थापन हो रहा है और परम्परा से पूजा होती आती है तो इसमें क्या भ्रम या सन्देह है ? जो सन्देह है तो श्रुति-स्मृति के प्रमाण दीजिए। यदि नहीं है तो वह व्यक्त कीजिएगा।

उत्तर—मूर्ति-पूजा निश्चय ही वेद-विरुद्ध है। उसके करने का आदेश न किसी ऋषि मुनि के वाक्य

से और न शास्त्र के प्रमाण से सिद्ध है। किसी पुस्तक में देव के अर्थ पाषाणादि की मूर्ति के नहीं हैं किन्तु केवल परमेश्वर, विद्वान्, वेद मन्त्र आदि के हैं जो दिव्य गुणों से युक्त हैं।

यजुर्वेद अ० ३२ के मन्त्र ३ में स्पष्ट कहा गया है—

न त य प्रतिमा अस्ति यस्य नाम महद्यश ।
हिरण्यगर्भ इत्येष मा मा हिँसीदित्येषा यस्मान्नजात इत्येप ॥

परमेश्वर की कोई प्रतिमा, प्रतिकृति, प्रतिबिम्ब, मूर्त्ति नहीं जिसका नाम महान् यश वाला है। उसका वर्णन इन ऋचाओं मे आया है जिनके आदि में हिरण्यगर्भ माया हिँसात् यस्मान्नजात इत्यादि है।

हिरण्यगर्भ समवर्तताग्रे भूतस्य जात पतिरेक आसान्।
स दाधार पृथिवी द्यामुतेमा कस्मै देवाय हविषा विधेम ॥

ऋ० अ० ८। अ० ७ व मन्त्र १

जिसके गर्भ मे प्रकाशित लोक सूर्यादि है वही सारी सृष्टि मे पूर्व वर्तमान था और वह एक हा सब उत्पन्न सृष्टि का पति है इस पृथ्वी और द्युलोक को उसी ने धारण किया है उसी सुख स्वरूप परमेश्वर की उपासना करनी योग्य है।

अन्धन्तम प्रविशन्ति ये ऽसम्भूतिमुपासते।
ततो भूय इव ते तमो य उ सम्भूत्याँ रताः॥

यजु० अ० ४० मन्त्र ९

जो लोग कारण रूप प्रकृति की उपासना करते है वे अन्धकार में गिरते हैं और उनसे भी अधिक अन्धकार में वे गिरते है जो कार्य्यरूप प्रकृति जन्य पदार्थों की उपासना करते हैं।

इन वैदिक प्रमाणों से स्पष्ट है कि पाषाणादि मूर्ति की पूजा नही करनी चाहिए केवल पूर्ण ब्रह्म परमेश्वर की ही उपासना करनी चाहिए।

युक्ति से भी मूर्ति पूजा ठीक सिद्ध नहीं होती। यदि कहा जाय कि मूर्ति म देव की भावना की जाती है तो यह भावना सच्ची होगी या झूठी। यदि सच्ची है तो सुख का भावना करने से सुख ही सुख होना चाहिए दुःख न होना चाहिए परन्तु हम देखते हैं दुःख होता है। क्या कभी जल में दुग्ध की, मिट्टी में मिश्री की भावना सच्ची हो सकती है? यदि भावना झूठी है तो मूर्ति-पूजा झूठी हो ही गई।

यदि कहो कि परमेश्वर सर्व्व व्यापक है अत मूर्ति में भी है तो वह पुष्प चन्दन आदि मे भी व्यापक हुआ फिर वे वस्तुएँ मूर्ति पर क्यो चढाते हो? वह तो मूर्ति पूजको के शरीर मे भी व्यापक है तो अपने में ही व्यापक क्यो नहीं मानते?

यदि कहो कि मूर्ति पूजा अज्ञानियो के लिए ब्रह्म के जानने का साधन है तो गुण उपयुक्त साधन द्वारा प्राप्त होता है निराकार और चेतन ब्रह्म का ज्ञान साकार और जड पदार्थ के द्वारा कैसे हो सकता है

यदि कहो कि प्राण प्रतिष्ठा करने से मूर्ति सजीव हो जाती है तो यह बात भी झूठी है। किसी भी मूर्ति मे जीव के लक्षण नही पाए जाते। शरीर मे तो प्राण के आने जाने के लिए छिद्र भी है मूर्ति मे वह भी नहीं।

यह कहना कि मूर्ति पूजा परम्परा से चली आती है सर्वथा मिथ्या है। वेद अनादि है जब उन्ही में मूर्ति पूजा नहीं तो कैसे कहा जा सकता है यह परम्परा

से चली आती है ?

बिना आकार के प्रतिबिम्ब नहीं उतर सकता और जब कि परमेश्वर का आकार नहीं तो उस की मूर्ति झूठी। यदि किसी का फोटो ठीक २ प्रति कृति उतार कर स्मरण करने, और देखने को सामने रखा जाये तो ठीक है परन्तु परमेश्वर की मूर्ति और अनुकृति बनाना और नकल करना सर्वथा मिथ्या और अवैध है।

प्रश्न—यदि ध्यान करते समय चन्दन का एक चिन्ह बना लिया जाय और उस पर दृष्टि जमाई जाय तो क्या ध्यान अच्छी तरह नहीं हो सकता ?

उत्तर—परमेश्वर मनुष्य की आत्मा में और उस के शब्द में भी व्यापक है। अत सब को अपने आत्मा में ही सच्चे मन से ईश्वर का ध्यान करना चाहिए। चन्दन का चिन्ह बनाया जाय तो उस से भी ध्यान मे विघ्न पड़ेगा। इसी प्रकार माला करने में भी गिनती में ध्यान रहेगा।

प्रश्न—नशे की दशा में ध्यान खूब जमता है और मनुष्य उसी में मग्न हो जाता है अत जैसा ध्यान ईश्वर का नशे की दशा में हो सकता है वैसा अन्य दशा में नहीं हो सकता।

उत्तर—यह तो ठीक है कि नशे की अवस्था मे जिस वस्तु का ध्यान आता है मनुष्य उस मे मग्न हो जाता है परन्तु उसे वस्तु का वास्तविक ज्ञान नहीं होता क्योंकि ऐसा ज्ञान एक वस्तु का दूसरी वस्तुओं के साथ का यथार्थ सम्बन्ध स्थिर करने से होता है और यह नशे की दशा में होना असम्भव है। उस में गुणी का गुणों से कोई सम्बन्ध नहीं रहता। ऐसी अवस्था मे यथार्थ ज्ञान नहीं हो सकता।

प्रश्न—साकार मूर्ति पर ध्यान लगाने का अभ्यास करने से मन स्थिर हो जाने का स्वभाव हो जाता है इस लिए भविष्य में निराकार ईश्वर के ध्यान में भी लगाया जा सकता है। क्या यह ठीक नहीं ?

उत्तर—नहीं। साकार पदार्थ पर किए हुए ध्यान का अभ्यास निराकार का ध्यान करने में काम नहीं दे सकता। यदि दे सकता है तो साकार विषय में लगा मनुष्य का ध्यान भी ईश्वर में लगना चाहिए जिसे कोई भी अनुभवी पुरुष नहीं मान सकता। उस से भी बढ़ कर इस के विरुद्ध क्रियात्मक प्रमाण यह है कि कोई भी बुद्धिमान् योगाभ्यासी सज्जन किसी जड़ मूर्ति का चिन्तन व मनन नहीं करता इस लिए ईश्वर के ही गुणों का ध्यान तथा मनन जिज्ञासु को करना चाहिए इसी से उस का मन शुद्ध होगा क्योंकि अन्त करण जिस प्रकार का मनन या चिन्तन करता है वैसा ही बन जाता है। यही वजह है सर्व शक्तिमान ईश्वर के पवित्र गुणों का मनन तथा ध्यान करने से जिज्ञासु को शक्ति और पवित्रता प्राप्त होती है और उस का दृढ अभ्यासी होने पर वह ईश्वर का निश्चित ज्ञान और आत्मा से उस का प्रत्यक्ष भी कर सकता है।

क्या सिनेमा-टाकी धर्मप्रचार में उपयोगी साधन होगा ?

[ले०—श्री० गोविन्दराम हासानन्द कलकत्ता]

"आर्य मित्र" में कुछ सप्ताहों से इस विषय के लेख निकल रहे है, प्रस्तावक महाशय ने सिनेमा द्वारा प्रचार की आवश्यकता को बताकर ६० हजार रुपये का प्रस्ताव करते हुए एक महाशय १० हजार रुपये लगाने को प्रस्तुत हैं, सूचित किया है।

आर्यसमाज एव ऋषि दयानन्द के अनुयायी होने के नाते मैं अपने विचार आर्य जगतके समक्ष विचारार्थ रखना चाहता हूँ। कारण आर्य समाज का नियम है "सब काम धर्मानुसार विचार करके करने चाहिये"।

लोग धर्म मन्दिरो मे श्रद्धा और भक्ति के भाव लेकर जाते है और थियेटरो मे तमाशा देखने का भाव लेकर जाते है। धर्म तमाशे का विषय नही

धर्म मे उसी आचार्य वा उपदेशक का प्रभाव पडता है जिनके आचरण शुद्ध हों मन, वचन, कार्य एक से हो, टागी और आडम्बरयुक्त उपदेशक का प्रभाव नहीं पडता, ऋषि दयानन्द का जो प्रभाव ससार पर पडा वह हम १० लाख आर्यों का नहीं पडता इसका कारण हमारे मन, वचन, कर्म एक नही।

"दयानन्द सिद्धान्त भास्कर" नामक पुस्तक के २७ वें पृष्ठ पर ऋषि के एक पत्र का हवाला देते हुए स्पष्ट सिद्ध किया गया है कि ऋषि दयानंद नाटक तमाशे के विरोधी थे।

सिनेमा द्वारा प्रचार के प्रस्तावक महाशय लिखते हैं कि "जो लोग सारे जीवन मे ऋषि की पूरी जीवनी नही पढ पाते थे ढाई तीन घन्टे में चित्रपट पर उसका अध्ययन कर लेंगे" क्या खूब लिखा है ५-७ सौ पृष्टो पर लिखी गई सैकड़ों शिक्षाप्रद घटनाओं का अध्ययन ५-७ घटनाओं के चित्र देखकर ऋषि की सारी जीवनी का अध्ययन हो जायगा ? क्या कहना।

सिनेमा से यदि धर्म प्रचार और आचरण का सुधार वा प्रभाव पड़ना होता तो राम, कृष्ण, हरिश्चन्द्र, सीता, सावित्री, शैव्या आदि के चित्र और चरित्र सिनेमा और नाटको मे देखने वाले हिन्दू-मुसलमानों मे कितने ही सचरित्र, भक्त और अनुयायी बन गये होते।

कर्णवास के राव कर्ण सिंह द्वारा आयोजित राम लीला के निमन्त्रण मे ऋषि दयानन्द के न जाने पर कर्ण सिंह क्रोधित हुए, ऋषि ने कहा "तुम कैसे क्षत्रिय हो महा पुरुषों की नकल लौंडो से करवाते हो।"

आर्य जगत मे यह प्रसिद्ध बात है कि ऋषि दयानन्द अपना फोटो नही खिंचवाते थे इसी लिए प्रामाणिक चित्र आज हमारे सामने नही हैं। आज भी आर्य समाज के वीतरागी, आदर्श संन्यासी स्पष्ट वक्ता श्री स्वामी सर्वदानन्द जी महाराज फोटो लेने नहीं देते, उनका जो चित्र

देखने मे आता है यह सन्ध्या करते समय आंख बन्द रहते लिया गया है।

मुनिवर प० गुरुदत्त जी से एक सज्जन ने कहा आप ऋषि भक्त है सुलेखक हैं ऋषि की जीवनी क्यों नही लिखते ? मुनिवर ने उत्तर दिया मैं लिख रहा हूँ, कुछ मास बाद पूछा गया कितना लिखा गया ऋषि भक्त गुरुदत्त उत्तर देते है "मै ऋषि की जीवनी कागज पर नही लिख रहा अपने जीवन मे अङ्कित करने की चेष्टा कर रहा हूँ। जो ऋषि की जीवनी का अध्ययन करना और कराना चाहते है उनको उपरोक्त कथन से शिक्षा ग्रहण करनी चाहिये।

हजरत ईसा, मूसा मुहम्मद गुरुनानक गुरु गोबिन्द सिंह को किसी सिनेमा वा थियेटर कम्पनी ने अपने परदे पर वा स्टेज पर लाने का साहस किया ? ऋषि दयानन्द को परदे पर लाने का साहस इसलिए हो रहा है कि आर्य समाज मे ९०–९५ सैकडा सदस्य पौराणिक विचार और संस्कार वाले भरती हो गये हैं।

सिनेमा के चित्रपट पर ऋषि दयानन्द का चरित्र चित्रण और भौपू पर ऋषि दयानन्द की आवाज भरने वाले कौन होंगे ? चरित्र भ्रष्ट दक्ष एक्टर्स या आदर्श सन्यासी स्वामी सर्वदानन्द या, स्वतन्त्रा नन्द

सीनेमा द्वारा "कृण्वन्तो विश्वमार्यम्" का सुख स्वप्न और प्रलाभन दिखाने वाले सज्जन इस चर्चा और कार्य को छोड़ देवें वरना अपना नुकसान और आर्य समाज को गिराने के साधन बनेंगे।

आर्य-ध्वज

(लेखक—श्री शिवदयालु जी मेरठ)

"आर्य्य ध्वज" के आकार स्वरूप ध्वज-रोहण के गीत इत्यादि के सम्बन्ध मे प्राय आर्य समाजे अन्धकार मे पाई जाती है। 'आर्य्य ध्वज' के सम्बन्ध मे अजमेर की अर्द्धशताब्दी के अवसर पर कुछ निश्चय हुए थे। इस लेख मे उन निश्चयो का स्पष्टीकरण किया गया है। आशा है आर्य्य समाजे उनसे यथेष्ट प्रकाश ग्रहण करेगे।

आर्यसमाज वेदो मे विश्वास रखने वालो की युग २ मे ऋषि-मुनियो, साधु-सतो द्वारा लिखे गये उपनिषदो, दर्शनादि सूत्रो म आस्था रखने वाले ससार के समस्त मनुष्यो की एक प्रमुख तथा मान्य सस्था है। आर्य समाज का धर्म निश्चय और निर्विवाद रूपण सार्वभौमिक (Universal) तथा सार्वकालिक (Eternal) है। सत्य की पूजा (Truth Worship) विश्वभ्रातृत्व (world brotherhood) तथा समता (Equality) उसका मानव-जाति के प्रति प्रमुख सन्देश है।

आर्यसमाज केवल भारत देश मे ही नहीं अपितु बाहर भी कितने ही देश विदेशो मे सस्थापित है और उस शुभ घडी की उत्सुकता पूर्वक बाट जो रहा है, जब कि ससार के कोने कोने मे भगवान् दयानन्द का यह पवित्र सघ सुसगठित होगा।

आर्य-जाति अज्ञात काल से नाना प्रकार के चिह्नो से चिह्नित ध्वजो को धारण करती आई है इन सब ध्वजो मे ओङ्कार का चिह्न तो प्राय सर्वत्र ही पाया जाता है। आर्य जाति के ध्वजो की भित्तिका (Surface) तो लगभग सर्वदा ही लाल, केसरी, बसन्ती व गेरुआ वर्ण की रही है। अभिप्राय यह है कि लालिमा से आर्य-ध्वज सदा चमकते रहते है। भले ही युग २ ध्वज मे कुछ २ परिवर्तन होता रहा हो किन्तु मौलिक परिवर्तन का कही पता नही। वर्तमान युग मे भी आर्य्य सभ्यताभिमानियो को अपने एक सम्यक् निर्धारित ध्वज की कल्पना करने की आवश्यकता विशेष प्रकार से प्रतीत हो रही थी और यह अनुभव किया जा रहा था कि आर्य ध्वज के आरोहण, अवतरण आदि की पद्धति भी सुचारु रूप से निर्धारित हो जानी चाहिए। तथा ध्वज गीत व जयघोष आदि का वर्णन भी किया जाना आवश्यक प्रतीत हो रहा था।

आर्य-सभ्यता के महान् प्रचारक महर्षि दयानन्द की जन्म शताब्दी के शुभ अवसर पर शताब्दी सभा ने अपने विशेष प्रस्ताव द्वारा आर्य-ध्वज का निम्न लिखित स्वरूप निर्धारित किया —

आर्य-ध्वज का रग लाल (गेरुवा) होना चाहिये और उस पर सूर्य के आकार के बीच मे ओ३म् "ओ३म्" यह चिन्ह अङ्कित होना चाहिये।

इस निश्चित प्रस्ताव के अनुसार मथुरा शताब्दी मे समारोह-पूर्वक आर्य-ध्वज का आरोपण किया गया। किन्तु आर्य-ध्वज के भाव तथा महत्त्व (Significance) आदि का स्पष्ट निदर्शन न

होने तथा ध्वज के आरोहण, अवतरण आदि का प्रकार निश्चित न किये जाने के कारण ध्वज का कोई विशेष प्रचलन न हुआ। आर्य-समाजो तथा आर्य-संस्थाओं ने भी अपने २ विशेष पर्व व उत्सवादि पर इस ध्वज को उत्साह पूर्वक फहराने की ओर कोई विशेष ध्यान न दिया।

अत महर्षि स्वामी दयानन्द जी महाराज की अर्द्ध-शताब्दी के शुभ अवसर पर शताब्दी समिति की आज्ञा से आय-ध्वज समिति ने निम्न प्रकार से आर्य-ध्वज के स्वरूप की व्याख्या तथा उसके आरोहण व अवतरण तथा ध्वजगोत व जयघोष आदि का निश्चय किया था। ससार के प्रत्येक आर्य समाज, आर्य सस्था, समिति तथा संघ को चाहिये कि वह ध्वज के उच्चतम सार्वभौमिक लक्ष्य को दृष्टि मे रखते हुये विशेष हर्ष और उत्साह के साथ इस का आरोहण करे।

आर्य ध्वज का स्वरूप तथा उस की व्याख्या

ध्वज की कल्पना मे साम्प्रदायिक भेद भावो को कोई स्थान नही प्रदान किया जा सकता। आर्य ध्वज किसी देश विशेष की सामाओ से भो असीमित तथा विश्व बन्धुत्व विरोधक वतमान युग के राष्ट्र-वाद (Nationalism) के बन्धन स भी मुक्त है। पूजीवाद (Capitalism) तथा साम्राज्य वाद (Imperialism) की अनर्थकारी सस्थाओं (Institutions) से भी आर्य ध्वज का कोई सम्बन्ध न होगा।

आर्य-ध्वज की भित्तिका (Surface) लाल रग की होगी। लाल रग सदा से शक्ति तथा बलिदान का सूचक रहा है। ससार के अन्दर महान् से महान् सत्य भी बिना शक्ति और बलिदान के फैल नहीं सकता। अपनी सभ्यता तथा गौरव की रक्षा के लिये आर्य जाति को शक्तिशालिनी बनाना होगा। और निरन्तर तप त्याग और बलिदान की सुन्दर बलिवेदी को सजाना होगा।

आर्यध्वज के मध्य मे अशुमाली सूर्य का आकार स्वर्ण (सुनहरी) वर्ण मे चिन्हित होना चाहिये। सूर्य अन्धकार का नाशक तथा वैदिक ज्ञानप्रभा प्रकटाने की ओर सकेत करता है। सूर्य का स्वर्ण (सुनहरी) वर्ण मनुष्यो को श्रेष्ठतम कर्मों (Golden Deeds) के आचरण करने का उपदेश देता है।

सूर्य-मण्डल के अन्दर श्वेत वर्ण मे ओंकार का 'ओ३म्' यह चिन्ह चिन्हित होना चाहिये। ओ३म् यह परमात्मा का सर्व-श्रेष्ठ तथा निज नाम है। ससार के साहित्य मे ओ३म् की महिमा का अनुपम और असीम बखान है। ससार का एक एक अणु मूक भाव से उस महान् प्रभु की महिमा का अहर्निश गान करता है। वसुधातल के सारे साधु, सन्त और साधक उस अद्वितीय उपास्यदेव की अलौकिक अनोखी झाकी के लिये विह्वल रहते हैं। इस सूक्ष्मातिसूक्ष्म और महान से भी महान् सच्चिदानन्द ब्रह्म को प्राप्त करना मानव-जीवन का चरम लक्ष्य है। यह ही ससार के सारे श्रेष्ठ कर्मों का मर्म है। ओ३म् चिन्ह का श्वेत वर्ण परमात्मदेव के निर्मल निर्विकार शुद्ध स्वरूप का सूचक है।

संक्षेप में आर्यध्वज का स्वरूप निम्न प्रकार है।

आर्यध्वज का स्वरूप

(१) भित्तिका—लाल वर्ण की।
(२) सूर्य-मण्डल—मध्यमें स्वर्ण (सुनहरी) वर्णका।
(३) ओंकार—सूर्य-मण्डल के मध्य में श्वेत वर्ण मे चिह्नित ॐ यह चिह्न।
(४) लम्बाई-चौड़ाई—ध्वज की लम्बाई (धरती के समानान्तर बाजू) तथा चौड़ाई (ध्वज-स्तम्भ का समानान्तर बाजू) का अनुपात (निस्बत) ३ २ होगा अर्थात् यदि लम्बाई ६ फीट होगी तो चौड़ाई चार फीट होगी।
(५) ध्वज-वस्त्र—ध्वज का कपड़ा शुद्ध तथा स्वदेश निर्मित होना चाहिए।

आवश्यक नोटः—

ध्वज की भित्तिका का वर्ण सूर्य-मण्डल तथा ओंकार के वर्ण, ओंकार ध्वज में उनके विहित स्थान ध्वज की लम्बाई, चौड़ाई तथा वस्त्र उपरोक्त प्रकार के ही होने चाहिये। यदि असावधानता के कारण कोई त्रुटि रह गई तो वह ध्वज आर्य-ध्वज न माना जा सकेगा तथा आर्य ध्वज के मान की अवहेलना करने वाला तक समझा जावेगा।

ध्वज आरोहण की तैयारी

जिस स्थान पर ध्वज खड़ा करना हो वह चौरस विस्तृत साफ तथा सुरक्षित होना चाहिए। झण्डे का स्तम्भ खूब मजबूत तथा सुन्दर होवे। सड़ा, फटा, टूटा या बांका तिरछा बांस वा बल्ली स्तम्भ के लिए सर्वथा अनुपयुक्त है। ध्वज-स्तम्भ में कभी भी लग्गी की तरह जोड़ नहीं होना चाहिए स्तम्भ सफेद रंगा हुआ होना आवश्यक है।

स्तम्भ की लम्बाई के अनुरूप ही ध्वज की भी लम्बाई चौड़ाई होनी चाहिए। ध्वज की चक्री तथा डोरी भी मजबूत होनी चाहिए। स्तम्भ खड़ा करने से पहले डोरी को चक्री पर चढ़ा दी जावे। डोरी सफेद सूत की होनी चाहिए, दूसरे किसी भी रंग की न हो।

स्तम्भ काफी गहरा गढ्ढा खोद कर मजबूती के साथ गाड़ना चाहिए। यदि स्तम्भ अधिक ऊंचा हो तो उसे दो अलग जगहों से तीन तीन रस्सियों से बांध कर तान देना चाहिए। स्तम्भ इतनी मजबूती से खड़ा किया जाय कि तेज से तेज हवा में भी वह झण्डे के झोंकों को सह सके। स्तम्भ के चारों ओर आवश्यकता पड़ने पर पक्का चबूतरा बनाया जा सकता है और उसे गमलों से सजाया जा सकता है।

ध्वज-स्तम्भ विन्दु के पीछे ६ फीट के फासले पर एक रेखा खींचीं जावे। बाद में स्तम्भ-बिन्दु से रेखा को छेदने वाली लम्बी रेखा खींच कर उसके दो सम भाग किये जावें। जिस स्थान पर यह लम्बी रेखा बड़ी रेखा को काटेगी उस स्थान पर अध्यक्ष को खड़ा रहना होगा। स्तम्भ-बिन्दु को ध्वज-क्षेत्र का मध्य-बिन्दु मानकर पहले खींची हुई बड़ी रेखा को छेदने वाला एक वर्तुल (सरकिल) निकाला जावे। यह वर्तुल उस रेखा के नीचे नहीं चाहिए जिससे उसका आकार घोड़े की नाल के सदृश दिखाई दे। इस वर्तुल के समानान्तर चार-चार फीट के फासले से आवश्यकतानुसार वर्तुल निकाले जायें।

बडी रेखा के मध्य पर अर्थात् स्तम्भ-विन्दु से ६ फ़ीट पीछे अध्यक्ष का स्थान होना चाहिये । इस स्थान के दो फीट पीछे बांई ओर शिविराधिपति तथा दाहिनी ओर सेनापति का स्थान होता है ।

ध्वज-स्तम्भ की रेखा से बाईं ओर शंख व बिगुल बजाने वाले तथा दाहिनी ओर ध्वज-रक्षक महाशय खड़े होते है । स्तम्भ के सम्मुख स्तम्भ को मुखातिब होकर ध्वज-गीत के उद्गाता खड़े रहते हैं। अध्यक्ष के पीछे दोनों ओर दल के भिन्न भिन्न अधिकारी खड़े रहते हैं । उनके पीछे सन्यासी, वानप्रस्थी तथा निमन्त्रित सज्जन अथवा आर्य्यसमाज, ज़िला उप-प्रतिनिधि सभा, प्रान्तीय प्रतिनिधि सभा, सार्वदेशिक सभा अथवा अन्य आर्यसभ्यताभिमानी सभा संस्थाओं के अधिकारी व अन्तरंग सदस्य यथास्थिति उपस्थित होते हैं । ध्वज के सामने खींचे हुए वर्तुल रेखाओं पर ध्वजवन्दन करने वाले आर्यवीर-दल आदि स्वयसेवक सस्थाओं के सैनिक खड़े रहते हैं । तदुपरात पहली कतार में ब्रह्मचारी अथवा ब्रह्मचारिणी मण्डल, बालक, बालिका आदि उनके पीछे महिलाए तथा उनके पीछे अन्य स्वयं-सेवकों की क़तारें खड़ी की जाती है ।

उपर्युक्त वर्तुल रेखाए निकालने के बाद उनके पीछे तीनों ओर १० फीट फ़ासला छोड़ कर एक बडा आयात (Rectangle) निकालना चाहिये । इस आयात मे बाहिर दर्शकों का स्थान होता है । दर्शकों को इस आयात के भीतर आने नहीं देना चाहिये ।

ध्वजारोपण करने के पहले उसकी तह निम्न-लिखित प्रकार से करके या बांध कर उसे ऊपर चढ़ा देना चाहिये । ध्वज के चारों कोने पहले खींच कर उसकी ३ वा ४ लम्बी तह की जावें तदुपरात इस लम्बी पट्टी को हवा में फहराने वाले सिरे से लेकर पगड़ी के सदृश मोड़ कर छोटी तह की जावे । रस्सी का जो सिरा चक्की के ऊपर से बाहरी बाजू मे आता है उसे ऊपर के सिरे को लगाया हुआ बन्द बाध देना चाहिये तथा अन्दर से आए हुए नीचे के रस्सी के सिरे को ध्वज वस्त्र के नीचे के सिरे का बन्द मजबूत बाध देना चाहिये । इसी नीचे के सिरे से छोटी तह बनाए हुए ध्वज को बाद मे इस प्रकार गाठ बाध कर उसकी गठड़ी बनाना चाहिये कि जो ज़ोर से खींचते ही खुल जावे तथा ध्वज हवा में फहरने लगे । इस गठडी को ध्वज वन्दन के पहले ऊपर चढ़ा रखनी चाहिये तथा नीचे लटकने वाली रस्सी को स्तम्भ मे विशेष दक्षता के साथ बाध देना चाहिये । इस प्रकार ध्वज फहरने की तय्यारी होती है ।

ध्वजारोहण के अनुष्ठान के पूर्व आर्य्यवीर-दल आदि स्वयसेवक सघों के अधिकारी अपने अपने दल तय्यार कर ध्वज-वन्दन क्षेत्र की बांई ओर से एक के पीछे एक सिलसिले वार लेजावें तथा नियत स्थानों पर उन्हें खड़ा करें । ऐसा करते समय ब्रह्मचारी, ब्रह्मचारिणी, बालक बालिकाओं का स्थान ध्यान मे रखते हुए उन्हें ही पहले भीतर लाया जावे । शख व बिगुल बजाने वाले, उद्गात तथा भिन्न २ अधिकारी अपने २ नियत स्थानों पर जाकर खड़े रहें तथा आर्यसमाज व आर्य-जाति के

प्रमुख नेता निमन्त्रित सज्जन आदि को भी आदरपूर्वक उनके लिये नियत किये हुए स्थान प्रदर्शित किये जावें जिससे वह भी सब अपने २ स्थानों पर स्थित हो जावें।

ध्वजारोहण-विधि

ध्वजारोहण के समय समस्त आर्यवीरों, स्वय-सेवकों तथा दर्शकों को अपने २ स्थान पर 'होशियार' की हालत मे खड़ा रहना चाहिये। प्रत्येक आर्य्य सभ्यताभिमानी के लिये यह आवश्यक है कि वह आर्य-सभ्यता के चिह्न अपने इस आर्य-ध्वज के आरोहण के समय ध्वज को मान प्रदान करने के भाव से बिल्कुल शात तथा गम्भीर-चित्त होकर खड़ा रहे। परस्पर वार्तालाप करना सर्वथा अनुचित है।

टेढ़ा, तिरछा, टागें पसार कर आलस्य-युक्त होकर खड़ा रहना, टहलने लगना या बीच में ही वहा से निकल जाना अनुचित है। अन्य व्यक्ति भी जो इस अवसर पर उपस्थित हों उन्हें भी सावधान होकर खड़ा रहना चाहिये।

सब से प्रथम उद्गाता लोग 'वेद-मंत्रों' द्वारा ईश-प्रार्थना करेंगे तदुपरान्त ध्वजरक्षक अध्यक्ष महोदय से अभिवादन पूर्वक ध्वज फहराने की प्रार्थना करता है तथा ध्वज-स्तम्भ के समीप जाकर बॅधी हुई डोरी खोल देता है। रस्सी को खोलने के बाद उसका भीतरी भाग अध्यक्ष के बाएं हाथ में अर्पण कर देता है तथा बाहरी हिस्सा, जिससे ध्वज की गठरी बॅधी हुई रहती है, दाहिने हाथ में अर्पित कर ध्वजरक्षक उसे खींचने की अध्यक्ष से प्रार्थना करता है। उसके खींचते ही गठरी की गाठ खुल जाती है तथा ध्वजा हवा में फहराने लगता है। स्वयं-सेवकों तथा समस्त उपस्थित सज्जनों को इस समय अत्यन्त शात तथा गम्भीर भाव से "होशियार" की हालत मे खड़ा रहना पड़ता है। ध्वज फहरते ही शख, बिगुल तथा बाजे बजने लगते है।

ध्वजा फहराने लगने पर ध्वजरक्षक स्वय-सेवकों को "क़दम खोल" "आराम" यह आज्ञाएं देकर ध्वज की रस्सी स्तम्भ को पहिले ही के समान दक्षता-पूर्वक बाध देता है, अध्यक्ष को अभिवादन कर फिर पीछे हटकर अपने स्थान पर जाकर खड़ा होता है। अध्यक्ष भी अपने स्थान पर जा खड़े होते हैं।

इसके बाद फिर से "होशियार" की आज्ञा दी जाती है।

और फिर—

"जयति ओ३म् ध्वज व्योम विहारी"

यह सुन्दर भावपूर्ण ध्वज-गीत गाया जाता है। ध्वज-गीत को गायकगण स्वर के साथ गान करें। गान समाप्त होने पर अध्यक्ष का भाषण होता है तथा आवश्यक कार्य-क्रम आदि भी विशेष दशा मे घोषित किया जा सकता है। अन्त में तीन वार अनुशासनपूर्वक 'वैदिक-धर्म की जय' इन जयकारों के साथ ध्वजारोहण विधि समाप्त होती है। वर्तुल (सरकिल) के बाहिर जाते समय भी आर्यवीरों को अनुशासन का पूरा २ ध्यान रखना चाहिये। उन्हें चाहिये कि वह सब से प्रथम पहली कतार, उसके बाद दूसरी, इसी

प्रकार एक के पीछे एक सिलसिलेवार अपनी दाहिनी ओर से बाहिर निकल जावें। तथा बिना किसी भी प्रकार की अशान्ति के अपने २ दल के अधिनायको की आज्ञा के अनुसार कार्य करने मे प्रवृत्त हो।

ध्वजावतरण विधि

इस विधि के करते समय भी सब आर्यवीरादि ध्वजा रोहण विधि के समान ही ध्वजा के सामने वतुलाकार अनुशासन-पूर्वक खड़े होकर ध्वज-रक्षक के आदेशानुसार पूर्ववत्—

"जयति ओ३म् ध्वज व्योम विहारी"

इस ध्वजगीत का गान करें। तदुपरान्त स्तम्भ से रस्सी खोलकर ध्वज को उतारना आरम्भ किया जाता और उसी उतारते हुए शख, बिगुल तथा बाजे बजाते जाते है। ध्वज को उतार लेने के उपरान्त पूर्ववत् उसकी तह कर उपस्थित उच्चाधिकारी को सुरक्षित रखने के लिये अर्पण कर देना चाहिये। ध्वज-रक्षक के कथन तथा अनुशासन के अनुसार अन्त में तीन वार विधि-पूर्वक 'वैदिक-धर्म की जय' का घोष करना चाहिये। और पूर्व कथित विधि से समस्त आर्य-वीरादि सिलसिलेवार ध्वजक्षेत्र से बाहिर निकल आवे।

ध्वजारोहण विधि प्रात.काल यज्ञ की समाप्ति पर अथवा उससे पूर्व की जानी चाहिये। तथा ध्वजावतरण की विधि साधारणतया सूर्यास्त से पूर्व की जानी चाहिये। ध्वज की रक्षा का उचित प्रबन्ध न होने की दशा मे एक घण्टा पर्यन्त ध्वज-क्षेत्र मे ध्वज फहराने के उपरान्त उपर्युक्त विधि से उतार लिया जाना चाहिये।

जय-घोष

आर्य-जाति के अन्दर जय-घोष की पद्धति भी कोई अनोखी वा अर्वाचीन नहीं है। अज्ञातकाल से इसका प्रचार है। आर्य-सभ्यता के महान् प्रचारक ब्रह्मा, व्यास, वशिष्ठ, बुद्ध, शकर, दयानन्द आदि का जय-घोष करना, आर्य-जाति के महान् नेता राम, कृष्ण, शिवाजी, प्रताप, गुरु गोविन्द, तिलक तथा गाधी आदि की जय के नारे लगाना कोई अनुचित बात नही अपितु समय २ पर इसकी आवश्यकता तथा विशेष प्रयोजन भी होता है। इन महा-पुरुषों की जयन्तियां तथा इनसे सम्बन्धित उत्सव व पर्वो पर इनके जयकारे लगाना सर्वथा युक्ति-युक्ति तथा आवश्यक है। किन्तु चाहे जिस अवसर पर चाहे जिसका जयकारा लगाने लगना यह कोई नियम वा अनुशासन की बात नही है।

यह भली भाति ध्यान मे रखना चाहिये कि जब २ आर्य्य-ध्वज के आरोहण तथा अवतरण का प्रसग हो तब किसी व्यक्ति का, चाहे वह कितना भी महान् तथा वन्दनीय क्यों न हो, जयकारा नही लगाना चाहिये।

इस अवसर पर तो 'वैदिक धर्म की जय' केवल यह ही घोष करना उचित ठहराया गया है। वैदिक-धर्म की जय में संसार के सभी ऋषि, मुनि, साधु-सन्त, महात्मा तथा महापुरुषों की जय सम्मिलित है, क्योंकि इनका जीवनोद्देश्य जगतितल पर विशुद्ध आर्य्य वैदिक-संस्कृति का प्रचार करना तथा आर्य्य-आदर्श और गौरव की रक्षा करना ही रहा है। व्यक्तियों से आर्य्य-धर्म कही अधिक महान्, पूज्य तथा आदरणीय है। अत. एक वार नहीं, तीन वार "वैदिक-धर्म की जय" का सुहावना घोष किया जाना चाहिये।

"वैदिक-धर्म की जय" केवल यह ही एक पुनीत जय-घोष ससार के समस्त आर्य-सभ्यताभिमानी देशो तथा जातियां मे गूंजना चाहिए। ससार के समस्त आर्य, हिन्दू बौद्धादि बन्धुओ को तथा आर्य सभ्यता से प्रेम रखने वाले अन्य ईसाई, मुसल-

मान, यहूदी आदि सज्जनों को वैदिक-धर्म की उदार पताका के नीचे विश्व-बन्धुत्व के नाते श्रद्धा और प्रेम के साथ एकत्रित होकर वैदिक-धर्म का जय-घोष करना चाहिए।

नोट —दयानन्द निर्वाण अर्द्ध-शताब्दी समिति ने महर्षि दयानन्द जी महाराज की स्मृति म मनाए गए निर्वाण-अर्द्धशताब्दी के अवसर पर आर्य-ध्वजारोहण के समय तीन वार विधि-पूर्वक 'वैदिक-धर्म की जय' का घोष करने के उपरान्त एक बार 'महर्षि दयानन्द की जय' का घोष करना भी निश्चय किया था। यह विकल्प केवल शताब्दी के अवसर के लिए ही था।

जय-घोष सिखाने की पद्धति

"वैदिक-धम की जय" इस जय-घोष में से ध्वजरक्षक ज्यों ही उचे स्वर में "वैदिक धर्म की" इन शब्दों का उच्चारण करे त्यों ही समस्त आर्य वीरों, सेवको व उपस्थित जनता द्वारा "जय" की गगनभेदी ध्वनि की जानी चाहिए। जय-घोष के समय आवाज गूंजती हुई हो इसका पूरा २ ध्यान रखना चाहिए। रोते हुए स्वर मे जयघोष कदापि नहीं करना चाहिए। जय-घोष का अथ है वैदिक धर्म के प्रति अपने हृदय के प्रेम तथा हर्ष को प्रकट करना। अतएव जय-घोष की ध्वनि उच्च तथा पराक्रमयुक्त गूंजती हुई गगनभेदी स्वर में होनी अत्यावश्यक है।

आवश्यक निवेदन

१—ध्वजारोहण की विधि का अनुष्ठान किसी भी आर्य-सभ्यताभिमानी समाज, सभा, सघ, समिति संस्था वा सेवक-दल आदि द्वारा निश्चित दिवस पर किया जा सकता है। विशेष २ पर्व तथा त्यौहारों पर उत्सव, सम्मेलन तथा मेलों के अवसर पर निश्चित स्थान तथा समय पर ध्वजारोहण करने की प्रथा का प्रचार करना उचित तथा उपादेय है।

२—ध्वज के आरोहण तथा अवतरण की दोनों विधियां बहुत गौरव समन्वित हैं अतएव इनका अनुष्ठान विशेष अनुशासन के साथ शान्ति पूर्वक किया जाना चाहिए। आर्य्य-मन्दिरों तथा संस्था भवनो पर आर्य-ध्वज का निरन्तर फहरना अत्यन्त आवश्यक है। वर्ष के अन्दर (पुराना हो जाने पर) २ वा ३ बार निश्चित पर्वों पर इन ध्वजों को बदल भी देना चाहिये।

३—व्यक्तियों को भी अपने २ भवन पर ध्वजारोहण करने का अधिकार है। इसके लिए समयादि तथा विधि आदि का कोई बन्धन नहीं है। ध्वज के प्रति उचित मात्रा मे मान-प्रदर्शन किया जाना ही पर्याप्त है।

४—ध्वज-वस्त्र पर बेल बूंटे निकालना गोट लगाना आदि सब वर्जित है। ध्वज को माला आदि चढाना सर्वथा अनुचित तथा अनार्य कर्म है। किसी भी आर्य को भूलकर भी ऐसा अनार्य कर्म करने में प्रवृत नही होना चाहिए। अपने क्रियात्मक जीवन से आर्य-धर्म का पालन करना, आर्य-सभ्यता का प्रचार करना तथा आर्य गौरव की रक्षा में अपना सर्वस्व समर्पण करने तक के लिए उद्यत रहना ही आर्य-ध्वज का सर्व-श्रेष्ठ सम्मान माना गया है।

५—ध्वज के इधर उधर नहीं पड़ा रहना चाहिए। उसको सुरक्षित स्थान पर रखना आवश्यक है। उसको पैर तले रूदना, उससे झाड़नका काम लेना उसकी एक प्रकार से अवहेलना करना है। अतएव जब ध्वज चढ़ा हुआ न हो तो उसकी तह करके सुरक्षित रखना चाहिये।

६—फटा पुराना या जिसका रग उड गया हो ऐसा ध्वज स्तम्भ पर कभी न चढाया जावे। पुराने यज्ञोपवीत के समान उसका भी विसर्जन कर देना चाहिए।

———

आर्य्य-ध्वज-गीत

जयति ओम् ध्वज व्योम विहारी।
विश्व-प्रेम प्रतिमा अति प्यारी॥ जयति० ॥

सत्य-सुधा बरसाने वाला, स्नेह लता सरसाने वाला।
साम्य सुमन विकसाने वाला, विश्व-विमोहक भवभय हारी॥
॥ जयति० ॥

इसके नीचे बढ़ें अभय मन, सत्पथ पर सब धर्म धुरी जन।
वैदिक रवि का हो शुभ उदयन, आलोकित होवें दिशि सारी॥
॥ जयति० ॥

इससे सारे क्लेश शमन हों, दुर्मति दानव द्वेष दमन हों।
अति उज्ज्वल अति पावन मन हों, प्रेम तरङ्ग बहे सुखकारी॥
॥ जयति० ॥

इसी ध्वजा के नीचे आकर, ऊँच नीच का भेद भुलाकर।
मिले विश्व मुद मंगल गाकर, पन्थाई पाखंड बिसारी॥
॥ जयति० ॥

इस ध्वज को लेकर हम कर में, भरदें वेद-ज्ञान घर घर में।
सुभग शान्ति फैले जगभर में मिटै अविद्या की अँधियारी॥
॥ जयति० ॥

विश्व-प्रेम का पाठ पढ़ावें, सत्य अहिंसा को अपनावें।
जग में जीवन ज्योति जलावें, त्याग पूर्ण हो वृत्ति हमारी॥
॥ जयति० ॥

आर्य जाति का सुयश अक्षय हो, आर्य-ध्वजा की अविचल जय हो।
आर्य जनों का ध्रुव निश्चय हो, आर्य बनावें वसुधा सारी॥
॥ जयति० ॥

हिन्दुस्तानी शिष्टाचार

ले० श्री पण्डित रामनारायण जी मिश्र
बी० ए० काशी

साधारण

(१) कोई दूसरा आदमी पैसा, रुपया, मिठाई दे तो बिना माता-पिता की आज्ञा के हरगिज मत लो।

(२) किसी को कोई चीज देनी हो तो बाएं हाथ से मत दो और लेनी हो तो बाएँ हाथ से न लो।

(३) जब तक जान-पहचान न हो, मर्द स्त्री से चार आंख करके बात चीत नहीं करते। पराई स्त्री से बात करने की जरूरत पड़ जाय तो स्त्री के पैरों की तरफ देखना चाहिये न कि आंखों की तरफ। स्त्रियों की तरफ टकटकी लगाकर देखना या उनको घूरना या उनके शरीर को छूना बहुत बड़ी असभ्यता है। स्त्रियों को यदि माला पहनानी हो तो माला उनके हाथ में दे दो। वे स्वयं अपने गले में डाल लेंगी।

(४) स्त्रियों, बच्चों या अपाहिज और कमजोर लोगों पर कहीं आक्रमण हो अथवा वे किसी प्रकार में संकट में हों तो तुरत उनकी रक्षा करो।

(५) किसी के घर में जिधर स्त्रियां रहती हों (जनाने में) न आना चाहिए। अपने घर में भी स्त्रियों को किसी प्रकार से सूचना देकर जाना चाहिए।

(६) जिस स्थान पर स्त्रिया नहाती हों या जस रास्ते में स्त्रिया ही आती हों उधर न जाओ।

(७) जिस कमरे मे कोई स्त्री अकेली हो, सोई हो या कपड़ा पहनती हो या अनजान या परदा करने वाली स्त्री हो उसमे नहीं जाना चाहिए।

(८) बच्चों को गहना नहीं पहनाना चाहिए।

(९) छोटे बच्चो को पैसा नहीं देना चाहिये। उनमे पैसा मागने की आदत नहीं डालनी चाहिए।

(१०) कोई छोटा बच्चा कुछ कहना चाहे तो उसकी बात पहले सुनलो।

(११) भारतीय संस्कृति मे बच्चों के सुन्दर और प्यारे नाम रखने को प्रथा है। इस प्रथा को मत बिगाड़ो।

(१२) गाड़ी, नाव आदि में बच्चों को पहले चढ़ने दो, तब आप बैठो।

(१३) बच्चों, स्त्रियों और नौकरों को कभी न मारो। उनकी कमजोरी सब के सामने न बतलाओ।

(१४) बच्चों को पहले खाना दो। सबसे छोटे बच्चे से शुरू करो।

(१५) किसी मित्र या रिश्तेदार के घर जाओ तो बच्चों को अपने प्यार का परिचय दो।

(१६) विशेष अवसर पर किसी

करो तो उसके बच्चो को बुलाना मत भूल जाओ और जो नौकर साथ आवे उसको अवश्य कुछ खिला दो। निमन्त्रित सज्जनों को उनकी स्थिति के अनुसार बैठने की जगह देनी चाहिए।

(१७) जब तक कोई भारी अपराध न हो जाय, किसी की रोजी न लो।

(१८) नौकर को भी भोजन-विश्राम आदि के लिए समय दो।

(१९) नौकर, हज्जाम, धोबी आदि से व्यर्थ बातें मत करो। उनसे दूसरो के घर की बाते मत पूछो और यदि वे ऐसी बाते करें तो मत सुनो।

(२०) जिसके मेहमान बनो उसके नौकर-चाकर को चलते समय थोडा-बहुत इनाम देना अच्छा है। यदि कोई मित्र या रिश्तेदार मिठाई आदि भेंट भेजे तो लाने वाले नौकर को कुछ इनाम दो।

(२१) सभ्य-समाज मे डकार लेना, खखारना, जीभ निकालना, नाक मे उँगली डालना, जमहाई लेना, पैर फैलाकर बैठना या हिलाते रहना, उंगली चटकाना, दात से नाखून काटना, कपडा चबाना, काना-फूसी करना, अँगड़ाई लेना, कान उँगली या कलम डालना इत्यादि बुरा समझा जाता है। जमहाई, खासी या छींक आवे तो मुँह पर हाथ या रूमाल रख लेना चाहिए, नाक बहती हो तो रूमाल से साफ कर लेनी चाहिए। हिचकी आवे तो सभा से उठ जाना चाहिए। और पानी पीकर या और किसी उपाय से उसको रोकना चाहिए।

(२२) साधारणत सडक पर किसी के गले मे बाह डालकर चलना अच्छा नहीं।

(२३) दूसरे की चीज कहीं पहुँचानी हो तो जिस हालत मे मिले उसी हालत मे पहुँचवा या पहुचा दो।

(२४) गाडीवान, दूकानदार आदि से लेन-देन के लिये भौ भौ मत करो। गरीबों के पास दो-एक पैसा ज्यादा चला जाय तो जाने दो।

(२५) रेल के प्लेटफार्म पर या किसी सभा आदि मे जहा टिकट लगा हो, बिना टिकट या बिना निमन्त्रण मत जाओ। जिस क्लास का टिकट हो उसी मे बैठो।

(२६) ट्रेन की खिडकी से पानी न फेंको। ऐसा करना ही पड़े तो हाथ नीचे करके फेंको। जिस कमरे में बैठो उसको गन्दा मत करो।

(२७) जहाँ कई मित्र ऐसे जमा हों जिनकी मातृभाषा भिन्न भिन्न हो, वहा जहा तक हो सके, ऐसी भाषा मे बातचीत करो जिसे सब समझ सकें।

(२८) जब तक आवश्यकता न हो अथवा बहुत गहरी जान-पहचान न हो बिना पूछे राय मत दो।

(२९) जहा बहुत से लोग बैठे हों वहा अपना रोना मत रोओ और अपने ही रोजगार की चर्चा मत करो।

(३०) भूल से तुम्हारा पैर या धक्का किसी को लग जाय तो उससे माफी मागो।

(३१) जहा दो-तीन आदमी हों, किसी एक से कान में बात मत करो। जिससे काम हो उसको अलग लेजाओ।

(३२) बहुत से ऐसे शब्द हैं जिनका प्रयोग करना शिष्ट लोगों मे भद्दापन समझा जाता है। उनके भाव सकेत से अथवा कोमल शब्दों में प्रकट करने चाहियें। यदि प्रकट करो तो लघुशंका, शौच, जगल, टट्टी इत्यादि शब्दों से।

(३३) धोती या कुर्ता हटा कर कपड़े के अन्दर हाथ डालना या बदन खुजलाना अच्छा नहीं।

(३४) किसी के पीठ पीछे उसकी बुराई मत करो। दूसरे आदमी के गुणों की चर्चा करना अच्छा है पर वह भी उसके मुह पर नहीं। यदि दूसरे की बुराई करनी ही पडे तो ऐसे शब्दों में करो जिसका प्रयोग उसके सामने भी कर सको। अपनी स्तुति आप मत करो, सुनो भी नहीं और अपनी बुराई सुनकर लड़ने मत लगजाओ। अपनी निन्दा सुनकर शान्त रहना बड़ी भारी तपस्या है।

(३५) सडक पर किसी मुरदे (शव) को ले जाते हुए देखो तो एक तरफ हट जाओ अङ्गरेजी रिवाज टोपी उतारने का है। किसी की लाश का अनादर मत करो।

(३६) घर में किसी की मृत्यु हो जाय तो अपना शोक जोर जोर से चिल्लाकर मत प्रकट करो। ऐसे समय में धैर्य आवश्यक है।

(३७) पड़ौसी, मित्र, रिश्तेदार आदि के यहा शादी मौत आदि के अवसर पर अवश्य जाना चाहिए। मौत के अवसर पर बिना बुलाये ही जाना चाहिए और पूरी सेवा और समवेदना प्रकट करनी चाहिये। ऐसे समय मुर्दा भी उठाना हो तो उसको ऊँचे दर्जे की सामाजिक सेवा समझो। जो गरीब और असहाय हो उसके साथ तो ऐसा भी जरूर करना चाहिए। पडौसी जब मुर्दा जलाकर लौटे तब उनके यहा भोजन भेजो और आग्रह तथा प्रेम से उनसे भोजन करने के लिए कहो।

(३८) दूसरे आदमी की बात जब तक समाप्त न हो, बीच में मत बोल उठो। ऐसा हो जाय तो तुरन्त क्षमा मागो।

(३९) "जो है सो" इत्यादि सखुन-तकिया की आदत न डालो। ऐसे अनावश्यक शब्दों को बात चीत में बार-बार कहना बुरा है।

(४०) कोई आदमी रासता भूल जाय तो उस को ठीक रास्ते पर डाल देना चाहिए, चाहे ऐसा करने में तकलीफ भी हो।

(४१) रास्ते मे कोई चिट्ठी पढ़वाए तो रुक कर पढ दो, यदि किसी अन्धे आदि को मदद की जरूरत हो तो उसकी तुरन्त मदद करो।

घर की लक्ष्मी

(ले०—श्रीमती शान्ता देवी)

स्त्रिया घर की लक्ष्मी होती हैं और उन्ही से घर की शोभा है। लक्ष्मी धन और ऐश्वर्य का देवी हैं, यह सदिग्ध है; परन्तु घर मे धन-सम्पदा की भरमार होने से ही यह नही कहा जा सकता कि घर मे लक्ष्मी की शोभा हो गई। घर की लक्ष्मी सुगृहिणी है। जिस सम्पद मे शोभा नही, सौन्दर्य नही, शृंखला नही, वह कुवेर का ऐश्वर्य हो सकता है, परन्तु लक्ष्मी श्रीहस्त का स्पर्श उसमे नही है। साधारण को जो असाधारण बना सकती हैं तुच्छ को जो अनुपम रूप दे सकती हैं, मनुष्य उन्ही को लक्ष्मी कहता है। यह लक्ष्मी नारी है, न कि पुरुष। पुरुष का कारबार है दूकान, कारखाना, आफिस, अदालत, राज्य और साम्राज्य के साथ, छोटी चीजो पर आसानी से उनकी दृष्टि नही जाती। परन्तु स्त्रियो का कारबार छोटी-मोटी बातो और तुच्छ से तुच्छ चीजो से चलता है। इन सब बातो मे आर्थिक बल पर नही, बल्कि सिर्फ अपने गुणो से जो सौन्दर्य और शोभा की सृष्टि कर सकती हैं, वे ही लक्ष्मी-स्वरूपिनी कहलाती हैं। वास्तव मे गृह रचना और घर सम्हालना एक जबरदस्त कला है, इसमे सृजनी शक्ति का अभाव होने से काम नहीं चल सकता।

साधारणतः आर्ट या कला कहने से हम जो कुछ समझते हैं स्त्रियो की घर गृहस्थी मे उसका स्पर्श बिना हुए घर हतश्री और प्राणहीन हो जाता है। शिक्षा के बल से हो और चाहे अशिक्षित पटुत्व के कारण ही हो सुगृहिणी म कला प्रतिभा का थोड़ा सा मिश्रण होना जरूरी है। परन्तु ससार मे अशिक्षित-पटुत्व इतना सुलभ नही जो बिखरा बिखरा फिरे। इसलिए स्त्री-शिक्षा का उद्देश्य यदि "घर के लिए सुगृहिणी बनाना" या "घर की लक्ष्मी" बनाना हो तो लड़कियो को घर और विद्यालय मे सर्वत्र ही शिल्प-कला की शिक्षा की ओर ध्यान देना चाहिए। इस आधुनिक सभ्यता के जमाने मे घर-गृहस्थी को कल कारखानो से बहुत आराम मिलने लगा है। अब कमल और ताडपत्र के पङ्ख से बीने हुए बीजने से बयार करने की भी जरूरत नही पड़ती, अब तो बिजली का बटन दबाते ही पङ्खा चलने लगता है। गाँव मे भी रुई की बत्ती बटकर दिया जलाने की जरूरत नही रही, अगर हरीकेन लालटेन के लिए एक रुपया खर्च करने की सामर्थ हो। शहरो मे तो गैस और बिजली की बत्तियो की भरमार है। पैसा पास हो तो अब मिट्टी के घरो मे रहने की भी जरूरत नही, और वैसी हालत में लीपने-पोतने की जरूरत तो खामख्वाह ही मिट जाती है। पक्के मकानो के फर्श और दीवारें सिमेन्ट और पलस्तर से वैसे ही झक दिखाई देती हैं, यही कारण है कि स्त्रियो मे फर्श और दीवारों को

लीपने-पोतने और चित्रित करने का आग्रह अपने-आप ही जाता रहता है।

बच्चो को मां स्वयं अपना दूध पिलाती थी, और अब विलायती डब्बे से और कही कही धाय से काम लिया जाता है। दूध पिलाने के पुराने तरीके को दूर कर अब बोतल और रबर की नली से काम लिया जाता है। इसी तरह अनेक पुरानी चीजों की जगह नई चीजो ने ले ली है। इसका नतीजा यह हुआ है कि आदमी के हाथ आलसी और वह निठल्ले हुए जा रहे हैं, मनमे भी जड़ता आ रही है और वह उसकी सृजनी शक्ति को ढके दे रही है। बड़े बड़े वैज्ञानिक बड़े-बड़े आविष्कार कर-करके ससार भर के अभाव को दूर करने की व्याख्या किए दे रहे है, और छोटे छोटे साधारण मनुष्य कल-कारखानो से या तो उनकी आज्ञा पालन कर रहे हैं, और नही तो निकम्मे बैठे हुए है। स्त्रियो की सृजनी शक्ति तो बिल्कुल ही दब गई हैं, मानो उसे लकवा ही मार गया हो। वे अपने घर गृहस्थी को छोटी-मोटी जरूरते पूरी करने के लिए अपने निजी सौन्दर्य ज्ञान और कला प्रतिभा का प्रयोग किया करती थी, परन्तु अब मशीन की बनी मार्केवाली चीजो की बाढ़ से उनकी अपनी चेष्टा और पसन्द की कोई जरूरत ही नही पड़ती। अब स्त्रियो को फुरसत ज्यादा मिलने लगी है और ही एक तरह की शोभाहीन घर-गृहस्थी मे बरतन आदि असबाबो की भरमार होती जा रही है। और इससे जरूरत भी पूरी हो जाती है इसलिए अधिकांश लोगो के मन मे सौन्दर्य के प्रति विशेष आकर्षण न होने से स्त्रियो के मन मे भी घर गृहस्थी मे सौन्दर्य-शोभा लाने की कोई खास तागीद भी नही आती। बचपन ही से ही इस तरह की तागीद या इच्छा को, घर और विद्यालयो मे, लड़कियो मे जाग्रत कर देना जरूरी है। घर-गृहस्थी का काम 'किसी तरह काम चल जाय' की भावना से न होना चाहिए, उसमे सौन्दर्य और लक्ष्मी की शोभा रहनी ही चाहिए। उस सौन्दर्य-सृष्टि से ही स्त्रियों की अपनी-अपनी प्रकाशन शैली विशेष विशेष रूप में दिखाई देगा। उसी मे उनकी विशेषता है। थोड़े से अलमुनियम के बरतन, बाल्टी, लालटेन तथा चीनी मिट्टी के प्याले, प्लेट और कुछ जापानी देशी या विलायती मिल के कपड़े और कम्बल होने से ही घर का काम किसी तरह चल ही जाता है। तो फिर उसके पीछे पैसा या वक्त बरबाद करके सौन्दर्य लाने का कारण बहुतो की समझ मे नही आता। बहुत से लोग कहेगे "इतना सुन्दर करने की कोशिश भी विलासिता है, यह सब न करना ही अच्छा है।" परन्तु विशृङ्खलता और असुन्दरता मनुष्य की आंखो और मन को कष्ट पहुचाती है, इस बात का अज्ञात दशा मे अनुभव करते रहने पर भी, स्वरूप से हम उसे समझ नही पाते।

वास्तव मे सौन्दर्य ज्ञान विलासिता नही, बल्कि शृखला का ही नामान्तर है। कुछ रेखाये और रग जहा छन्दहीन बेसिलसिले से पड़े हो, वही अशोभन है। जहाँ उन रेखाओ और रगो को किसी खास सिलसिले से सजा दिया जाता है, वहीं सौन्दर्य और शोभा हो जाती है। उस सौन्दर्य और

शोभा को देख कर हमारी आखे तृप्त होती हैं, मन मुग्ध और शान्त होता है। इसलिए यह सौन्दर्य विलास हमारा उपकार ही करता है। अगर हम पृथिवी का ओर अच्छी तरह देखे, तो मालूम होगा कि यह विलासिता हमने प्रकृति से ही सीखी है। हम धोतियो या साड़ियो की किनारियो पर पर्वत-शिखर, पानी की लहरे, लताओ की गति, मेघो के स्तर आदि अकित करते है और पेड़ के हरे पत्तो पर लाल फूल देख कर साडी की पाड़ पर भी हम उसी की नकल करते है। प्रकृति की वर्ण-सुषमा या रेखाओ के छन्द को जहाँ हम लाघना चाहते है, वहा देखते है कि हमारी आखे उसका अनुमोदन नही करतो, मन व्यथित हो उठता है। विधाता की सृष्टि को स्वीकार करते हुए अगर हम घर-गृहस्थी की छोटी से छोटी सृष्टि का काम कर सके, तभी हम कला की मर्यादा रख सकते हैं। विधाता की प्रकृति मे नील आकाश मे सफेद मेघ उडा करते है, हरे पेड़ो पर अनेक रगो के फूल खिला करते हैं, तितली के पङ्खो पर एक के ऊपर एक कितने ही विचित्र रग कैसे सुन्दर ढङ्ग से दिखाई देते है मोर के पङ्खो मे कैसे मनोहर विचित्र रङ्गो का इन्द्रजाल-सा होता है। इसी तरह पानी की लहरो म, पेड़ो की डालियो और पत्तियो मे राजहस की गर्दन मे नदी के मुह े मे, लता की गति मे, पक्षियो के पङ्खो मे, मछलियो के डेनो मे फूलो की पङ्खड़ियो में, पानी के भँवर मे कैसी विचित्र और देखने लायक सजावट और शोभा होती है। कला तो उसी प्रकृति की छाया है—उसी का प्रतिबिम्ब है। फिर भला वह कैसे हमसे छूट सकती है ? प्रकृति की यह विचित्रता ही तो हमारी कला प्रियता की मुख्य बाधा को दूर कर देती है। असल मे प्रकृति को देखना ही कलावान का मुख्य कार्य है। प्रकृति को जिसने पहचाना है, उससे जो प्रेम करने लगा है और उसके भीतर की शृङ्खला के नियमों को जान गया है, उसकी आंखें अशोभन को कभी सह ही नही सकती।

प्रकृति को पहचानने का ही दूसरा पहलू है देशको पहचानना। विधाता की पृथिवी पर नारियल के पेड़पर सेव या ताड़वृक्षपर अगूर नही लगते। परन्तु हमारे देशके बाजारो मे बहुत सी शिल्प वस्तुओं मे ऐसी असम्भव बात भी सम्भव होरही है। भारतकी स्त्रियो के गहने, कपड़े, बासन और असबाब पर यथासम्भव भारत की प्रकृति की छाया न पड़े, तो कला की दृष्टिसे उसे उपयुक्त नही कहा जा सकता। भारतीय स्त्रियो की साड़ीका किनारापर 'विलो या बेंतके पेड़के नीचे राजहंसका चित्र देखा है, परन्तु महावर-रजत-चरणा और सिन्दूर शोभिता भारतीय वधू के शरीरपर वह साड़ा और काली लेसदार विक्टोरिया कटका ब्लाउज कितना बेढंगा और भद्दा दिखाई देता है, इसे हमारे व्यापारी भाई और घरके मालिक बिना समझे ही घर-घरमे उन रूपड़ोंका चलन चलाते ही जा रहे है।

जिनके पास पैसा है, वे दो-चार सौ रुपये खर्च करके श्यामा भारतीय ललनाओंके लिए भड़कीली क्रेप या जार्जेटपर चमकदार जरी की फेजन्ट फ्लैमिंगो या बर्ड-आफ पैराडाइज लगवा-

कर समझते हैं कि आधुनिकता और आभिजात्यका चरम कर डाला। परन्तु भारतीय स्त्रियों के शरीरके रंग और गठन पर हजार विलायती रंग-ढंगकी चीजें लाद दीजिये, उन विजातीय चीजों से उनकी शोभा नहीं बढ़ सकती, बल्कि एक तरह का बेतुकापन ही दिखाई देगा। परेशानी तो यह है कि हम इस अस्वाभाविकताको समझ ही नहीं पाते।

भारतवर्ष के विभिन्न प्रान्तों के शिल्पकार अपने-अपने प्रान्तों के लिए अपने यहाँ की लड़कियों और प्रकृत को ममता की दृष्टिसे देखा करते थे, इसीलिए सैकड़ों वर्षों से उन्होंने अपने जनों को जिन आभरणोंसे सुशोभित किया है, वह समय की कसौटी पर ठीक उतरा है, और आदमी की नजरों में क्रमशः वह प्रकृतिक समान ही स्वाभाविक होगया है। अगर सहसा हम दो-चार वर्ष के अत्याचार से उसे उड़ा देने की कोशिश करें, तो यह हमारी भूल है और हमें यह शोभा भी नहीं देता। हमारे ढाका, बालूचर, मुर्शिदाबाद, बनारस आदिके बने हुए कपड़ों पर जो काम या नक्शा होता है, उसके भीतरकी रेखाओं और रंगों में जो सौन्दर्य है, उसे समझकर उसी धारा के अनुसार हमें नई सृष्टि की जांच करनी होगी। यह ठीक है कि मनुष्य सिर्फ पुराने को लेकर ही नहीं रह सकता, नवीन की सृष्टि हमेशा में चली आई है और चलती रहेगा, परन्तु नवीन का मतलब सिर के बल चलना या दिन में चांद का उदय होना हरगिज नहीं। वास्तव में उसके भीतर पुरातन की धारा ही नवीन रूप धारण करती है।

स्कूल की लड़कियों को सूची-शिल्प (सूई का काम) सिखाते समय, कुरती की बाहों पर आसमानी रंग में आइवी लता न कढ़ा कर हम अगर पुराने दुशालों या जामदानी साड़ी की पाड़ कढाने की कोशिश करें, तो बहुत-कुछ सामंजस्य की रक्षा हो सकती है। इसी तरह घर की दीवारों पर गुलाबी ऊन से बने हुए कार्पेट के विलायती कुफुर किटस्थ के फूल न टांग कर अगर कसीदे के काम की कोई चीज टांगे, तो वह अपना देशी घर सा मालूम होगा।

लोग कहते हैं कि घर-बार अच्छी तरह चलाने के लिए काफी पैसा चाहिए। परन्तु वास्तव में यह बात नहीं। तेल के कनस्तर, कांच और चीनीमिट्टी के भांडों से घर न भर कर अगर हम सुन्दर बनावट के मिट्टी के बरतनों को एक पैसे के रंग से चित्रित कर के उन्हीं से अपना भंडार घर सजावें, तो उस में कम ही खर्च होगा। पुरानी धोती-साड़ियों की पाड़ों में से रंगीन सूत निकालकर उस से कुरती, जम्फर आदि तथा कंथड़ियों पर नक्शे काढें, तो उस में एक कौड़ी का भी खर्च नहीं। गांवों की दूकानों में सेलुलायेड के बने जापानी खिलौनोंकी भरमार है और सिफत यह कि एक पैसे वाले मिट्टी या लकड़ी के खिलौने ढूढें, तो मिले नहीं। स्त्रियां अगर मिट्टी और लकड़ी के खिलौने बनाकर अपने हाथों से उन्हें रंग कर उन्हीं से अपना घर सजावें तो उस में क्या खर्च है। पुराने जमाने की माताएं मिट्टी के खिलौने और पुराने कपड़ों से गुड्डे-गुड़ियां बना बनाकर अपने बच्चों को दिया करती

थी और बच्चे उन से तरह तरह के खेल खेला करते थे। साथ ही साथ देखा देखी बच्चे भी खिलौने बनाना सीख जाया करते थे। मगर आज हमें अधेले का खिलौना भी लेना हो, तो वही जापानी।

यह सच है कि अपने देश के महान कलाकारों की सहायता सब समय सब को नहीं मिल सकती। परन्तु सुप्रसिद्ध कलाकार नन्दलाल वसु आदि की पुस्तकें हम अनायास ही प्राप्त कर सकते हैं, जिन में उन के रचे हुए अनेक प्रकार के चित्र और नक्शे हैं,—आलीपन के नक्शे, पीढ़े के चित्र कपड़ों की किनारी और पल्ले आदि 'रूपरेखा' आदि पुस्तकों में मनुष्य के हाथ पैर, मुंह, गरदन, बाहों की बनावट अनेक प्रकार के जूड़े तथा सुन्दर से सुन्दर गहनों के चित्र हैं, जिन्हें देख कर सीखना अंकित करना और काढ़ना सहज है। इस के सिवा गांवों मे जो अप्रसिद्ध कलाकार हैं, जिन पर आधुनिकताका तुषार अभीतक नहीं पड़ा है, उनसे बहुत सी बातें सीखी जा सकती हैं जैसे पुराने जमाने के से खिलौने, गुड्डे-गुड़ियां, लकड़ी के घोड़े और डिबियां, मिट्टी के खिलौने कांसे के बरतनों पर नक्काशी का काम, बालूचरी और ढकाई साड़ियों के पल्ले, कपड़ों के चन्दों पर फूलकारी का काम, बांस की रंगीन डालियां और सूप तथा आलीपन आदि। आज कल मेलों आदि में भी उनकी यह कृतियां कम दिखाई देती हैं परन्तु देश मे स्वादेशिकता के नव जागरण स अब फिर पुराने गहने और कपड़े आदि कुछ-कुछ नवीन रूप मे दिखाई देने लगे हैं। फिर भी क्रियोपयोगी कम कीमत की चीजें अब प्राय. देखने मे ही नहीं आतीं। इस तरफ हमारा ध्यान जाना चाहिए।

सचमुच, अब जरूरत इस बात की है कि देश में जहां जहां पीढ़ी-चित्र, कंथड़ी-सिलाई, सुपारी कतरना, मिठाई बनाने के सांचे, नारियल और मूंज की रस्सी, जूड़ा बांधने सूत या ऊन की चीजें तथा छींके बनाने की जो कारीगरी है, उन सब का संग्रह किया जाय। देश मे जितने भी बालिका- विद्यालय है, उन सब से पत्र व्यवहार करके यदि इस बात का पता लगाया जाय कि वे लड़कियों को शिल्प की शिक्षा देते हैं या नहीं, और खास कर देशी शिल्प पर जोर देते हैं या नहीं, तो इस तरह शिल्प-शिक्षा का प्रचार बढ़ सकता है। इसके सिवा प्रत्येक पाठशाला और विद्यालय से अनुरोध करना चाहिए कि वे देशके शिल्पों का नमूना, जब जैसा मिलता रहे संग्रह करके एक खास कमरे मे रखते रहें और छात्राओं को हमेशा उस संग्रह के काम में उत्साहित करते रहें। हमारे गांवो मे अब भी देखा जाता है कि पैसे-पैसे के मटैले-पत्थर के दिए, चार,चार पैसे की दीवटें, छोटे-छोटे सुन्दर बरतन सुराहियां, खाट के पाये, पानदान, पंखे आदि बिका क ते हैं, जिन का गठन और काम बिलकुल निर्दोष और सुन्दर होता है। इन सब चीजों से विद्यालय और घर सजाने से बहुत ही सुहावना मालूम पड़ता है और साथ ही बालक बालिकाओं का शिल्प-सौंदर्य का ज्ञान भी बढ़ता है।

हमारे देश के विभिन्न प्रान्तों मे अभरक और

रेशम के काम के पखे, अभरक के साथ सिलाई का काम, सोने चांदी के सलमा-सितारे और गोटा किनारी का काम, काश्मीरी रेशम और ऊन का काम इसी तरह के और भी अनेक प्रकार के शिल्प-कार्य प्रचलित हैं जिनकी शुमार नहीं की जा सकती। इन सब पर हमारी दृष्टि रहनी चाहिए, क्योंकि बिना जाग्रत दृष्टि रखे हमारे हाथों का आलस छूटना और मन मे सौन्दर्य-ज्ञान को पुनर्जीवित करना कठिन है। इस लेख में जिस शिल्प कला की आलोचना की गई है, वह है मडन-शिल्प अर्थात् घरेलू कारीगरी। यह हमारे लिए घर-गृहस्थी मे काम आने वाली चीजो की सौन्दर्य वृद्धि के ही काम आती है। इससे बड़ी चीज अर्थात् भास्कर शिल्प और चित्रविद्या सीखना हर एक के लिए कठिन है। भारतीय भास्कर्य और चित्रविद्या देखनी हो, तो प्राचीन इमारतों म उनके अच्छे से अच्छे नमूने मिल सकते है। परन्तु यहां हमे उस विषय की चर्चा नही करना। साधारणतः स्त्रियो में जो शिल्प चलता चला आया है, उसी की रक्षा का उपाय होना चाहिए। कहने का मतलब यह कि हमारे देश की वतमान और भावी गृह लक्ष्मियो के लिए घरेलू शिल्प का ज्ञान होना अत्यन्त आव० है, और साथ ही घर-घर में होना उसका प्रचलन भी।

इससे कोई यह न समझ बैठे कि हम विदेशी शिल्प का बहिष्कार करना चाहते है। शिल्प में स्वदेश-विदेश का प्रश्न उठ ही नही सकता, जो सच्ची कला है, वह कला के सिवा और कुछ हो ही नही सकती। परन्तु कला की रचना यदि अपने वास्तविक आवेष्टन में न रहे और प्रकृति के परे चली जाय तो उसका रूप निखरता नहीं। यही कारण है कि इस देश की महिला के हाथ में कमल और फारस की सुन्दरी के हाथ में बसरेरा-गुलाब ज्यादा खिलेगा—यद्यपि देखने में दोनों ही फूल अतुलनीय है।

वास्तव में, नारी का घर शोभा का मन्दिर होना चाहिए, इस बात को नारी सर्वदा याद रखें और इस बात को सच समझें कि प्रकृति की रूप-सृष्टि तथा देश की विशेषता को घर-गृहस्थी के काम मे भुलाया नहीं जा सकता तो क्या घर और क्या शिक्षा-मन्दिर, सर्वत्र ही उनके लिए शिल्प-शिक्षा सहज हो सकती है। घर को लक्ष्मी की सार्थकता इसी में है।

साहित्य-समीक्षा

इंडिया एँड दी पैसिफ़िक (अंग्रेज़ी)

(India and the Pacific)

लेखक—श्रीयुत दीनबन्धु सी एफ़ ऐन्ड्रूज़ ।

प्रकाशक—ज्यौर्ज एलन ऐंड अनविन लिमिटेड लन्दन

मूल्य—६ शि० ६ पेंस २||=)

श्रीयुत दीनबन्धु सी एफ़ ऐन्ड्रूज़ का विशेष परिचय देने की आवश्यकता नहीं है। भारत वासी मुख्यतया भारत का शिक्षित समुदाय उनके नाम भारतवर्ष के प्रति उनके प्रेम तथा उनकी बहुमूल्य सेवाओं से भली भांति परिचित है। उनके जीवन का मिशन दीन और पीड़ित मानव समाज की सेवा है। ऐन्ड्रूज़ महोदय उन सच्चे ईसाइयो में से हैं जो महात्मा ईसा की स्पिरट मे, वर्ण, देश, और जाति के भेद भाव से शून्य निष्काम और निस्स्वार्थ भाव से मनुष्य समाज का कल्याण सम्पादन करते हैं। वे उन अंग्रेजों में से हैं जिन्हें भारतवासी जितना अपना समझते हैं उतना उनके देश वासी उन्हें अपना नहीं समझते है ऐन्ड्रूज़ महोदय जन सेवा के अपने पवित्र मिशन पर प्राय प्रवासी भारतीयों मे जाते रहते हैं उनकी स्थिति का अध्ययन और कष्टों और कठिनाइयों के निवारण का यत्न करते रहते है।

प्रस्तुत पुस्तक लेखक के पैसिफ़िक महासागर स्थित फिजी आस्ट्रेलिया, चीन जापान इत्यादि की बहुत सी और भिन्न २ यात्राओंके फल स्वरूप प्रकाश में आई हैं। इसमें मुख्यतया उपयुक्त क्षेत्रों के भारतीयो की समस्याओं पर विचार किया गया है। लेखक महोदय ने उन भारतीयों के हितार्थ जो शर्तबन्दी की अमानुषिक और असह्य प्रथा के आधीन फिजी मे चले गए थे ३ बार फिजी आस्ट्रेलिया और न्यूज़ीलैंड की यात्रा की है। जब से शर्त बन्दी की प्रथा नष्ट हुई है तब से भारतीयों ने जो चमत्कारिक उन्नति की है इस पुस्तक में उसका बहुत उत्तम वर्णन किया गया है और उनके सर्वाङ्गीण सामाजिक, आर्थिक और शिक्षा सम्बन्धी उत्थान पर प्रकाश डाला गया है तथा उत्थान मार्ग में जो बाधाएँ है उनका तथा उनके निवारण के उपायों का सम्यक् वर्णन किया गया है।

फिजी के भारतीयों और स्वय भारत से सम्बन्धित आस्ट्रेलिया और न्यूज़ीलैंड के सम्बन्धों पर भी प्रकाश डाला गया है। इस विषय पर विचार करते हुए युरोपियनों की भारत यों के प्रति रीति नीति की आलोचना की है और कई महत्व पूर्ण सुधार प्रकाश मे लाए गए हैं।

भारत के चीन और जापान के घनिष्ठ सम्बन्धो की बड़ी हृदय ग्राही चर्चा की गई है।

श्री० ऐन्ड्रूज़ महोदय आर्य समाज को बड़ी प्रशसनीय दृष्टिसे देखते हैं। फिज़ी इत्यादि मे आर्य समाज के उत्तम कार्य्य को उन्होंने इस पुस्तक मे स्वीकार किया है।

आर्य्य समाजियों तथा प्रवासी समस्या में दिलचस्पी तथा प्रवासी भारतीयों का हृदय में हित रखने वालों के यह पढने योग्य पुस्तक है।

प्रत्येक आर्य्य समाज की लायब्रेरी में इस पुस्तक का होना अनिवार्य्य है। पुस्तक शारदा मन्दिर लिमिटेड नई सड़क देहली से भी मिल सकती है।
